धरती की करवट

धरती की करवट

श्रीचन्द्र अग्निहोत्री

प्रकाशक	शब्दकार 159, गुरु अंगद नगर (वैस्ट) दिल्ली-110092
मूल्य	पैंतालीस रुपये (45.00)
प्रथम संस्करण	अक्तूबर, 1986
मुद्रक	तरुण प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032
आवरण	चेतनदास
आवरण-मुद्रक	परमहंस प्रेस, नारायणा, नई दिल्ली-110028
पुस्तक-बंध	खुराना बुक बाइंडिंग हाउस, दिल्ली-110006

संजय उवाच : राजन्, धरती हमारी है, यह स्वर अति प्राचीनकाल से चारों दिशाओं में गूंजता रहा है। दुर्योधन ने यही हांक लगायी थी। तब हमने आपके वंशजों, कौरवों और पाण्डवों का वृत्तान्त आपको सुनाया था। आपकी आँखें ठीक करने के लाख प्रयत्न तब से आज तक हुए, किन्तु आपको दृष्टि न मिली।

आज हमें फिर सुनाई पड़ रही है आपके वंशधरों की कहानी। सबसे पहले सुनिये एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए उभय पक्ष के कौशल, द्वन्द्व पर्व की कथा।

द्वन्द्व पर्व

ड्योढ़ी के कारिन्दा मुंशी खूबचन्द ने सवेरे आकर बस्ता खोला ही था कि एक खिदमतगार ने आकर कहा, "मुंशी जी, छोटे सरकार बोलते हैं।"

"कहाँ हैं?" मुंशी जी ने आँखें ऊपर की ओर उठाते हुए पूछा।

"अपनी बैठक में।"

"अच्छा, अभी चले।"

मुंशी जी ने बस्ते को छोटे-से बक्स में रखा और ताला बन्द कर दिया। फिर उठे और पास की कोठरी में रखी तिजोरी का हैंडिल पकड़कर खींचा, यह जानने के लिए कि कहीं खुली तो नहीं रह गयी। कोठरी से निकलकर अँगोछे से पैर झाड़े, फिर मुँह पोंछा, बेलदार सफेद टोपी को जो मैली होकर धूसर हो गयी थी, ठीक किया, चमरौधा जूते पहने और अँगोछे को कन्धे पर डालकर चल पड़े।

दलवीर सिंह के दरवाजे पर पहुँचते ही बाहर से ही हाथ जोड़कर बोले, "छोटे सरकार, जय राम जी। अन्नदाता ने याद किया है?"

दलवीर सिंह चूड़ीदार पाजामा और शेरवानी पहने, गुलाबी रंग का साफा बाँधे कुर्सी पर कुछ इस तरह बैठे थे जैसे कहीं जाने को तैयार हों। दाहिने पैर के बूट के सिरे को फर्श पर रगड़ते हुए वह रोब के साथ बोले, "मुंशी जी, पाँच सौ रुपये जल्द लाओ। हमें कम्पू जाना है।"

"बहुत अच्छा सरकार," मुंशी जी ने हाथ जोड़ दिये। "थोड़ा बड़े सरकार के कान में डाल दूँ।"

"क्या मतलब?" दलवीर सिंह ने आँखें तरेरकर पूछा।

मुंशी जी ने सहमते हुए उत्तर दिया, "हजूर, हमारे लिए तो सालिग-राम की बटिया जैसे छोटी, वैसे बड़ी," फिर थोड़ा खीस निकालकर बोले, "फिर भी अन्नदाता, बड़े सरकार से हुकुम लेना फ़र्ज़ है।"

"सो बाद में लेते रहना, पहले रुपये दे जाओ," दलवीर ने कुछ इस प्रकार कहा जैसे एक-एक क्षण उनके लिए कीमती हो।

"अभी हाजिर हुआ सरकार," कहकर मुंशी जी ने पीठ फेरी।

मुंशी जी अजीब पशोपेश मे थे। दलवीर सिंह ने फुटबाल के चतुर खिलाड़ी की भाँति मुंशी जी के तर्क की गेंद को जिस फुर्ती से उन्ही की ओर फेंक दिया था, उससे वह चौंधिया-से गये थे। समझ में न आता था कि क्या करें। सोचने लगे, पता नहीं, बड़े सरकार अभी बाहर निकले या नही। भीतर सदेशा भिजवाऊँ, तो देर लगेगी। इधर छोटे सरकार घोड़े-सवार हैं। ठाकुर का गुस्सा! फिर सोचा, अगर लाकर दे दूँ और बड़े सरकार नाराज हों, कह दें, तुम्हारी तनखाह से काटेंगे, तो नाहक मारा गया। इधर कुआँ, उधर खाई वाली हालत थी उनकी। मुंशी जी के पैर आगे को बढ़ रहे थे, लेकिन वह तिरछी निगाह से बड़े सरकार के कमरे को देखते जाते थे, बैठे तो नही हैं? कभी-कभी तेज़ी से दलवीर के कमरे की ओर भी निगाह डाल देते, वह दरवाज़े से बाहर आकर तो नही देख रहे?

अन्त में मुंशी जी ने यही ठीक समझा कि अभी पाँच सौ लाकर दे दूँ। इसके बाद बड़े सरकार से कहूँ।

वह गये, तिजोरी खोली, दस-दस के नोट गिनकर फर्श पर रखे। फिर तिजोरी बन्द की और हैंडल को खींचकर देखा। इसके बाद नोटों को एक बार फिर गिना और दलवीर को देने चल पड़े।

दलवीर सिंह के कानपुर चले जाने के बाद मुंशी जी ठिठकते हुए रणवीर सिंह के कमरे में गये और झुककर जय राम जी कहा।

"क्या है मुंसी जी?" रणवीर सिंह ने उचटती नज़र उन पर डालते हुए पूछा।

"अन्नदाता, एक गुस्ताखी हो गयी," मुंशी खूबचन्द ने हाथ जोड़कर फरयाद की।

"क्या बात है?"

मुंशी जी ने दलवीर सिंह को रुपये देने का सारा हाल बता दिया।

रणवीर सिंह थोड़ा संजीदा हो गये। कुछ क्षण खामोश रहे जैसे कुछ

सोच रहे हों। इसके बाद बोले, "कोई बात नहीं। हम छोटकऊ को समझा देंगे।"

अब मुंशी जी की जान में जान आयी। वह फिर 'जय राम जी' करके वापस आये और ड्योढ़ी में अपने काम में लग गये।

इस बात को अभी एक पखवारा बीता था कि मुंशी जी फिर चक्कर में पड़ गये। सवेरे आने के बाद सन्दूकची से खाता का बस्ता निकालकर 'महादेव बावा की जय', मन-ही-मन कहते हुए वह अभी बस्ते की गाँठ खोल ही रहे थे कि रामप्यारी की नौकरानी आ धमकी और हाथ मटकाते हुए बोली, "मुंसी जी, छोटी मलकिन बुलावत हैं।"

नौकरानी के बोल में जैसे बिजली हो। सुनते ही मुंशी जी के हाथ गाँठ से अलग हो गये और मुंह से अकस्मात् निकल गया, "आँ!"

"आँ नहीं, चलो," नौकरानी ने मुस्कराते हुए कहा।

मुंशी जी नौकरानी का मुंह ताकने लगे, "क्या बात है सूखा?" उन्होंने धीरे से पूछा। "बताओ तो!"

"हम भला का बतायी। बोलायेन हैं," सुखिया ने अपनी ठुड्ढी पर हाथ रखते हुए उत्तर दिया।

"चलो।" और मुंशी जी दोनों घुटनों पर हाथ रखकर उठे।

सुखिया आगे-आगे और उसके पीछे-पीछे लड़खड़ाते मुंशी जी इस तरह जा रहे थे जैसे डोर से बंधे हों, जिसे सुखिया खींच रही हो।

"मुंसी जी आ गये, छोटी मलकिन।" सुखिया ने इत्तिला दी।

"मुंसी जी, एक हजार रुपये जल्दी दे जाओ।" रामप्यारी एक साँस में कह गयी।

सुनते ही मुंशी जी चकरा गये, लेकिन कहा सिर्फ़ इतना, "बहुत अच्छा, छोटी मलकिन।" और उलटे पाँव बाहर आये।

रणवीर सिंह के बैठक वाले कमरे की ओर बढ़कर बाहर से ही झाँककर मुंशी जी ने देखा। रणवीर सिंह बैठे थे। मुंशी जी भीतर गये और 'जय राम जी' कहकर छोटी मालकिन का तकाजा सुनाया।

"किसलिए?"

"सो तो मालूम नहीं, सरकार।"

रणवीर सिंह कुछ सोचने लगे।

"खजाने में कितने रुपये हैं?"

"हैं तो दस हजार, अन्नदाता।" मुंशी जी ने बताया। "पै मालगुजारी देनी है। एक-एक पैसे की खींचतान है या वखत।"

"पाँच सौ दे आओ।"

"जो हुकुम सरकार।"

मुंशी जी गये और पाँच सौ निकालकर मुट्ठी में लिये और छोटी मालकिन के कमरे की तरफ़ बढ़े।

कमरे के पास पहुँचे, तो थोड़ा खकारकर बोले, "खूबचन्द हाजिर है छोटी मलकिन।"

"लाओ।"

मुंशी जी ने दस-दस के नोटों की गड्डी दरवाजे से ही अन्दर फ़र्श पर रख दी और दरवाजे से थोड़ा हटकर खड़े हो गये।

रामप्यारी ने गड्डी उठायी। उसे गिना। गिनते ही उनका तन-बदन जल उठा, जैसे दहकता अंगारा पकड़ लिया हो। वहीं से नोट इस तरह फेंके के खूबचन्द के मुँह पर लगे और इधर-उधर बिखर गये। साथ ही सीढ़ियों से लुढ़कती फूल की थाली-सी झनझनायी, "भिखारिन समझ लिया है हमें?"

मुंशी जी नौकरी के अखाड़े के मँजे हुए पहलवान थे। महिपाल सिंह के समय से अब तक झिड़कियों की न जाने कितनी पटखनियाँ खा चुके थे और लताड़ों की मिट्टी झाड़कर फिर मैदान में खड़े हो गये थे। मुँह पर गिरे नोटों को फूलों की वर्षा की भाँति उन्होंने लिया और बड़ी तेजी से इधर-उधर बिखरे नोट उठाने लगे। सब नोट इकट्ठे कर एक बार गिने और चुपचाप खड़े हो गये।

"अब क्या ताक रहे हो, हटो सामने से!" रामप्यारी सिंहनी-सी दहाड़ी।

मुंशी जी गर्दन झुकाये धीरे-धीरे चले और रणवीर सिह के कमरे में हाजिर हुए। उन्हें सारा किस्सा सुनाया।

मुंशी जी का कुछ अपमान हुआ है, इस ओर रणवीर सिंह का ध्यान ही न गया। उन्होंने पूछा, "मुंशी जी, बड़ी मालकिन के खाते में कितने हैं?"

"उसमें कोई पाँच हज़ार हैं, सरकार।"

"तो उससे एक हज़ार दे दो।"

"जो हुकुम..." मुंशी जी ने कहा, लेकिन वहीं खड़े रहे।

"क्या बात है?"

"अनदाता, रुपिया मैं निकार के सरकार के हाथ में धर दूं।"

रणवीर सिंह हँसे। "डरते हो बहूरानी से?"

"बहुत नाराज हैं, हुजूर।" मुंशी जी ने खीस निकाल दी।

"ले आओ।"

मुंशी जी ने लाकर एक हज़ार रुपये दिये और रणवीर सिंह लेकर सुभद्रा देवी के पास गये। उन्हें सब कुछ समझाकर वापस अपने कमरे में आ गये।

सुभद्रा देवी रुपये लेकर अपनी देवरानी के कमरे में गयी जो अब भी मुंह फुलाये पलँग पर बैठी थी।

"क्या कर रही हो, छोटकियऊ?"

रामप्यारी ने अपना मुंह और फुला लिया।

"ये लो रुपये," सुभद्रादेवी ने नोटों की गड्डी रामप्यारी के हाथ में रख दी और उनके पास ही पलँग पर सिरहाने बैठ गयी।

"रहने दीजिये दीदी, यह भीख।" रामप्यारी ने नोट हाथ से पलँग पर गिरा दिये।

"ज़रा-सी बात पर इतना गुस्सा!"

"आपको ज़रा-सी बात लगती है। भैया बैठे थे जब हमने एक हज़ार कहे। उनके सामने ही पाँच सौ रुपल्ली दे दिये, जैसे इस घर में हमारा कुछ है ही नहीं।"

"यह तो तुम बात का बतंगड़ बना रही हो, छोटकियऊ," सुभद्रा-देवी शान्त स्वर में बोली और बताया, "मालगुजारी भरनी है। पैसे की बड़ी तंगी है।"

"सिर्फ हमारे लिए, दीदी?" रामप्यारी ने आँखें तरेरकर पूछा, लेकिन सुभद्रा देवी की दृष्टि उधर न थी।

"दूसरे ही कौन रोज गड्डियाँ उड़ा रहे हैं।"

"अभी उस दिन दो बनारसी, तीन जयपुरी साड़ियाँ आयी। लखनऊ से जड़ाऊ कँगन।"

"ओ!" सुभद्रा देवी ने मुँह बनाया, "तो तुम जल गयीं!"

"जलने की क्या बात है? दादा जी की नजर में तो सब बराबर होने चाहिए।"

"तो तुम्हारे दादा जी नहीं लाये। वे चीजें हमारे मायके के पैसों से आयी थीं।" सुभद्रा देवी ने बताया। थोड़ा रुककर कहा, "ये रुपये भी हम अपने खाते से दे रही हैं।"

"मुझे नहीं चाहिए, ले जाइए।" और रामप्यारी ने नोट उठाकर सुभद्रा देवी के हाथ में रख दिये। "बात हक की है। मैं एहसान नहीं चाहती, दीदी!"

सुभद्रा देवी एकटक देवरानी को देखती रही। फिर बोली, "ले लो।"

"छू भी नहीं सकती।"

इतना सुनकर सुभद्रा देवी रुपये लेकर वापस चली गयी।

2

फर्शी हुक्के की नली थामे रणवीर सिंह अपनी बैठक में अकेले बैठे थे आराम कुर्सी पर। उन्हें लग रहा था जैसे नली में कुछ अटका हो और धुआँ ठीक से न आ रहा हो। स्टूल पर रखे लैंप पर निगाह डाली, तो लगा जैसे वह मिट्टी के दीये-सा टिमटिमा रहा हो। नली को मुँह से लगाया और जोर से धुआँ खींचा। उसमें तम्बाकू का स्वाद न मिला। मुँह ऐसी कड़वाहट से भर गया जैसे तम्बाकू जल गया हो, सिर्फ उसकी

राख से मिली आग का धुआँ मुँह में आया हो। उन्होंने नली निकालकर कुर्सी के हत्थे से टिका दी और छत की ओर कुछ क्षण यों ही देखते रहे विचारशून्य, फिर उठे और कमरे से निकलकर शिथिल पैर रखते हुए सीढ़ियाँ चढ़कर छत पर चले गये और अकेले टहलने लगे।

दलवीर सिंह ने बँटवारा करने को कहा था। इस पर उन्हें क्षोभ न था और न आश्चर्य ही। लेकिन पिता की बरसी भी नहीं हुई और इसी बीच दलवीर ने बँटवारे की बात उठा दी। यह उनके लिए शर्म की बात थी। लोग क्या कहेंगे!

सुभद्रा देवी के मायके में सिर्फ़ उनके पिता थे, कोई भाई न था, सगा न चचेरा। उनके कोई फूफी भी न थी। इसलिए सारी जायदाद का वारिस सुभद्रा देवी के बेटे को होना था। उनके पिता अपनी सारी जायदाद का वली सुभद्रा देवी को बना गये थे जिसकी देखभाल उन्हें बेटा होने और उसके बालिग हो जाने तक करनी थी। बेटे के बालिग होने पर वह अपने नाना की जायदाद का वारिस बनेगा।

दलवीर सिंह इस जायदाद में भी हिस्सा चाहते थे। उनका तर्क यह था कि शादी जब हुई थी, तब पिता की सारी जायदाद शामिल की थी। इसलिए यह जायदाद भी उसी में मिल गयी।

रणवीर सिंह ने बहुतेरा समझाया, इसमें तुम्हारा हक नहीं पहुँचता, लेकिन दलवीर ने एक न सुनी। उन्होंने बड़ी अकड़ के साथ कहा, "मैं ठाकुर के मूत से नहीं, अगर आधा हिस्सा न ले लूँ।"

रणवीर सिंह को भी गुस्सा आ गया ख्वाहमख्वाह की कठहुज्जत पर और चुनौती दे दी, "तो जैसा तुम्हें समझ पड़े, वैसा करो। अदालत है। चाहो, तो घर के धान पुआल में मिलाओ। लेकिन निमुवा-नोन चाटकर रह जाओगे।"

दलवीर सिंह ने भी ताव में आकर कह दिया, "तो ईंट-से-ईंट बज जायेगी। भाई का हक हड़प जाना हँसी-खेल नहीं। महाभारत हो गया था इसकी खातिर।"

"तो महाभारत ही कर लो," रणवीर सिंह भी कह गये।

ये सारी बातें रणवीर सिंह के मन में इस समय घूम रही थीं।

दलवीर स्वभाव से तेज और अक्खड़ है। उन्हें आशंका हो रही थी, लक्षण अच्छे नहीं। कौन जाने, क्या तूफ़ान खड़ा कर दे।

उधर दलवीर सिंह ने रामप्यारी को सब कुछ बताया और दूसरे दिन से दलवीर और रामप्यारी का भोजन उनके कमरे में आने लगा। न दलवीर बड़े भाई के साथ चौके में बैठकर भोजन करते और न रामप्यारी अपनी जेठानी सुभद्रा के साथ, जैसा पहले होता था।

यह बात नौकर-चाकरों को कुछ अजीब-सी लगी, लेकिन बोला कोई कुछ नहीं। किसी को साहस न हुआ कि बड़ों की बात पर किसी तरह की टिप्पणी करे। हाँ, एक-दो दिन में छनकर यह बात गाँव में ज़रूर फैली और ठाकुरों, ब्राह्मणों में कुछ काना-फूसी होने लगी। फिर भी अभी सब इसकी राह देख रहे थे कि पर्दा उठने पर अभिनेता किस रूप में मंच पर आते हैं।

दलवीर सिंह कानपुर गये। वहाँ अपनी ससुराल से साले को भी बुला लिया था। दीवानी के एक-दो माने हुए वकीलों से बात की। लेकिन सारा किस्सा सुनने के बाद वकीलों ने राय दी, मामले में कुछ जान नहीं है। आपका हक नहीं पहुँचता।

साले ने इलाहाबाद चलकर हाईकोर्ट के वकीलों से सलाह करने की राह सुझायी और दोनों इलाहाबाद पहुँचे। वहाँ के वकीलों ने भी यही कह दिया, मुकदमा लड़ना फिज़ूल होगा। आप पा नहीं सकते।

माँ द्रौपदी देवी भी पिता महिपाल सिंह के छः महीने बाद चल बसी थीं। जोड़ने वाली कोई कड़ी न थी। बँटवारा हो गया। पिता की जायदाद दोनों ने बराबर-बराबर पायी। महल का मेहमानखाने वाला हिस्सा दलवीर सिंह को मिला। लेकिन सुभद्रा देवी की मायके की जायदाद जुड़ जाने के कारण रणवीर सिंह का हिस्सा बहुत बढ़ गया। उसी हिसाब से उनका वैभव भी। दलवीर सिंह को इसमे हिस्सा न मिला था, यह बात उन्हें बराबर सालती रहती। वह इसी सोच मे रहते, कैसे रणवीर सिंह को नीचा दिखाया जाय।

रिन्द नदी से कोई दो मील उत्तर, कानपुर शहर से दक्षिण-पूर्व में बसा किशनगढ़ काफी बड़ा गाँव है। आबादी कोई दो हज़ार होगी। यहाँ सभी जातियों के लोग हैं, ब्राह्मण, ठाकुर और अहीर अधिक संख्या में। गाँव में सप्ताह में दो बार बाज़ार लगता है। यहाँ के ज़मींदार काफ़ी बड़े हैं। उनके सात मुसल्लम गाँव हैं।

गाँव के उत्तर-पूर्व में करीब आठ बीघे के अहाते के अन्दर ज़मींदार का दो-मंजिला महल है जिसे लोग गढ़ी कहते हैं। गढ़ी का प्रवेश द्वार उत्तर की ओर है। फाटक से घुसते ही बड़ा सहन। सहन में पश्चिम की ओर बड़ी फुलवारी जिसमें गेंदा, गुलाब और चमेली के पौधे हैं। कलमी आम और अमरूद के भी पेड़ हैं। एक पेड़ नीम का भी है। सहन पार कर कुछ सीढ़ियाँ चढ़ने पर महल के प्रवेश द्वार पर पहुँचते हैं। यहाँ एक बड़ा चौपाल-सा बना है जहाँ टाट बिछाये कारिन्दे ज़मींदार का काम किया करते हैं। यह स्थान ड्योढ़ी कहलाता है। दरवाज़े से अन्दर जाने पर एक बड़ा आँगन है। इस आँगन के पूर्व की ओर जनानखाना है और दक्षिण की ओर मर्दों के बैठने के लिए कई बड़े-बड़े कमरे। इन कमरों के सामने बारह खम्बों का एक बरामदा है जो बारहदरी कहलाता है। गाँव वालों से ज़मींदार यहीं मिलते हैं। आँगन के पश्चिम में एक दरवाज़ा है। इससे मेहमानखाने जा सकते हैं। मेहमानखाना ऐसा बना है जैसे इस महल की ही दूसरी प्रति हो। उसका मुख्य द्वार पश्चिम की ओर है। वहाँ भी सहन है और सहन के पूर्व में है फुलवारी, जिसे महल की फुलवारी से सिर्फ़ एक दीवार अलग करती है। सहन पार करने पर ड्योढ़ी जैसी जगह, फिर दरवाज़ा और अन्दर एक आँगन। इस आँगन के बाद दक्षिण में बारहदरी और पुरुषों के बैठने के कमरे और पश्चिम की ओर जनानखाना।

महल के अहाते के दक्षिण में एक बड़ा गलियारा है। इस गलियारे के पार है ठाकुरों का टोला। ठाकुरों के मकानों के चौपाल आमतौर से पक्के हैं, बाकी घर कच्चे। ठाकुरों के टोले से लगा ब्राह्मणों का टोला है। ब्राह्मणों में ज़मींदार के पुरोहित घनेश्वर मिश्र का मकान करीब-करीब कुल पक्का एक मंजिल का है। बाकी ब्राह्मणों के मकान कच्चे हैं। किन्हीं-

किन्ही के चौपालों के खम्भे और बाजू पक्के हैं, जैसे पं० रामअधार दुबे के। अहीरों का टोला गांव के पश्चिम की ओर है। अहीरों के मकान आमतौर से कच्चे हैं। गढी के पश्चिम से गांव के उत्तर से दक्षिण तक जाने वाला बड़ा गलियारा अहीरों के टोले को ठाकुरों और ब्राह्मणों के टोले से अलग कर देता है। अहीरों के टोले के दक्षिण-पश्चिम में बहुत ही छोटे-छोटे, आमतौर से फूस की छत के कच्चे घर चमारों, पासियों, भंगियों आदि के हैं। बाजार उत्तर से दक्खिन तक जाने वाले गलियारे के पास बीच गांव में लगता है। यहीं महादेव जी का मन्दिर है और इस मन्दिर से थोड़ा पूर्व की ओर जाने पर शीतला देवी का मन्दिर है जिसे लोग चौमुजी माता का मन्दिर कहते हैं। बाजार के आस-पास बनियों, हलवाइयों आदि दुकानदारों के मकान हैं। गांव के पूर्वी छोर पर बरगद का एक बड़ा पेड़ है। जेठ के महीने मे बरगदी अमावस यानी सावित्री वट पूजा के दिन गांव-भर की सधवा स्त्रियाँ धराऊ कपड़े, आमतौर से ब्याह के लहँगे पहन, खूब बन-ठन कर और महावर लगवाकर यहाँ बरगद पूजने आती हैं। बाकी दिन लड़के सुबह से शाम तक यहाँ खेलते रहते हैं।

गांव के उत्तर और पश्चिम में खेत हैं। कुछ खेत पूर्व और दक्खिन मे भी हैं। लेकिन पूर्व दिशा की खास चीज है बहुत बड़ी चरागाह, जो अलग-अलग किसानों मे बँटी है और दक्खिन की विशेषता है,वह जंगल जो रिन्द नदी के कगार तक चला गया है। इसमें ढाक और बबूल के पेड़ हैं। कुछ पेड़ शीशम और अर्जुन हर्रे के भी हैं। जंगली बेरों और मकोयों की झाड़ियाँ भी यहाँ बहुत हैं। जंगल में उगने वाली घास गांव के सब लोग चराते हैं और यहाँ के बबूल तथा ढाक की लकड़ी हल बनवाने, छतें पाटने आदि के काम आती है। गांव के उत्तर कोई दो फर्लांग पर नहर है। खेतो की सिंचाई का यह मुख्य साधन है।

3

जुल्फ़िया को कानपुर लौटे करीब एक साल हो रहा था और अब वह एक बच्ची की माँ बन गयी थी। महिपाल सिंह के न रह जाने पर द्रौपदी देवी ने रणवीर सिंह को पट्टी पढ़ायी, "यही मौका है इस बला को बाहर करने का।" रणवीर सिंह खुद भी जुल्फ़िया को हथियाने की ताक में थे। गाँव में रहकर ऐसा हो न सकता था। सारे गाँव में बदनामी होती। आखिर थी तो बप्पा साहब की। उन्होंने जुल्फ़िया को ऊँच-नीच समझाया और बंगाली मोहाल मे छोटा-सा दो-मंज़िला मकान किराये पर ले दिया। बुआ को चलता किया और शहर के विश्वासी जान-पहचान वालों की मदद से एक औरत को सेवा-टहल के लिए रखा।

जुल्फिया की बच्ची के नाक-नक्श बिलकुल उस जैसे थे। फूल-सी बच्ची को जुल्फ़िया छाती से लगाती, दुलराती और गाती—"सो जा मेरी रानी बेटी, सोने का पालना।"

अभी बच्ची कुल एक महीने की हुई थी। रणवीर सिंह उसे देखने आये सवेरे के वक़्त। गाँव से काफ़ी रात गये आये थे। बच्ची को गोद में लिया, दुलराया, उसकी ठुड्डी पकड़ कर हिलायी, पेट सहलाया। जुल्फ़िया देख रही थी और खुश थी।

"बिलकुल तुम पर गयी है," रणवीर सिंह ने कहा।

"बेटी तो मेरी है।" जुल्फ़िया ने हँसकर उत्तर दिया।

रणवीर सिंह ने 'हूँ' किया और पूछा, "हमारी ज़रा भी नहीं?"

"आपकी क्यों नहीं? नाक और पेशानी आप-जैसी है।" जुल्फ़िया बोली। "लेकिन बेटी अगर हमारी-जैसी है, तब तो और अच्छा।"

जुल्फ़िया ने सहज भाव से कहा था, फिर भी रणवीर सिंह चौंक गये। नौकरानी से सब हाल-चाल मालूम किये, जुल्फ़िया से पूछा, किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं और चले गये। कचहरी जाना था।

रणवीर सिंह सीढ़ियों से नीचे उतरे, लेकिन जुल्फ़िया का अन्तिम वाक्य उनके मन में गूँज रहा था। उन्होंने सोचा, जुल्फ़िया कुछ भी क्यों न हो, यह बच्ची तो हमारा बीज है। राजपूत की बेटी और···! कल्पना करते

भी उन्हें डर लग रहा था। लेकिन इस 'और' के बाद वाली बात ही रह-रह कर उनके मन को मथ रही थी। उन्होंने बच्ची की सोलह-अठारह साल उम्र की कल्पित मूर्ति मन मे बनायी, जुल्फ़िया-जैसी और कांप गये। यह किसी की रखेल बनेगी या कोठे पर बैठेगी, उन्होंने सोचा। रणवीर सिंह बेचैन हो उठे।

कचहरी के लिए तांगा पकड़ा, लेकिन यह विचार पीछा किये रहा। कचहरी से परेड वाले अपने मकान कोई दो घंटे बाद लौटे, तब भी उसने पिंड न छोड़ा।

रणवीर सिंह कपड़े उतारे बगैर पलंग पर बैठ गये और सोचने लगे, राजपूत किसी को लड़की न देते थे। लड़की को खत्म कर देना बेहतर समझते थे। वह बात तो अब रही नही। लेकिन यह मेरी बेटी। किसी राजपूत के यहाँ शादी हो सकेगी ? इसका सवाल ही नही उठता। तो ? रणवीर सिंह के मन मे राजपूतो का पुराना चलन अपनाने की बात आयी। उन्होंने सिर को झकझोरकर यह विचार निकालने की कोशिश की। मासूम बच्ची की हत्या, वह भी अपनी बेटी की! उनका दिल कांप गया। लेकिन घूम-फिर कर मन इसी बिन्दु पर आ टिकता।

शाम को रणवीर सिंह जुल्फ़िया के यहाँ गये, तो बिल्कुल उदास। बच्ची पालने पर सो रही थी। जुल्फ़िया ने बच्ची पर ढके कपड़े को उठा दिया जिससे रणवीर सिंह देख लें, लेकिन उन्होंने उधर निगाह तक न डाली। जुल्फिया ने उनका उतरा हुआ चेहरा देखा।

"क्या बात है ?" उसने चिन्तित होकर पूछा। "कचहरी में..."

"कुछ नही।" संक्षिप्त उत्तर निकला।

"तो, तबीयत खराब है क्या ?"

"नही तो।" आवाज पस्त थी।

रणवीर सिंह पलंग पर बैठ गये। जुल्फिया उनसे सटकर बैठी थी गलबहियाँ डाले।

"बताइये तो!" जुल्फ़िया ने दूसरे हाथ से उनका हाथ हिलाते हुए पूछा।

"जुल्फ़िया, मन बड़े धर्म-संकट मे पड़ गया है," व्यथित स्वर में

रणवीर सिंह बोले और सब कुछ बता दिया।

जुल्फ़िया का दिल धक से हुआ। रणवीर सिंह के गले पर पड़ी बांह शिथिल होकर गिर गयी। उससे कुछ कहते न बन पड़ा।

"लड़का होता, तो कोई बात न थी," रणवीर सिंह फिर बोले।

जुल्फ़िया की खुशियों पर पाला पड़ गया। रणवीर सिंह कोई दो घंटे रहे। उनके जाने के बाद वह सोचने लगी, मर्द का क्या ठीक, फिर ठाकुर का! कुछ भी कर सकता है। उसे लगा जैसे रणवीर सिंह वहाँ खड़े हों, आँखें फाड़े, बदहवास और उस नन्हीं-सी बच्ची का गला दबोच लिया हो। वह उठी और बच्ची को पालने से उठाकर गले से लगाया, चूमा और आँसुओं से उसके गालों को तर कर दिया। जुल्फ़िया ने तय कर लिया, जब वह आयेंगे, बच्ची को टाल दिया करूँगी ताकि उनकी आँखों के सामने न पड़े। उसने एक ईसाई आया भी रखी खूब छान-बीन कर, खास कर बच्ची की देखभाल के लिए।

4

छरहरे बदन की जुल्फ़िया अभी सिर्फ अठारह साल की थी। पतली कमर, एक-एक कदम नापकर धरती, तो बेंत की छड़ी-सी बल खाती। घनी, घुंघराली केशराशि के बीच हँसता मुखड़ा, आम की फांक-सी बड़ी-बड़ी सुरमई आँखों के लाल डोरे सदा खुमारी बनाये रखते। ऊँची, पतली नाक, स्वाभाविक पान-रचे-से पतले ओंठ। दाँतों की सफ़ेद पाँत जिसके किनारों पर मिस्सी की हलकी श्यामल-रेखा जैसे बादलों के टुकड़ों के बीच बिजलियाँ कौंध रही हों। कुँवार की पूनो को छत पर सफ़ेद साड़ी पहन जब खड़ी हो जाती, पता न चलता चाँदनी उसे निखार रही है या उसका गोरापन चाँदनी में और चमक भर रहा है। नख-शिख रूप की इस राशि पर महिपाल सिंह सौ जान से निछावर थे।

जुल्फ़िया से पहचान और उसके किशनगढ़ आने की भी कहानी है।

जुल्फ़िया की माँ मेहँदी जान गाने के लिए जंवार में प्रसिद्ध थी और महिपाल सिंह की भी पक्के गानों से लेकर गज़ल, ठुमरी तक सब में रुचि थी। जब भी कानपुर जाते, मेहँदी जान को इत्तला कराते और मुजरे की दो-तीन शामें सिर्फ महिपाल सिंह के लिए होती। मेहँदी जान के गले में दर्द-भरी ऐसी मिठास थी कि उसके बोल महिपाल सिंह के दिल तक पैठ जाते। मेहँदी जान गालिब की गज़ल उठाती—'ये न थी हमारी क़िस्मत कि वेसाले यार होता' और महिपाल सिंह झूमने लगते। 'ये कहाँ की दोस्ती है कि बने हैं दोस्त नासेह, कोई चारासाज होता, कोई ग़मगुसार होता'—इस शेर तक वह इतने विभोर हो जाते कि मेहँदी जान को गले से लगा कर हाथ उसके सीने की तरफ़ बढ़ा देते।

"यह क्या!" मेहँदी जान छुई-मुई बन जाती और वह जितने ही नखरे दिखाती, महिपाल सिंह उतने ही उसकी ओर खिंचते।

यह सिलसिला बरसों चला। इधर जुल्फ़िया सिन पर आ रही थी। षोडशी तुम हो गयीं सुकुमारि—उसकी अल्हड़ अदाएँ बता रही थीं। वेश्या अपने कफ़न का भी बन्दोबस्त कर जाती है, यह सहज ज्ञान मेहँदी जान को विरासत मे मिला था। उसने एक शाम महिपाल सिंह को पान पेश कराये जुल्फिया से।

"कुँवर साहब, बाँदी आदाब अर्ज करती है।" कोयल-सी कूक कर जुल्फिया ने झुककर तश्तरी महिपाल सिंह के सामने पेश की। महिपाल सिंह ने जुल्फ़िया को देखा, तो देखते ही रह गये। दो अँगुलियाँ चाँदी के वर्क लगे बीड़ों से चिपकी थीं और महिपाल सिंह की आँखें जुल्फ़िया के चेहरे पर।

"यह मेरी बेटी है हुज़ूर, जुल्फ़िया।" मेहँदी जान ने कहा। "आज इसका गाना सुनिये।"

साजिन्दे तैयार हुए, और जुल्फ़िया ने पतले, टीस-भरे स्वर में मीरा का भजन उठाया :

हेरी मैं तो प्रेम दिवानी, मेरो दरद न जाने कोय।

जुल्फ़िया का एक-एक बोल महिपाल सिंह के दिल में घुमन पैदा कर रहा था।

भजन चल रहा था, तभी मेहँदी जान उठ गयी और महिपाल सिंह जो गाव-तकिये के सहारे अधलेटे-से थे, जरा उठ बैठे और अपनी बाँह बढ़ाकर ज़ुल्फ़िया की कमर में डाल दी और उसे पास खींच लिया।

"सरकार!" सोज-भरे काँपते स्वर में ज़ुल्फ़िया ने इतना ही कहा।

"तुम मेरे गले का हार बनो, ज़ुल्फ़िया," महिपाल सिंह अजीब लड़खड़ाते स्वर में बोले।

ज़ुल्फ़िया ने अपना शरीर ढीला कर दिया था। वह महिपाल सिंह के सीने से प्रायः सटी हुई थी, लेकिन बनावटी भय के साथ उसने चेताया, "हुज़ूर, अम्मी जान आ जायेंगी···फिर ये साजिन्दे···और अभी···" और अपने को महिपाल सिंह की पकड़ से छुड़ाने की बनावटी कोशिश की।

जरा खकारकर मेहँदी जान कमरे में आयी। ज़ुल्फ़िया वहाँ से दूसरे कमरे में चली गयी। महिपाल सिंह ने अपनी ख्वाहिश ज़ाहिर की।

"हुज़ूर, अभी तो वो बच्चा है," मेहँदी जान ने ऐसे लहजे में कहा जिसका आशय अनुभवी महिपाल सिंह समझ गये।

"अछूती कली है," महिपालसिंह बोले, "तभी तो भौंरा रीझा है।"

इसके बाद नथ उतराई के लिए बटेश्वर के जानवरों के मेले मे मोल-भाव होने लगा, दो सयानों के बीच।

"सरकार, अभी कल की बात है," मेहँदी जान खूब सहज स्वर में बताने लगी, "वो आये थे जहानाबाद वाले नव्वाब साहेब। पाँच हज़ार क़ालीन पर रख दिये। ईमान क़सम, मैंने इन्कार कर दिया।"

महिपाल सिंह समझ रहे थे, खूब छँटी हुई है। जहानाबाद का वह फटीचर बरकतउल्ला और पाँच हज़ार! पाँच सौ देने की भी तौफ़ीक नहीं। फिर भी उन्होंने बात दूसरे ढंग से की।

"तो मेहँदी जान, हम तो एक के होकर रहते हैं। तुम्हारे यहाँ आते-जाते कितने साल हो गये। पता लगा लो बाज़ार में, अगर और कहीं झाँकने तक गये हो।"

मेहँदी जान को वे दिन याद आ गये जब महिपाल सिंह उसके यहाँ आते थे, उधर छुन्नी पर भी लट्टू थे। उसके यहाँ भी जाते थे। वह

तो उन्नाव वाले राव साहब थे जो कबाब में हड्डी की तरह आ गये। वह छुन्नी को पटा ले गये। यह रह गये टापते। लेकिन मेहँदी जान ने सोचा, हमें इस सबसे क्या मतलब ? हमें तो आम खाने हैं। इसलिए वह अनुभवी सौदागर के लहजे में बोली, "सो तो दुरुस्त फ़रमाते हैं, हुजूर। आप हुक्म कीजिये, बाँदी की जुरअत जो आपकी बात काटे ?"

महिपाल सिंह ने एक क्षण सोचा, फिर दाहिने हाथ की तर्जनी उठाकर हिलाते हुए बोले, "यही तो उम्मीद है तुमसे।"

"सरकार," मेहँदी जान ने हाथ जोड़कर कहा, "गुस्ताखी मुआफ़ हो। यह तो हुजूर की जुल्फ़िया की एक मुसकान की निछावर है।" थोड़ा रुककर बोली, "बन्दा परवर, जुल्फ़िया खरा सोना है, बिलकुल खरा, एक रत्ती भी खोट नहीं।" और महिपाल सिंह की जाँघ पर दाहिना हाथ रख दिया। "सरकार, हम खानदानी रण्डी हैं, टकहाई कस्बी नहीं, जिनके यहाँ तीन-तीन दफ़े नथ उतरती है।"

अन्त में दो हज़ार नक़द पर नथ उतारने की रस्म पक्की हो गयी। महिपाल सिंह जिस शाम यह रस्म पूरी करने गये, लग रहा था मण्डप में द्रौपदी देवी को ब्याहने जा रहे हों। रेशमी शेरवानी, चूड़ीदार पायजामा, सलीमशाही जूते, सिर पर जयपुरी ढंग से बँधा साफ़ा, साथ में दो नौकर, एक के हाथो में मिठाइयों से भरा थाल, दूसरे के थाल में साड़ियाँ, लहँगे, ओढनियाँ। जब वह मेहँदी जान के कोठे की सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे, ऊपर शहनाई बज रही थी।

कुछ दिनों बाद महिपाल सिंह ने जुल्फ़िया को पूरी तरह से अपनी बना लेने की बात उठायी।

"आपकी ही तो है सरकार," मेहँदी जान ने अदब के साथ कहा।

"फिर भी, क्यों न बिलकुल हमारी होकर रहे ?"

और फिर मोलभाव चला। मेहँदी जान ने बड़े गर्व से कहा, "हुजूर, ऐसी वफ़ादार सात फेरों वाली भी शायद न हो। हमारा क़ायदा है, जिसकी हो गयी, जनम-भर उसकी बनी रहीं, चाहे सूखा हो या गीला।"

मेहँदी जान के इस आश्वासन ने काम किया और दो हज़ार महीने पर सौदा तय हो गया। जुल्फ़िया और उसकी माँ मेहँदी ज़ान और साजिन्दे

वह कोठा छोड़कर रामनारायण के बाज़ार के एक छोटे से दो-मंजिले मकान में आ गये।

कुछ समय बाद मेहंदी जान ने अचानक आँखें मूंद लीं और जुल्फ़िया बेसहारा हो गयी। महिपाल सिंह जब उसके यहाँ गये, जुल्फिया उसके सीने से लगकर रोयी। महिपाल सिंह ने बहुतेरी सांत्वना दी, लेकिन जुल्फ़िया को धीरज न बँधा।

"अब आप ही सोचें सरकार, बैल और औरत दोनों को सहारा चाहिए।"

दो दिन तक समझाने-बुझाने, सोचने-विचारने के बाद अन्त में महिपाल सिंह को किशनगढ़ लाने का प्रबन्ध करना पड़ा।

जुल्फ़िया, उसके यहाँ सेवा-टहल करने वाली बुआ और चार साजिन्दे दोपहर होने तक किशनगढ़ आ गये।

महिपाल सिंह किसी को रखे हैं, यह तो कुछ को मालूम था, लेकिन आँख ओट, पहाड़ ओट वाली बात थी। जुल्फ़िया के किशनगढ़ आने पर ऐसा भूडोल आया कि गढ़ी की नीव हिल गयी। महिपाल सिंह के दोनों बेटों, रणवीर सिंह और दलवीर सिंह ने जुल्फ़िया को देख लिया था। दोनों ने मन-ही-मन सोचा, बप्पा साहब, माल तो बढ़िया लाये हैं। लेकिन दोनों को हँसी आयी, इस उम्र में! बहुओं, सुभद्रा देवी और रामप्यारी ने जुल्फिया को न देखा था, नौकरानियों के मुँह से सुना था, बिल्कुल छोकरी है, अठारह-बीस की। जबान उन्होंने न खोली, लेकिन दोनों के सामने अपनी सास द्रौपदी देवी की मूर्ति घूम गयी। अम्मा साहेब पर क्या बीतेगी? इस छोकरी के सामने उनकी क्या पूछ होगी? उन्होंने सोचा।

द्रौपदी देवी तो जैसे दो-मंजिले की छत से जमीन पर औंधे मुँह गिरीं। वह नहाकर तुलसी चौरे के पास खड़ी तुलसी जी पर जल चढ़ा रही थीं, तभी उनके कानों में कुछ भनक पड़ी। बाद में ब्योरा मालूम हुआ। जुल्फ़िया को उन्होंने देखा न था। जुल्फ़िया की काल्पनिक मूर्ति उनके सामने आ गयी, विद्रूप करती। उन्हें लगा, जैसे उनकी नौकरानियाँ, महराजिन भी उन्हें देख-देख कर मुँह बनाकर मुसकराती हों, दीवारें तक

उनकी हँसी उड़ा रही हों।

नौकरानी भोजन करने को बुलाने आयी। उन्होंने भरे स्वर में कह दिया, "तबीयत ठीक नहीं।" और अपने कमरे में चली गयीं। पलँग पर बैठी, तो लगा जैसे पलँग कहीं नीचे धँसा जा रहा हो। वह उठीं और फर्श पर बिछा कालीन घसीटकर पास की अँधेरी कोठरी में चली गयीं जिसमे कपड़ों के बक्स, गहनों और रुपयों की तिजोरी रहती थी। वह कोठरी के अँधेरे मे डूब जाना चाहती थीं।

महिपाल सिंह ने मेहमानखाने की ऊपर वाली मंज़िल में ज़ुलफ़िया को ठहराया। बुआ उसके पास रहीं। एक नौकर से पानी वगैरह का इंतज़ाम करने को कहा। साजिन्दों को ड्योढ़ी के पास बने दो कमरे रहने को दिलाये।

यहाँ से निबटकर भीतर अपने कमरे मे गये, तो द्रौपदी देवी न दिखीं। चारों ओर नज़र दौड़ायी। उनका माथा ठनका और किसी से पूछने के बदले कोठरी मे झाँका, दबे पाँव जाकर कालीन पर बैठ गये और द्रौपदी देवी के सिर पर हाथ रखा।

"यहाँ क्यों लेटी हो?" धीरे से पूछा।

द्रौपदी देवी ने उनका हाथ झटककर सिर से अलग कर दिया और करवट बदल ली।

"चलो, भोजन करें।"

"आप कर लीजिये।" भरे स्वर में द्रौपदी देवी ने उत्तर दिया।

"बात क्या है?" सब कुछ समझते हुए भी महिपाल सिंह ने पूछा।

"बात कुछ नहीं।" द्रौपदी देवी की वाणी काँप रही थी। "हम मायके चली जायेंगी।"

अब महिपाल सिंह को कुछ सहारा मिला। वह बोले, "तुम तो नाहक तिल का ताड़ बनाती हो। तुम्हारी जगह भला कोई ले सकता है?"

द्रौपदी देवी का आसन डोल गया था, यह वह समझती थीं, फिर भी उत्तर दिया, "यह तो पता था, कोई है। लेकिन अब हमारी छाती पर मूँग दले···इससे यही अच्छा, हमें मायके भेज दीजिये।"

"तभी तो कहते हैं, तिल का ताड़ बनाती हो," महिपाल सिंह ने

मुलायम स्वर मे समझाते हुए कहा । "तुम हो घर की मालकिन, रानी । वह पड़ी रहेगी मेहमानखाने में ।"

द्रौपदी देवी जानती थी कि घर में उन्ही की चलेगी, जुल्फ़िया कुछ नही कर सकती । इसलिए तर्क को दूसरी दिशा दी, "सयाने लड़के, पतोहुएँ, थोड़ी भी लाज न आयी ।"

महिपाल सिंह चुप थे । दिशा बदल दी है, यह समझते उन्हें देर न लगी ।

"धरम-करम भी सब छोड़ बैठे," द्रौपदी देवी ने आगे कहा ।

महिपाल सिंह को जैसे बोलने का अवसर मिला । "यह तुम्हारी भूल है रानी साहेब । आज तक, कानपुर में भी उसके हाथ का लगाया पान तक नहीं खाया, पानी पीने या कुछ और खाने की तो बात छोड़ो ।" थोड़ा रुके, फिर बोले, "वहाँ कहार से अपने लिए पानी का घड़ा रखा देंगे ।" और द्रौपदी देवी की मान-रक्षा करते हुए समझाया, "मालकिन तुम हो । तुम्हारे हुकुम के बिना पत्ता भी न हिलेगा । कोई तुम्हारी शान के खिलाफ़ कुछ बोले, जबान खींच लो ।" और उनकी पीठ सहलाने लगे ।

द्रौपदी देवी खूब समझती थी, इनकी मर्ज़ी के बाहर जाने में मेरी कोई गति नही । पतंग कितनी ही ऊँची उड़े, डोर उड़ाने वाले के हाथ में रहती है । फिर भी हथियार डालने से पहले यह भाव दिखाया, हम हारी नहीं । वह बोली, "चलिये, रहने दीजिये दूध-पूत देने को । उस रांड़ के साथ मजे कीजिये । क्या ज़रूरत हमारी ?"

महिपाल सिंह पीठ को सहलाते-सहलाते हाथ नितम्ब तक ले गये और धीरे से कहा, "रईसों के यहाँ एक-दो तो ऐसी बनी ही रहती हैं । इससे क्या ? मान तो बरी-ब्याही का होता है । तुम्हारे वहाँ भी तो बप्पा साहब रखे थे ।"

महिपाल सिंह के कहने पर द्रौपदी देवी को अपने मायके की बात याद आ गयी । उनके पिता ने पैंतालीस पर होने पर एक बेड़िन रख ली थी । और साथ ही मन में चित्र की भाँति घूम गयी अपनी माँ की उपेक्षा । पिता रात बेड़िन के महल में रहते । माँ रो-रोकर रात काट देती । पिता

शराब में धुत वहीं पड़े रहते। माँ दो-दो दिन उनके दर्शनों को तरस जाती। द्रौपदी देवी को लगा जैसे महिपाल सिंह ने उनके मायके की बात कहकर उन्हीं का भविष्य बता दिया हो। महिपाल सिंह की सांत्वना के छीटों से जो रोष कुछ दब गया था, वह भविष्य की कल्पना की आँच पाकर फिर ज़ोर से उबल पड़ा। द्रौपदी देवी गरजी, "मेरा सिर मत खाओ। मैं खूब समझती हूँ, मेरे भाग्य में क्या बदा है।" साथ ही महिपाल सिंह का हाथ अपनी पीठ से हटा दिया और दाहिना हाथ बढ़ाकर तैश के साथ कुछ इस तरह कहा जैसे किसी बच्चे या नौकर को दुत्कार रही हों, "जाओ उसी राँड़ के पास!"

महिपाल सिंह यह सुनकर एक क्षण को स्तम्भित रह गये, किन्तु दूसरे ही क्षण उनका रईस ठाकुर पुरुष जागा। वह उठ खड़े हुए और तेज़ क़दम रखते बाहर चले गये।

द्रौपदी देवी फूट-फूट कर रोने लगी।

5

द्रौपदी देवी के कमरे में अँधेरा था। किसी भी नौकरानी की हिम्मत न पड़ी कि जाकर लैम्प जला दे। महिपाल सिंह के कमरे में जाना और फिर वापस होना सबने देखा था। सब सहमी-सहमी थीं।

कमरे में अँधेरा देखकर रामप्यारी अपनी जेठानी सुभद्रा देवी के कमरे में गयी। दोनों में कुछ काना-फूसी हुई और इसके बाद दोनों साथ-साथ गयीं और लैम्प जला आयीं। लेकिन द्रौपदी देवी को कोठरी से बाहर लाने की हिम्मत न पड़ी।

जब क़रीब आठ बजने को आये, तब दोनों ने अपने-अपने पतियों से कहा और दलवीर सिंह बड़े भाई के कमरे में गये।

"भैया साहब, क्या किया जाय?" दलवीर सिंह ने चिंतित स्वर में पूछा।

रणवीर सिंह ऐसे खामोश रहे जैसे घुप अँधेरे में रास्ता न सूझता हो।

सुभद्रा देवी बोलीं, "छोटकऊ, तुम औ' ये जाओ। अम्मा साहब को मनाकर कमरे में लाओ। हम दोनों खाना लाती हैं।"

"यही ठीक होगा," रणवीर बोले।

रणवीर सिंह और दलवीर सिंह माँ की कोठरी में गये और ज्यादा कुछ कहे बग़ैर गर्दन के पास से दोनों तरफ से सहारा देकर उनको उठाने लगे।

"अम्मा साहेब, उठिये।" दलवीर सिंह ने बड़े स्नेह से कहा।

द्रौपदी देवी शर्म के मारे गड़ी जा रही थी। सयाने लड़को से क्या मान करें? वह उठ बैठी।

"चलिये कमरे में," रणवीर ने विनती-भरे स्वर में कहा और द्रौपदी देवी हाथ की टेक लगाकर खड़ी हो गयी।

कमरे मे पलँग पर बैठी ही थी कि सुभद्रा देवी एक हाथ में भोजन का थाल और दूसरे में गिलास लिये, और रामप्यारी एक मे दूध का कटोरा और दूसरे में पानी से भरा लोटा लिए घूँघट काढ़े अन्दर आयी।

दलवीर सिंह ने एक तिपाई उठाकर पलँग के पास रख दी। रणवीर रामप्यारी को देख थोड़ा हटकर मुँह फेरकर पीछे खड़े हो गये। सुभद्रा देवी ने पूड़ी का कौर तोड़कर सब्ज़ी में डुबाया और आगे बढ़ाया।

"बहू रानी, बिलकुल जी नहीं करता," आहत स्वर में द्रौपदी देवी बोली।

सुभद्रा देवी हाथ बढ़ाये खड़ी रही।

"अम्मा साहेब, भोजन कर लीजिये।" दलवीर ने मिनती की।

"छोटकऊ, बिलकुल भूख नहीं है। तबीयत ठीक नहीं।" द्रौपदी देवी कुछ इस तरह बोल रही थीं, जैसे रो पड़ेंगी।

"अम्मा साहेब, हमारी कसम," रणवीर ने मुँह थोड़ा उनकी ओर फेरकर कहा। "खिला दो, छोटकऊ।"

जेठे बेटे ने कसम रखायी थी। द्रौपदी देवी ने कौर मुँह मे ले लिया। "बस, तुम्हारी कसम पूरी हो गयी, बड़कऊ।"

"पूरी नहीं हुई," रणवीर सिंह तत्काल बोले। "रोज़ की तरह भोजन करिये।"

"अच्छी अम्मा साहेब !" दलवीर ने उनके पैर पकड़ लिये।

अब द्रौपदी देवी ने लोटा उठाकर दाहिना हाथ धोया और स्वयं भोजन करने लगीं। एक पूड़ी जैसे-तैसे खाकर गिलास उठाया और पानी पीकर कहा, "बस।"

रामप्यारी ने दूध का कटोरा तिपाई से उठाकर उनकी ओर बढ़ाया। सुभद्रा देवी ने भी कटोरे को थाम लिया।

"पी लीजिए, अम्मा साहेब," दलवीर सिंह ने कहा।

द्रौपदी देवी ने सब पर दृष्टि डाली, फिर गर्दन झुकाकर कटोरा ले लिया और दूध पीने लगी।

सुभद्रा देवी तब तक लपकी हुई बाहर आ गयीं और एक तश्तरी में पान, इलायची लेकर आयीं।

"नहीं बहूरानी," द्रौपदी देवी ने हाथ हिलाया।

पान खाने का आग्रह रणवीर और दलवीर भी न कर सके। दोनों बेटे चले गये। पतोहुएँ उनके पास खड़ी रहीं। लेकिन किसी की समझ में न आया, क्या कहें।

"जाओ, तुम लोग बेटा," द्रौपदी देवी ममता-भरे स्वर में बोलीं और पूछा, "बड़कऊ, छोटकऊ खाना खा चुके ?"

सिर हिलाकर दोनों ने नाहीं की।

"तो जाओ, उनको खाना खिलाओ। फिर खा-पीकर आराम करो।"

"अम्मा साहेब, बदन दबा दूँ ?" रामप्यारी ने अड़ते हुए पूछा।

द्रौपदी देवी हँसने लगी। "नहीं बहूरानी। जाओ, खा-पीकर आराम करो।"

दोनों धीरे-धीरे कमरे से बाहर आ गयीं।

महिपाल सिंह जुल्फिया के रहने का प्रबन्ध करने में लगे रहे। इसके बाद उससे कुछ गप-शप की।

आठ बजे के करीब उसके पास से हटते हुए बोले, "अब ज़रा उधर

चलें।"

"कब तक लौटियेगा ?"

महिपाल सिंह पशोपेश में पड़ गये। वह खामोश रहे।

"बताइये ?" नखरे के साथ जुल्फ़िया ने कहा।

"उधर वो रूठी हैं। उनको मनायें। आज शायद..."

वह इतना ही कह पाये थे कि जुल्फ़िया ने उनका हाथ पकड़ लिया, "क्या कहते हैं! आज रात में न आयेंगे! मैं इतने बड़े महल में अकेली...?"

महिपाल सिंह जुल्फ़िया की परेशानी समझते थे। फिर वह चाहते भी थे, ज्यादा से ज्यादा देर उसके पास रहें, खासकर रात तो वहीं काटें। लेकिन द्रौपदी देवी का कोपभवन उन्हें परेशान किये था।

"आज उनको मना लें। कल से..."

"नहीं!" कुछ रुआँसी-सी होकर जुल्फ़िया ने कहा, "फिर लाये ही क्यों जब हालत ऐसी, जैसे कन्ता घर रहे, वैसे रहे विदेस ?"

जुल्फ़िया ने महिपाल सिंह का हाथ छोड़ा न था।

"आज की छुट्टी दे दो, जुल्फ़िया," महिपाल सिंह के स्वर में मिन्नत थी।

जुल्फ़िया खड़ी हो गयी और उनसे बिलकुल सट गयी, फिर बोली, "समझ गयी—तेरे वादे पर जिये हम, तो ये जान झूठ जाना।" और मुँह लटका लिया।

"नाखुश हो गयीं ?" जुल्फ़िया की ठुड्डी ऊपर को उठाते हुए महिपाल सिंह ने पूछा।

जुल्फ़िया खामोश खड़ी रही। उसका हाथ महिपाल सिंह के कंधे पर था।

"अच्छा कोशिश करेंगे...वादा न कराओ।"

जुल्फ़िया ने अपना हाथ खींच लिया। महिपाल सिंह समझ गये और मनाने के लिए उसे बाँहों में भरकर ओठ उसके ओठों पर रख दिये।

महिपाल सिंह जब अपने कमरे के सामने पहुँचे, तो दूर से ही देखा, दोनों बेटे और बहुएँ खड़ी हैं। वह एक क्षण को रुके, कुछ सोचा और उस

वक्त वहाँ न जाना ही उन्हें मुनासिब जान पड़ा। वह लौट पड़े और शिथिल डग भरते मेहमानखाने की ओर बढ़ गये। वह सोच रहे थे, हमने परिवार की नाव को ऐसे भँवर में डाल दिया है कि जान नहीं पड़ता कैसे पार होगी। मन-ही-मन कहा, हमारी हालत उस बन्दर जैसी हो गयी है जो आधे चिरे शहतीर का पच्चड़ निकालने में अपनी दुम फँसा बैठा था।

उधर द्रौपदी देवी बहुओं के चले जाने पर लेट गयी। आँखें बंद कर ली, लेकिन मन में ववंडर उठ रहा था। वह इस तरह करवटें बदल रही थी जैसे तपती बालू पर लेटी हो। जरा-सी आहट पर आँखें खोलती और फिर बंद कर लेती।। दस-ग्यारह बजे तक कान लगाये रही। फिर लम्बी आह भरकर शून्य-दृष्टि छत पर टिका दी। कब झपकी लग गयी, पता न चला।

सवेरे कोई आठ बजे रणवीर सिंह आये और देखा, रजाई पायताने ज्यों-की-त्यों तह की हुई पड़ी है, द्रौपदी देवी सिर्फ़ साड़ी और सलूका पहने करवट लिये लेटी हैं। रणवीर ने उनके माथे पर हाथ रखा, तो माथा तवे-सा तप रहा था। रणवीर सिंह ने रजाई खोलकर उढ़ा दी।

इसका समाचार महिपाल सिंह तक पहुँचा, तो वह घबराये हुए आये। माथा छुआ, फिर पीठ छुई और कुर्सी पर बैठ गये। तुलसी की पत्तियों का काढ़ा बनवाया। द्रौपदी देवी का सिर अपनी जाँघ पर रख उन्हें काढ़ा पिलाया और वहीं बैठे रहे। बीच-बीच में बदन छू कर देख लेते। तुलसी का काढ़ा एक बार फिर करीब दस बजे दिया। द्रौपदी देवी बीच-बीच में रजाई खोल देती। महिपाल सिंह फिर उढ़ा देते, कहते, "रजाई न खोलो, रानी साहेब।"

कुछ देर बाद माथे पर पसीने की बूँदें दिखीं। महिपाल सिंह ने तौलिया उठाया और मुँह, पीठ, पेट पोंछा।

करीब बारह बजे बुखार बिलकुल हल्का हो गया। द्रौपदी देवी ने धीमे स्वर में कहा, "आपने नाश्ता भी नहीं किया। जाइये, नहा-धोकर भोजन कीजिये।"

"आज साथ-साथ करेंगे।"

"हमें तो भूख नहीं।"

"फिर भी थोड़ा-सा।"

"तो जाकर नहा डालिये।" कुछ क्षण बाद द्रौपदी देवी ने कहा।

महिपाल सिंह उठे और सीधे मेहमानखाने गये। जुल्फिया को सारा हाल बताया।

"आप आज उनके ही पास रहिये," जुल्फिया सहज स्वर में बोली। "मुझे किसी चीज की जरूरत हुई, तो बुआ से मंगा लूंगी।"

"हम मौका लगाकर आयेंगे," महिपाल सिंह ने चलते-चलते कहा।

"कुछ जरूरत नहीं।"

महिपाल सिंह नहाकर लौटे, तो दलवीर सिंह को खड़ा पाया।

"बप्पा साहेब, भोजन करने चलिये।"

महिपाल सिंह जब घर पर होते, दोनों बेटों के साथ भोजन करते। महराजिन परोसती, लेकिन द्रौपदी देवी पास बैठी रहतीं। उनको खिलाने के बाद बहुओं के साथ वह भोजन करतीं।

"यहीं भेजवा दो," महिपाल सिंह ने कहा।

कुछ देर में एक बड़ा थाल लेकर महराजिन आ गयी। नौकरानी एक लोटे में पानी और दो गिलास रख गयी।

महिपाल सिंह ने कौर तोड़ा और द्रौपदी देवी की ओर बढ़ाया।

"चलिये, रहने दीजिये," द्रौपदी देवी ने कुछ इस तरह कहा जैसे अभी-अभी ब्याह कर आयी हों।

"लो तो!"

"अपने बराबर के बेटे, बहुएँ और अब दूधा-भाती!" ओठ सिकोड़ कर अपनी मुसकान दबाते हुए द्रौपदी देवी बोलीं।

"प्रेम कभी बूढ़ा नहीं होता।" महिपाल सिंह ने कनखियों से कहा और कौर द्रौपदी देवी के ओठों से लगा दिया।

भोजन के बाद फिर कुर्सी पर बैठ गये।

"थोड़ा आराम कर लीजिये, सवेरे से कुर्सी पर खूंटी-से गड़े रहे।" द्रौपदी देवी के स्वर में अपनेपन की मिठास थी।

"इसी पलंग पर?" महिपाल सिंह ने द्रौपदी देवी के पलंग की ओर इशारा करते हुए पूछा।

"जी हाँ, और कमरे में नहीं, बारहदरी के सामने !"

महिपाल सिंह कमरे मे बिछे दूसरे पलँग पर लेट गये, द्रौपदी देवी की ओर मुँह करके। द्रौपदी देवी उन्हें निहार रही थी। उन्हें लगा जैसे तीस साल के विवाहित जीवन में जो दरार आ गयी थी, महिपाल सिंह उसे शायद भर रहे हैं। महिपाल सिंह के व्यवहार में उन्हें उसी पुराने अपनेपन की मिठास-सी लगी। और तभी उन्होंने सोचा, सारी खुराफात की जड़ है वह रांड़। इस काँटे को निकाल के दम लूँगी।

6

ज़ुल्फिया को किशनगढ़ में रहते करीब एक साल हो गया था। अगहन का महीना था। वह अपने कमरे की खिड़की के पास उदास बैठी बाहर गाँव की तरफ सूनी निगाहों से देख रही थी और अपने पिछले एक साल के जीवन पर नज़र डाल रही थी। क्या ज़िन्दगी है ! उसने सोचा। मेहमानखाने के ये कमरे और फुलवारी—बस इतने से घरौंदे में मेरी दुनिया बंद होकर रह गयी है। शुरू में गाँव अच्छा लगा था, शहर का शोर-शराबा न था। अब तो यह मसान की खामोशी खाये जाती है। वहाँ माँ के साथ बाज़ार जाती थी, कभी-कभार नाटक देख आती थी। रामनरायन का बाज़ार कैसा गुलज़ार था ! पास-पड़ोस के लोगों से मिलना-जुलना, बातचीत, हँसी-मजाक। यहाँ ले-दे के है बुआ। यह बुआ कानपुर में कैसी अच्छी लगती थी ! उसकी सीधी-सादी बातें भी भली लगती थी। उसे याद आया, बुआ से एक दिन चाशनी बनाने को कहा और वह बाल्टी में कासनी रंग घोलकर हाज़िर हुई। माँ हँसने लगीं और मैं तो हँसते-हँसते लोट-पोट हो गयी। कहा, 'बुआ, नहा लो तुम इसमे।' बुआ ने कहा, 'छोटी बी, कान ही तो हैं। न सुन पाये।' मैंने कहा, 'तो अत्तार चाचा वाला चोंगा ले आओ, कान में लगाये रहा करो।' बुआ ने तिनककर कहा, 'कान ऐसे तो नहीं हैं बी। अल्ला के फज़ल से अभी आँख-कान, हाथ-पैर

सब ठीक हैं।' इस पर अम्मी ने मज़ाक किया, 'सब ठीक हैं बुआ ?' 'जाओ, तुम भी मज़ाक करती हो, बड़ी बी।' बुआ ने टोका और आहिस्ते से कहा, 'एक दिन सब औरतों का यही हाल होता है।' उस वक्त मैं कुछ न समझ सकी, बाद में अम्मी ने समझाया 'आज वही बुआ' बासी कढ़ी-जैसी बू आती है उसे देख कर। रात-दिन बस बुआ की मनहूस सूरत !

जुल्फ़िया ने खिड़की की तरफ़ से निगाह फेर ली, लेकिन विचारों का सिलसिला न टूटा। एक हैं वो, ज़मीनदार साहब ! 'ज़मीनदार साहब' शब्द उसने मन-ही-मन अनोखे व्यंग्य के लहज़े में कहे। मेरे आका, मेरे स्वामी। और वह अपने आप ही मुसकराने लगी। यही थे मेरी तकदीर में ! ढीली-ढीली बाँहें, थुलथुल जाँघें। जब लिपटते हैं, लगता है रुई से भरा गुड्डा सीने पर आ गिरा हो जिसमें रुई की भी गरमाहट नहीं। जुल्फ़िया ने अपनी जांघ पर कोहनी रखकर अपना गाल हथेली पर ले लिया और नीचे बिछे कालीन को एकटक ताकने लगी।

कुछ देर बाद उसका मन महल से लगे गलियारे से आते-जाते लोगों की ओर गया। कैसे जवान निकलते हैं ! घुटनों तक धोती, कोहनी तक की बण्डी, सिर से लिपटा मैला अँगोछा, कंधे पर लाठी, लेकिन मर्द लगते हैं। गठा बदन, भरे हुए कल्ले, सुडौल पिंडलियाँ, उभरे सीने !

फिर मन रणवीर सिंह और दलवीर सिंह की ओर गया। कैसे सजीले जवान हैं। जब चूड़ीदार पाजामा और शेरवानी पहनकर निकलते हैं, सिर पर साफा बांधे, लगता है शेर मस्ती के साथ जा रहे हों।

जुल्फ़िया ने लम्बी साँस खींची और गाव-तकिये पर लुढ़क गयी। गोल-गोल दो बूंदें आँखों से ढुलककर गालों पर इस तरह ठिठक कर रह गयी जैसे जुल्फ़िया से दिल की फरियाद करने को हाथ जोड़े खड़ी हों। जुल्फिया ने दाँतों से ऊपर का ओठ काटा और करवट ले ली।

वैसाख का महीना था। महिपाल सिंह कानपुर जा रहे थे दो दिन बाद लौटने की कह कर।

"दो दिन !" जुल्फिया ने कुछ ऐसे अन्दाज से कहा जैसे वे दो दिन उसके लिए दो साल नहीं, दो युग के बराबर होंगे।

"सिर्फ दो दिन," महिपाल सिंह ने उसके गाल पर हाथ फेरते हुए कहा। "तीसरे दिन सवेरे यहाँ हाजिर।" फिर समझाने लगे, "क्या करें, कलक्टर साहब से मिलना जरूरी है। यह काम लड़के कर न सकेंगे।"

"आप उनको लगाते क्यों नहीं काम से?" जुल्फ़िया शिकायत के लहजे में बोली। "सारा काम खुद देखना। यहाँ सारे दिन ताकते रहें, कब शाम हो।"

महिपाल सिंह गद्‌गद हो गये। "अब काम बाँट देंगे। लेकिन दो दिन की छुट्टी दो।" महिपाल सिंह ने कुछ उसी तरह कहा जैसे उनका कारिन्दा मुंशी खूबचन्द उनसे कहा करता था।

जुल्फ़िया हँसने लगी। महिपाल सिंह ने जुल्फ़िया को गले से लगाया और विदा हुए। उधर जुल्फ़िया में ऐसा उछाह कि पैर जमीन पर न पड़ते थे।

"बुआ!" कनखियों से जुल्फ़िया ने ताका।

"हाँ, हाँ।" बुआ ने मुस्कराते हुए जवाब दिया।

दोपहर के सन्नाटे में जब पूरी ड्योढ़ी सो गयी, दलबीर सिंह जुल्फ़िया के कमरे में आये और आते ही जुल्फ़िया को अंक में भर लिया। जुल्फ़िया के मुँह से 'उइ' शब्द अनायास निकल गया।

दो घंटे तक दलबीर सिंह जुल्फ़िया के पास रहे। जाने लगे, तो जुल्फ़िया की आँखें बरामदे के कोने तक उनका पीछा करती रहीं।

आज जुल्फ़िया में अजब पुलक थी। उसने गाव-तकिये को खींचा और सीने से भींच लिया। जुल्फ़िया को लग रहा था जैसे बैसाख-जेठ की तपती धरती पर असाढ़ की पहली बूँद पड़ी हो, जैसे चिलचिलाती धूप में बियाबान ऊसर चलते-चलते अचानक झाड़ियों का झुरमुट मिल गया हो। वह गुनगुना रही थी, "परी जबर के बस मे, पसीना मोरी नस-नस में।"

7

रणवीर सिंह ओठ काटते हुए कुर्सी से उठ बैठे और बैठक खाने के अपने कमरे में लम्बे डग भरते हुए टहलने लगे। 'मैं सोचता ही रहा और यह''''', मन-ही-मन उन्होंने कहा। 'इसका मतलब, साठ-गाँठ पहले से थी।' वह आकर कुर्सी पर बैठ गये और फिर खड़े हो गये। क्या किया जाय, समझ न पा रहे थे। आखिर कमरे से निकले और अपने सोने के कमरे में गये। वहाँ सुभद्रा देवी दो घण्टे से उनका इन्तजार कर रही थी।

"आज कहाँ अटक गये ?" सुभद्रा देवी ने पूछा।

"यह न पूछो," व्यग्र स्वर में रणवीर सिंह ने उत्तर दिया जिसे सुनकर सुभद्रा देवी सहम गयी।

"क्या बात है ?" चिन्तित होकर पूछा।

"गजब हो गया !" पलँग पर धम-से बैठते हुए रणवीर सिंह कपाल पर हाथ मारते हुए बोले। लेकिन इसके आगे कुछ न कहा।

"हुआ क्या ?"

"कहते भी शरम आती है।"

अब सुभद्रा देवी की जानने की इच्छा और बढ़ गयी।

"बताइये भी !"

रणवीर सिंह ने जुल्फ़िया और दलवीर सिंह का किस्सा बताया।

"मगर आप वहाँ कैसे पहुँचे ?"

इस बेतुके प्रश्न ने एक क्षण के लिए रणवीर सिंह को चकरा दिया। फिर वह सँभल गये। उन्होंने समझाया, "हम ड्योढ़ी से आ रहे थे। हमें लगा, जैसे कोई मेहमानखाने के दरवाजे से अन्दर जा रहा है। पीठ का थोड़ा हिस्सा दिखा था। पहचान न सके। हम उधर गये, तो मेहमानखाने के दरवाजे की जंजीर अन्दर से लगी पायी। अब हमारा शक बढ़ा। हम आकर अपने कमरे मे बैठ गये, दरवाजा उढ़काकर। कोई दो घण्टे तक टकटकी लगाये रहे मेहमानखाने के दरवाजे पर। दलबीर निकला और सीधा रनवास चला गया।"

सुभद्रा देवी सन्न रह गयीं। सोचा, कोई भी हो, है तो कुप्पा साहब

के नीचे। शाम को उन्होंने अड़ते-अड़ते सास को बताया। द्रौपदी देवी वैसे मन-ही-मन खुश हुईं, जैसे को तैसा मिला। लेकिन चिन्ता हुई अपने लड़कों की। यह रांड़ हमारे बेटों को न बिगाड़ दे।

"बहूरानी, मैले पर मट्टी डालो। किसी को कानोकान खबर न हो। छोटी बहूरानी तक बात पहुँची, तो कोहराम मच जायेगा। हम उनसे कहेंगी, इस रांड़ को अभी दफा करें, कानपुर भेज दें।"

महिपाल सिंह ने जब सुना, तो उनके तन-बदन में आग लग गयी।

"देखिये, किया बहुत बेजा, लेकिन छोटकऊ से कुछ न कहियेगा। बात अपने तक रखिये और इस बवाल को दफा करिये। कानपुर में जाकर मरे। यहाँ हमारे घर में आग न लगाये।" द्रौपदी देवी ने बड़े शान्त ढंग से समझाया।

"हूँ!" इतना कहकर महिपाल सिंह अपने कमरे से बाहर चले आये और बैठकखाने में जाकर अलमारी से चमड़े का हण्टर निकाला और चिलचिलाती दोपहरी में मेहमानखाने की तरफ़ गये। दरवाज़े की जंजीर लगी थी। ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाया। कुछ देर में बुआ ने आकर दरवाज़ा खोला। महिपाल सिंह तेजी से अन्दर घुसे और जंजीर बंद कर दी।

"चल इधर!" महिपाल सिंह दहाड़े।

बुआ सहम गयी और उनके मुँह की ओर ताकने लगी।

"च···ा···ल" महिपाल सिंह ज़ोर से गरजे और हण्टर को फटकारा।

"सरकार, क्या खता हुई लौंड़ी से?" बुआ ने हाथ जोड़ लिये।

"तू कुटनी बनी है, हरामजादी!"

सड़ाक की आवाज़ करता हण्टर बुआ की पीठ पर पड़ा। वह चकरगिन्नी-सी नाचने और पीठ सहलाने लगी।

महिपाल सिंह दांत पीसते फिर बढ़े, तो बुआ उनके पैरों पर गिर पड़ी। ठाकुर ने ज़ोर से बूट की ठोकर मारी और पूछा, "परसों दोपहर में यहाँ कोई आया था?"

"ना सरकार।" बुआ हिचकियाँ भरती हुई बोली। वह लुढ़की पड़ी, पीठ-पेट सहला रही थी।

शोर सुनकर जुल्फ़िया सीढ़ियाँ उतरती नीचे आ पहुँची।

"क्या बात है ?" बड़े ही सरल ढंग से जुल्फ़िया ने पूछा।

"यहां परसों दोपहर में कोई आया था ?" महिपाल सिंह ने तैश के साथ पूछा।

"हरगिज नही !" जुल्फ़िया ने आश्चर्य से आँखें फाड़कर उत्तर दिया।

"नही ?" महिपाल सिंह ने जुल्फ़िया की आँखों की ओर सीधे आँखें तरेरकर पूछा।

"नही हुजूर !" जुल्फ़िया का स्वर शांत और दृढ़ था। झिझक जरा भी न थी।

महिपाल सिंह ने जुल्फ़िया को सिर से पैर तक देखा। फिर उसकी आँखों मे झांके। उन्हें लगा जैसे जुल्फ़िया झूठ नही बोल रही।

"तुम ईमान कसम कहती हो ?"

"ईमान कसम सरकार," जुल्फ़िया ने दृढ़ता से कहा। "मेरी आँखें फूट जायें, हाथ-पैरों में कोढ़ हो जाये, जबान गल जाये, अगर झूठ बोलूं।"

इतनी बड़ी-बड़ी कसमें सुनकर महिपाल सिंह के मन में संदेह का कीड़ा जा घुसा। कहीं द्रौपदी देवी की चाल तो नहीं ? उन्होने अपने आप से पूछा।

जुल्फ़िया ने जब देखा, महिपाल सिंह कुछ शांत हो गये हैं, तो उनका हाथ पकड़कर कहा, "इधर आइये, मुझे बताइये, क्या बात है ?"

महिपाल सिंह उसके साथ ऊपर गये और द्रौपदी देवी से जो कुछ सुना था, बताया, बरामदे में खड़े-खड़े।

"सरकार, आपको मुझ पर एतबार नहीं !" जुल्फ़िया ने आश्चर्य के साथ कहा। "यह तो चाल है आपके मन मे फाँस डालने की।" थोड़ा रुककर बोली, "लेकिन बेहतर होगा आप मुझे कानपुर छोड़ आयें। मुहब्बत बड़ी नाजुक होती है..." वह रुकी और महिपाल सिंह की ओर ताकते हुए उनके मन को पढ़ने का प्रयत्न करने लगी।

महिपाल सिंह के चेहरे पर अब कुछ नमी आ गयी थी। वह अन्दर कमरे में गये और पलँग पर बैठ गये। जुल्फ़िया उनके सामने खड़ी रही।

"बैठो।"

"नही सरकार," जुल्फ़िया ने नरमी से किन्तु दृढ़ स्वर में कहा।

"शक घुन है जो मुहब्बत को अन्दर-ही-अन्दर खोखला कर देता है। विश्वास का धागा ही दो दिलों को बांधता है। लेकिन जब शक की कैंची चल गयी, तो कानपुर चले जाना ही बेहतर।"

महिपाल सिंह बराबर विवेक के तराजू पर सब बातों को तोलने में लगे थे। अब उन्हें विश्वास हो गया, यह द्रौपदी देवी की चाल है। उन्होंने जुल्फिया का हाथ पकड़ा और खींचकर अपने पास बिठा लिया।

"जुल्फिया, हमें माफ़ कर दो।"

जुल्फिया उनकी जांघ पर सिर रखकर फफक-फफक कर रोने लगी। आंसुओं ने महिपाल सिंह को रहा-सहा भी धो दिया। मन जब शांत हुआ, उन्होंने अपने-आपसे तर्क किया, यदि इसमें सच्चाई भी हो, तब भी कानपुर भेजना इसका हल नहीं। गांव-भर में नामूसी होगी। लोग कहेंगे, खर्च बर्दाश्त न कर सके, निकाल बाहर किया। फिर अगर यहां गड़बड़ी कर सकती है, तो वहां कौन ताके रहेगा?

अब वह जुल्फ़िया की ओर और अधिक खिंच गये। जमींदारी का काम दोनों बेटों को सौंपा, द्रौपदी देवी से कामचलाऊ सम्बन्ध रखते, ज्यादातर मेहमानखाने में जुल्फिया के यहां बने रहते।

द्रौपदी देवी इससे और जल-भुन गयी। उन्होंने मन-ही-मन तय किया, बड़कऊ को भरना होगा, तभी काम बनेगा।

8

बंटवारा हो जाने के बाद गांव वाले अपनी-अपनी समझ भर अपने-अपने ढंग से तोड़-जोड़ करने लगे, ऐसे समय हम भी किस तरह अपना उल्लू सीधा कर लें। गांव वाले वैसे जाते थे दोनों तरफ़ और दोनों को ही अपना मालिक मानते थे, फिर भी जिससे अधिक स्वार्थ सधता जान पड़ा, उसके पास अधिक उठने-बैठने और हां में हां मिलाने लगे।

मुखिया जोरावर सिंह ने दलबीर सिंह के पास उठना-बैठना अधिक

रखा। इसके सम्बन्ध में उनका अपना तर्क था। वह सोचते, गाँव के मुखियाँ हैं, इसलिए गाँव में तो अपनी प्रतिष्ठा है ही। किशनगढ़ मे रणवीर सिंह से तो अधिक कुछ मिलने का नहीं, दलवीर सिंह से ज्यादा मेल रहने से किसी दूसरे गाँव में खेत-पात मिल सकेंगे। परिवार बढ़ रहा था, इस-लिए वह सोचते थे, अगर पास के किसी गाँव में खेत मिल जायें, तो 'पाही' की खेती एक लड़के को वहाँ रखकर हो सकती है।

जोरावर सिंह एक शाम दलवीर के पास बैठे थे। वहाँ उन दोनों के सिवा और कोई न था। दीवारों के भी कान होते हैं, इस नियम को ध्यान में रखकर जोरावर ने धीरे से कहा, "बच्चा साहेब, किसुनगढ़ तुमको न छोड़ना था। अपनी सिधाई में तुमने बड़ी गलती कर डाली। अरे, जिमीदार जिस गाँव में रहे, उसमे उसका हीसा न हो, तो फिर परजा सींगे पर मारती है।" इतना कहकर वह दलवीर सिंह के मुँह की ओर ताकने लगे जैसे वह पढ़ रहे हो कि इसकी दलवीर पर क्या प्रतिक्रिया हुई।

दलवीर सिंह कई दिनों से जोरावर सिंह से एक बात कहने की सोच रहे थे, लेकिन यह न समझ पा रहे थे कि कैसे कहें। उन्हें ऐसा लगा जैसे जोरावर सिंह ने खुद ही वह अवसर ला दिया। उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ काका, यह तो ठीक है। जहाँ रहो, वहाँ अगर जमीदारी नही, तो परायी जमीदारी में बनिया बनके चुपचाप रहना पड़ता है। लेकिन किशनगढ़ बड़े भैया को देने में एक राज है।" इतना कहकर दलवीर रुक गये। वह यह देखना चाहते थे कि जोरावर सिंह पर इस 'राज' शब्द का क्या प्रभाव पड़ता है।

जोरावर सिंह इतना सुनकर वह राज जानने को अधीर हो उठे। पूछा, "वह राज क्या है, बच्चा साहेब?"

"काका, राज कुछ ऐसे थोड़े ही बताया जाता है," दलवीर ने हँसते हुए उत्तर दिया।

जोरावर सिंह ने महसूस किया, जान पड़ता है, दलवीर को उन पर पूरा विश्वास नही, इसीलिए नही बता रहे। अपने को पूरा विश्वासपात्र जताने के लिए जोरावर सिंह ने कहा, "बच्चा साहेब, जहाँ तुम्हारा पसीना

गिरे, हम खून बहाने को तैयार हैं। बताओ, क्या बात है? हमें हुकुम करो।"

दलवीर सिंह ने मन-ही-मन सोचा, अब ठाकुर ताव पर आ रहा है। इसे चंग पर चढ़ाना चाहिए। चट बोले, "यह क्या कहते हो काका! क्या हमें विश्वास नहीं? तुमने हमें गोद में खेलाया। घर जाते, तो काकी दूध-बताशा लेकर दौड़ती। तुम्हारे रहते हम पर आँच आये, यह तो हम कभी सोच भी नहीं सकते।"

दलवीर की बातों से जोरावर सिंह गद्गद हो गये। उन पर दलवीर का इतना विश्वास है, दलवीर उन्हें इतना मानते हैं, इसकी जोरावर ने कल्पना तक न की थी। उन्होंने सोचा, रणवीर ने तो कभी इस तरह अपनापन नहीं दिखाया।

"तो बच्चा साहेब, बताओ, वह राज क्या है?" जोरावर सिंह ने आग्रह किया।

दलवीर मसनद के सहारे बैठे थे, जरा-सा जोरावर की ओर झुक आये और धीमे स्वर मे बोले, "तो सुनो काका। यह किशनगढ़ है तुम्हारी, सब बैसों की शामिल-शरीक की जायदाद। हम चाहते थे कि यह तुम सबको दे दिया जाय। इसीलिए हमने नहीं लिया। हम भाई का हक नहीं मार सकते। यह तो बड़े भैया ही कर सकते हैं। बनारस में भौजाई के भाइयों का हक मारा, यहाँ भैयाचारों का।"

जोरावर सिंह यह सब सुनकर सन्न रह गये। इतना बड़ा धोखा, गधे की गोन में नौ मन का झोल! हमारा गाँव और हमीं रैयत बने हैं! दलवीर उन्हें देवता जँचे जिन्होंने बता दिया। अब उन्हें लगा, महिपाल सिंह जो सबसे इतना हिल-मिल कर रहते थे, उसका भी यही कारण था। हमारी ही जायदाद दबाये बैठे थे, तो डरेंगे नहीं? लेकिन अभी तक उनकी समझ में यह न आ रहा था कि किशनगढ़ उनका कैसे था और महिपाल सिंह के खानदान के पास कैसे चला गया।

"बच्चा साहेब, यह तो बताओ, किशनगढ़ फिर तुम्हारे···" आगे जोरावर सिंह से न बना कि कैसे कहें।

दलवीर सिंह उनके कहने का मतलब समझ गये। वह बोले, "जैसे

यह तो तुमको मालूम है काका, हमें ज़मींदारी गदर के बाद इनाम में मिली थी ?"

जोरावर सिंह ने हामी भरी।

"तो सात गाँव मिले थे, यह भी सब जानते हैं ?"

जोरावर सिंह ने "हाँ" कहा।

"लेकिन असली बात यह है कि इनमें से छः हमको मिले थे और सातवाँ, किशनगढ़ सब बैंसों को शामिल-शरीक मे।"

"अच्छा !" जोरावर सिंह ने आश्चर्य से आँखें फाड़ दीं। "यह तो मालूम न था, बच्चा साहेब।"

"इसी से तो बड़े भैया डकारे जा रहे हैं।"

"लेकिन सबूत क्या इसका ?" जोरावर ने पूछा।

"सबूत है काका। पक्की लिखा-पढ़ी। गदर में बाबा साहब ने सात अंग्रेज़ों को घर में छिपाया था, यह तो जग-जाहिर है।"

"हाँ, यह तो किसुनगढ़ में लड़के-सयाने सब जानते हैं," जोरावर बोले।

"तो उन्होंने लिखकर पट्टा दिया था। औ' बाबा साहब अकेले तो बचा न सकते थे। सब बैंस पहरा देते थे। इसी से किशनगढ़ सबको शामिल-शरीक में मिला।"

यह सुनकर जोरावर का हृदय क्षोभ से भर गया। इतना बड़ा धोखा हमें दिया गया ! हम ठाकुर नहीं जो इसका बदला न लें, यह संकल्प भी मन-ही-मन जोरावर ने किया। लेकिन किशनगढ़ पर कब्जा कैसे किया जाय, यह जोरावर सिंह न समझ सके। उन्होंने पूछा, "बच्चा साहेब; बताओ, अब कुछ हो सकता है भला ?"

"हो सब कुछ सकता है," दलवीर ने उत्तर दिया। "तुम सब बैंस मिल जाओ, तो लिखा-पढ़ी की जाय। कलक्टर सा'ब से मिलें, कमिश्नर सा'ब से मिलें। अरे, हम तो लाठ सा'ब तक जा सकते हैं, काका ! लेकिन बात तो यह है, मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त। जब तुम सब कुछ कर नहीं रहे, तो हम अकेले क्या करें। अकेला चना भाड़ थोड़े ही फोड़ सकता है ?"

जोरावर सिंह बोले, "बच्चा साहेब, अब तक तो जैसे कुछ मालुम न

था। हम करते क्या ? अब हम अक्कास-पत्ताल एक कर देंगे। तुम आ
रहो, रस्ता बताओ। हम तो जैसे कुछ पढ़े-लिखे नहीं।" थोड़ा रुककर
जोरावर ने अपनापन दरसाते हुए कहा, "और फिर, लड़के पढ़ाये-लिखाये
जाते हैं इसीलिए।"

"काका, हम पीछे नहीं। हम सबके साथ हैं। लेकिन यह एक आदमी
का काम नहीं।"

"सो क्या हम नहीं जानते ? अरे, जमात करामात होती है।"
जोरावर सिंह ने थोड़ा रुककर फिर कहा, "तो बैसों को जोड़ना हमारे जुम्मे
रहा। बाकी सब तुम करो बच्चा साहेब, कायदा-कानून, लिखा-पढ़ी।"

"हाँ, हाँ," दलवीर ने जोरावर सिंह को भरोसा दिलाया, "तुम सबको
एक करो, काका। बैस सब एक हो जायँ, तो बाकी सब हम करेंगे, लिखा-
पढ़ी, दौड़-धूप, पैसा-रुपया लगाना।" फिर कुछ जोर देकर कहा, "अरे,
दस भाइयों में हमारी चाहे रहे एक पाई, हमको यह सन्तोख तो होगा कि
सब भाई-बिरादर बराबर हैं।"

यह बराबरी की बात ऐसा ठर्रा थी, जिसे पीकर जोरावर सिंह मत्त
हो गये। ड्योढ़ी से चले, तो रास्ते-भर यह सोचते आये, कैसे सबको यह
संदेशा सुनायें, कैसे सबको एक राय करें। भविष्य का एक नक्शा भी
उनके सामने आ गया। जमींदारी होगी। चाहे भैया-बाँटन में एक पाई
ही पल्ले पड़े, होगी तो जमींदारी। रैयत पर रोब रहेगा। बनिया-तेली भी
दाब मानेंगे। बनियों की याद आते ही कलिया का चेहरा उनके दिमाग
में घूम गया। मन-ही-मन जोरावर सिंह ने कहा, "देख लेंगे तब कलिया
को।"

उधर दलवीर सिंह ने सोचा, शुरूआत अच्छी हुई है। ये अपढ़ क्या
जानें, क्या लिखा है। इन्हें भड़का देना काफी। जमींदारी का लोभ इनको
जरूर रणवीर सिंह के खिलाफ कर देगा। एक बार ठाकुरों को एक कर
पाऊँ तो दूसरी जातियों को मिलाते कितनी देर लगती है ? और अगर
किशनगढ़ की ही प्रजा फिरंट हो जाय, तो रहना मुश्किल कर दूँगा, सारा
रोब-दाब, सारा वैभव धूल में मिला दूँगा।

9

जोरावर सिंह ने उसी दिन से बैंसों से बातचीत करना आरम्भ कर दिया। दो-तीन दिन तक सबसे अलग-अलग मिले। इसके बाद यह तय हुआ कि एक दिन बिरादरी की पंचायत हो। उसमें इस पर विचार किया जाय।

जोरावर सिंह का हाता इसके लिए ठीक समझा गया। बाहर का दरवाज़ा बन्द कर लेने से कोई गैर आदमी वहाँ न आ सकता था। शाम के बाद हाते में पंचायत करना तय रहा। बैंसों के हर घर के पुरखे को पंचायत में बुलाया गया।

सत्तर साल के माधौ सिंह लाठी के सहारे धीरे-धीरे आ रहे थे। आँखों से कम दीखता था, वह भी रात में। इसलिए चलते जाते और पास से गुज़रने वाले से पूछते जाते, "कौन है ?"

माधौ सिंह ने अभ्यासवश इसी तरह जब पूछा, तो आने वाला बोला, "कौन, माधौ भैया ?"

"हाँ। तुम बरजोर ?"

"हाँ भैया। गया था बजार तरफ़। बजाजे में बैठा रहा। अब चलूँ घर।"

बरज़ोर सिंह अब काफ़ी बूढ़े हो गये थे, इसलिए घर का काम-काज अधिक नहीं होता था। या तो दरवाजे पर बैठे रहते, या जब बैठे-बैठे जी ऊब जाता, तो बाज़ार की तरफ चले जाते। बज़ाज की दुकान में बैठ कर मुफ़्त का दोहरा खाते और ग्राहकों को समझाते, "ले ले, यहाँ सबसे सस्ता मिलेगा।"

"तुम न चलोगे बरजोर, आज पंचाइत है ठाकुरों की ?" माधौ सिंह ने पूछा।

"ठाकुरों की पंचाइत !" बरजोर सिंह को आश्चर्य हुआ। "पंचाइत तो कोरी-चमार करते हैं।"

"हाँ भाई, जोरावर पंचाइत जोर रहा है।" माधौ सिंह ने हँसते हुए उत्तर दिया।

"हमें तो बुलाया नही।"

"चलो तो!" बरजोर का हाथ पकड़कर माधौ सिंह बोले।

आखिर बरजोर उनके साथ हो लिए।

रात के आठ बजते-बजते सभी घरों के पुरखे जुट गये थे। उसी समय बरजोर सिंह को साथ लिये माधौ सिंह पहुँचे।

बरजोर सिंह बैंस न थे। वह चौहान थे। इसलिए जोरावर सिंह और उनकी बगल मे बैठे ननकू सिंह ने कानाफूसी की।

ननकू ने पूछा, "जोरावर, ये कैसे आ गये, बरजोर ककुवा ?"

जोरावर ने अजीब ढंग से मुँह बिदकाकर उत्तर दिया, "कुछ न कहो। यह सब अँधरा की करतूत है।" जोरावर का अभिप्राय माधौ सिंह से था। "वह तो बड़े सरकार के पास का बैठकुवा है। हम न बुलाते, लेकिन बिरादरी का मामला। कल सब मेरा ही गला पकड़ते।"

"लेकिन अब क्या किया जाय!" ननकू ने चिन्तित होकर पूछा।

"अब दुवारे से तो भगाते नहीं बनता। बैठा रहने दो।" जोरावर ने उत्तर दिया। थोड़ा सोचकर बोले, "अरे, बात छिपी तो रहने की नहीं। चार दिन मे फैलेगी ही। फिर बरजोर चाहे न कहैं, माधौ कान जरूर भरेंगे बड़े सरकार के।"

"तो डर किस बात का! ऊँट की चोरी निहुरे-निहुरे नही होती? आज नहीं, तो कल बड़े सरकार का मुकाबिला करना ही होगा।" ननकू तपाक से बोला।

"और क्या। रोये राज थोड़े मिलता है।"

"अब बात शुरू कराओ।" ननकू ने कहा।

जोरावर ने चारो ओर देखा। फिर उकड़ूँ होकर और हाथ उठाकर बोले, "माधौ काका, बरजोर ककुवा, तुम सब पीछे काहे बैठे हो? सामने आओ।"

"ठीक है, ठीक है," माधौ सिंह की आवाज आयी, "हम बूढ़बाढ़ मनई, पीछे भले हैं। तुम लरिका-लूबर भले हो आगे।"

जोरावर न समझ सके कि माधौ सिंह ने यह बात सरल भाव से कही या ताना दिया। उन्होंने सिर्फ 'हूँ' किया और पालथी लगाकर बैठ गये।

एक आवाज़ पीछे से आयी, "जोरावर!"

"हाँ भैया!"

"अरे, अब देर काहे की? जल्दी खतम करो। सब पंच खेत-पात से आये हैं, थके-माँदे, भूखे-पियासे।"

"इसी से तो कहा, आगे आओ। सो सब सयाने पीछे बैठ गये।"

"अबहीं से पूँछि दबाने लगे।" ननकू ने व्यंग किया।

"मौक़ा परे पर जान परैगा, कौन मोछहरा मरद है।" जवाब मिला।

"चुप रहो भैया, चुप रहो ननकू। टूमैं न चलाओ। तवेले मे लतहाव का समै नहीं।" जोरावर ने दोनों को शान्त किया।

आखिर जोरावर ने दलबीर सिंह से हुई सारी बात विस्तार के साथ बतायी। यह भी बतलाया कि छोटे सरकार हर तरह से बिरादरी के साथ हैं।

"तो अब क्या किया जाय?" सवाल उठा।

"जैसी सबकी राय हो। अकेले का काम तो है नहीं।" जोरावर ने उत्तर दिया।

"किया यह जाय," एक नौजवान ने एक कोने से कहा, "इस साल से सिकमी कास्तकारों का लगान हम सब वसूल करें। बयाई, बजार, जंगल, चरी-चापरी का बँदोबस्त हम खुद करें।"

माधौ सिंह अब तक बड़े ध्यान से सबकी बातें सुन रहे थे। उस नौजवान की बात सुनकर भड़क गये। बोले, "बड़ा जाना है तीसमार। चलै न पावैं, कूदन नाम!"

माधौ सिंह की खरी-खरी बातें सुनकर सयाने चेत-से गये।

दूसरे कोने से एक बूढ़े ने कहा, "माधौ भैया ठीक कहते हैं। हम बड़े सरकार से लड़ने लायक हैं?"

वह नौजवान तमककर उठ खड़ा हुआ और कन्धे पर पड़ा अँगोछा सिर पर लपेटते हुए बोला, "हैं कैसे नहीं काका? जो सब बिरादरी एक हो जाय, तो है मजाल रनबीर की जो एक रोंवा टेढ़ा कर सकें?"

रणवीर सिंह को बड़े सरकार या भैया साहब न कह, नौजवान ने केवल रनबीर कहा था, यह प्रायः सबको बुरा लगा।

जोरावर ने डाँटा, "शंकर, बैठो। बात करने का सहूर नहीं, चले बड़े बतकहा बनने।"

सभी लोगों ने जोरावर की बात का समर्थन किया। शंकर खिसिया कर चुपचाप बैठ गया।

जोरावर सिंह ने समझाया, "बड़े सरकार से फ़ौजदारी करने की बात तो कोई कहता नहीं, माधो काका। हम उनसे लड़ने लायक हैं? बात है अपने हक़ की। छोटे सरकार साथ हैं। राज गवर्मिंटी है। नवाबी थोड़े है जो कोई किसी का हक मार बैठे। कचेहरी-अदालत है, पंच-पंचाइत है। चार के आगे बड़े सरकार हमें कायल कर दें, हम मान जायँगे।"

माधो सिंह खुश थे कि जोरावर घूम-फिर कर आखिर उन्हीं की बात पर आये। वह बोले, "जैसे हम आज के तो हैं नहीं। गदर अपनी आँखों देख चुके हैं। बड़े सरकार के बाबा साहेब, दिगपाल काका ने सात अंग्रेज़ों को बचाया। ओ' वो कोई लल्लू-बुद्धू तो थे नहीं। बड़े-बड़े अपसर, लम्बतड़ंग, कपास की नाईं गोरे, बड़े-बड़े टोप, खाकी उर्दी, पिस्तौल, कार्तूस का परतला। कोई धुंधिया-मुंदिया थोड़े थे। वह तो नाना साहेब का परताप था। नाना साहेब का नाम सुनके अंग्रेज़ थर-थर काँपते थे। तो वो साहेब दिगपाल काका को सात गाँव दे गये। उनकी रजामजी, बड़े आदमी की रीझबूझ, खुस हो गये, निहाल कर दिया। तो अंग्रेज़ बहादुर के दिये गाँव हैं जोरावार। यह वह गुड़ नहीं जो चींटे खायँ।"

माधो सिंह के कहने का कुछ ऐसा असर हुआ कि हवा ही बदल गयी। चारों ओर से आवाजें आयीं, "ठीक तो है। पराये धन को चोर रोये।"

जोरावर सिंह कपाल पर हाथ रखे कुछ देर चुप बैठे रहे।

माधो सिंह का मन और बढ़ा। उन्होंने कहा, "तुम पंच सब अपना-अपना काम देखो। राज भाग्य से मिलता है। धाव-धाव करतार, कहीं लग धइहै। जितना लिखा लिलार, बतनै भरि पइहै। तपस्या से राज मिलता है। पुरुष जनम तप किया, इस जनम भोग रहे हैं। सिहाने से कुछ निकास्ता नहीं।" थोड़ा रुककर बोले, "बीर भोगैं बसन्धरा, सास्त्र, पुरान कह गये हैं। तो हैं छाती में बार? कचेहरी-अदालत! चूल्हा-चकरी

बिकि जाई।"

माधो सिंह जोश में ज़रूरत से ज्यादा कह गये। उनके अन्तिम वाक्य ठाकुरों के लिए एक प्रकार से चुनौती थे। सब कुसमुसाने लगे।

शंकर ने गरजकर कहा, "छत्री ह्वै कै रन से भागै, वहि के जीबे का धिक्कार!"

दूसरी तरफ़ से आवाज़ आयी, "और क्या, छत्री ह्वै जो समर सकाना। कुल कलंक तेहि पामर जाना। गोसाईं जी कहि गये हैं।"

जोरावर ने मौक़ा ठीक देखा और कड़के, "बात तो ठीक है। हम रार नहीं चाहते, पै अपना हक़ कैसे छोड़ दें। चाहे चूल्हा-तवा बिक जाय? अरे, एक-एक बीता जमीन की खातिर लोथें गिर जाती हैं।"

ननकू बोला, "मरद का तन पा के फ़ौद्दारी औ कचेहरी-अदालत से डरता! थू है।"

जोरावर ने दहला मारा, "जो बहुत डरैं, लहंगा पहिर के घर बैठें।"

माधो सिंह के क्षत्रित्व और मर्दानगी पर लताड़ पड़ रही थी, इससे वह लज्जित हो गये। वह धीरे से बोले, "तो हम कुछ कहते थोड़े हैं। हम तो कगार पर के रूख हैं। तुम सब जवान हो, जो ठीक जान परै, करो।"

थोड़ी देर तक और बहस हुई। अन्त में यह तय पाया कि सब बैस एक हो जायें और छोटे सरकार जैसी राय दें, वैसा करें।

10

इसके दूसरे दिन सवेरे रणवीर सिंह जलपान करके बारहदरी के सामने वाले आँगन में कुर्सी पर बैठे थे। ड्योढ़ी के कारिन्दा, मुंशी खूबचन्द पास खड़े कुछ काग़ज़-पत्र दिखा रहे थे। इतने में लाठी खटकाते माधो सिंह हाज़िर हुए। आँखों से कम दिखता था, इसलिए पूछा, "बड़े सरकार हैं क्या?"

"हाँ, आओ काका।" रणवीर ने स्वयं उत्तर दिया।

"बैठे हो बच्चा साहेब।" बड़े स्नेह से माधौ सिंह बोले और पास आकर सामने पड़ी बेंच पर बैठ गये।

"और कौन है?" बैठने के बाद पूछा।

"कारिन्दा है," रणवीर सिंह ने बताया।

"अच्छा।" माधौ सिंह सोच में पड़ गये, कारिन्दा के सामने कहें या न कहें।

"कोई खास बात है क्या, काका?" रणवीर ने पूछा।

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं।" थोड़ा रुककर, "खास है भी, नहीं भी है। कुत्ते भूँकते रहते हैं, हाथी अपनी राह चलता है। राजकाज है। औ' फिर मुंशी जी कुछ गैर थोरे हैं।"

रणवीर सिंह यह पहेली न समझ सके। कारिन्दा कुछ पढ़ रहे थे। वह रुक गये। माधौ सिंह सोचने लगे, जब इतना कहा है, तो कारिन्दा समझ तो गया ही होगा, कुछ घास थोड़े खाता है। अब कह ही दिया जाय। आखिर माधौ सिंह ने जोरावार सिंह के यहाँ की पंचायत का सारा किस्सा विस्तार के साथ सुनाया। यह भी बताया कि उन्होंने किस तरह सबको फटकारा।

रणवीर सिंह सुनकर कुछ गंभीर हो गये और सोचने-से लगे। कारिन्दा पछताया, मुझे भी तो कुछ बातें मालूम हो गयी थीं और बतलाना चाहता था। कहाँ से माधौ आ टपका। वफादारी दिखाने का यह मौका हाथ से निकल गया। साथ ही यह भी सोचा, जब पहले नहीं बतलाया, तो अब बिलकुल चुप रहना चाहिए, जैसे कुछ मालूम ही न हो।

"हूँ! तो संकर इस तरह कह रहा था।" क्रोध से रणवीर सिंह के ओठ फड़के। "बाप यहाँ सिपाहीगिरी करते-करते मर गया। हमारे टुकड़ों पर पला।"

"अनदाता परवरिश न करते, तो तिरपन की कहतसाली में ट बोल जाता सारा घर।" कारिन्दा ने हाथ जोड़कर पुष्टि की।

"मारो गोली, कूकुर इस तरह भूँका ही करते हैं।" माधौ सिंह हाथ हिलाकर बोले।

"ये मेरा एक रोंआ भी टेढ़ा नहीं कर सकते, काका।" रणवीर ने मूँछों पर ताव दिया। छोटकऊ के उकसाने पर सब बिफर रहे हैं। चलें कचेहरी, एक-एक की हंड़िया-डलिया बिकवा दूंगा। हैं किस खेत की मूली?"

"तुम से लड़ने लायक हैं, बच्चा साहेब? हम जानते नहीं क्या! कहाँ राजा भोज, कहाँ भोजवा तेली!" माधो सिंह गर्दन हिलाते हुए हँसकर बोले।

"लेकिन इस संकर को तो अभी मजा चखाऊँगा!" रणवीर सिंह ने ओठ काटे। "मुंसी जी, बुलवाओ तो संकरवा को।"

"बहुत अच्छा सरकार," कहकर कारिन्दा तेजी से बाहर चले गये।

माधो सिंह घबराये। अब मेरे सामने ही शंकर की बेइज्जती होगी, तो सारी बिरादरी नाम रखेगी। शंकर की बात दबा जाता, तो अच्छा था। उन्होंने सोचा।

"बच्चा साहेब, तुम चुप रहो। छिमा बड़ेन को चाहिए। संकर-फकर बरसाती नदी हैं। छुद्र नदी भरि चलि उतराई। तुम समुद्र हो—सदा एक रस।" रणवीर को समझाया।

"बिरादरी के डर से ज्ञान-भरा उपदेश छाँट रहे हैं।" रणवीर ने मन-ही-मन कहा। फिर शान्त भाव से बोले, "काका, तुम अभी जाओ। तुम्हारे सामने ठीक नहीं।"

माधो सिंह यह सुनकर खुश तो हुए, लेकिन यह भी नहीं दिखाना चाहते थे कि वह बिरादरी से डरते हैं। इससे तो यही जान पड़ेगा कि वह रणवीर के पक्के हितू नहीं।

"तो मैं डरता किसी से नहीं, बच्चा साहेब।" माधो सिंह ने चट सफाई पेश की। "तुम्हारा कोई अहित करै, औ' मैं टुकुर-टुकुर ताकता रहूँ, यह हो नहीं सकता।" थोड़ा रुककर बताया, "जा रहा था खेतों की तरफ़। बैठे क्या होगा। थोड़ा हरियर उखाड़ लाऊँ। सोचा, तुमसे मिलता जाऊँ, औ' यह बात भी बता दूँ।"

इतना कहकर माधो सिंह उठ खड़े हुए और लाठी खटकाते चल पड़े। रणवीर सिंह कुर्सी से उठकर आँगन में टहलने लगे। सोच रहे थे,

दलवीर गाँव को भड़काकर टट्टी की ओट शिकार खेलना चाहता है। सबसे पहले भैयाचारों को उकसाया है। इस विष वृक्ष का अंखुवा ही रौंद देना होगा। पहले की चौकसी अच्छी। मन-ही-मन हिसाब लगाने लगे, गाँव में कौन-कौन अपने साथ रहेंगे।

थोड़ी देर में सिपाही शंकर को साथ लिये आया।

"जै राम जी, सरकार।" शंकर ने झुककर दोनों हाथ जोड़े।

रणवीर ने कुछ ध्यान न दिया। शंकर चुपचाप खड़ा रहा। सिपाही थोड़ा हटकर एक कोने में खड़ा हो गया। कारिन्दा भी आ गये। वह सिपाही के ठीक सामने दूसरे कोने में खड़े हो गये।

रणवीर सिंह टहलते हुए शंकर के सामने आ खड़े हुए।

"काहे संकर, बहुत चर्बी चढ़ी है!" रणवीर सिंह गरजे।

शंकर सहम गया। सोचने लगा, किसी ने सब कह दिया।

"बोलता काहे नहीं? लंगोटी लगाने की तौफ़ीक नहीं, चला है राज करने। बिन्दा!" रणवीर ने सिपाही को सम्बोधित किया।

"सरकार।" कोने में खड़ा सिपाही शंकित स्वर में बोला।

"ला तो हमारा हंटर। अभी इस सुअर की खाल उधेड़ दूं। दिखा दूं रणवीर क्या कर सकता है। देखूं, किस को गुहार लगाता है।" रणवीर का चेहरा गुस्से से तमतमाया हुआ था।

"क्या खड़ा ताकता है! जा जल्दी!" रणवीर ने ओठ काटते हुए डाँटा।

सिपाही धीरे-धीरे बढ़ा। रणवीर दोनों हाथों की अँगुलियाँ मरोड़ते, चोट खाये शेर की तरह तेज़ी से टहलने लगे। शंकर बिलकुल सहमा खड़ा था। बिरादरी में उसने जो कुछ कहा था, वह पीठ पीछे और जमात देखकर। उसे क्या पता था कि अकेले सामना करना पड़ेगा। कारिन्दा कोने से शंकर को हाथ से इशारा कर रहे थे, पैर पकड़ ले। शंकर ने कारिन्दा का इशारा समझा, लेकिन उसे जाने कैसा लगा। वह रणवीर की बिरादरी का था। आज नीच जातियों की तरह रणवीर के पैर पकड़े! फिर उसने सोचा, अभी दूसरी बेइज्ज़ती तो होगी ही। कारिन्दा और सिपाही के सामने को- चलेंगे और फिर यह बात पूरे गाँव में फैल जायगी।

सिपाही हंटर लिये आता दिखायी पड़ा। शंकर थोड़ा हिचकिचाता हुआ बढ़ा और घुटनों के पास रणवीर के पैर पकड़ लिये, "सरकार, गलती..." इतने ही शब्द उसके मुंह से निकले।

सिपाही अभी रणवीर सिंह तक पहुंच भी न पाया था कि कारिन्दा आ गये और हाथ जोड़कर बोले, "गरीबपरवर, भूल-चूक माफ करें।"

ठीक उसी समय रणवीर सिंह की पांच साल की बेटी हाथ में लाल गुलाबों का गुच्छा लिये दौड़ती हुई आयी और पिता की कमर से लिपटकर बताया, "बप्पा साब, यह गुलदस्ता, माली ने दिया है।"

रणवीर इस अद्भुत परिस्थिति में नरम पड़ गये। "चल हट!" वह बोले। लड़की सुनकर सहम गयी। उसे गोद में उठाते हुए रणवीर ने कहा, "तुमको नहीं बेटा, इसको।"

शंकर गर्दन झुकाये चुपचाप बाहर आया। उसका दिल रो रहा था। ठाकुर होकर आज इस तरह बेइज्जत हुआ। ठाकुर नहीं, जो इसका बदला न लूं, मन-ही-मन शंकर ने संकल्प किया।

11

शंकर ने अपनी बेइज्जती की बात किसी से न कही, फिर भी यह खबर फैलते देर न लगी और दलवीर सिंह के कान तक भी पहुंची। उन्होंने शाम को शंकर को बुलवाया। जोरावर सिंह और ननकू सिंह भी हाजिर हुए। दलवीर सिंह ने शंकर को समझाया, तुम थाने में रिपोर्ट करो मारने-पीटने की। हम मदद करेंगे।

शंकर ने हाथ जोड़कर कहा, "सरकार, चार के साथ और बात, मैं अकेले उनके लड़ने लायक नहीं।"

दलवीर सिंह ने जब देखा कि शंकर किसी भी तरह राजी नहीं होता, तो चुप हो गये। लेकिन सोच में पड़ गये। शुरू में ही अगर लोग डर गये, तो सारे किये-कराये पर पानी फिर जायेगा, बदनामी का ठीकरा अलग

सिर पर होगा। शंकर के चले जाने के बाद उन्होंने जोरावर सिंह और ननकू को समझाया, ब्राह्मणों, अहीरों को अपनी तरफ लाने की कोशिश करो।

शंकर वाली खबर के फैलते ही गाँव में सनसनी फैल गयी थी। सभी ब्राह्मणों, ठाकुरों में खलबली थी।

दलबीर सिंह के पास से जोरावर और ननकू उठे, तो रास्ते में उन्हें मुरलीधर सुकुल मिल गये। मुरलीधर अपनी ससुराल में रहते थे। उनके ससुर के कोई लड़का न था, एक लड़की ही थी। मुरलीधर पुरोहिती करते थे।

जोरावर ने पूछा, "सुकुल जी, कुछ सुना तुमने भी ?"

मुरलीधर ने सुना सब था, लेकिन कुछ कहते हुए हिचकिचाये। थोड़ा इधर-उधर देखकर बोले, "मुखिया, यह तो वही है, जबरा मारे, रोने न दे।"

ननकू ने समझाने के स्वर में मोड़ दिया, "सोचना यह है सुकुल जी, आखिर शंकर कोरी-चमार थोड़े है। आज संकर, कल हम, परसों...आगे कुछ न कहने पर भी 'तुम' स्पष्ट था।

"सो तो ठीक है।" मुरलीधर के मुँह से बिना सोचे ही निकल गया।

"तो इसका कुछ रास्ता निकालना होगा न, सुकुल जी ?" जोरावर सिंह ने पूछा। "माने, हीन की लुगाई, सबकी भौजाई। संकर गरीब है, बाप रहा नहीं, तो उसकी बेइज्जती की जाय ?"

मुरलीधर की साँप-छछूंदर वाली हालत थी। आखिर धीरे से बोले, "सो तो न होना चाहिए, मुखिया। मुल बड़ों का मुँह कौन पकड़े ?"

"बड़ों का मुँह !" ननकू ने मुरलीधर का हाथ पकड़कर कहा, "आखिर अपना भी तो कुछ धरम-ईमान है। भगवान के पास हमको, तुमको, सबको जाना है।"

"तो मैं कुछ गाँव से बाहर थोड़े हूँ, ननकू भाई।" मुरलीधर ने पिण्ड छुड़ाने के लिए कह दिया।

जोरावर सिंह ने उनकी बात पकड़ी और बोले, "इंसाफ की बात यही है। बेइंसाफी की बात कहैं, तो जबान खीच लो, चूँ न करेंगे। लेकिन बड़ी

बात इंसाफ की।"

"तो जैसा चार भाई करेंगे, मैं सबके बीच हूँ।" मुरलीधर कह गये।

"सो तो ठीक है। लेकिन अपना-अपना घरम सुकुलजी, अपने साथ है।" जोरावर सिंह ने समझाया।

"चार, मान लो, लँड़ो बनके बेइंसाफी देखें, तो?" ननकू ने प्रश्न किया और खुद उत्तर दिया, "भाई, हमारी आतमा तो गवाही न देगी।"

आखिर मुरलीधर को कहना पड़ा, "जैसा कहोगे मुखिया, हम सब तरह से तयार हैं।"

"बहुत ठीक!" जोरावर बोले। साथ ही इतना और जोड़ दिया, "छोटे सरकार तुमको याद भी कर रहे थे, सुकुल जी। कभी-कभी मिल-भेंट आया करो। अरे, बड़ा पेड़ फल न देगा, तो छाँह तो देगा।"

छोटे सरकार याद कर रहे थे, यह सुनकर मुरलीधर खुश हो गये। उनके पास एक बिस्वा भी जमीन न थी। उन्होंने सोचा, बड़े आदमी को खुश होते कितनी देर लगती है। खुश हो जायें, तो दो-चार बीघा दे देना कौन बड़ी बात है?

"जाऊंगा मुखिया, जरूर जाऊंगा," मुरलीधर बोले। "छोटे सरकार प्रजा का बड़ा खयाल रखते हैं। अरे, कहाँ वह, कहाँ हम, कहाँ पर्बतराज, कहाँ घूरे का ढेर। मुल मिलेंगे, तो दो गाली सुनाये बिना मानेंगे नहीं, साला-बहनोई का रिस्ता इतना अपना भी क्या मानेगा!"

"हाँ, जरूर मिलो।" ननकू ने कहा और सुकुल जी को "पाँय लागौं" कहकर दोनों अहीरों के टोले की तरफ चल पड़े।

राम खेलावन दरवाजे पर ही मिला। घंटे-भर तक खींचतान होती रही। जोरावर ने बहुतेरा चित्त-पट पढ़ाया, लेकिन राम खेलावन टस से मस न हुआ। उसकी एक ही टेक रही, "बिरादरी के और चार भाइयों से पूंछ लूं।" आखिर जोरावर और ननकू को वहाँ से कुछ निराश-से होकर लौट आना पड़ा।

12

दलवीर सिंह के रंग-ढंग देखकर रणवीर सिंह भी चुप नहीं बैठे रहे। उन्होंने सोचा, जब दलवीर ने मोर्चा लगा ही दिया है, तो अब वारा-न्यारा हो ही जाना चाहिए।

ब्राह्मणों में घनेश्वर मिश्र उनके पुरोहित थे। वह तो साथ रहते ही। शिवसहाय दीक्षित मिश्रों के रिश्तेदार थे। वह उन्ही के इशारे पर चलते थे। रह गये सुकुल, तो एक घर था, वह भी गाँव के मान्य मुरलीधर का। उसकी उन्होंने चिन्ता न की। ब्राह्मणों में पं० रामअधार दुबे को मिलाना उन्होंने सबसे जरूरी समझा।

रणवीर सिंह ने एक दिन सवेरे पं० रामअधार दुबे को बुलवाया। दुबे जी हाजिर हुए। रणवीर सिंह ने सारा किस्सा सुनाया।

कुछ क्षण सोचने के बाद दुबे जी ज्ञान-भरे पण्डिताऊ ढंग से समझाने लगे, "छोटे सरकार—क्या कहें," थोड़ा रुककर "लड़कपन कर रहे हैं। अरे, प्रजा, गाय औ' नारी तीनों एक समान हैं। मजबूत सासन रखो, ठीक। सासन ढीला हुआ, एक बार छुट्टा घूम पायी, मानो बण्टाढार। फिर काबू में नहीं आ सकती। आज जिनको सिर पर चढ़ा रहे हैं, कल वही उन्ही के सिर पर..." आगे का अपशब्द 'मूतेंगे' पंडित जी न कह सके।

इतना कहने के बाद चुप हो गये, जैसे फिर कुछ सोच रहे हों, गोल टोपी के ऊपर से ही सिर खुजलाया, फिर बोले, "औ' यहाँ हमारी दसा है—दाहिनी जांघ खोलें, तो अपनी, बायीं खोलें, तो अपनी। सरकार हुकुम दें, तो छोटकऊ से मिलें ?"

रणवीर समझ गये कि पण्डित रामअधार दोनों में से किसी का पक्ष न लेंगे। वह किसी से टूटना नहीं चाहते। विद्वान आदमी, फिर सयाने। हम दोनों को बचपन में खेलाया है। दोनों घरों में मान है। कुछ पहले उस घर में भागवत सुनायी है। यहाँ से पूजा का संकल्प करा ले गये हैं।

यह स्थिति भी रणवीर को अच्छी लगी। चलो, पंडित जी को न ऊधो से लेना, न माधो को देना।

रणवीर ने कहा, "मिलने को मिलिये, पंडित जी, लेकिन छोटकऊ मानेंगे नहीं।"

ठाकुरों में बरजोर सिंह को बुलवाया। बरजोर सिंह वैसे आते-जाते इन्हीं के यहाँ थे, और शंकर की उद्दण्डता उन्होंने पसन्द न की थी, फिर भी शंकर को बेइज्जत करना उन्हें बुरा लगा था। आखिर था तो वह ठाकुर।

उन्होंने कहा, "बच्चा साहेब, कही-सुनी माफ हो, तुम थोड़ा लड़कपन कर गये।" बात कुछ खले नहीं, इसलिए थोड़ा हँसकर बोले, "आखिर रजपूती खून। जो रन हमें प्रचारै कोऊ, लरै सुखेन काल कि न होऊ। तो गुस्से में आकर संकरवा को जा-बेजा कह गये।"

"क्या करते ककुवा," रणवीर सिंह ने कहा, "सुनते ही मेरे तो आग लग गयी तन-बदन में। अरे, जो राह की सिटकी इस तरह कहें, तो कर चुके ज़मीदारी।"

"सो तो सही है। कहा उसने बहुत बेजा था।" बरजोर सिंह ने पुष्टि की। "चिन्ता न करो। बरसाती पानी है, चार दिन में बहकर ठिकाने लग जायगा।" थोड़ा रुककर, "औ' हम तो बड़े सरकार के बखत से इस ड्योढ़ी के रहे हैं। मेरा तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई।" कहकर बरजोर ने गर्दन हिलायी और हँसने लगे।

"सो तो है ही ककुवा, औ' फिर यह घर तुम्हारा है। तुम कोई गैर थोड़े हो।"

इसी तरह रामखेलावन भी हामी भर गया, "अहीर सरकार के साथ रहेंगे।"

अहीरों ने पंचायत करके फ़ैसला कर लिया था कि हमें बड़े सरकार के साथ रहना चाहिए। पानी मे रहकर मगर से बैर ठीक नहीं।

अहीरों को पाकर रणवीर सिंह की बाँछें खिल गयीं। अब अगर दलवीर फ़ौजदारी भी करेगा, तो एक-एक को भुर्ता बनवा दूँगा। उन्होंने मन-ही-मन कहा।

बनिया, तेली, कुम्हार जैसी जातियों को न रणवीर ने पूछा और न दलवीर ने ही। गाँव वालों ने थोड़ा-बहुत अपनी-अपनी तरफ़ खींचना चाहा।

जोरावर सिंह ने कलिया को बुलाकर समझाया। लेकिन उसने हाथ जोड़कर कहा, "मुखिया, तुम सब हो बड़कवा, सरकार के भैयाचार। अरे, गधे की लात गधा सहता है। हम हैं रैयत-रेजा। बड़े सरकार बुलायें तो हाथ बांधे खड़े, छोटे बुलायें तो सिर के बल जायें। बनिया-हलवाई, तेली-तमोली, इनकी क्या बिसात ? हम बांभन-ठाकुर की बरोबरी के लायक नहीं।"

यही जवाब और जातियों से भी मिला। वे ब्राह्मणों, ठाकुरों के इस झगड़े से अलग रहीं।

13

जिला कलक्टर जाड़ों में अलग-अलग तहसीलों का दौरा किया करता था। इन दौरों में एक पड़ाव किशनगढ़ में भी पड़ता था। रणवीर सिंह को कलक्टर के आने की सूचना मिल चुकी थी। वह स्वागत की तैयारी में पूरी तरह से लगे हुए थे।

सवेरे-सवेरे रणवीर सिंह के सिपाही चमारों, पासियों के टोले में जाते और हर घर से एक को बेगार में पकड़ लाते।

नहर के किनारे रणवीर सिंह की बहुत बड़ी अमराई थी। वहीं कलक्टर का खेमा पड़ना था। बेगार में पकड़े मजदूर बाग़ की जमीन समतल करने झाड़-झंखाड़ काटने में लग गये। बाग़ की जमीन की सफ़ाई पूरी होने के बाद बाग़ से गढ़ी तक एक कच्चा गलियारा बनवाया गया। पहले इसे समतल किया गया। इसके बाद इस पर रोड़ों की एक परत डालकर धुरमुसों से कूटा गया। गलियारा काम-चलाऊ सड़क जैसा हो गया। मजदूर रोज गलियारे की ओर बाग़ की जमीन पर पानी का छिड़काव करते।

जिस दिन कलक्टर को आना था, उससे एक दिन पहले बाग़ से गढ़ी तक तोरण बनाये गये, लम्बे-लम्बे बाँसों पर आम की पत्तियाँ लपेटकर गढ़ी

के फाटक पर रोशन चौकी बजाने लायक एक जगह बनी थी। उस पर भी आम के पत्तों की झालरें लटकायी गयी।

गढ़ी के फाटक के अन्दर के बड़े सहन में दो बड़े शामियाने लगाये गये। एक शामियाने के नीचे कई तख्त रखकर कलक्टर के बैठने का आसन बनाया गया—दो सुनहली ऊँची कुर्सियाँ और उनके सामने एक बड़ी मेज जिस पर मखमल बिछी थी।

कलक्टर तीसरे पहर आया और पूरे किशनगढ़ में धूम मच गयी। लड़कों के झुण्ड बाग़ के बाहर से ही ताक-झाँक कर रहे थे कि कलक्टर की एक झलक मिल जाय।

सूरज डूबने से पहले कलक्टर की सवारी गढ़ी को चली। एक बढ़िया बग्घी पर हलके काले रंग का सूट पहने नाइट कैप लगाये अंग्रेज कलक्टर और उसकी बगल में रणवीर सिंह बैठे। रणवीर सिंह चूड़ीदार पाजामा, जरी के काम की अचकन पहने थे और हलके गुलाबी रंग का साफा बाँधे थे जिसमें सुनहली कलगी लगी थी। एक सिपाही पूरी वर्दी पहने और कुलहदार साफा बाँधे बग्घी के पीछे खड़ा था। बग्घी में दो घोड़े जुते थे जिनके अयालों पर सुनहली कलगियाँ लगायी गयी थीं। कोचवान चुस्त-दुरुस्त सफ़ेद वर्दी पहने, सिर पर साफा बाँधे बग्घी चला रहा था। रास्ते में दोनों ओर दर्शक पुरुषों की भीड़ थी जो बग्घी के निकट आने पर 'साहेब सलाम' कह रही थी।

बग्घी जब फाटक पर पहुँची, मधुर स्वर में शहनाई बजाकर कलक्टर का स्वागत किया गया।

फाटक से शामियाने तक एक रंग के खूबसूरत कालीन बिछे थे। कलक्टर आगे-आगे और रणवीर सिंह उसकी बगल में ज़रा पीछे कालीनों से होकर चल रहे थे।

झम्मन मियाँ पूरी फ़ौजी वर्दी पहने, गले में कारतूसों का परतला डाले, कन्धे पर बन्दूक रखे सावधान मुद्रा में खड़े थे। उनके साथ एक ही पंक्ति में सात सिपाही भी खड़े थे। वे दोकछी धोतियाँ और कुर्ते पहने थे। कुर्ते के ऊपर से अँगोछे को कमरपट्टे की तरह बाँध रखा था। सिरों पर मुँडासे बाँधे थे जो शायद धोतियों के थे। कलक्टर जब उनके

पास से होकर गुजरने लगा, पुलिस की नौकरी से बर्खास्त झम्मन मियाँ ने सीने को और तानकर कहा, "अटेंसन, आई राइट।" सभी सिपाहियों ने अपनी लाठियाँ दाहिने कन्धों पर बन्दूकों की तरह रख ली।

शामियाने के नीचे बैठने की व्यवस्था जाति और प्रतिष्ठा के हिसाब से की गयी थी। जो शामियाना फाटक की तरफ से पड़ता था, उसमें अहीर, बनिये, हलवाई बैठे थे; इसके बाद वाले शामियाने में जहाँ कलक्टर का आसन था, ब्राह्मण और ठाकुर।

कलक्टर के कुर्सी पर बैठ जाने के बाद पं० रामअधार दुबे ने एक श्लोक स्वर के साथ पढ़ा और नारियल कलक्टर के हाथ में दिया। कलक्टर ने नारियल लेकर मेज पर रख दिया। इसके बाद धनेश्वर मिश्र आये और अटकते हुए एक श्लोक पढ़ा और गरी का गोला कलक्टर को दिया।

इसके बाद रणवीर सिंह ने चाँदी की तश्तरी पर मखमली म्यान में रखी एक कटार कलक्टर को भेंट की। कलक्टर ने ज़रा-सा मुसकराकर उसे ले लिया और मेज पर रख दिया।

इसके बाद आधे घंटे तक तरह-तरह की आतिशबाजी छूटी। दो भेड़ों का विपरीत दिशाओं से तेज़ी से आना और टकराकर हट जाना, फिर आना और फिर टकराना सबसे अधिक आकर्षक था।

आतिशबाजी के बाद कलक्टर के स्वागत का कार्यक्रम समाप्त हो गया।

किशनगढ़ से करीब एक मील पर एक झील और जंगल था। दूसरे दिन कलक्टर और रणवीर सिंह शिकार के लिए हाथी पर रवाना हुए। दोपहर तक झील के किनारे और वन में घूमकर कलक्टर ने कुछ मुर्गाबियों और दूसरी चिड़ियों का शिकार किया। लोगों के शोर और बन्दूकों की आवाज से जंगल के छोटे-छोटे जीव-जन्तु—खरगोश, लोमड़ियाँ, सियार डर के मारे इधर-उधर भाग रहे थे। एक बन सुअर भागता हुआ दिखायी पड़ा और कलक्टर ने उसे अपनी बन्दूक का निशाना बनाया।

दोपहर में जंगल में ही कलक्टर के भोजन का प्रबन्ध था। कलक्टर,

के निजी खानसामा ने बन सुअर के पुठ काटे और कुछ मुर्गाबियाँ भी। साहब का खाना बनने लगा।

कलक्टर टहलते हुए सारा इंतजाम देख रहा था। रणवीर सिंह उसकी बगल में एक कदम पीछे चल रहे थे।

कलक्टर ने मुड़कर रणवीर सिंह से कहा, "चोटे राव साहब, अम जानटा है, आप परहेज करटा है, इसलिए अपने बाँभन से अपने लिए खाना पकवा लीजिये।"

"जो हुकुम सरकार," रणवीर ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया। कलक्टर ने उन्हें छोटे राव साहब कहा, इससे उन्होंने समझा कि राय बहादुर का खिताब हमें मिल जायेगा।

रात में रणवीर सिंह ने महफिल का इन्तजाम किया। महफिल हिन्दुस्तानी ढंग से सजायी गयी थी। कालीन बिछे थे और गावतकिये रखे थे। महफिल के लिए लखनऊ की मशहूर गाने वाली रतनजान, कुछ भाँड़ और पक्के गानों के एक उस्ताद धीमन महराज आये थे। इस महफिल में गाँव के बहुत ही गिने-चुने लोग बुलाये गए थे, प० रामअधार, धनेश्वर मिश्र, शिवसहाय दीक्षित, जोरावर सिंह मुखिया, कलिया बानो और दूसरे लोग।

जोरावर सिंह और बहुतेरे बैस पहले दिन के समारोह में न गये थे। लेकिन कल की बात भीड़ की थी। आज गिने-चुने लोग थे। जोरावर सिंह दुविधा में पड़ गये। जायें, या न जायें ? दलवीर सिंह गाँव में थे नहीं। वह दो दिन पहले ही बाहर चले गये थे। बड़े भाई से कहा था, "सास की तबीयत बहुत खराब है। चिट्ठी आयी है।" लेकिन यह बात उन्होंने और किसी को न बतायी थी। सब यही समझते थे कि दलवीर सिंह जान-बूझ कर चले गये हैं। वह रणवीर सिंह के जलसे में शामिल नहीं होना चाहते थे।

खूब सोचने-विचारने के बाद जोरावर सिंह ने अपने लड़के रामजोर को मुंशी खूबचन्द के पास भेजा। उसे पट्टू की तरह पढ़ाया, "मुंशी से अकेले में मिलना ओ' कह देना, बप्पा को बुखार चढ़ा है। वह महफिल में

न आ सकेंगे।" यह भी कहा कि मुंशी से कह देना, सरकार को बता दें।

कलक्टर हलके बादामी रंग का सूट पहने महफिल में आया और बीच वाले कालीन पर मसनद के सहारे बैठ गया।

रणवीर सिंह ने पहले पक्के गानों का, इसके बाद नाच का और बीच-बीच में भांड़ों की नकलों का कार्यक्रम बनाया था।

धीमन महराज ने ध्रुपद से आरंभ किया। लेकिन उनका आलाप कलक्टर को उबा रहा था। कलक्टर ने सिगार निकाला और गावतकिये पर कुछ अधलेटा-सा होकर वह सिगार पीने लगा।

रणवीर सिंह समझ गये कि साहब को पक्का गाना अच्छा नहीं लग रहा। उन्होंने मुंशी खूबचन्द को गाना बन्द कराने और नाचने वाली को पेश करने का इशारा किया।

ध्रुपद अभी लय पर आया भी न था कि अचानक बन्द करा दिया गया।

अब पेशवाज पहने रतनजान खड़ी हुई। उसके साजिन्दे भी उसके पीछे अपना-अपना साज लेकर डट गये।

रतनजान ने आँखें मटकाते हुए सस्ता-सा गाना छेड़ा—'झुमका गिरा रे, बरेली की बजार में।'

अभी तबले पर थाप पड़ी भी न थी और सारंगी ने ज़रा-सा री-रीं ही किया था कि कलक्टर साहब बोल पड़े, "यह झुमका टो किटनी बार गिर चुका है।"

रतनजान ठगी-सी खड़ी रह गयी। आगे बोल न निकला। सब साज खामोश हो गये। रणवीर सिंह घबरा गये कि सारे किये-कराये पर पानी फिरा जाता है। उन्होंने इशारे से भांड़ों को आने को कहा।

भांड़ों में से एक ने घोड़े के हिनहिनाने की और दूसरे ने गधे के रेंकने की नकल की।

ये दोनों चीज़ें साहब को पसंद आयीं। उसने हँसकर कहा, "वैलडन! टुम अच्छा नकल करटा है।"

भांड़ों ने जब यह समझ लिया कि साहब को यही पसन्द है, तब

उन्होंने बिल्लियों के लड़ने और कुत्तों के भौंकने की नकल की।

ये नकलें समाप्त होने के बाद कलक्टर ने घड़ी देखी और बोला, "अब सोना माँगटा है, चोटा राव साहब।"

रणवीर सिंह उठ खड़े हुए। कलक्टर भी उठ पड़ा। पूरी महफिल ने खड़े होकर कलक्टर को विदा किया। महफिल वर्खास्त हो गयी।

तीसरे दिन सवेरे कलक्टर कानपुर को रवाना हो गया।

कलक्टर से मिलने, उसकी खातिर-खुशामद करने का मौका हाथ से निकल गया था, इसका दलवीर सिंह को पछतावा था।

कलक्टर के कानपुर पहुँचने के दूसरे ही दिन सवेरे वह उसके बँगले में हाजिर हुए और अर्दली को एक रुपया देकर जल्द मुलाकात कराने को कहा। कोई एक घण्टे बाद मुराद पूरी हुई।

कमरे में दाखिल होते ही दलवीर ने फर्शी सलाम किया और हाथ जोड़ दिये।

"आइये कुँवर साहब," कलक्टर बोला।

दलवीर सिंह कुर्सी पर बैठ गये, लेकिन उनकी समझ में न आता था कि अपनी बात कहें कैसे।

"कहिए, कुछ खास काम ?" कलक्टर ने पूछा।

"हजूर के दर्शन को आया।" दलवीर सिंह बोले। "हजूर किशनगढ़ गये थे। मैं था नहीं। मेरी सास की तबीयत बहुत खराब थी। फरुखाबाद गया था।"

"सास ?"

"हाँ हजूर, सास यानी मेरी घरवाली की माँ।"

"ओ, मदर-इन-ला।"

दलवीर सिंह अंग्रेजी तो समझ न सके, लेकिन कह दिया, "जी हजूर।"

"अब कैसा है ?"

"पहले से ठीक हैं, सरकार।" दलवीर ने बताया और थोड़ी देर के बाद कहा, "मुझे बड़ा पछतावा रहा, किशनगढ़ में हजूर की सेवा में

हाजिर न रह सका।"

"कोई बाट नहीं। चोटा राव साहब टो ठा।"

रणवीर सिंह के लिए छोटा राय साहब सुनकर दलवीर का दिल धक से हुआ, लेकिन बोले, "हाँ सरकार, बड़े भाई साहब थे।"

इतने में साहब ने घण्टी बजायी। दूसरे मुलाकाती को बुलाने के लिए। दलवीर सिंह कुर्सी से उठे और फिर झुककर सलाम किया और बाहर आ गये।

14

दलवीर सिंह के किशनगढ़ वापस आने पर उनके बैठकुवे एक-एक कर मिलने गये और अपने-अपने ढंग से कलक्टर के आने का हाल बताया। जोरावर सिंह सबसे पहले मिले और बड़े गर्व से कहा, "बच्चा साहेब, तुम तो थे नहीं, पै अंधरा के सेवा बैसों का एक पुतरा नहीं गया। इज्जत सब मिट्टी में मिल गयी। रात पतुरिया का नाच था, भाँड़ आये थे, न्योता भेजा, हमने तो कह दिया, हम नहीं जायँगे।"

"बड़ा अच्छा किया, काका," दलवीर सिंह बोले।

"औ' पतुरिया का नाच इतना रद्दी कि साहेब उठकर चला गया।" जोरावर सिंह ने बताया।

"अच्छा!"

"और क्या, बच्चा साहेब, महफिल मुश्किल से आधा घण्टा चली।" थोड़ा रुककर, "अब बताओ, आगे क्या किया जाये।"

"सब बतायेंगे, काका, धीरज धरो। मौका लगा के सुबह-शाम आ जाया करो।"

"जरूर, जरूर," जोरावर हर्ष से फूल गये। उनका इतना मान! जोरावर के जाने के बाद मुरलीधर सुकुल आये।

"आओ सुकुल, पायँ लागी," दलवीर सिंह आराम कुर्सी पर लेटे-लेटे

ही बोले।

"जय हो अनदाता की," सुकुल ने हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया और एक कुर्सी पर बैठ गये।

"कहो, कैसा रहा सब हाल-चाल ?" दलवीर ने पूछा।

"अब यह न पूछो, सरकार," मुरलीधर ने हँसते हुए उत्तर दिया। "भाई, हमें तो लगा जैसे बड़े सरकार कलट्टर के अर्दली हों।"

"सो कैसे ?"

"अरे हजूर, बग्घी से पहले बड़े सरकार उतरे, फिर गोरे का हाथ पकर के उतारा। आगे-आगे गोरा, पीछे-पीछे बड़े सरकार।"

दलवीर सिंह हँसने लगे। मुरलीधर ने भी हँसने में योग दिया।

थोड़ी देर की चुप्पी के बाद मुरलीधर बोले, "औ' धनेसर तो साहेब, बस पीकदान उठाने को कसर रह गयी, बाकी सब खिजमितगार का काम किया; पान देना, सिगरेट देना। हाथ बाँधे खड़े रहे।"

"उपरहिती इसी से चलती है," दलवीर ने गर्दन हिलाते हुए समझाया। "उपरहित माने तसला, आटा गूँथ लो, दाल पका लो, उलटकर रोटी सेंक लो और बाद में सब कुछ उसी में रखकर खा भी लो।"

तसले की उपमा से मुरलीधर ठठाकर हँसे। "सरकार ने बहुत ठीक कहा।" फिर थोड़ा रुककर अपनी कुर्सी से आधे उठते हुए गर्दन दलवीर की तरफ़ बढ़ाकर ताकि और नजदीक हो जायें, अड़ते हुए बोले, "बेहंगम घर है धनेसर का, सरकार। वो छोटा भाई है ना, बिसेसर। सराफ वह पिये, कलिया वह खाय। नौरंगी कुँजरिन से फँसा है। उसकी बनायी रोटी तक खाता है।"

"अच्छा !"

"हाँ सरकार !" मुरलीधर ने दृढ़ता से कहा। "जानते सब हैं, मुल कहता कोई नहीं, मारे डर के। सरकार के उपरहित। कौन टण्टा मोल ले।"

"चिंता न करो सुकुल, सब ठीक कर देंगे।"

"बरगद की छाँह के नीचे हम सब हैं, अनदाता।" मुरलीधर ने बत्तीसी निकाल दी।

मुरलीधर के जाने के बाद दलबीर सोचने लगे, मसाला अच्छा मिला है। धनेश्वर को किसी तरह नीचा दिखायें, तो यह भी बड़े भैया पर अच्छी चोट होगी। लेकिन ऐसा हो कैसे?

शाम से कुछ पहले जोरावर सिंह फिर आये। दलबीर ने वह सब जोरावर को बताया जो मुरलीधर सुना गये थे। साथ ही कहा, "काका, कुछ सोचो। ऐसा करें कि पूरे गाँव में धनेसर की भद्द हो जाये।"

जोरावर सिंह थोड़ी देर तक सोचते रहे, लेकिन उन्हें कोई युक्ति न सूझी। तब दलबीर सिंह ने ही तरकीब बतायी, "क्यों न गाँव-भर में उड़वा दो, बिसेसर मुसलमान हो गया है। उसको नौरंगिया कुँजड़िन के यहाँ रोटी-कलिया खाते देखा गया है।"

जोरावर सिंह खुश हो गये। मुसकराते हुए कहा, "शाबास बच्चा साहेब, बड़े आदमी की बड़ी बुद्धि।" थोड़ा रुककर, "यह तो अब बायें हाथ का खेल है। रामजोर को समझा दूँगा, वही लरकवा, तुम्हारा छोटा भाई..."

"हाँ, हाँ, समझ गये, काका।"

"तो वो अपनी हमजोली में कह देगा, मैं तरकारी लेने नौरंगिया के हियाँ गया था। वह बाहेर न थी। मैं भीतर घुस गया। हुआँ बिसेसर आँगन में बैठे तामचिनी की तस्तरी में कलिया-रोटी खा रहे थे।"

"काका, इतना कर दो। फिर देखो क्या गुल खिलता है," दलबीर हँसते हुए बोले।

"यह तो कल सबेरे हो जायगा," जोरावर ने अपना सीना ठोंका।

नौरंगी कुँजड़िन के घर बिसेसर के कलिया-रोटी खाने की अफवाह दूसरे दिन दोपहर तक पूरे गाँव में जंगल की आग की तरह फैल गयी।

पं० रामअधार की स्त्री तालाब में नहाने गयी थी। अभी वह पहुँची ही थी कि मुरलीधर की स्त्री कौशल्या भी आ गयीं। क्षेमकुशल की कोई बात किये बिना कौशल्या ने दुबाइन से पूछ दिया, "तुमने भी कुछ सुनी है काकी, या बिसेसर मिसिर की करतूत?"

पं० रामअधार तटस्थ थे, इसलिए उन्होंने इस अफवाह पर तनिक

भी विश्वास न किया था। घर में उनकी स्त्री ने ठीक यही प्रश्न किया था और पण्डित जी ने साफ कह दिया था, "तुम दुनिया के परपंच में न परो। बड़े सरकार, छोटे सरकार में कुछ अनबन है, सो हर तरह की बातें उड़ायी जा रही हैं।"

दुबाइन को अपने पति की चेतावनी याद आ गयी। उन्हें पता था कि मुरलीधर छोटे सरकार का पक्ष लेते हैं, इसलिए रूखेपन से कहा, "दुनिया है, जिसको जो चाहै, कहै। अपने किये से पार उतरना है, बिटिया। दुनिया के परपंच में क्या धरा है ?"

दुबाइन का अन्तिम वाक्य निकला ही था कि शिवसहाय दीक्षित की स्त्री आ गयीं। उन्होंने पूछ दिया, "क्या है सावित्री की अम्मा ?"

"कुछ नहीं।" दुबाइन ने कुछ इस तरह कहा जैसे उन्हें दुहराना बुरा लग रहा हो। "आज गाँव-भर में जो बिसैसर का""वही कौसीला बताने लगी।" साँस लेने के लिए दुबाइन रुकीं और बोलीं, "हमने तो कह दिया, भाई, दुनिया के परपंच में क्या धरा है। हम न ऊधौ के लेने में, न माधौ के देने में?"

दीक्षिताइन मिश्रों की रिश्तेदार थी, इसलिए उन्होंने हाथ फैलाकर चुनौती दी, "है कोई मोछहरा जो गंगाजली उठाके कहे, मैंने देखा है ? यह तो कौवा कान ले गया वाली बात है।"

कौशल्या कुछ दबीं और धीमे स्वर में सफाई-सी दी, "भौजी, हम तो सिरिफ यह कहा कि गाँव-भर में लोग-बाग कह रहे हैं।"

"लोग-बाग का मुँह, कहैं," दीक्षिताइन ताव के साथ बोलीं, "मटकी के मुँह पर तो परई धर दी जाती है, आदमी के मुँह पर क्या धरा जाय ?"

"छोडो भी रत्ती की अम्मा," दुबाइन ने बीच-बचाव किया।

"सावित्री की अम्मा, किसी के कहे से मिसिर मुसलमान न हो जायँगे। यह बड़े सरकार के उपरहित हैं, उनका मान-पान है, इससे सब सिहाते हैं।"

"सिहाने की बात तो भौजी, तुम बेफजूल कहती हो," कौशल्या ने तुरन्त काटा। "सारा गाँव कह रहा है। सातों जात के लोग। सब उपर-हिती थोड़ै करेंगे।"

"तो देखा है किसी ने ?" दीक्षिताइन ने पूछा।
कौशल्या के पास इसका उत्तर न था।
आखिर तीनों नहाकर अपने-अपने घर गयी।

15

बिसेसर मिसिर वाली बात अभी बिलकुल ताजा थी। गली-घाट उसकी गरमा-गरम चर्चा चल रही थी कि इसी बीच कलिया की माँ न रह गयी। गति में गाँव के सब लोग गये, लेकिन तेरहवीं के दिन पचड़ा खड़ा हो गया। धनेश्वर मिश्र कलिया के भी पुरोहित थे। तेरहवीं को उन्हीं को कड़ाही चढानी थी। दलवीर ने जोरावर सिंह को बुलवाकर चुपचाप समझा दिया, अब मौका अच्छा है। तुम जाओ, मुरलीधर को भी साथ में लो और कलिया से कहो, हम धनेश्वर की कड़ाही में न खायेंगे।

जोरावर को बात जँच गयी। उन्होंने पहले कुछ वैसों से बात की। जब वे भी राजी हो गये, तब मुरलीधर सुकुल से मिलने गये।

सुकुल के बरोठे के दरवाजे की अन्दर से सांकल लगाकर दोनों ने बरोठे में आधे घण्टे तक मिसकौट किया।

मुरलीधर इस मिसकौट के बाद बोले, "जोरावर भैया, चाहे धरती उलट जाय, मुरली अपनी बात से न हटेगा। मैं तुम्हारे साथ। कलिया की तेरही में नहीं जाऊँगा, चाहे कितना लोभ दिखाये। औ' बहुत देगा एक लोटिया, सवा रुपिया। थू है लोटिया औ' सवा रुपिया पर।" और मुरलीधर का दाहिना हाथ मूँछों पर चला गया जैसे उन्होंने कोई बड़ा त्याग और संकल्प किया हो।

"सो तो बिस्वास है सुकुल, पै चल के कलिया को बता देना है।"

साथ चलने में मुरलीधर मन-ही-मन हिचकिचाये। पं० रामअधार साथ चलेंगे नहीं। शिवसहाय ठहरे धनेश्वर के रिश्तेदार। वह जाने से

रहे। नवकू हमीं को बनना पड़ेगा। कुछ सोच-विचार कर उन्होंने कहा, "मुखिया भैया, जैसे हम तुमसे बाहेर नहीं। तुम जाव, ननकू सिंह को लै लेव। तुम्हारी बात, मानो पूरे गाँव की बात।"

"यही तो तुम समझते नही, सुकुल," जोरावर सिंह थोड़े रोब के साथ बोले। "अरे, जमात करामात होती है। हम औ' ननकू ठाकुरों की तरफ़ से रहेंगे, तुम बांभनों की तरफ़ से। उठो?" और चारपाई से खड़े होकर मुरलीधर को बाँह पकड़कर उठाया।

मुरलीधर ना न कर सके और जोरावर के साथ हो लिये।

कलिया सफ़ेद धोती पहने, सिर मुँड़ाये एक तख्त पर बैठा था। जोरावर सिंह, ननकू सिंह और मुरलीधर सुकुल को जब अपने दरवाज़े की ओर आते देखा, तो उसके मन में कुछ खुटका हुआ। ज़रूर दाल में कुछ काला है। तख्त से उतरकर बोला, "आओ मुखिया, जैराम, सुकुल जी पायँ लागौं।"

इस रामजोहार के बाद जोरावर सिंह बोले, "सेठ, तुमसे गौसे में कुछ बात करनी है।"

कलिया थोड़ा हटकर एक कोने में आ गया।

जोरावर सिंह ने कहा, "जैसे हमारा-तुम्हारा सात पीढ़ी का ब्योहार है, सो तुम्हारे हियाँ आना हमारा फर्ज है। पै..." इतना कहकर जोरावर रुक गये, फिर चतुरता के साथ छप्पर मुरलीधर पर डाल दिया, "बताओ सुकुल।"

मुरलीधर के सामने कोई रास्ता न रह गया। वह अड़ते हुए बोले, "जैसे सेठ, यह तो तुम भी जानते हो कि बिसेसर की थूक-थूक हो रही है। भला बताओ, जान-बूझ कर माछी कौन निगले?"

कलिया यह सुनकर चकरा गया। उसने सोचा, कड़ाही चढ़ चुकी है। अब चढ़ी भँडेहर उतारी नहीं जा सकती। फिर धनेश्वर ठहरे अपने पुरोहित। राज-पुरोहित भी हैं। उनको छोड़कर नवकू कैसे बनूं? उधर बड़े सरकार धुर्रे उड़ा देंगे।

कलिया ने सिर सहलाते हुए कहा, "बिसेसर वाली बात तो जैसे अफवाह है...।"

आगे वह कुछ बोल न पाया था कि जोरावर सिंह ने टोका, "अफवाह कैसे ? हमारा रामजोर खुद अपनी आँखों से देख आया था।"

"अरे मुखिया, लरिका-गदेलों की बात !" कलिया धीमे स्वर में बोला।

"रामजोर दुधपिया तो है नहीं," ननकू सिंह ने चट काटा।

कलिया निरुत्तर हो गया। थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोला, "तो मेरी आब रखो। बताओ, कैसे काम बने ?"

"बात बिलकुल सीधी है," जोरावर सिंह ने सुझाया। "मुरली महराज की कड़ाही अलग चढ़वा दो। जो चाहें, धनेसर की कड़ाही में खायें, जो न चाहें, वे सुकुल की कड़ाही में खायें।"

"मुखिया, यह बताओ, एक घर मे दो भट्ठियाँ खुदें, दो कड़ाही चढ़ें, बुतात का कितना नुकसान ? यह सब अच्छा लगैगा ?" कलिया ने हाथ फैलाकर पूछा।

"तो फिर भाई, हम पंच न आ सकैंगे।" जोरावर सिंह ने सबकी ओर से दो टूक उत्तर दे दिया।

"यह बात भला उचित है ? तुम गाँव के मुखिया, सुकुल गाँव के मान्य, ननकू सिंघ औ' सब बैस, जो तुम सब न आओ, तो कलिया की नाक जड़ से न कट गयी ?"

"यह तो तुम सोचो," ननकू ने उत्तर दिया।

"मुखिया, थोरा मौका देव, मैं घरी आधी घरी में तुम्हारे दुवारे हाजिर हो जाऊँगा।" कलिया गिड़गिड़ाया।

"ठीक है," जोरावर सिंह बोले। "कहो ननकू, बताओ सुकुल, ठीक है ना ?" उन्होंने पूछा।

दोनों ने एक साथ हामी भरी।

इनके चले जाने के बाद कलिया सोचने लगा, जोरावर ठकुरी गरूर में बराबर दबाता रहता है। सम्बत तिरपन के झूरे में भरी पंचाइत में कह दिया, तू ने पानी गाड़ा है, इसी से बरखा नहीं हो रही। मैंने दुधमुँहे साल-भर के नाती (पोते) भगत का हाथ पकड़ के महादेव बाबा की कसम खायी, तब कहीं पंचाइत मे इज्जत बची। अहीरों के लड़को को

उकसाकर बैठक बनवाने के लिए रखी आरकसी घन्नियाँ होली में डलवा दी। मैंने लाख चिरिया-विनती की, एक न सुनी। कह दिया, कलिया, तू तो रुपये की गरमी से अंधा हो गया है। हम बाल-बच्चेदार हैं। होरी माता नाखुस हो जायँ, तो ? अब यह बखेड़ा खड़ा कर दिया।

कलिया कुछ देर तक खड़ा सोचता रहा, क्या किया जाय ? आखिर अपनी बिरादरी के दो सयाने लोगों को बुलाया और एक कोठरी में ले जाकर सब हाल बताया।

"सेवक काका, तुम सयाने हो, राह सुझाओ," कलिया बोला।

"बात बड़ी टेढी है। साँप-छछूँदर वाली गति," सेवक ने सिर सहलाते हुए कहा। "किसको खुस करें, किसको नाखुस।"

"छोटे सरकार, बड़े सरकार का झगड़ा अब पूरे गाँव को लपेट रहा है," सहाय बोला।

"सो तो है। पै कोई रस्ता बताओ कलिया को।" सेवक ने कहा।

"मान लो, सुकुल की भी करेंहा चढ़ जाय ?" सहाय ने पूछा।

"औ' घनेसर नराज होकर चले जायँ, तो ?" कलिया ने प्रश्न किया।

इस आशंका का समाधान किसी की भी समझ में न आ रहा था। तीनों सिर लटकाये इस प्रकार बैठे थे जैसे कलिया की माँ अभी मरी हो और उसकी लाश उनके सामने पड़ी हो।

दो-तीन मिनट बाद सहाय ने अड़ते-अड़ते कहा, "सेवक भैया, हमारी राय मे उपरहित को बुलाओ। उनको सब बात साफ़-साफ़ बताओ। वो कुछ रस्ता साइत निकाल सकें।"

यह बात सबको जँच गयी और कलिया कोठरी से निकलकर घनेश्वर मिश्र को बुलाने गया। उसने देखा, घनेश्वर आँगन में कड़ाही के पास खड़े पूड़ियाँ निकालने वालों को कुछ समझा रहे हैं।

"उपरहित बाबा ?" कलिया ने दासे पर से ही आवाज लगायी और हाथ के इशारे से बुलाया।

"क्या है ?" घनेश्वर के पास आकर पूछा।

"तनो बाहेर कोठरी में चलो। कुछ सलाह करनी है," कलिया

बोला।

धनेश्वर को लेकर कलिया कोठरी में गया। कोठरी की साँकल अन्दर से बन्द कर दी गयी। सहाय ने सारा किस्सा धनेश्वर को सुनाया सेवक और कलिया धनेश्वर के चेहरे को बड़े गौर से देख रहे थे। धनेश्वर की भवें कुछ तन रही थी और वह दाँतों से अपना ओठ काट रहे थे।

सहाय की बात समाप्त होने पर सेवक हाथ जोड़कर बोला, "उपरहित बाबा, अब मरजाद तुम्हारे हाथ है। जैसे चाहो कलिया का निस्तार करो।"

धनेश्वर ने तैश के साथ कहा, "सेवक भैया, यह तो हमारा सरासर अपमान है। हम अपने करैहादार लेकर जाते हैं। मुरलीधर को बुलाकर करवा लो सारा काम।"

धनेश्वर के उत्तर से कलिया काँप गया। धनेश्वर पीढ़ियों से उसके पुरोहित थे। वह चले गये, तो अनर्थ हो जायेगा, उसने सोचा। बड़े सरकार कच्चा खा जायेंगे। वैसे तो आयेंगे, लेकिन पं० रामअधार, शिवसहाय, सब अहीर, दूसरे लोग न आयेंगे। उसे लगा, छोटे सरकार, बड़े सरकार का महाभारत उसी के आँगन में होगा।

कलिया ने हाथ जोड़े और धनेश्वर के पैरों पर गिर पड़ा, "उपरहित बाबा, इज्जत तुम्हारे हाथ है।"

कलिया के इस प्रकार गिड़गिड़ाने से धनेश्वर कुछ नरम पड़े और बोले, "तो क्या किया जाय?"

"जैसे मैं तो हूँ मूरख आदमी," कलिया ने हाथ जोड़े-जोड़े ही कहा, "तुम बुद्धिवान हो। गोसाईं जी कहते हैं—क्षुद्र नदी भरि चलि उतराई। तो ई सुकुल-फुकुल है क्षुद्र नदी। तुम ठहरे सागर, घटै न बढ़ै।"

इस प्रशंसा ने धनेश्वर को और नरम कर दिया।

"तो रस्ता बताओ," धनेश्वर बोले। "हम नहीं चाहते कि तुम्हारी भद्द हो। सब काम सान्ति से हो जाय, बस।"

"आखिर, ग्यानी औ' अग्यानी में यही फरक होता है," सेवक ने टिप्पणी की और अड़ते-अड़ते धीरे से कहा, "मान लो, एक कोने में सुकुल अपनी करैहा धड़ा लें? दस-पाँच टुटर्रूँ-टूँ उनके हियाँ खा लेंगे। बाकी पूरा गाँव

ओ' जवार तुम्हारी करहा में खायेगी।"

घनेश्वर को यह सलाह जँच गयी। उन्होंने सोचा, यह भी अच्छा तमाशा रहेगा। थोड़े बैस सुकुल की कड़ाही में खायेंगे, बाकी गाँव हमारी कड़ाही में। सुकुल की अच्छी भद्द होगी।

"चलो, ऐसा ही सही। कलिया का काम बनना चाहिए।" घनेश्वर बोले।

सबने घनेश्वर को हाथ जोड़े। वह जाकर फिर कड़ाही का प्रबन्ध देखने लगे।

16

कलिया के यहाँ ब्राह्मणों में सब घनेश्वर मिश्र की कड़ाही में भोजन करने आये। बनिये, अहीर और दूसरी जातियों वाले भी उनकी ही तरफ़ आये। लेकिन ठाकुरों में से कुछ मुरलीधर सुकुल की तरफ़ गये। इनमें बैसों की संख्या अधिक थी। घनेश्वर ने इसकी विशेष चिन्ता न की, लेकिन उन्हें यह बात तो लगी कि कुछ लोग उनसे फूट गये। न कुछ मुरलीधर ने हमें नीचा दिखाया जबकि हम पुरोहित हैं। फिर उन्होंने सोचा, अपना ही दाम खोटा, तो परखने वाले का क्या दोष? बिसेसर को लाख समझाया, उस कुंजड़िन के चक्कर में न पड़, सुनता ही नहीं। और उनका क्रोध अपने भाई पर बढ़ता गया। यह ऐसा न होता, तो था कोई जो हमारी तरफ़ आँख उठाकर भी देखता? कलिया-रोटी खायी होगी, इसका उन्हें विश्वास न हुआ। बिसेसर इतना नहीं गिर सकता। नज़र लगने की बात? तो मरद है। सब कुछ-न-कुछ करते हैं। रामअधार भैया भी अपनी जवानी में सिलिया धोबिन से फँसे थे। फिर सँभल गये। लेकिन यह बिसेसर तो, अब भी न सँभला।

घनेश्वर कलिया के यहाँ से कोई आधी रात गये लौटे। रास्ते-भर यही सब सोचते आये और घर में भी चारपाई पर लेटे देर तक यही

सोचते रहे।

धनेश्वर सवेरे नहर तरफ़ से शौच, कुल्ला-दातून करके लौटे, तो बरोठे से ही देखा, बिसेसर आँगन के दासे पर बैठा जम्हाइयाँ ले रहा है। देखते ही उनके तन-बदन में आग लग गयी।

बरोठे से आँगन में पैर रखते ही गरजे, "नाक तो पोंछा लीं जड़ से! लाख समझाया, एक न सुनी।"

धनेश्वर की आवाज़ सुनकर उनकी पत्नी कमरे से आँगन में आ गयी। बिसेसर ने सिर लटका लिया। बिसेसर की पत्नी अपने कमरे के किवाड़ की ओट में खड़ी हो गयी।

"अब ऐसे बैठे हो, जैसे दुधपिया हो, कुछ जानते ही नहीं," धनेश्वर बके जा रहे थे। "जा उसी हरामजादी के हियाँ। अब हम ड्योढ़ी में क्या मुँह दिखायेंगे? बाल-बच्चेदार आदमी। लड़की-लड़के ब्याहना। तुम्हें क्या!" धनेश्वर का क्रोध बढ़ता जा रहा था। "एक कोख से पैदा भये हैं, नहीं तो ससुर, कुलकलंक, गला दबा के मार डालते। अब इतना बाकी रह गया है कि कुंजरा पकरि कै पनहावैं।"

धनेश्वर ने जब ऐसा कहा, तब बिसेसर से न रहा गया। वह जानता था, उसकी पत्नी ज़रूर किवाड़ के पीछे से इनका दहाड़ना सुन रही होगी।

बिसेसर ने गर्दन ज़रा ऊपर को उठायी और बोला, "जैसे परउपदेस कुसल बहुतेरे। मनिया पासिन ने जब मारा हाथ में हँसिया, तो हाथ पकरे राब बहाते चले आये। पासी तीन दिन तक मारने को घेरते रहे। तब चूल्हे में छिपे रहे।"

अब धनेश्वर दाँत पीसते बिसेसर को मारने के लिए तेज़ी से लपके, लेकिन उनकी पत्नी रोकने के लिए बीच में आ गयी। धनेश्वर का धक्का उन्हें इतनी ज़ोर से लगा कि वह गिर पड़ी। गनीमत यह हुई कि उनका सिर बिसेसर की जाँघों पर गिरा, नहीं दीवार से टकराता और लहूलुहान हो जाता। धनेश्वर रुक गये।

बिसेसर ने कहा, "जैसे बहुत हो चुका। बाँट दो। अब एक साथ नहीं निभ सकती।"

"बांट ले अभी," धनेश्वर दहाड़ उठे। "दाने-दाने को तरसेगा। ड्योढ़ी में सरकार पांव न धरने देंगे। किसानी की न होगी। बांट ले।"

धनेश्वर की पत्नी अब तक उठ बैठी थी। वह खड़ी हो गयी और धनेश्वर के सामने जाकर बोली, "तुम भी बच्चों के मुंह लगते हो। जाओ, नहाओ-खाओ। ड्योढ़ी नही जाना पूजा करने?" और उनका हाथ पकड़कर हटाया। फिर मुड़कर बिसेसर से कहा, "बिसेसर, वो बड़े भाई हैं, बाप के बरोबर। मुंहजोरी करते सरम नही आती? जाओ दिसा-मैदान।" और हाथ पकड़कर उसे उठाया।

धनेश्वर ने लोहिया घड़ा, लोटा और रस्सी लेकर नहाने के लिए कुएँ का रास्ता लिया। बिसेसर ने जूते पहने, लाठी उठायी और बाहर निकलने को हुआ।

इतने में बिसेसर की पत्नी आँगन में आ गयी और अपनी जेठानी से कहा, "जैसे दीदी, हीसा-बांट जो करना चाहैं, करें। हम तो अपने दादा के साथ रहैंगी। हमारी छा महीना की बिटिया, हम क्या किसी कुंजरे के पांव पूजेंगी?"

"भौजी, मना कर दो, हमारे मुंह न लगे," बिसेसर ने आँखें तरेरीं। "हम जोरू के गुलाम नही।"

"हां, हां, जाओ," बिसेसर की भाभी मुसकराते हुए बोलीं, "तुम तो नौरंगिया के गुलाम हो। जोरू का गुलाम कौन कहता है?"

बिसेसर चला गया।

रात में कोई दस बजे बिसेसर घर आया और अपने कमरे में गया। उसकी पत्नी बच्ची को छाती से चिपटाये थपकी दे रही थी।

"सो गयी साँझ से?"

"तुम्हारी बला से। तुमको नौरंगिया से औ' टलुवों के बीच हा-हा, ही-ही से फुरसत मिले, तो इधर झांको।"

"अरे, तो इतना नराज काहे हो?" बिसेसर ने अपनी पत्नी की छाती पर हाथ फेरते हुए कहा।

"चलो हटो, जाओ अपनी अँखलगी के पास। रूप न रेखा। आगे के दो दांत जैसे बनसोर की बीरें। रात में ठाढ़ी हो जाय, तो पता न चले,

कोई आदमी खड़ा है कि नहीं।"

"ऐसी काली तो नही है नौरंगी !" बिसेसर बेहयाई के साथ खीस निपोरकर बोला।

"अहा-हा, कानी बिटिया को कौन सराहे, कानी का बाप। नौरंगिया काली नही, तब तो फिर, तुम धरे हौ गोर भभूखा !"

'बप्पा से कहतीं, हमारे गले न बाँधते।"

"तुम तो बने थे गोपनाथी मिसिर। कुल के धोखे में आ गये।"

"बने थे क्यों ? गोपनाथी मिसिर हैं !"

"अब हमसे न चलौ, सब पता चल गया है।"

"बप्पा भी तो कन्या-कुस देकर पार उतर गये।"

"धरा था दायज ! करिया अक्षर भैंस बराबर।"

"अहा-हा-हा, हुँआँ पडरी मे सब छहौ सास्त्र पढ़े हैं।"

"नही, उपरहिती तुम करा आते हो। सतिनरायन की कथा बड़-बड़ के बाँचते हो।"

"चलौ, न बहुत बढ़-बढ़ के बातें करौ," और बिसेसर अपना हाथ पत्नी की कमर की ओर ले गया।

"हाँ, न मानौगे !"

"अरे, बहुत खफा न हौ," और वह चारपाई पर लेट गया।

"बिटिया सोयी नहीं, जाओ अपनी पर।"

"नही।"

"जाओ ना !"

"नही।"

"अच्छा आयी। चलौ। हियाँ सँकरै माँ समधेरौ न करौ।"

दुलहिन के चारपाई पर आते ही बिसेसर ने उसे अंक में भर लिया।

"अरे, तो धीरज धरौ। भागी नहीं जाती।"

बिसेसर ने बाँहों का फंदा और कस दिया।

"उइ" करके बिसेसर की दुलहिन ने उसकी बाँह पर सिर रख दिया और दाहिना हाथ कंधे के पास ले गयी। फिर धीरे से बोली, "एक बात पूछे ?"

"अब कौन बात ?"

"सच्ची-सच्ची बताओ, तुम्हें हमारी कसम। बिटिया की सौं।"

"पूछो।"

"तुमने कलिया-रोटी खायी है नौरंगिया के हियाँ ?"

"तुम भी पागल हो गयी हो ! अरे, हम कुछ धरम-इमान छोड़ बैठे हैं ? आज तक उसका छुआ पानी भी नही पिया। जो झूठ बोलें, तो जवानी काम न आवै। बिटिया की कसम।" थोड़ा रुककर कहा, "हम चुप रहे। आँधी आयी है। धूर उड़ि रही है। एक दिन थिर होकर धरती पर बैठ जायगी। हम कभी उसके घर थोड़े जाते हैं। उसकी सास, जेठानी, हुआँ कैसे जायँ ? मुस्किल से छठे-छमासे अमरूदों की फुलवारी मे…" बिसेसर पूरी बेशर्मी से उगल गया, जैसे धर्मभीरु ईसाई अपने पाप स्वीकारता हो पादरी के सामने।

उसकी घरवाली ने संतोष की साँस ली। धर्म तो बचा है। थोड़ा लटर-पटर तो मर्द-बच्चा करता ही है। उसने मन-ही-मन कहा। मरद औ' भौंरा एक फूल से संतोष पा सकता है ? यह तो औरतजात है जिसको माँ-बाप जिस खूँटे में चाहें, बाँध दें।

17

फागुन का महीना था। गुलाबी जाड़ा रह गया था। रणवीर सिंह के बहनोई जयपुर से आये थे। उनके साथ रणवीर सिंह कानपुर आये और जुल्फ़िया के यहाँ गये। जुल्फ़िया ने कुँवरजू को पहले कभी न देखा था। रणवीर ने परिचय कराया।

"आदाब अर्ज करती हूँ, कुँवरजू," जुल्फ़िया ने बड़े अदब के साथ दरबारी ढंग से झुककर उनका स्वागत किया।

"आदाब अर्ज, छोटी भाभी," कुँवरजू बोले।

कालीन पर मसनद के सहारे कुँवरजू और रणवीर सिंह बैठ गये।

जुल्फ़िया उनके सामने। कुंवरजू ललचायी नज़रों से जुल्फ़िया को देख रहे थे। उनसे जब न रहा गया, बोल पड़े, "छोटी भाभी गजब की लायें हैं, भैया साहब।"

रणवीर सिंह कुछ कहें, इसके पहले ही जुल्फ़िया चहकी, "कुंवरजू, मन मचल गया हो, तो बिट्टी जी को इन्हें दे दीजिए और इस बांदी को···।"

रणवीर सिंह के पास इस मजाक का जवाब न था।

कुंवरजू ने चट कहा, "तो चीज भैया साहेब की है। मुझे एतराज नहीं।"

रणवीर सिंह से अब भी कुछ उत्तर न बन पड़ा। जुल्फ़िया हँसने लगी।

"बोलिये न! कर डालिये सौदा!" जुल्फ़िया न रणवीर सिंह को गुदगुदाया।

"जब भाई-बहन एक तरफ़ हो गये, हम अकेले की क्या बिसात?" रणवीर सिंह ने अँगुली से कुंवरजू और जुल्फ़िया की तरफ इशारा किया।

जुल्फ़िया अब कुंवरजू को देखने और हँसने लगी।

एक नौकरानी चाँदी की तश्तरी में पान और इलायचियाँ रख गयी।

"लीजिये कुंवरजू," जुल्फ़िया ने तश्तरी कुंवरजू के सामने कर दी। कुंवरजू और रणवीर सिंह ने पान लिये।

एक क्षण की ख़ामोशी के बाद रणवीर सिंह बोले, "जुल्फ़िया, कुंवरजू हैं जयपुर की महफ़िलों के रसिया, लखनऊ भी कई दफ़े गये हैं। पक्के गानों के पारखी हैं। इनको आज कोई चीज सुनाओ।"

जुल्फ़िया ने ज़रा आँखें झुका लीं और उत्तर दिया, 'जयपुर और लखनऊ से कानपुर का भला क्या मुकाबला? जो कुछ बन पड़ेगा, पेश करूँगी खिदमत में।"

साजिन्दे बाहर बैठे थे, बुलाये गये; साज ठीक हुए और जुल्फ़िया ने विहाग में सूरदास का पद गाया :

"पिया बिन नागिन काली रात ।
कबहुँक यामिनि उवज जुन्हैया, डसि उलटी ह्वै जात,
जंत्र न फुरत, मंत्र नहि लागत, बयस सिरानी जात ।"

जुल्फ़िया के आलाप पर ही कुँवरजू सुध-बुध खोये उसे एकटक ताकने लगे थे। अन्तरा के बोलों पर तो वह झूमने लगे।

जुल्फ़िया ने यह पद करीब डेढ़ घंटे तक गाया और खामोश रात के सन्नाटे मे और निस्तब्धता भर दी। पूरा वातावरण जैसे वियोग की असह वेदना से ठहर गया हो।

"बहुत खूब ! क्या गला पाया है टीस-भरा !" कुँवरजू भावविभोर होकर बोले।

"यह तो हुजूर की जर्रानेवाजी है," जुल्फ़िया ने दाहिना हाथ आदाब के लिए उठाते हुए आँखें नीची कर कहा। फिर अँगुली के इशारे से बताया, "इन्होंने सिखाया है यह पद।"

रणवीर सिंह गुमसुम बैठे रहे। जुल्फ़िया उठी और अलमारी से बोतल और दो प्याले उठा लायी। कुँवरजू और रणवीर की ओर प्याले बढ़ाते हुए बोली—

"जिक्रे दारावोहूर कलामे खुदा में देख ।
'मोमिन' मैं क्या कहूँ, मुझ-क्या याद आ गया।"

"खूब ! लेकिन अपने लिए, छोटी भाभी ?"

जुल्फ़िया ने बड़े अन्दाज के साथ जवाब दिया—

"बज्मे मय में बस एक मैं महरूम ।
आपके इज्तनाब ने मारा ।"

और अँगुली से रणवीर सिंह की ओर इशारा किया।

"भैया साहब आपका खयाल नहीं करते, यह इलजाम आप नहीं लगा सकती, छोटी भाभी !" कुँवरजू ने टोका। "यह तो उठते-बैठते आपके गुन गाते हैं।"

जुल्फ़िया ने सिर्फ़ मुसकरा दिया।

रणवीर सिंह खामोश रहे।

"लगता है, मोमिन आपको बहुत पसन्द हैं।" कुँवर जू ने खामोशी

तोड़ी।

"मोमिन, मीर और ग़ालिब के कुछ कलाम पढ़े हैं।" ज़ुल्फ़िया ने उत्तर दिया।

"तो, मोमिन की कोई ग़ज़ल सुनाइये।" कुँवरजू ने फर्मायश की।

"इतनी रात गये?"

"बस एक!" कुँवरजू ने आग्रह किया।

"सुना दो एक," रणवीर सिंह आखिर बोले, लेकिन बहुत आहिस्ते।

ज़ुल्फ़िया ने मुँह की तरफ़ आती लट को पीछे किया, कुछ सोचा और गुनगुनायी। साजिन्दे उसके इन्तज़ार में थे।

"असर उसको ज़रा नहीं होता,
रंज राहत फ़ज़ा नहीं होता।
तुम हमारे किसी तरह न हुए,
वर्ना दुनिया में क्या नहीं होता।
तुम मेरे पास होते हो गोया,
जब कोई दूसरा नहीं होता।
हाले दिल यार को लिखूँ क्योंकर,
हाथ दिल से जुदा नहीं होता।"

"भैया साहब, हीरा खोजा है आपने," कुँवरजू सिर हिलाते हुए बोले।

ज़ुल्फ़िया अपनी प्रशंसा से लजा गयी और गर्दन झुका ली।

रणवीर सिंह फिर भी चुप रहे।

ज़ुल्फ़िया ने दोनों के प्याले भरे। अपना प्याला उठाते हुए रणवीर सिंह ने ज़ुल्फ़िया को निहारा और आधा पीने के बाद प्याला ज़ुल्फिया के ओंठों से लगा दिया। लेकिन बोले कुछ नहीं।

ज़ुल्फ़िया ने पी ली।

कुँवरजू पीने के बाद अपना प्याला रखते हुए बोले, "तो छोटी भाभी, इजाजत दीजिये। बस फिर मिलेंगे।" और खड़े हो गये।

ज़ुल्फ़िया भी खड़ी हो गयी। "जाने को कैसे कहूँ, कुँवरजू। कब तक क़याम है?"

"ज्यादा नही, लेकिन दो-तीन दिन तो रहेंगे।"

"बिट्टो बी मजे में हैं ?"

"जी हाँ, सब आप सयानों की दुआ।"

जुल्फ़िया ने "चश्मे बद्दूर !" कहा।

कुँवर साहब "अच्छा।" कहकर चलने लगे।

जुल्फ़िया ने आदाब किया और दुआ की, "शब्बखैर।"

रणवीर सिंह पूरे समय कुछ ऐसे गंभीर रहे थे कि जुल्फ़िया के मन में खुटका हुआ, क्या इनके मन में बेटी वाली बात इतनी गहरी पैठ गयी है ? और तभी उसे लगा, जैसे जिस नाव के सहारे वह जिन्दगी का दरिया पार करना चाहती है, वह डगमगा-सी रही है।

"भैया साहब, है गुनवाली," ताँगे पर परेड वाले मकान जाते समय कुँवरजू बोले।

"हूँ," रणवीर सिंह ने इतना ही कहा।

"भैया साहब, बात क्या है ? वहाँ भी आप खोये-खोये-से थे।"

रणवीर पशोपेश में पड़ गये, बतायें या नहीं ?

"क्या बात है ? बताइये न !" कुँवरजू ने जोर दिया।

अब रणवीर ने जुल्फ़िया के बेटी होने के बारे में अपने मन के भाव बताये।

कुँवरजू सोचने लगे। रणवीर सिंह का मन दूसरी ओर ले जाने के लिए बोले, "देखा जायेगा। कोई-न-कोई रास्ता निकल आयेगा। अभी तो दम्मो के ब्याह की बात सोचिये। सयानी हो गयी है। दस साल की होगी ?"

रणवीर सिंह ने पस्ती के स्वर में उत्तर दिया, "उसकी फ़िकर नहीं। आप देख-परख के लिखियेगा। हमें देखने की जरूरत नहीं। हैसियत आप के बराबर हो, उन्नीस-बीस। कर डालेंगे।" फिर थोड़ा रुककर बोले, "लेकिन यह गलफाँसी ?"

"कोई-न-कोई ठाकुर मिल जायगा।"

"कहते क्या हैं कुँवरजू !" रणवीर ने आश्चर्य के साथ कहा। "हम बैस। क्या बैसों से नीचे उतरकर जिस-तिस के यहाँ बेटी देंगे ?"

"यह बात नहीं," कुँवरजू ने समझाया। "ढूँढ़ेंगे अपनी बिरादरी का कोई गरीब। दहेज ज्यादा देकर तय कर लेंगे।"

"कौन अपनी जात देने को तैयार होगा?"

"अभी आठ-दस साल हैं, भैया साहब," कुँवरजू ने सांत्वना दी।

मकान पहुँचने पर कुँवरजू पलँग पर लेटकर जुल्फ़िया के नाक-नक्श की याद करने लगे। तभी उनका ध्यान उसकी बेटी पर गया। बारह-तेरह साल में ऐसी ही होगी। उनका मन ललचाया। बारह-तेरह साल बाद··· मन-ही-मन उन्होंने सोचा।

18

धनेश्वर मिश्र ज़मीदार के दोनों घरों के पुरोहित माने जाते थे, लेकिन इस साल चैत की नवरात्रि में दलबीर सिंह ने मुरलीधर सुकुल को बुलाकर दुर्गा पाठ करने को कहा। मुरलीधर सुकुल छोटे दरबार में दुर्गा पाठ का मौका पाकर फूले न समाये। सवेरे जब खड़ाऊँ पहने, अँगोछा ओढ़े पाठ करने जाते, तब रास्ते में जो भी मिलता, उससे कहे बिना न रहते, "छोटे सरकार के हियाँ पाठ करने जा रहे हैं।"

पाठ समाप्त करने के बाद मुरलीधर रोज बिला नागा आशीर्वाद देने पहुँचते। कभी दलबीर सिंह खुद बेलपत्र और गेंदे के फूल ले लेते, कभी उनका खिदमतगार ले लेता और कह देता, "सरकार भीतर हैं। दे दूँगा।"

नवरात्रि समाप्त होने के बाद ही दलबीर ने मुरलीधर से महामृत्युंजय का जप करने को कहा। उन्हें कानपुर में किसी ज्योतिषी ने बताया था कि उनके ग्रह खराब चल रहे हैं। एक सौ एक रुपये दक्षिणा मिलने की आशा से ही मुरलीधर पुलकित हो उठे।

पहले नवरात्रि के कारण और इसके बाद जप के अनुष्ठान के कारण मुरलीधर न दाढ़ी बनवा सके और न सिर के बाल। जप करते

प्राय: एक सप्ताह हो गया था। इस बीच दाढ़ी खूब बढ़ गयी थी।

घनेश्वर चिढ़े बैठे थे कि चमार-पासियों के यहाँ पुरोहिती करने वाला अब हमारे बराबर हो गया, लेकिन मुरलीधर को नीचा दिखाने का कोई मौका हाथ न आता था।

जब मुरलीधर ने जप करना शुरू किया, एक दिन उनकी बढ़ी हुई दाढ़ी और सिर के बाल देखकर घनेश्वर के दिमाग में ऐसी बात सूझी कि आँखों में शरारत-भरी चमक झलक आयी। मन-ही-मन कहा, बड़े सरकार से कहकर नव्वू को मजा चखाऊँगा।

घनेश्वर किसी-न-किसी काम से रोज बड़े दरबार जाते थे। एक दिन जब उन्होंने देखा कि रणवीर सिंह अकेले बैठे हैं, आहिस्ते-आहिस्ते उनके पास गये और "सरकार आसिरवाद" कहकर बोले, "अनदाता से कुछ खास बात करनी है।"

पास में रखी कुर्सी की तरफ़ बैठने का इशारा करते हुए रणवीर सिंह ने कहा, "बताओ उपरहित जी।"

घनेश्वर ने अपनी कुर्सी उनकी कुर्सी के और पास खिसका ली और फुसफुसाते हुए कहा, "गरीपरवर, छोटे सरकार आप पर पुराचरन करा रहे हैं। सुकुल, यही मुरलीधर कर रहा है।"

पुरश्चरण का नाम सुनकर रणवीर सिहर गये। "तुमको कैसे मालूम?"

"सरकार, बात मेहरियों के पेट में तो पचती नहीं," घनेश्वर बताने लगे। "कौसिलिया ने, याने सुकुल की घरवाली ने सिउमहाय की लरकी रतिया से बकुर दिया, आजकल छोटे सरकार के घर पुराचरन कर रहे हैं। रतिया ने लछमी को बताया, तुम्हारी बिटिया को, सरकार।" जरा रुककर इतना और जोडा, "डाढ़ी-बार बढ़ाये हैं सुकुल। परतच्छ को परमान की क्या जरूरत?"

रणवीर सिंह ने सिर्फ "हूँ" किया।

थोड़ी देर बाद पूछा, "इसका काट क्या है?"

"सो तो अनदाता, पंडित रामअधार ठीक से बता सकते हैं।"

"लेकिन तुम किसी से कुछ न कहना," रणवीर ने ताकीद की।

"राम कहो सरकार, भला ऐसी बात कही जाती है।"

शाम को पंडित रामअधार बुलाये गये। उन्होंने बताया, "महामृत्युंजय का सवा लाख का जप और शिवजी पर सवा लाख बेलपत्र चढ़ाना काल को वश में कर सकता है। शिवजी महाकाल जो हैं।"

सवेरे सवा लाख का जप करने का संकल्प पं० रामअधार को कर दिया गया। पंडित जी रोज सवेरे नहा-धोकर गढ़ी जाते और सारे दिन जप करते। दोपहर में एक घंटे तक वहीं विश्राम करते, तब उन्हें पेड़े और अधौटा दूध जलपान के लिए दिया जाता।

जप अभी दोनों जगह चल रहा था कि इसी बीच रणवीर सिंह बीमार पड़ गये। पहले मामूली बुखार रहा। फिर तेज होता गया और उतरने का नाम न लेता। अब तो रणवीर के मन में शंका घर कर गयी, कि दलवीर पुरश्चरण करा रहा है और पं० रामअधार का काट काम नहीं कर रहा। उधर धीरे-धीरे यह बात पूरे गाँव मे फैल गयी।

कानपुर के प्रसिद्ध वैद्य पं० कामतादत्त को बुलवाया गया। वह आये और कुछ रस आदि देने लगे, लेकिन हालत में तनिक भी सुधार न हुआ। बुखार उतर जाता, लेकिन इसके बाद फिर चढ़ता और बहुत तेज हो जाता।

दलवीर सिंह कुछ लोक-लाज से और कुछ भाईपन से रणवीर सिंह को देखने गये। जिस समय वह रणवीर सिंह के पलँग के पास पहुँचे, सुभद्रा देवी वहाँ थीं। दलवीर को देखते ही वह आग-बबूला हो गयीं।

"अब तो सन्तोष हो गया, छोटकऊ ?" वह रोष के साथ बोलीं। "क्या बिगाड़ा था तुम्हारा जो पूराचरन करा रहे थे ? अब देखने आये हो। छाती जुड़ा गयी कि नहीं ?"

भाभी की ऐसी जली-कटी सुनकर दलवीर वहाँ एक क्षण भी न रुक सके। उलटे पैर बाहर निकल आये।

जब ऐसा लगा कि पं० कामतादत्त की दवा कुछ काम नहीं कर रही, तब कानपुर से डाक्टर को बुलाया गया। डाक्टर ने पहले दिन कोई दवा नहीं दी। रणवीर सिंह की हालत देखता रहा। सवेरे बुखार उतर गया, लेकिन दस बजते-बजते फिर चढ़ने लगा। कुछ जाड़ा भी लगा और चार

बजे तक इतना तेज हो गया कि 105, हलका होते-होते सवेरे उतर गया।

डाक्टर ने कहा, "कुंवर साहब, घबराने की कोई बात नहीं। मलेरिया है। इलाज ठीक से न होने से जड़ पकड़ गया है।"

उसने कुनैन की गोलियाँ दी, एक-एक कर दिन में तीन बार खाने को। दूसरे दिन फिर यही क्रम जारी रखा। तीसरे दिन बुखार बिलकुल उतर गया, फिर भी एहतियात के तौर पर उसने तीन-तीन गोलियाँ और खिलायीं दो दिन तक।

रणवीर सिंह ठीक हो गये। हाँ, कमजोरी दूर होने में कुछ समय लगा।

19

दोनों दरबारों के रगड़े-झगड़ों के बीच रामलीला आरम्भ हुई और दशहरा मनाया गया। दशहरे के दूसरे दिन रणवीर सिंह अपने ममेरे भाई के साथ कानपुर सिर्फ़ एक दिन के लिए गये थे, लेकिन जब चतुर्दशी को भी न आये, तब ड्योढ़ी के कारिन्दा और मुसाहिबों को चिन्ता हुई, क्योंकि पूर्णमासी को भरत-मिलाप होना था। भरत-मिलाप और राम अभिषेक के बाद रामलीला समाप्त हो जाती थी। इसी दिन रामलीला का पूरा खर्च भेंट के रूप में राजा रामचन्द्र को दिया जाता था और उसमें से वह आतिशबाजी वालों, गाजे-बाजे वालों को बख्शीश के रूप में देते थे। बाकी रामलीला मण्डली ले लेती थी।

चतुर्दशी की शाम को बरजोर सिंह, माधौ सिंह, राम खेलावन चौधरी, ड्योढ़ी के कारिन्दा खूबचन्द और कुछ दूसरे लोग बारहदरी में जमा हुए। इस पर विचार होने लगा कि चन्दा किस तरह इकट्ठा किया जाय।

रामखेलावन बोला, "जैसे ठाकुर-बांभन तो बंट गये हैं। उनसे चन्दा मिलेगा नहीं। जब रामलीला में शामिल नहीं हुए, तो चन्दा क्यों देंगे? अब रहे बनिया, तेली, तमोली, अहीर, तो ये लोग जितना पहले देते थे,

इतना दे देंगे। सो उतने से कुछ बनेगा नही। काहे माधौ काका !"

"नही चौधरी, अकेले अहिर, बनिया यह बोझ थोड़े उठा सकते हैं। सरकार होते तो...।" माधौ सिंह खूबचन्द की तरफ देखने लगे।

खूबचन्द अभिप्राय समझ गये। "लम्बरदार, सरकार होते, तो उनके हुकुम से बाकी रकम खजाने मे दे दी जाती। उनके बिना हुकुम..."

"सो तो ठीक है। उनके बिना हुकुम तुम कैसे दे सकते हो ?" बरजोर सिंह ने समर्थन किया।

थोड़ी देर तक सब चुप रहे। फिर माधौ सिंह ने सुझाव रखा, "जैसे आज तक चमार-पासी रामलीला का चन्दा नही देते थे, लेकिन रहते तो वे भी गाँव मे हैं। उनसे भी लिया जाय।"

"हाँ, है तो बात ठीक, लेकिन देंगे ?" बरजोर सिंह ने पूछा।

"देंगे कैसे नही ?" माधौ सिंह ने उत्तर दिया, "चार के भीतर हैं या दुनिया से ऊपर ? सब दे रहे हैं, तो वो भी देंगे। काहे चौधरी ?"

रामखेलावन असमजस मे था। चन्दा लेना बुरा नही, लेकिन चमार-पासियो की औकात ही क्या ? देना भी चाहे, तो दें कहाँ से ? इसलिए धीरे से बोला, "हाँ।"

मुंशी खूबचन्द ने चेतावनी दी, "भाई, तुम सब सयाने बैठे हो। सोच लो। पीछे कोई बवाल न खड़ा हो।"

चौधरी को अब कुछ सहारा मिला। "बवाल तो क्या खड़ा होगा, पै चमार-पासी देंगे कहाँ से ?" उसने कहा।

"अरे कुछ तो देंगे।" माधौ सिंह ने काटा। "बांभन-ठाकुर के चौगुने हैं। थोड़ा-थोड़ा देंगे, तो बहुत हो जायगा।"

आखिर तय रहा कि कल चन्दा वसूल करने निकला जाय। अहीरों के चन्दे का भार रामखेलावन ने लिया। बनिया, तेली, तमोली, व्यापार करने वाली जातियों से चन्दा उगाहने की जिम्मेदारी खूबचन्द पर पड़ी। वह सरकारी सिपाही लेकर वसूल करेंगे। चमार-पासियों से चन्दा वसूली का जिम्मा माधौ सिंह ने लिया।

माधौ सिंह ने कहा, "चौधरी, झूमर को एक-दो लरिका-गदेलों के साथ भेज देना, हम भी अपने घर से छोटकौना को ले लेंगे। साथ मे रहैंगे।

वसूल लायेंगे।"

चौधरी राजी हो गया।

दूसरे दिन झूमर, उसके पड़ोसी बसन्ता और दूसरे नौजवानों का दल लेकर माधो सिंह जब चमरौडी गये, तो चमार-पासियों ने हाय-तौबा मचायी। भीड़ ने माधो सिंह को घेर लिया।

बुधिया पासिन दो साल के बच्चे को गोद में लिये पीछे खड़ी थी। वह भीड़ को चीरती हुई आगे आ गयी। लड़के को जमीन पर बैठा दिया और दोनों हाथ जोड़कर बोली, "काका, मैं रांड़-बेवा खेत काट के, सीला बिन के पेट पालती हूँ। भला बताओ, मैं कहाँ से दूँ?"

माधो सिंह से उसकी हालत छिपी न थी, लेकिन उन्होंने सोचा, इस तरह दया दिखायेंगे, तब तो हो चुकी उगाही। वह हँसकर बोले, "अरे इतवा की महतारी, तेरे खेत काटने में जो बरक्कत है, वह किसी किसान को नसीब नहीं।"

पास खड़े लोगों को माधो सिंह का इशारा समझते देर न लगी। वे हँस पड़े। इतवा की माँ बदनाम थी कि वह खेत कटने पर लांक खलियान को ले जाते समय किसान की आँख बचाकर एक-आध गट्ठर झाड़ियों में छिपा देती है। पिछली रबी में जोरावर सिंह के खेत का एक गट्ठर नहर के सूखे रजबहे में फेंककर उसके ऊपर मदार की टहनियाँ ढक दी थीं। एक काटने वाली ने जोरावर को बता दिया था, नहीं तो दो पसेरी गेहूँ मार देती।

इतवा की माँ से कुछ उत्तर न बन पड़ा। वह अपनी फटी धोती के आँचल से इतवा की नाक पोंछने लगी।

इतने मे नथिया अपने डेढ़ साल के लड़के को कन्धे से चिपटाये, उसे गन्दे, फटे अँगोछे से ढके एक गली से निकला। भीड़ के पास आकर कुछ खुसुर-पुसुर किया। सब कुछ मालूम होने पर माधो सिंह को जैरामजी करके बड़ी नम्रता से बोला, "मालिक, यह नयी रीत काहे? भला हम चन्दा देने लायक हैं? तुम्हारी मेहनत-मजूरी, हरवाही-चरवाही करके पेट पालते हैं। हम कहाँ से दें?" फिर अपना इस समय का दुखड़ा सुनाया, "यह तुम्हारा गदेल चैतुवा, तीन दिन से जूड़ी बोखार दबोचे है इसको।

एक दाना मुँह में नहीं गया। वैद बाबा को देखाने गया था। दवा दी औ' बोले, बनपसा लेकर काढ़ा पिला। मालिक, रामोसत्त, एक झंझी नहीं पास में। कैसे लाऊँ बनपसा। तुम मालिक, गैर थोरे हो। कुछ छिपा है तुमसे?" इतना कहकर फिर गीत की टेक की तरह बोला, "बताओ, कहाँ से दें चन्दा?"

माधो सिंह पशोपेश में पड़ गये। मन-ही-मन कहा, यह अच्छा झंझट ओढ़ लिया। लेकिन अब तो जैसे भी हो, निपटाना होगा। वह नथिया को समझाने लगे। लेकिन नथिया उनके तर्क की पकड़ से मछली की तरह मुट से बाहर निकल जाता। दूसरे भी नथिया की हाँ में हाँ मिलाने लगे। तब माधो सिंह ने झल्लाकर कहा, "हम कुछ नही जानते। सरकार का हुकुम है। मानो, चाहे न मानो।"

सरकार का नाम सुनकर नथिया कुछ सहमा। थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा, फिर हाथ जोड़कर बोला, "मालिक, हम कुछ सरकार की बात के बाहेर थोड़े हैं। सरकार के नीचे बसते हैं। पै दें कहाँ से? हमारी खातिर तो काका, तुम भी सरकार हो।"

माधो सिंह इस नम्रता से कुछ झुक-से रहे थे, कि इतने में बसन्ता बोल उठा, "सीधी अँगुरी कभी घी निकला है? यह ढोरहा ऐसे थोड़े देंगे।"

नथिया के पीछे खड़े एक नौजवान चमार को बसन्ता का इस तरह कहना बुरा लगा। अहीर भी ऐसा कहें, राह की सिटकी, उसने मन-ही-मन सोचा और बोल उठा, "तो तुम बड़े चपहथा हो, आओ, लूट लो।"

एक और ने कहा, "गवर्मिंटी अमलदारी है, नवाबी नहीं। राँड़ का खेत न समझना।"

जवाब वैसे बसन्ता को दिया गया था, लेकिन माधो सिंह ने इसे अपना अपमान समझा। आखिर बसन्ता आया तो था उनके साथ। उनके कहने पर खेलावन चौधरी ने झूमर और बसन्ता को भेजा।

उन्होंने गरजकर कहा, "तो चन्दा देना पड़ेगा। जो गाँव में बसैगा, उसे देना होगा। झूमर, बया को बुला! घर पीछे एक-एक पसेरी अनाज तौला ले!"

इसके बाद चमारों, पासियों के घरों से अनाज जबर्दस्ती तोला जाने लगा। ज़मीदार के सिपाहियों को साथ में देखकर चमार-पासी विरोध करने की हिम्मत न कर सके। अनाज तुल जाने के बाद वे ड्योढ़ी दौड़े गये। वहाँ जब पता चला कि बड़े सरकार गाँव में नहीं हैं, तो छोटे सरकार के पास हाजिर हुए।

दलवीर सिंह ने उसी वक्त मुखिया जोरावर सिंह, ननकू सिंह, मुरलीधर सुकुल और तीन-चार और बैसों को बुलवाया। करीब एक घंटे तक विचार होता रहा।

इसके बाद दलवीर सिंह ने चमारों, पासियों को समझाया, "हमारी ज़मीदारी का मामला होता, तो हम यहीं सुलझा देते। मामला बड़े सरकार की ज़मीदारी का है। वह हैं नही। इसलिए तुम लोग इसी वक्त थाने जाओ। अपने हाथों-पैरों या सिरों पर थोड़ी चोट के निशान बना लो और थाने में जाकर रपट करो कि हमे मारा-पीटा गया और डाका डाला गया।"

समझाने-बुझाने पर थाने जाने को सब राजी हो गये, लेकिन नथिया ने हाथ जोड़कर कहा, "मालिक, हम अपढ ढोर, हम दरोगा साहेब से कैसे बोलेंगे!"

दलवीर सिंह ने समझाया, "इहकी तुम फिक्र न करो। मुखिया औ' ननकू सिंह तुम्हारे साथ जायेंगे। हम चिट्ठी लिख देंगे। मुखिया सब कह-सुन लेंगे।"

थाने में रिपोर्ट लिखी गयी। रणवीर सिंह का नाम लिखते थानेदार झिझका, लेकिन दलवीर सिंह की चिट्ठी थी, इसलिए लिख लिया। साथ ही उसने सोचा, नाक दबाने से मुँह खुलता है। हाथ दबा रहेगा, तो अंटी ढीली करेंगे।

रणवीर सिंह दूसरे दिन जब कानपुर से लौटे, तब उन्हें सारी घटना का पता चला। वह चिंता मे पड़ गये। उन्होंने मुंशी खूबचन्द को बुलवाया और उन पर बुरी तरह से बरस पड़े, "बाल पक गये ड्योढ़ी में काम करते-करते, अकल दो कौड़ी की नही। झुमरा तो अहिर बोंग औ'

माधो सिंह काना अच्छर भैंस बराबर, अकल छू तक नहीं गयी। तुम किस मर्ज की दवा थे? तुमने रोका क्यों नहीं?"

मुंशी खूबचन्द कांप रहे थे। उनके मुँह से एक शब्द न निकला जैसे मुँह पर ताला पड़ा हो।

"अब चुप खड़े मुँह क्या ताक रहे हो! तुम तो आग लगा जमालो दूर खड़ी। भुगतना हमें पड़ेगा।"

मुंशी जी और काँपने लगे। काँपते हुए रणवीर के पैरों पर गिर पड़े और गिड़गिड़ाते हुए बोले, "अनदाता, बड़ी गलती हुई। सरकार के सामने मुँह दिखाने लायक नहीं।"

रणवीर सिंह दाँत पीसते रहे। वह कुछ न बोले। थोड़ी देर के बाद कहा, "जाओ, कबरी घोड़ी कसाओ कानपुर के लिए, झम्मन मियाँ साथ जायेंगे। लेकिन किसी को न बताना, कहाँ जाना है।" थोड़ा रुककर, "मिनटों में तैयारी करो।"

"बहुत अच्छा अनदाता," मुंशी खूबचन्द ने हाथ जोड़कर कहा। अब उनकी जान में कुछ जान आयी।

कोई दस मिनट बाद वर्दी पहने, परतला लटकाये और दोनली बन्दूक लिये झम्मन मियाँ हाजिर हुए, झुककर सलाम किया और बताया, "सरकार, घोड़ी तैयार है।"

"अच्छा," रणवीर सिंह ने कहा और एक छोटे से बक्स की तरफ़ इशारा किया। झम्मन ने वह बक्स उठा लिया। दोनों चल पड़े।

20

रणवीर सिंह कानपुर से लौटे, तो दोपहर के खाने के बाद जब मोरारानी उन्हें पान देने आयी, एक समस्या सामने रख दी।

"सरकार, रानी साहेब दिनों से हैं," उसने पानों की तश्तरी उनके सामने तिपाई पर रखते हुए बताया। "आप गये, तो बड़ी पीर उठी।

गाँव की सिउरनिया को बोलाया। वह कहने लगी, बस, एक-दो दिन की बात है।"

"अच्छा," कहकर रणवीर सिंह ने बीड़ा मुँह में दबाया और बाहर आ गये। एक नौकर से कहा, "मुंशी खूबचन्द को बुलाना।"

मुंशी खूबचन्द पलक मारते हाजिर हुए। हाथ जोड़कर पूछा, "सरकार ने बुलाया है?"

"हाँ मुंशी जी, फौरन घोड़ी से कानपुर जाओ और वहाँ से लेडी डाक्टर सोफिया को औ' नर्स को इसी वक्त लाओ।"

"बहुत अच्छा सरकार।"

"हम चिट्ठी लिख देते हैं," रणवीर सिंह ने कहा, "वैसे वह तो तुमको पहचानती हैं?"

"हाँ सरकार, त्रिटिया साहेब की दफे लाया था।"

"बस देर न करो," रणवीर सिंह बोले।

"हजूर, बाईसिकिल से चला जाऊँ?"

"चलाना आता है?"

"सीखा है सरकार," मुंशी जी ने दाँत निकालकर हँसते हुए बताया।

"तब तो और अच्छा।"

खूबचन्द साइकिल से गये। सोफिया को चिट्ठी दी। जबानी भी सारा हाल बताया। सोफिया चलने की तैयारी करने लगी। मुंशी खूबचन्द एक बढ़िया ताँगा खोजने गये और कुछ मिनटों में लेकर वापस आये।

सूरज डूबने के कुछ बाद वे सब गाँव आ गये।

"उफ, क्या मुसीबत है गाँव का सफर!" सोफिया बोली। "हिचकोलों से बदन का एक-एक जोड़ दुखने लगा।"

नर्स ने हँसते हुए कहा, "और जरा आईने में चेहरा देखियेगा। सर पर धूल का पहाड़, कपड़ों पर धूल की दो इंच मोटी परत।"

दोनों ताँगे से उतरकर महल जाने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। रणवीर सिंह को इत्तला हो गयी थी। वह बैठकखाने के अपने कमरे से निकलकर आँगन में लेडी डाक्टर से मिले। "आइये मेमसाहब, तकलीफ तो बहुत हुई होगी।"

"कोई बात नहीं, राजा साहब," सोफिया ने उत्तर दिया। "इसी बहाने आपके दर्शन हो गये।"

रणवीर सिंह हँसने लगे।

सोफिया और नर्स ने जल्दी-जल्दी मुँह-हाथ धोये, कपड़े बदले और सुभद्रा देवी को देखने के लिए उनके कमरे में गयीं। रणवीर सिंह उनके साथ थे।

"अब आपकी जरूरत नहीं, राजा साहब," सोफिया ने कनखियों से मुसकराते हुए कहा।

"हम जाते हैं, मेमसाहब," कहकर रणवीर सिंह बैठकखाने में आ गये। चलने से पहले सबको सुनाकर इतना कहते गये, "हमें खबर मिलती रहे, बैठकखाने में।"

डाक्टर ने सुभद्रा देवी को अच्छी तरह देखा। "बहुत देर नहीं है। नर्स, गरम पानी का इन्तज़ाम फौरन करो। सब औजार साफ कर लो।"

इतने में सुभद्रा देवी को इतने ज़ोर से पीर उठी कि वह चीख पड़ीं। "डाक्टरनी, मैं तो मरी।" सोफिया का बायाँ हाथ ज़ोर से पकड़कर दाँत पीसते हुए बोलीं।

"घबराइये नहीं रानी साहब," सोफिया ने सान्त्वना दी। "बस थोड़ी देर की बात है।" दाहिने हाथ से वह उनकी पीठ मल रही थी।

सुभद्रा देवी को ज़रा खुश करने के लिए सोफिया मुसकुराते हुए बोली, "लल्ली की दफा भी इसी तरह परेशान थीं। तब हमने समझाया था। मगर आप हैं कि मानती ही नहीं।"

पास में खड़ी नौकरानियाँ मुँह फेरकर मुसकराने लगीं। सुभद्रा देवी के चेहरे पर भी पीड़ा के बावजूद थोड़ी मुस्कान आ गयी। लेकिन इतने में फिर ज़ोर से पीड़ा उठी।

नर्स ने आकर बताया, "सब कुछ ठीक है। पास ही मेज पर लगा दिया है।"

"अच्छा," सोफिया ने कहा और ध्यान से सुभद्रा देवी को देखने लगी।

"नर्स, बिलकुल तैयार।" सोफिया हड़बड़ाकर तेजी से बोली।

नर्स सुभद्रा देवी के पास बैठ गयी।

एक बार जोर की पीड़ा फिर हुई और बच्चे का जन्म हो गया।

"बेटा हुआ है," डाक्टरनी ने बताया। वह और नर्स जच्चा-बच्चा की परिचर्या में लग गयीं।

धनेश्वर की स्त्री जल्दी-जल्दी गयीं और रसोई घर से फूल की थाली लाकर बजायी।

एक नौकरानी दौड़ी-दौड़ी बैठकखाने में धड़धड़ाती हुई घुस गयी। "सरकार, कानी बिटिया भयी हैं।" उसने थोड़ा घूंघट निकालकर बताया।

रणवीर सिंह का चेहरा खिल गया। मुंशी खूबचन्द अचानक बोले, "अरे कोई है, जाओ पंडित रामअधार को बुला लाओ। पत्रा लेते आवें।"

रणवीर सिंह ने जेब में हाथ डाला। एक रुपया था। वह संदेशा लाने वाली को दिया।

"सरकार!" उसने इतना ही कहा।

"अभी जेब में यही था," रणवीर सिंह ने हँसते हुए समझाया। "जा, तुझे लहँगा-लूगर भी देंगे।"

वह लौटी, तो प्रसन्नता से उसके पैर जमीन पर न पड़ रहे थे।

झम्मन मियाँ ने बन्दूक दाग कर लड़का होने की सूचना दी।

पलक मारते खबर पूरे गाँव में फैल गयी। स्त्री-पुरुषों के झुंड-के-झुंड गढ़ी की ओर उमड़ पड़े। जिस कमरे में सुभद्रा देवी थीं, उसके बाहर बरामदे में औरतें एकत्र होने लगीं।

शिवसहाय की बेटी रत्ती और धनेश्वर की बेटी लक्ष्मी अपनी-अपनी माँ के साथ आयी थीं। एक नौकरानी ढूँढ़कर ढोलक ले आयी और बरामदे के बाहर आँगन में ढोलक पर सोहर होने लगे।

लक्ष्मी ने शुरू किया :

फूलों का डालूँगी पालना, आज मोरे लाला हुए।

रत्ती और दूसरी स्त्रियों ने इसे दुहराया। इसके बाद लक्ष्मी ने गीत को आगे बढ़ाया :

सासू जो आवै, चेरुवा धरावै,
चेरुआ धराई नेग डालना,
आज मोरे लाला हुए।

यह सोहर पूरा होने पर रत्तो ने दूसरा उठाया :
आज मोरे आँगना माँ बाजै सहनाई हो,
बाजै सहनाई, ये खुसी की घरी आयी हो।
झुमका न लेहौं, बेंदी न लेहौं,
ऐ भाभी दे दे रवादार कँगना,
खुसी की घरी आयी हो।

आज मोरे आँगना माँ बाजै सहनाई हो।

पं० रामअधार जल्दी-जल्दी आये। वह गरी का एक गोला और पाँच सुपाड़ियाँ भी लाये थे। आशीर्वाद का श्लोक पढ़कर उन्होंने गरी का गोला और सुपाड़ियाँ रणवीर सिंह को दी। रणवीर ने कुर्सी से खड़े होकर आशीर्वाद ग्रहण किया और पंडित जी को अपने पास की कुर्सी पर बैठाया। इसके बाद खुद बैठे।

पं० रामअधार ने बताया, "सरकार, लाल साहेब बड़ी शुभ घड़ी में हुए हैं। यह हमने घर मे ही देख लिया था।" और पूछा, "उस समय रानी साहेब के पास कौन-कौन था?"

रणवीर सिंह ने फौरन एक नौकर से कहा, "जाओ, सुखिया को बुला लाओ।"

सुखिया आयी और उसने पंडित जी को विस्तार से बताया कि उस समय रानी साहेब का मुँह किस दिशा में था, डाक्टरनी उनके पास किधर खड़ी थी, नर्स किधर थी। दूसरी औरतें उस कमरे के बाहर कहाँ थीं। पं० रामअधार ने ये सब बातें एक कागज पर लिख ली। सुखिया चली गयी। पंडित जी ने पंचाग खोला और सब बातों को ध्यान में रखकर बोले, "मुहूर्त बहुत शुभ था सरकार, हर तरह से। लाल साहेब की सिंह राशि है। शत्रु का दमन, राज्य का विस्तार, वैभव वृद्धि के ग्रह हैं।"

रणवीर सिंह यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। इशारे से मुंशी सुखचन्द

'से कुछ कहा। मुंशी जी गये और लौटकर रणवीर सिंह के हाथ में चुपके से कुछ दिया। रणवीर सिंह ने पंडित जी को ग्यारह रुपये दिये और हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। फिर खूबचन्द से कहा, "मुंशी जी, सीधा घर भेजवा दोगे।"

"जो हुकुम सरकार," मुंशी जी के नम्र स्वर में हर्ष का पुट था।

दूध पिलाने, छठी और बरहों की तिथियाँ बताकर पंडित रामअधार विदा हुए।

21

दलवीर सिंह की शह पर थाने में जो रिपोर्ट की गयी थी, उस पर कारंवाई शुरू हो गयी। रणवीर सिंह, माधो सिंह, झूमर, घनेश्वर मिश्र, शिवसहाय दीक्षित आदि बीस लोगों के नाम वारंट जारी किये गये। आरोप डाका डालने और मार-पीट करने का लगाया गया। सबकी जमानतें हो गयी थीं। मुकदमा एक तरह से रणवीर सिंह लड़ रहे थे। उन्होंने फ़ौजदारी के दो माने हुए वकील किये जिनकी हर पेशी की फीस सौ रुपये होती थी, क्योंकि वे सबकी पैरवी करते थे।

जोरावर सिंह, ननकू सिंह, शंकर सिंह, और मुरलीधर सुकुल सबूत के खास गवाह थे। जोरावर सिंह ने चाहा, वह गवाही से बच जायें। उन्होंने दलवीर सिंह से कहा, "बच्चा साहेब, जैसे मैं जाहिल जट्ट हुआँ जज्ज, उकील। कैसे गवाही दूँगा? मेरे तो पैर काँपेंगे।"

दलवीर सिंह समझ रहे थे, जोरावर बचना चाहता है। लेकिन इसके अलग होने से दूसरे भी बिदक जायेंगे, उन्होने मन-ही-मन कहा।

वह थोड़ा हँसते हुए बोले, "अरे काका, तुम डर गये टोप, सूट, बूट से!" थोड़ा रुककर, "हम बढ़िया वकील रखेंगे जो सब गवाहों को सुवा की तरह पढ़ायेगा।"

जोरावर सिंह ने जब देखा कि बचाव का कोई रास्ता नहीं, तो बोले,

"सो तो सब ठीक, पै कभी कचेहरी का दुवार नहीं देखा। डर लगता है।"

"तो अब देख लो," दलबीर ने हँसकर उत्तर दिया।

दलबीर के यहाँ बँसों का और चमार-पासियों का जमाव रहता। पेशी से एक दिन पहले कड़ाह चढ़ता। खा-पीकर सब बड़े तड़के कानपुर को चल पड़ते दलबीर की बैलगाड़ियों में। मुकदमे का सारा खर्च दलबीर उठा रहे थे।

छोटी अदालत में सबूत के गवाह हुए। रिपोर्ट और गवाहियों के आधार पर मुकदमा बनता था। मजिस्ट्रेट ने मामले को सेशन सिपुर्द कर दिया।

सेशन में सफ़ाई के वकीलों ने सबूत के गवाहों से घुमा-फिरा कर बहुतेरा पूछा, लेकिन कोई टस-से-मस न हुआ। सबने एक बात ज़रूर कही, रणवीर सिंह मौक़े पर थे और उनके हुक्म से मारा-पीटा और लूटा गया।

सबूत के गवाहों से जिरह के बाद रणवीर सिंह और दोनों वकील रणवीर सिंह के परेड वाले मकान आये।

वकीलों में से एक, स्वरूप सिंह बोले, "बनवारी बाबू, मामला बहुत पेचीदा हो गया है।"

बनवारी लाल दूसरे वकील थे। चिंता उनके चेहरे पर स्पष्ट थी। उन्होंने स्वरूप सिंह की बात का कुछ भी उत्तर न देकर रणवीर सिंह से पूछा, "यह तो बताइये कुँवर साहब, आप वहाँ नहीं थे, इसकी सफाई क्या दीजियेगा?"

"मैं तो पहले ही आपको बता चुका हूँ, कलक्टर साहब से उसी दिन सवेरे मिला था। मैं कानपुर में था। कलक्टर साहब गवाही देंगे।"

"सवेरे मिलने से तो काम बनता नहीं," बनवारी लाल बोले। "दोपहर तक आप गाँव पहुँच सकते थे। वाकया तीसरे पहर हुआ, ऐसा रपट में है।"

तीनों थोड़ी देर तक खामोश रहे। इसके बाद स्वरूप सिंह ने कहा, "कुँवर साहब, मैं आखिरी कोशिश करूँगा। अभी कुछ न बताऊँगा।" और बनवारी लाल की ओर मुखातिब होकर बोले, "आप घर चलिये। मैं आपको बाद में बताऊँगा। सफ़ाई के गवाह तो एक महीने बाद पेश

करने हैं।"

वकीलों की बातें सुनकर रणवीर सिंह का चेहरा उतर गया था। दोनों वकीलों के जाने के बाद वह गावतकिये के सहारे फर्श पर ही कालीन पर लुढ़क गये और आँखें बंद कर सोचने लगे। कलक्टर की गवाही से काम न चलेगा। तब? और 'यह 'तब' विराट् रूप धर कर उनके सामने आ खड़ा हुआ। उन्हें लगा जैसे एक बड़ा दानव लम्बे-लम्बे दाँत निकाले, मुँह फैलाये। उन्हें निगल जाने को तैयार हो; वह ऐसे अंतहीन गढ़े के किनारे पर खड़े हों जहाँ से पीछे भी नहीं हट सकते।

परेड वाले मकान का चौकीदार छेदिया दरवाजे पर आ खड़ा हुआ था, लेकिन रणवीर सिंह को उसके आने का पता न चला। कुछ देर खड़े रहने के बाद छेदिया धीरे से बोला, "मालिक!"

रणवीर सिंह ने आँखें खोलीं।

"सरकार, कच्चा भोजन बनवाया जाय या पक्का?"

रणवीर सिंह ने शिथिल स्वर में उत्तर दिया, "भूख नहीं है, छेदिया।"

"पूरा दिन बीत गया मालिक।"

"हाँ, लेकिन भूख नहीं है," रणवीर सिंह ने फीकी हँसी के साथ कहा। "तुम सब लोग बनाओ-खाओ।"

"तो दूध पौवा खाँड?"

"दे जाना घंटा-भर बाद," कुछ क्षण बाद रणवीर सिंह बोले और आँखें बन्द कर लीं।

पड़ोस में रात के वक्त कुछ गाना-बजाना था। आयोजन छेदिया जैसे घरेलू नौकरों ने किया था। छेदिया को भी उसमें जाना था। वह ढोलक अच्छी बजाता था। लेकिन बदलू जब बुलाने आया, छेदिया ने नाहीं कर दी। खुसुर-पुसुर करते हुए बताया, "मुकदमा बिगड़ गया है। मालिक बड़े सोच में हैं।"

"पहले से जान जाते, तो न करते।" बदलू ने कहा।

"तुम लोग करो। दूर है। हियाँ सुनायी न पड़ेगा। हमें माफ करो।" छेदिया बोला।

रणवीर सिंह रात-भर करवटें बदलते रहे। रह-रह कर यह आशंका उठती, अगर जेल हो गयी ? सारी इज्जत धूल में मिल जायेगी, और दलबीर पर क्रोध भड़क उठता, दाँत पीसते, ओठ काटते, फिर करवट बदल कर सोने की कोशिश करते। तड़के आँख लगी, तो ऐसा स्वप्न देखा कि भड़भड़ाकर उठ बैठे और 'सिउ-सिउ' जपने लगे। स्वप्न में उन्होंने देखा था, उन्हें जेल हो गयी है। वह कैदियों वाला जाँघिया और आधी बाँहों वाला उटंग कुरता पहने, कंधे पर फावड़ा रखे जा रहे हैं। एक सिपाही उनके पीछे है। क्या होने वाला है भगवान, उन्होंने सोचा। तड़का हो गया था। सवेरे पहर का स्वप्न! मन में आशंका पैठ गयी।

दूसरे दिन रणवीर सिंह गाँव पहुँचे। सुभद्रा देवी को जब मुकद्दमे के बारे में मालूम हुआ, उनकी आँखें डबडबा आयीं। साथ ही दलबीर के प्रति महीनों से मन को मथता क्रोध बाहर आ गया। 'आस्तीन का साँप!' क्रोध से काँपते स्वर में उन्होंने मन-ही-मन कहा। दलबीर की सब करतूतें बिजली की भाँति उनके मन में कौंध गयीं। हमको नीचा दिखाने के लिए धनेसर महराज को बदनाम किया। उड़ा दिया, वह मुसलमान हो गये। फिर मुरली से पुराचरन कराया। दंगल लगवाया, तो उसमें ने कुछ ननकू, सकर तक को बोलाया, इनको झूठ-मूठ भी न पूछा। फिर दसहरा अलग मनाया। सब बैसों की चूल्हा-न्योतन की, पतुरिया नचवायी। मामा साहब के लड़के आये थे। वह भी देख गये घर की नँग-नाचन। फिर यह मुकदमा चलवा दिया। सुभद्रा देवी के ओठ फड़के और दाँत पीसते हुए उन्होंने संकल्प-सा किया, "अगर कुछ हो गया, तो जड़-मूल से साफ न करा दूँ, तो ठाकुर की औलाद नहीं।"

शाम को रणवीर के लाख समझाने पर भी सुभद्रा देवी ने एक कौर तक मुँह में न डाला। सवेरे उठीं, तो नौकरानी से कहा, "जा, मुंसी जी से कह, उपरहितिन औ' मालिन को बुलवा लें। हम महादेव जी की पूजा करने जायेंगी।"

सुभद्रा देवी रथ में महादेव जी के मन्दिर गयीं। चार सिपाही उनके साथ थे, दो रथ के पीछे और एक-एक अगल-बगल। मालिन फूलमाला, बेलपत्र लिये और पुरोहितानी पूजा का सामान लिये रथ के आगे-आगे चल

रही थीं।

पर्दा करने के लिए सिपाही दो कनातें तानकर खड़े हो गये। सुभद्रा देवी उन कनातों के बीच के रास्ते से मन्दिर गयी और देर तक शिवजी की पूजा करती रही। लोटे के जल के साथ-साथ उन्होंने आँखों के जल से भी शिवजी को स्नान कराया।

दलवीर सिंह ने जनरलगंज में एक मकान किराये पर ले रखा था। वहाँ कचहरी के बाद उनके पक्ष के लोग जुटते।

एक बड़ा कालीन बिछा था जिस पर दलवीर सिंह गावतकिये के सहारे अधलेटे फर्शी-हुक्का पी रहे थे। उनके पास जोरावर सिंह, मुरलीधर सुकुल, ननकू सिंह, शंकर सिंह आदि बैठे थे।

"बच्चा साहेब, अब बताओ, गवाही कैसी रही ?" जोरावर ने पूछा।

"अरे काका," दलवीर नली को मुँह से हटाकर बायें हाथ से थामे हुए दाहिना हाथ कालीन पर पटककर बोले, "गवाहियाँ ऐसी पक्की हुई हैं कि दूसरे चाहे बच जायें, बड़े भैया नही बच सकते।" उनका दाहिना हाथ मूँछो पर चला गया।

"उकील क्या कहते हैं, सरकार ?" मुरलीधर ने पूछा।

"सुकुल, भला बताओ, भैया साहेब उकील से कम हैं ?" शंकर बोला। ननकू ने शंकर के समर्थन में सिर हिलाया।

"सो तो ठीक," मुरलीधर ने हामी भरी।

"वकीलों की भी यही राय है," दलवीर ने बताया।

महराज ने आकर कहा, "सरकार, भोजन तैयार है।"

"अच्छा तो चलो, पहले भोजन किया जाये।" दलवीर ने सबसे कहा। "सुकुल जी, तुम ?" मुरलीधर से पूछा।

"सरकार चिंता न करें," मुरलीधर ने उत्तर दिया, "हम चार पूरी अभी निकाल लेंगे।"

सफ़ाई में कमिश्नर और उनके अहलमद की गवाही हुई। अहलमद ने डायरी दिखाकर बता दिया कि रणवीर सिंह कमिश्नर साहब से मिलने

गये थे, दिन के साढ़े दस बजे। कमिश्नर ने भी इसकी पुष्टि कर दी।

सबूत के वकीलों ने सिर्फ़ एक-दो प्रश्न किये।

बहस के समय बनवारी लाल ने ऐसी चतुरता दिखायी कि जज भी बीच-बीच में मुसकरा देता। उन्होंने सबूत के गवाहों के बयानों से साबित कर दिया कि किसी भी मुलजिम के खिलाफ़ एक से अधिक गवाह कुछ नहीं कह रहा। वह सब रहे हैं कि रणवीर सिंह मौजूद थे और उनके हुक्म से मार-पीट की गयी और घरों को लूटा गया, जबकि रणवीर सिंह दिन के साढ़े दस बजे इलाहाबाद में थे और तीसरे पहर तक किशनगढ़ पहुँचना किसी भी हालत में मुमकिन न था।

स्वरूप सिंह ने कमिश्नर के बयान पर विशेष जोर देते हुए इजलास से कहा, "रणवीर सिंह की गैर-मौजूदगी का इससे पक्का कोई सबूत नहीं हो सकता। सबूत के गवाहों ने जैसे बयान दिये हैं, उनसे साफ जाहिर होता है कि रणवीर सिंह अगुवा थे। दूसरे मुलजिमों ने उनके कहने पर, उनके हुक्म से, उनकी मौजूदगी में मार-पीट की व घरों को लूटा। रणवीर सिंह की गैर-मौजूदगी इस पूरे मुकदमे को बेबुनियाद और झूठा बना देती है।"

सबूत के वकीलो ने जो बुनियाद बनायी थी, वह धसक गयी। उसके ऊपर बहस का महल खड़ा करें, तो कैसे!

जज ने सबको बेकसूर माना और बरी कर दिया।

22

शाम को स्वरूप सिंह, बनवारी लाल और बहुत से दूसरे लोग रणवीर सिंह के परेड वाले घर उन्हें बधाई देने आये। दोनों वकीलों को रणवीर ने फीस के अलावा पाँच-पाँच सौ रुपये शुकराने के दिये। स्वरूप सिंह ने कलक्टर से कहकर कमिश्नर को गवाही देने के लिए राजी कराया था। इस एहसान के लिए रणवीर सिंह ने बार-बार उन्हें शुक्रिया अदा किया।

स्वरूप सिंह ने हँसकर कहा, "आप मेरे मुवक्किल तो थे ही, फिर मुझे यकीन हो गया था कि आप बेकसूर हैं, फँसाये जा रहे हैं। मैंने कोशिश करना अपना फ़र्ज़ समझा।" रणवीर सिंह ने शहर में एक पार्टी देने की बात भी स्वरूप सिंह से कही।

"कितने लोगों को रखा जाय ?" स्वरूप सिंह ने पूछा।

"अपनी जान-पहचान वालो के नाम हम बता देंगे। आप हाकिम-हुक्काम, कलक्टर साहब, एस० पी० साहब, अपने इष्टमित्र वकीलों की फेहरिस्त बना लें।" रणवीर ने कहा और बनवारी लाल की ओर रुख करके पूछा, "ठीक है ना वकील साहब ? आप भी अपने इष्ट मित्रों के नाम दे दीजिये।"

"हाँ, बिलकुल ठीक," बनवारी लाल ने उत्तर दिया।

"फिर भी आखिर कितने ?" स्वरूप सिंह ने तिखारा।

"वकील साहब, हज़ार-दो हज़ार तो होने से रहे। सौ के दो सौ होने से यहाँ कुछ बनता-बिगड़ता नही।" रणवीर सिंह ने जमीदारी ठसक के साथ उत्तर दिया। "पार्टी शानदार रहे, बस।"

"इससे बेफिकर रहिये, कुँवर साहब।"

"तो, पैसे की फिकर आप न करियेगा, वकील साहब," रणवीर सिंह नें चट उत्तर दिया।

अगले रविवार को वाजिद अली होटल में पार्टी करना तय हो गया। स्वरूप सिंह ने सबको निमंत्रण देने और पार्टी का ठीक से प्रबन्ध करने का भार अपने ऊपर लिया।

शहर वालों के वहाँ से जाने के बाद रणवीर सिंह ने आवाज़ दी, "मुंसी जी !"

"आया सरकार।" मुंशी खूबचन्द चिलम दीवार से टिकाते हुए बोले और फ़ौरन रणवीर सिंह के सामने हाज़िर हो गये।

"मुकदमा जीतने की खुशी में गाँव मे क्या होना चाहिये ?" रणवीर सिंह ने पूछा।

"सरकार जो हुकुम करें," मुंशी जी ने कहा। "रानी साहेब तो सत्तिनरायन की कथा माने हैं।"

"तो ठीक है," रणवीर सिंह बोले। "सत्तनरायन की कथा औ' साथ-साथ गाँव-भर को न्योता।"

मुंशी जी ने हाँ या ना कुछ न किया, खामोश खड़े रहे। इस पर रणवीर सिंह को आश्चर्य हुआ।

"क्या बात है, मुंसी जी ?" उन्होंने पूछा, "चुप्पी काहे साध ली ?"

मुंशी खूबचन्द अड़ते-अड़ते बोले, "अनदाता ने कहा, पूरा गाँव।" इतना कहकर थोड़ा रुक गये। फिर जोड़ा, "छोटे सरकार की पाल्टी को भी ?"

"छोटे सरकार को छोड़कर बाकी सबको।" रणवीर सिंह ने उत्तर दिया।

"जो हुकुम सरकार।"

"तो जाओ, गाँव मे इतवार से पहले करो। समझे ? औ' हमको दो दिन पहले खबर भेजवा देना।"

"अनदाता अभी···"

मुंशी जी का आशय रणवीर समझ गये। वह बोले, "हम यहाँ रुकेंगे। कलक्टर साहब से मिलना है, दूसरे अफ़सरों से भी। कोई चिंता न करो।"

"एक दिन को···" मुंशी जी ने हाथ जोड़ दिये।

रणवीर सिंह ने ज़रा सोचा, फिर बोले, "अच्छी बात है। कल सवेरे चलेंगे, शाम तक वापिस।"

मुकदमेबाजी जीतने वाले और हारने वाले, दोनों का एक-एक बाल नोच लेती है, गंजा कर देती है, इसीलिए कुछ लोग कचहरी को कच-हरी कहते हैं। लेकिन जीतने वाले पर जीत के ठर्रे का नशा कुछ दिन रहता है, इसलिए वह ज़रा देर से अनुभव करता है। परन्तु हारने वाले की हालत तेज़ बुखार से पीड़ित व्यक्ति की-सी होती है। जब तक मुकदमे का बुखार चढ़ा रहता है, उसके होश-हवास ठिकाने नहीं रहते। फैसला सुनाये जाने के बाद वह अनुभव करता है जैसे उसका मन बिलकुल टूट गया हो। दल-बीर गुट की दशा बुखार उतरे मरीज जैसी थी। सबसे अधिक डरे हुए नथिया और दूसरे चमार-पासी थे। "अब ठाकुर चटनी बना देगा। जब

शंकर सिंह तक पर हंटर उठा लिया था, तब हम किस खेत की मूली हैं?" नथिया ने चमरौडी में कहा। ठाकुरों मे जोरावर सिंह सबसे अधिक चिन्तित थे। रणवीर सिंह कहीं ऐसा चक्र न चलायें कि मुखियागीरी छिन जाये। शंकर को अफसोस था कि रणवीर बाल-बाल बच गया। हाँ, मुरलीधर सुकुल चिन्तित न थे, बल्कि उन्हें खुशी थी कि उनकी पैठ दलवीर के दरबार में हो गयी।

जब सत्यनारायण की कथा सुनने और जीमने का निमंत्रण गाँव में फिरा, तब दलवीर सिंह के गुट में खलबली मच गयी।

ननकू ने साफ कहा, "हम तो जिन्दगी-भर न जायेंगे। मरद की जोबान एक होनी है।" शंकर ने ननकू की बात का समर्थन किया। लेकिन जोरावर सिंह ने अनोखा तर्क पेश कर दिया, "अब बताओ, सत्तिनारायन भगवान की कथा मे न जायें, तो साच्छात् नरक। कथा में है ना, एक राजा था। परसाद न लिया। सब राजपाट नष्ट हो गया।"

मुरलीधर का कहना था, "भगवान के बोल सुनने से इनकार थोड़े है, भुल करैहा घनेसर की चढ़ैगी। अब बेदीन कौन हो?" फिर भी सुकुल तर्क के इस धागे से जोरावर सिंह को न बाँध सके। वह कथा सुनने गये और घनेश्वर की कड़ाही में भोजन भी किया।

कानपुर की पार्टी बड़ी शानदार रही, यह समाचार दलवीर सिंह के भेदियों ने उन्हें दिया। बताया कि पार्टी में कलक्टर, पुलिस के बड़े अफ़सर, बड़े-बड़े वकील, और न जाने कितने हाकिम आये। अंग्रेज़ी बैण्ड बजा। पूरा जशन रहा। भीतर उनकी पैठ न होने के कारण वे यह बता न सके कि विलायती शराबों की कितनी बोतलें खाली हुईं या कितने मुर्ग पकाये गये। गांव की हालत देखकर और कानपुर का हाल सुनकर दलवीर सिंह ने सोचा, किये-कराये पर पानी फिरा जा रहा है। अपनी 'पाल्टी' टूट रही है। कैसे सँभाला जाय? यह उनकी समझ में न आया।

राजदुलारी जब बच्चे के बरहो में आयी थीं, उन्होंने रणवीर से कहा था, "भैया, दमयन्ती तो अब सयानी हो गयी है। ग्यारहवां साल चल रहा है। कहीं घर देखा।"

रणवीर ने कहा था, "हाँ दुलारी, हमको भी चिन्ता है।"

"चिन्ता की बात है। हमारा ब्याह जब हुआ था, नौ की थीं। गले बराबर लड़की कुँआरी बैठी रहे!"

"हमने कुँवरजू से कहा था। शायद भूल गये। तुम्हारी तरफ़ कोई हो, तो बताओ। कुछ पूछने-जाँचने की ज़रूरत न रहेगी। हैसियत तुमसे उन्नीस-बीस हो।"

"अच्छा," राजदुलारी ने हामी भरी थी, "जाकर वहाँ सबसे कहूँगी।"

"कुँवरजू देख-परख लें। हमारी तरफ़ से पक्का समझो।"

मुकदमे के कारण इस बीच न रणवीर इसके बारे में राजदुलारी को लिख सके और न राजदुलारी ने ही उन्हें कुछ लिखा।

अब फ़ुर्सत होने पर रणवीर ने इधर ध्यान दिया और एक चिट्ठी कुँवरजू को लिखी।

कोई एक महीने बाद उनका जवाब आया और उस जवाब में लड़के का और उसके घर का पूरा ब्यौरा था। लड़के का पन्द्रहवाँ साल चल रहा है। शरीर से खूब हृष्ट-पुष्ट। अच्छे ठिकानेदार हैं। हमसे बीस हैं, उन्नीस हर्गिज नहीं।

रणवीर ने पत्र पढ़कर सुभद्रा देवी को सुनाया। वह सुनकर प्रसन्न हो गयी। "तो देर काहे की। जाकर वरीच्छा कर आइये और इसी बैसाख-जेठ में शादी कर डालिये।"

"जेठ में हो नहीं सकता," रणवीर सिंह ने बताया। "दम्मो जेठी है।"

"तो बैसाख में रखिये, या लगते असाढ़ में।" सुभद्रा देवी ने सुझाया। "असाढ़ में बस यह डर, कहीं पानी बरस जाय, तो रंग में भंग।"

आखिर पंडित रामअधार बुलाये गये और सोचकर जाने का मुहूर्त निकलवाया गया। धनेश्वर मिश्र और एक नाई को लेकर रणवीर सिंह रवाना हुए। वरीक्षा में पाँच मोहरें देना तय हो गया। इसके अलावा एक-एक मोहर लड़के के दो चाचाओं को और एक-एक समधिन तथा चाचियों को भेंट में देने का निश्चय कर लिया गया।

विवाह का मुहूर्त बैसाख शुक्ल चतुर्दशी का निकला था, इसलिए

सारा प्रबन्ध तेज़ी से करना था। कुल दो महीने बीच में थे। "बारात खूब शानदार आये," यह रणवीर सिंह कह आये थे। इशारे से यह भी समझा दिया था, "भाई से गवैयादारी है, इसलिए ऐसी बारात लाइये कि सब देखते रह जायें।"

फलदान में रणवीर सिंह ने चाँदी का थाल, सोने और चाँदी से मढ़ी सुपाड़ियाँ, एक सौ एक अशर्फियाँ, पाँच हज़ार पाँच रुपये, लड़के के जामे के लिए पीले रेशम का थान, पांच थान मारकीन और समधिन तथा उनकी देवरानियों के लिए पाँच-पाँच रेशमी साड़ियाँ भेजी। धनेश्वर मिश्र और एक नाई रणवीर के ममेरे भाई के लड़के, समरजीत के साथ गये।

नहर के पास के बड़े बाग में जनवासा देने के लिए छोलदारियाँ, कनातें, तम्बू आदि लगाने का प्रबन्ध था। लड़के वालों के कुछ खास तरह के तम्बू आये थे। इनमें से एक शीशमहल था। साथ मे आये कारीगरों ने शीशमहल बाग़ के एक बड़े आम के पेड़ के पास खड़ा किया। इसकी सब दीवारें काँच की थी और छत भी काँच की। प्रवेश द्वार पर काँच की रंगबिरंगी मालाओं की झालर थी। यह लड़के के बहनोई के ठहरने के लिए था। वह भी बहुत बड़े ठिकानेदार थे। बारात के दो दिन पहले यह शीशमहल जगमगाने लगा जो गाँव के लड़कों-सयानों के लिए अनोखी चीज था।

रणवीर सिंह ने गढ़ी के प्रवेश-द्वार से जनवासे तक अलग-अलग रंग के रेशमी कपड़ों के कई द्वार बनवाये थे। गढ़ी के मुख्य फाटक की सजावट तो ऐसी कि जो देखे, देखता रह जाय। नीली मखमल पर सुनहली मखमल से टँका था स्वागतम् जो फाटक के रोशन-चौकी वाले स्थान पर आर-पार फैला था। फाटक के दोनों बाजुओं पर लाल मखमलें ऊपर से नीचे तक लटकी थीं जिन पर बाँसुरी बजाते कृष्ण की आकृतियाँ नीली मखमल से टँकी थीं।

जनवासे से महल तक के रास्ते में दोनों ओर मशालची थोड़ी-थोड़ी दूर पर खड़े थे।

बारात जब द्वारचार के लिए चली, सबसे आगे अंग्रेज़ी बाजों और देसी बाजों की दो मंडलियाँ थी जो बारी-बारी से कोई-न-कोई सामयिक

धुन बजा रही थी। बाजे वालों के पीछे थी नाचने वालियों की मण्डली। उसके पीछे चार मशालची चल रहे थे। इनके पीछे वर नाचते हुए मोर की आकृति की पालकी में बैठा था। इसका ढांचा तो मजबूत लकड़ी का था और बैठने की जगह नीवार से बुनी हुई थी, लेकिन बाकी भाग असली मोर के रंगों से मिलते रंग के कांच के टुकड़ों का बना था। नाचते मोर के पंख प्रकाश में झिलमिला रहे थे। पालकी के आगे-आगे लाल वर्दी पहने दो चोबदार असा लिये चल रहे थे। पालकी के दोनों ओर एक-एक खिदमतगार सफ़ेद वर्दी पहने चँवर डुला रहे थे।

वर के पीछे था हाथियों और घोड़ों का काफिला। कुल दस हाथी और पचास घोड़े आये थे। हाथियों की झूलें रंगबिरंगी थीं, कोई मखमली, कोई रेशमी। सभी हाथियों के मस्तक ऐपन से सँवारे गये थे। घोड़ों की सजावट भी देखने लायक—सिरों के ऊपर कलगी, गलों में हुवेल, बढ़िया काठियां जिन पर रेशम या मखमल की, कढ़ाई की हुई झूलें पड़ी हुईं।

सबसे आगे वाले हाथी पर वर के पिता और दोनों चाचा बैठे थे। उनके बाद वाले पर वर के बहनोई। इनके बाद दूसरे बाराती।

बारात एक-एक द्वार पार करती जब गढ़ी के प्रवेश-द्वार। के थोड़ा निकट आ गयी, तब लड़के के पिता और बहनोई ने अपने-अपने हाथियों पर से रुपये लुटाये। रुपयों की वर्षा होती देख दोनों ओर खड़े दर्शकों में खलबली मच गयी और लड़के-सयाने रुपये लूटने के लिए दौड़े। कुछ देर तक रुपयों की वर्षा होती रही। इसके बाद लड़के की पालकी के आगे आतिशबाजी छूटने लगी और बन्दूकों से हवाई फायर किये गये।

उधर से रणवीर सिंह, उनकी बायीं तरफ़ उनके ममेरे भाई, दाहिनी तरफ़ बहनोई और इन सबके पीछे गाँव के लोग बारात की अगवानी को बहुत ही आहिस्ते-आहिस्ते बढ़ रहे थे। इस जनवासी चाल में समधियों का मिलन कोई आधे घण्टे बाद हो सका। एक सीढ़ी लगाकर लड़के के पिता को उतारा गया और दोनों समधी गले मिले। रणवीर सिंह ने पाँच अशर्फियां उन्हें भेंट में दीं।

बारात बढ़कर प्रवेश-द्वार पर पहुँची। धनेश्वर मिश्र चौक पूरे पूजा का कुल सामान लिये बैठे थे। पं० रामअधार दुबे और कानपुर से बुलाये

दूसरे पण्डितों ने सस्वर शान्ति-पाठ किया, "द्यौ शान्ति, आपः शान्तिः···।" वर पालकी से निकला, पीला जामा पहने, पीला पागा बाँधे हुए और दुर्गा जनेऊ का कार्य आरम्भ हो गया। फाटक के ऊपर बनी रोशन चौकी से निकलती शहनाई की मधुर स्वर-लहरी वेद-मंत्रों में मिलकर वायु में तिर रही थी।

बारात में दो नाचने वाली जयपुर से, तीन लखनऊ से और दो मुजरा करने वाली गायिकाएँ बनारस से आयी थीं। दो शामियाने लगे थे। एक साधारण लोगों के लिए, दूसरा खास-खास लोगों, रईसों, ठिकानेदारों और ताल्लुकेदारों के लिए। दोनों में तीसरे पहर और रात में नाच-गानों की धूम रहती। रोशनी के लिए दोनों शामियानों मे बढ़िया फानूस लटकाये गये थे। बांस की बल्लियों से शमादान बँधे थे। अँधेरे को अमराई के कोनों में भी जगह न थी।

बारात तीन दिन तक ठहरी। रणवीर सिंह ने स्वागत-सत्कार में रत्ती-भर भी चूक न होने दी। कानपुर से विलायती शराबें आयीं। बढ़िया बकरे खूब देख-परख कर कटवाये गये। फिर भी दूसरे दिन एक बखेड़ा खड़ा हो गया। वर के बहनोई ने फरमायश की, "आज शाम सूअर का गोश्त बने।" मुंशी खूबचन्द यह संदेशा लेकर रणवीर सिंह के पास गये। कुछ देर तक वह सोचते रहे। फिर बोले, "मुंशीजी, कुंवरजू को बुला लाओ।"

"जो हुकुम," कहकर मुंशीजी चले गये और थोड़ी देर मे कुंवरजू आ गये।

रणवीर सिंह सारा किस्सा बताने के बाद बोले, "अब बताइये, क्या रास्ता है?"

"आप घबरायें नहीं, भैया साहब," कुंवरजू ने बड़ी मस्ती के साथ हँसकर उत्तर दिया। "मैं जाकर समझा दूंगा।" थोड़ा रुककर, "है वह लड़का बड़ा अड़ियल। लेकिन अड़ियल घोड़े को कैसे काबू किया जाय, हम जानते हैं।"

कुंवरजू जनवासे गये और सीधे शीशमहल पहुँचे।

"आइये, काकाजू," लड़के के बहनोई ने नमस्कार के लिए हाथ

जोड़ते हुए उठकर उन्हें पलंग पर बैठाया।

"हम इधर आ नहीं पाते," बैठते हुए कुंवरजू ने कहा, "हम ठहरे दोनों तरफ के।"

इस पर दोनों हँसने लगे।

कुंवरजू ने उसे कानपुर तरफ के रीति-रिवाज समझाये। "यहाँ सूअर का गोश्त नीच जाति वाले खाते हैं," उन्होंने बताया। बात उसकी समझ में आ गयी। उसने हँसते हुए कहा, "तो काकाजू, ये साले उनसे भी गये-बीते।"

दोनों हँसने लगे और लड़के के बहनोई की फरमायश आयी-गयी हो गयी।

चौथे दिन बारात विदा हुई, खूब धूमधाम से।

24

रणवीर सिंह की बेटी की शादी के बाद जेठ-असाढ़ तक घर-घर नारी-कण्ठ कन्यादान का संदेशा देते रहे—

काँपत गड़ुवा, काँपे गंगा-जल,
काँपें कुसा के डोम,
तुम कस काँपो, गहुरे बप्पा मोरे,
आयी धरम की बेला।

इन विवाहों में सुखुवा धोबी के बेटे की शादी अपने ढँग की खास थी। ननकौना धोबी के न रह जाने पर सुखुवा ने एक लुगाई होते हुए भी ननकौना की दुलहिन को रख लिया था। उसकी पहली बीवी के लड़के की शादी थी। रात की ज्योनार के बाद सवेरे बारात की निकासी थी।

शाम को पंचायत बैठी यह तय करने के लिए कि सुखुवा को भाइयों में किस तरह मिलाया जाय। पंचों के सामने यह मसला पेश ही हुआ था कि सुखुवा की पहली बीवी पंचों के बीच आकर बोलने लगी, "पंचो, तुम

माई-बाप हो, मेरी भी फरियाद सुनो।"

"तुझको क्या कहना है ?" एक पंच ने पूछा।

"मैं पूछती हूँ पंचो, क्या मैं लूली-लँगरी हूँ ? क्या मैं बाँझ हूँ ? ये दो बच्चे किसकी कोख के हैं ? तो बताओ पंचो, या मरदुआ को ऐसी खजुरी उठी कि एक और ले आया !"

सुखुवा यह सुनते ही उठ खड़ा हुआ और बोलने लगा, "पंचो, बताओ, मैंने क्या बेजा किया ? कोई नयी रीत तो की नहीं। सनातन से चला आया है। फिर, क्या वह काम नहीं करती ? रोज साथ-साथ घाट जाती है। इसको बड़ी दीदी, बड़ी दीदी कहती, जोबान घिसती है···।"

"काम करती है। मैं कुछ बैठी-बैठी सुपारी फोरती हूँ।" सुखुवा की पहली बीवी ने बीच ही में टोका। फिर दाहिना हाथ फैलाकर झाड़ बतायी, "बार सपेद होइ चले औ' चला नयी मेहरारू लाने।"

"पंचो, अब ये हराम···" अचानक वह रुक गया और हाथ जोड़कर बोला, "बदकलामी के लिए पंच माफी दें।" फिर कहा, "कहतूत है—घोड़ा औ' मरद कभी बूढ़ा नहीं होता। तो पंचो, पूछो इससे, कोई सिकाइत है इसको। मैं तीन रखूं औ' तीनों खुस रहें, तो ?"

सुखुवा का आशय समझकर नौजवान थोड़ा ओठ दबाकर हँसे, लेकिन एक बूढ़े ने डाँटा, "अच्छा, जाना है बड़ा मरद। बेफजूल की बात न कर !"

"पंचों के जूता मोरे मूँड़ पर। गुस्ताखी माफ हो।" कहकर सुखुवा बैठ गया।

उसी बूढ़े ने कहा, "पै दूसरी मेहरारू लाने का जब चलन है, तब सुखुवा से कोई गलती नहीं भई। खाना-कपरा दोनों पाती हैं। थोड़ा रुककर, "पंचो, सोचो, इसे भाइयों में कैसे लिया जाय ?"

थोडी देर तक सब सोचते रहे। इसके बाद एक बूढ़े ने कहा, "पंचो, एक पेंच की बात है। ननकौना की मेहरारू जब आयी, एक बच्चा साथ लायी। आखिर, अब वह बच्चा सुखुवा का है। तो बिरादरी में लेते बखत दोहरा दण्ड दिया जाय।"

"हाँ, गरीब काका ने यह ठीक कहा," एक जवान बोला।

दण्ड क्या दिया जाय, इसको लेकर जो बहस चली, वह पूरे चार घण्टे तक होती रही। चिन्तित होकर सुखुवा ने खड़े होकर हाथ जोड़े और बोला, "पंचो, बरा-भातु सब माटी हो रहा है। तीन पहर रात बीत गयी।"

"चुप, बड़ा आया बरा-भात वाला," गरीबदास ने डाँटा। "बरा-भात पचाइत से बड़ा नही।"

सुखुवा चुपचाप बैठ गया।

अंत में तय हुआ कि सुखुवा एक बोतल दारू और कच्ची ननकौना की दुलहिन से शादी के लिए दे और एक बोतल उसके लड़के को बिरादरी में मिलाने के लिए।

"अब और कोई बात तो नहीं, पंचो ?" एक बूढ़े ने पूछा।

"हाँ, मामला टेढा है। झींगुर के लड़के झूरी ने पासिन रख ली है। उसको बिरादरी मे कैसे लें ?" कोने से एक प्रश्न उभरा।

पूरी पंचायत में सन्नाटा छा गया। जाति के भीतर की बात और। यह मामला बेजात का था।

कुछ देर बाद एक ने कहा, "ऐसी कोई नजीर जँवार में तो है नहीं।"

झूरी की स्त्री थोड़ी दूर पर खड़ी थी। उसने हाथ जोड़कर प्रश्न उठाया, "पंचो, अब मेरे उसका एक लरका भी है। बताओ, वह किस जात मे जाय ?"

"यह सब पहले काहे नहीं सोचा ?" गरीबदास ने डाँटा।

"काका, तुम बूढ़े, परवानिख हो। मुँहजोरी माफ करो। कहतूत है—भूख न जानै अन्न-कुअन्न, प्रेम न जानै जात-कुजात।"

बात उसने ऐसी कही थी जिसका जवाब किसी के पास न था। फिर भी मसला टेढा था।

गरीबदास ने कहा, "पंचो, यह मामला पेंच का है। बियाह के बाद लौटने पर सोचा जाये।"

पंच राजी हो गये।

"तो पंचो, तब तक मैं जात से बाहेर ?" झूरी ने पूछा।

"तब नहीं पूछा, जब यह करम किया।" गरीबदास ने डाँटा।

झूरी चुप रह गया।

पंचायत समाप्त हो गयी और सब भोजन करने के लिए सुखवा के कच्चे मकान के सामने के अहाते में बैठने लगे। उधर चिड़ियाँ चहकने लगी थीं। सवेरा होने को था।

खाते-पीते और तैयारी करते-करते दिन के नौ बज गये और जेठ का सूर्य सिर पर तपने लगा। अब एक सजे हुए गधे पर नौ साल का दूल्हा बैठा। उसके पीछे कोई दस गधों पर कुछ बाराती। नौजवान बारातियों की एक टोली हुड़क लिए वर के आगे-आगे चली। यह मंडली हुड़क बजाती हुई, चिलचिलाती धूप में गा रही थी—सैयाँ तो गवनवाँ लीन्हे जायँ बदरी माँ।

गधों का यह जुलूस देखने के लिए लडके तो इकट्ठे थे ही, पर्दानशीन औरतें भी किवाड़ों की ओट से यह बारात देख रही थीं।

25

रणवीर सिंह मुकदमे में ऐसे फँसे रहे, साथ ही चिन्तित भी इतने रहे कि चार-पाँच महीने तक जुल्फिया की सुध न ले सके। बेटी की शादी के कुछ दिन बाद वह शाम को गये। साथ में बिंदा सिपाही भी था। दरवाजा अन्दर से बंद था। कुछ मिनट तक खटखटाने के बाद एक औरत ने दरवाजा खोला। रणवीर सिंह बेधड़क अन्दर घुसे।

"मालिक, किससे मिलना है?" उस औरत ने पूछा।

रणवीर सिंह ने उपेक्षा के साथ उसे देखा और सीढ़ियों की ओर मुड़े।

"हजूर, वहाँ खान साहेब हैं। आप न जाइये।"

"कौन खान साहब?" रणवीर सिंह के मुंह से निकल गया। सहसा

उन्हें संदेह हुआ, जुल्फ़िया ने मकान छोड़ दिया क्या? फिर बोले, "हम जुल्फ़िया के पास जा रहे हैं।"

"मैं खबर कर दूं। आप हैं कौन?"

अब रणवीर सिंह समझ गये कि गलत जगह नहीं आ गये। वह बिना कुछ बोले खट-खट सीढ़ियाँ चढ़कर बरामदे में पहुँचे और जुल्फ़िया के कमरे के ठीक सामने जा खड़े हुए। उन्होंने देखा, चालीस-पैंतालीस साल का एक व्यक्ति मसनद के सहारे अधलेटा है, जुल्फ़िया उसकी बगल में बैठी है। उसके हाथ में प्याला है जिसे वह उस व्यक्ति के ओठों से लगाये है।

"कौन हो तुम?" वह व्यक्ति नकसुर बोला।

रणवीर सिंह आगबबूला हो गये। वह कर्कश स्वर में चीखते-से बोले, "जुल्फ़िया!"

"जुल्फ़िया के बच्चे, तू है कौन?" उस व्यक्ति ने बायाँ हाथ ऊपर को उठाते हुए पूछा।

"अभी बताता हूँ, मैं कौन हूँ?" रणवीर सिंह की आँखों से अंगारे निकल रहे थे।

वह व्यक्ति उठ बैठा और खड़े होते हुए आवाज़ लगायी, "जुम्मन, गर्दनिया देकर बाहर करो इस हरामजादे को।" और दो कदम आगे बढ़ा। जुल्फ़िया ने उसका हाथ पकड़ लिया।

रणवीर सिंह तेज़ी से कमरे में घुसने वाले थे कि किसी ने पीछे से उनका दाहिना बाज़ू मजबूती से पकड़ा और बाहर की तरफ़ खींचा। रणवीर सिंह ने उसका हाथ झटक दिया।

"ठाकुर साहब, यहाँ हंगामा क्यों कर रहे हैं?" जुल्फ़िया एक कदम आगे बढ़कर बोली, "चले जाइये!"

रणवीर सिंह ने दाँत पीसते हुए 'हूँ' किया।

तब तक जुम्मन ने रणवीर सिंह की कमर पकड़ ली थी और उन्हें बाहर की तरफ़ खींच रहा था।

बिंदा भौंचक था। वह आँखें फाड़े यह सब देख रहा था।

"छोड़ दे जुम्मन। तशरीफ ले जाइये ठाकुर साहब, इज्ज़त के साथ।"

जुल्फ़िया के स्वर में तिरस्कार-भरी दृढ़ता थी। "अब मैं आपकी नहीं। आप मेरी दूध पीती बच्ची को मार डालना चाहते थे। मैं बिल्ली के बच्चे की तरह उसे बचाती रही। छै महीने से आपने खबर तक न ली, मैं जिन्दा हूँ या मर गयी। चले जाइये!"

पास के कमरे की खिड़की से जुल्फ़िया की बेटी शीरी सहमी हुई यह सब देख रही थी।

सब कुछ रणवीर की समझ में आ गया। उन्होंने ओठ काटते हुए पीठ फेरी और धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतरकर नीचे चले गये। मन-ही-मन कह रहे थे, गाँव होता, तो देख लेता। सड़क पर पहुँचने पर बिंदा को साथ देखकर पानी-पानी हो गये। "बिंदा, किसी से कुछ न कहना। इन सालों को मजा चखाऊँगा··· किसी से न कहना, अपनी मेहरारू से भी नहीं।"

"जो हुकुम सरकार।" बिंदा अभ्यास के अनुसार बोल गया, लेकिन घर जाने पर घरवाली को बताया। यह ताकीद जरूर कर दी, "भूलकर भी किसी से न कहना। वह सिंघ हुवाँ सियार बन गया, पै हियाँ हम सब की खातिन शेर है।"

"थी कौन?" घरवाली ने पूछा।

"हम भला कैसे जानें।"

उधर जुल्फ़िया खिलखिलायी, रणवीर को उलटे पाँव जाते देख। वह व्यक्ति ठहाका मारकर हँसा था, जब रणवीर सीढ़ियाँ उतर रहे थे और मस्ती के साथ कहा था, "देहाती ठाकुर, आया था जुल्फ़िया से मिलने।" और जुल्फ़िया की कमर पकड़कर उसे अपने सीने से लगाते हुए बोला था, "कोई हस्ती नहीं जो तुमको छीन सके। ता कयामत रहेंगे हम दोनों।"

जुल्फ़िया को अपनी बेटी की चिन्ता थी ही। साथ ही खान साहब यानी फ़ीरोज़ खाँ रणवीर से बड़े गाहक भी साबित हुए थे। वह थे चमड़े के बड़े व्यापारी। रामनारायण के बाजार में उनका कारखाना था। उन्होंने पूरे तीन हज़ार महीने देने का वादा किया था और दो-चार दिन में इस मकान से हटाकर एक बड़े, शानदार मकान में ले जाने वाले थे। उसकी पुताई रंग-रोगन हो रहा था। जुल्फ़िया ने मन-ही-मन सोचा था, शीरीं

कुछ साल में सयानी हो जायेगी, तब खान साहब से अच्छी रकम वसूल करूँगी।

अपमान से बुरी तरह से झकझोरे रणवीर सिंह परेड वाले अपने मकान पहुँचे और धम-से पलँग पर बैठ गये। मन में तूफान उठा था। जुल्फ़िया आखिर है तो रंडी, रणवीर ने दाँतों से अपना निचला ओंठ काटते हुए सोचा। रानी की तरह रखते थे, फिर भी बेवफा निकली। तभी उन्हें किशनगढ़ की दलवीर वाली घटना याद आ गयी। 'जब बप्पा साहब की नहीं हुई, उनकी आँखों में धूल झोंकी, तब हमारी ही कैसे हो सकती थी? रंडी तो पैसे की यार होती है।' रणवीर ने मन-ही-मन कहा।

रणवीर जब सीढ़ियाँ उतर रहे थे, जुल्फ़िया खिलखिलाकर हँसी थी। जुल्फ़िया की हँसी इस समय भी उनके कानों में गूँजने-सी लगी। इस रंडी को सबक सिखाना होगा! रणवीर ने दाँत पीसते हुए निश्चय-सा किया।

तभी फीरोज खाँ की सूरत उनके मन के पर्दे पर उतर आयी। उनकी गालियाँ, ठहाका मारकर हँसना, सब कुछ जैसे इस समय भी हो रहा हो। रणवीर क्षोभ-भरे क्रोध से काँपने लगे। 'क्या करूँ!' उन्होंने अपने आपसे पूछा।

अपमान का यह काँटा सारी रात कसकता रहा। रणवीर बार-बार अपने आपसे पूछते, क्या इस मुसट्टे का खून करा दूँ? किसे साधूँ? किससे सलाह करूँ? वह सूत की उलझी लड़ जैसे इन प्रश्नों को सुलझाने की जितनी कोशिश करते, वे उतने ही उलझते जाते। अभी-अभी मुकदमे की आग से जैसे-तैसे बच निकला हूँ। क्या इस होली में कूदूँ? वह अपने-आपसे पूछते। ठाकुर होकर अपमान को पी जाऊँ? उनका मन धिक्कारता। बदला लूँगा, नतीजा कुछ भी क्यों न हो, रणवीर सिंह ने संकल्प किया।

रणवीर सिंह का संकल्प सुनते ही धृतराष्ट्र को भीम का वह संकल्प याद आ गया जो उसने दुर्योधन की सभा में किया था। वह जानने को वह उत्सुक हो उठे कि रणवीर सिंह ने फीरोज खाँ से अपने अपमान का बदला किस प्रकार लिया।

संजय बोले : राजन् यह कथा हम यथासमय सुनायेंगे। इस समय हम आपको यह बता दें कि कुछ काल के पश्चात् जर्मनी और ब्रिटेन में युद्ध छिड़ गया जो प्रथम विश्व युद्ध के नाम से जाना गया। इस युद्ध में रणवीर सिंह ने धन-जन से अंग्रेजों की सहायता की। उनकी गिनती बड़े खैरख्वाहों में होने लगी।

इस महायुद्ध के बाद जो भारतीय सैनिक स्वदेश लौटे, वे इन्फ्लुएंजा नाम की महामारी अपने साथ लाये जिससे लाखों घरों में कोई दीया जलाने को न बचा।

महात्मा गांधी ने इस समर में अंग्रेजों की सहायता की थी, किन्तु अंग्रेज अपने वादे से मुकर गये। भारत में दमन-चक्र भी जोरों से चला। फलत., महात्मा गांधी ने कांग्रेस के पहले जन-आन्दोलन, असहयोग का सूत्रपात किया।

तो इस पृष्ठभूमि में सुनिये जमींदार और गांव वालों की प्रस्तुति पर्व की कथा।

प्रस्तुति पर्व

रणवीर सिंह कानपुर से लौटने के बाद से इसी उधेड़-बुन में थे, कैसे ज़मींदारी का प्रबन्ध चुस्त किया जाय। कलक्टर ने कहा था, लड़ाई में सरकार बहादुर की जीत की खुशी में दी गयी आपकी पार्टी शानदार रही। कमिश्नर भी उसमें आये। आप सरकार के पुराने वफादार हैं। लड़ाई मे मदद की। आपको रायबहादुर का खिताब मिला। अब आप ज़मींदारी का प्रबन्ध चुस्त कीजिये।

चुस्त तो करना ही पड़ेगा, बैठक में आरामकुर्सी पर लेटे रणवीर सिंह ने सोचा। यहाँ की और बनारस की ज़मींदारी तो थी ही, अब दलवीर का हिस्सा भी आ गया।

दलवीर की याद आते ही रणवीर सिंह को बनारस के उन ज्योतिषी की बात याद आयी जिन्होंने उनके बेटे की जन्मपत्री देखी थी और कहा था, ग्रह ऐसे हैं कि बहुत जल्द कोई शुभ बात होगी। किसी शत्रु का जड़ से विनाश। उनकी बात सच निकली। लड़ाई के बाद जो महामारी आयी, दलवीर को तीन दिन में उठा ले गयी। कोई लड़की-लड़का भी नहीं। सारी ज़मींदारी हमारी। रामप्यारी ने लाख हाथ-पैर मारे, लेकिन निमुआ-नोन चाट कर रह गयी। वह किसी को दे नहीं सकती। जब तक ज़िंदा है, खा-उड़ा ले। चाहे साधुओं को खिलाये या तीर्थ करे, कितना उड़ायेगी ? लगान तो हमें वसूल करना है। मुट्ठी कस लेंगे, रह जायेगी ताकती।

फिर उन्होंने सोचा, कलक्टर कहते थे, ज़माना तेज़ी से बदल रहा है। गांधी उठ रहा है। अभी कांग्रेस का असर शहरों में है। आगे चलकर देहातों में भी कांग्रेस पैर पसारेगी। यह सरकार के लिए और आप ज़मींदारों के लिए भी खतरा है। इसे रोकना होगा।

कांग्रेस, रणवीर ने मन-ही-मन कहा, यहाँ कौन है कांग्रेस का नाम

लेने वाला? मुरली मुकुल। अवारा कुत्ते की तरह दर-दर भटकता रहता है—कभी तरवल, कभी मरसौला, कहीं सुन आया लिच्चर, गांधी के गुण बखानने लगा। गांधी महात्मा तोप के आगे खड़े किये गये, तोप नहीं चली; जेल में बंद किये गये, लेकिन बाहर सड़क पर टहलते दिखे। कौन उसकी बातों पर ध्यान देता है? ले-दे कर रामज़ोर उसका साथी है, ढोल का साथी डंडा।

परन्तु अचानक उनके धर्मभीरु मन ने टोका, गांधी महात्मा हैं। महात्मा लोग क्या नहीं कर सकते? संत-महात्माओं का गुण-गान वेद-पुराण करते हैं। फिर शंका उठी, लेकिन गांधी महात्मा तो सरकार के खिलाफ़ हैं। बगावत करने को कहते हैं। अब उन्होंने सोचा, सन् सत्तावन में नाना साहब ने बगावत की थी। क्या हुआ? अंग्रेज बड़ा प्रतापी है। उसके राज्य में सूरज नहीं डूबता। पिछली लड़ाई में जर्मनी का कचूमर निकाल दिया। तभी उन्हें लड़ाई के दिनों की याद आयी। सरकार को कोई दो सौ जवान दिये, फ़ौज के लिए, अपनी ज़मींदारी से। पचास हज़ार चंदा इकट्ठा किया। उसी का फल है रायबहादुरी।

ऐसा सोचते-सोचते रणवीर घूम कर उसी बिंदु पर आ गये, ज़मींदारी का प्रबन्ध चुस्त करना होगा। किस तरह चुस्त करें, बहुत सोचने पर भी यह उनकी समझ में न आया।

बिरादरी में जो ज्यादा सरकस थे, रणवीर ने सोचा, उनको तो महामारी ले गयी। रणवीर ज़रा देर को रुके, फिर मन-ही-मन कहा, "लेकिन ये सब क्या थे? डोर दलवीर के हाथ में थी। अब जो बच रहे हैं, बैसों में ननकू, शंकर, रामज़ोर, बांभनों में मुरली सुकुल, वे उड़ते रहें कटी पतंग की तरह।"

लेकिन दुश्मन को कभी कमज़ोर न समझना चाहिए, रणवीर के मन ने टोका। "हाँ, नीति यही है, दुश्मन से सदा चौकस रहो।" मन-ही-मन उन्होंने कहा।

तभी उन्होंने सोचा, अपने हितू भी महामारी में चले गये। माधो सिंह, बरजोर सिंह, झूमर। झूमर की याद आते ही रणवीर का मन थोड़े विषाद से भर गया। उन्होंने सोचा—लूंवर, जवान लड़का न रह गया।

खेलावन चौधरी पर तो जैसे गाज गिरी। गनीमत यह रही कि झूमर अपनी निशानी छोड़ गया था, छंगा हो गया था। वह न होता, तो बेचारी रामखेलावन का वंश-नाश हो गया होता।

झूमर की याद के साथ महामारी का पूरा दृश्य रणवीर की आँखों के सामने घूम गया। उन्होंने मन-ही-मन कहा, "महामारी क्या आयी, गाँव में झाड़ू लगा गयी। किसी-किसी घर मे दीया-बत्ती करने वाला न बचा। कलिया का घर साफ हो गया। रह गए दीनानाथ भगत औ' उसकी दुलहिन। चमरौड़ी में बीसों घर सूने हो गये।" चमरौड़ी की याद आते ही उन्हें मुकदमे की याद आ गयी। दलवीर की शह पर न कुछ नथिया थाने गया। रातों की नीद हराम हो गयी थी मुक़दमे में। नथिया चमारों का चौधरी था। सब उसके कहे पर चलते थे। नथिया भी चला गया। रह गया उसका अनाथ लड़का, चैतुवा।

रणवीर सिंह के सोचने का सिलसिला टूट गया मुंशी खूबचन्द के आ जाने से। उनसे रणवीर सिंह ज़मींदारी के प्रबन्ध की बातें करने लगे।

दूसरे दिन सवेरे रणवीर सिंह बारहदरी के सामने वाले आँगन में आरामकुर्सी पर अधलेटे फ़र्शी हुक्का पी रहे थे। बिंदा सिपाही उनके पीछे थोड़ी दूर पर खड़ा था और मुंशी खूबचन्द दाहिनी ओर थोड़ी दूर पर।

पिछली शाम को ही रणवीर ने मुंशी खूबचन्द से कहा था, कल सवेरे ननकू, शंकर, रामजोर और मुरलीधर को बुलवाओ और उन्होने पुराना पाठ दुहरा दिया था, 'जो हुकुम सरकार'। आज रणवीर जिस प्रकार बैठे थे, उसे देखकर मुंशी जी को शंकर वाली घटना याद आ गयी। सोचने लगे, क्या फिर कुछ होने जा रहा है?

सबसे पहले मुरलीधर सुकुल आये। दोनों हाथ ऊपर को उठाकर कहा, "सरकार, आसिरबाद।"

रणवीर सिंह के मुँह से बोल न फूटा, तो मुरलीधर सकपकाये। इधर-उधर देखा, कोई बेंच या कुर्सी न थी। वह जाकर मुंशी खूबचन्द की बगल में खिसयाने-से खड़े हो गये।

कोई दो मिनट बाद ननकू, शंकर और रामजोर साथ-साथ आये।

तीनों ने हाथ जोड़कर कहा, "भैया साहेब, जैरामजी," लेकिन रणवीरसिंह मस्ती से फर्शी हुक्का पीते रहे। वे तीनों भी मुरलीधर के पास जा खड़े हुए। तीनों के मन आशंका से भर गये।

रणवीर सिंह एक मिनट तक हुक्का गुड़गुड़ाते रहे। फिर नली को आरामकुर्सी के हत्थे पर टिका दिया, उड़ती नजर चारों पर डाली और ठकुरी रोब के साथ बोले, "कहो मुरली महराज, गन्धी बाबा के क्या हाल हैं?"

मुरलीधर अचकचा गये और कुछ न बोलकर रणवीर सिंह का मुँह ताकने लगे।

"अरे, बाका फोरो। तुम तो दुनिया की खबर रखते हो।" रणवीर ने व्यंग्य-भरे स्वर में कहा।

"अनदाता, भला मैं!" मुरलीधर इतना ही बोल पाये।

"रामजोर, तुम्हारा बाप जोरावर किसुनगढ़ की गद्दी चाहता था, तुम पूरे देश पर राज करोगे?" रणवीर सिंह ने हँसते हुए पूछा।

रामजोर की समझ में न आया, क्या जवाब दे। उसने एक बार रणवीर सिंह को देखा, फिर ननकू और शंकर को और गर्दन झुका ली।

"अरे, मुँह में दही काहे जम गया? नीम के पेड़ पर चढ़ के कपास निकालते हो। कहते हो, गन्धी महात्मा के परताप से नीम में कपास फूटी। अब चुप क्यों?"

कुछ हिम्मत कर रामजोर ने उत्तर दिया, "बप्पा की बात भैया साहेब, बप्पा के साथ गयी।" फिर थोड़ा ननकू और शंकर की ओर देखा और रणवीर सिंह की ओर रुख कर बोला, "मैं तो सरकार का ताबेदार।"

रणवीर सिंह थोड़ी देर तक खामोश रहे, फिर गर्दन हिलाते हुए चेतावनी-सी दी, "मुरली महराज, बाँभन हो, इसलिए चुप हैं। बहुत कूद रहे थे छोटकऊ की शह पर। जाओ, ऊपरहिती करो, चमार-पासियों के यहाँ। राज-काज झोली टाँगने वालों का काम नहीं।"

इसके बाद दाहिना हाथ आगे को बढ़ाकर कुछ इस तरह बोले जैसे चुनौती दे रहे हों, "किसकी छाती में बाल है जो अंग्रेज बहादुर का

मुकाबला करे ? जर्मनी आया फौज-फाटा लेकर, धुर्रे उड़ गये। यहाँ किसी ने गन्धी का या कांग्रेस का नाम लिया, तो नीम के पेड़ से बंधवा के हंटर से खाल खिंचवा लेंगे।" और नाटकीय ढंग से टहलते हुए जनानखाने की ओर चल पड़े। सब ठगे-से उनको ताकते रह गये।

कुछ देर बाद मुंशी खूबचन्द ने समझाया, "जाओ, अपना-अपना काम देखो सब जने। दुनिया के परपंच में क्या धरा है।"

मुरलीधर मुंह लटकाये बाहर निकले। उनके कानों में मुंशी खूबचंद के शब्द गूंज रहे थे, दुनिया के परपंच में क्या धरा है।

ननकू, शंकर और रामजोर साथ-साथ बाहर आ रहे थे। ननकू और शंकर ने कनखियों से रामजोर को देखा और मुंह बिदकाया। रामजोर के मन में रणवीर सिंह के ये शब्द मँडरा रहे थे, 'यहाँ किसी ने गन्धी का या कांग्रेस का नाम लिया, तो नीम के पेड़ से बंधवा के हंटर से खाल खिंचवा लेंगे।' और अचानक उसे शंकर वाली घटना याद आ गयी।

2

शीरी सोलह साल की हो गयी थी। मिशन गर्ल्स स्कूल से इसी साल हाईस्कूल की परीक्षा दी थी। पास होना तय था। प्रतीक्षा डिवीजन की थी। उसे आशा थी, फर्स्ट डिवीजन पायेगी। घर में उसे गाना सिखाने के लिए एक उस्ताद आते थे। उर्दू भी उसने घर में मौलवी से बाकायदा पढ़ी थी। जब दसवें दर्जे में पहुँची थी, जौक और सौदा की कौन कहे, मीर और गालिब की भी उसे अच्छी जानकारी हासिल हो गयी थी। हाई-स्कूल में ड्राइंग और संगीत उसके विषयों में थे। हलके और पक्के, दोनों तरह के गाने मजे में गाती। संगीत की अध्यापिका उससे बहुत खुश थी। उर्दू की अध्यापिका भी उसकी सराहना करती। हाईस्कूल की हेड मिस्ट्रेस मदर मेरी की भी उस पर कृपा रहती।

शीरी जब पन्द्रह साल की थी, खान साहब ने तभी नथ उतराई के

बारे में जुल्फ़िया से इशारों में पूछा था, "कब रस्म अदा करोगी?" लड़ाई के कारण कारोबार में उनकी चाँदी थी। महीने में तीन हज़ार तो हाथ पर रख देते। इसके अलावा रोज ही दस-बीस के फल, मिठाइयाँ लाते। हर हफ़्ते बजाजे ले जाते और मनपसन्द कपड़े खरिदवा देते। जुल्फ़िया पहले टाल गयी थी, लेकिन जब खान साहब सिर हो गये, तो उसने कहा, "देखिये खाँ साहब, शीरी से निकाह करना होगा!"

"क्या तुम से शादी की थी उस उजड्ड ने?" खान साहब ने हँसते हुए पूछा।

"हिन्दुओं में तो अपनी जात से बाहर शादी होती नहीं।"

"मुँह माँगी रकम देंगे," खान साहब ने लालच दिखाया।

"अशर्फ़ियों से तोल दीजिये, तब भी नहीं।" जुल्फ़िया ने टका-सा जवाब दिया।

बात आयी-गयी हो गयी। खान साहब का आना-जाना बदस्तूर रहा। उनके व्यवहार में ज़रा भी फ़र्क न पड़ा। लेकिन शीरी को देखकर खान साहब का जी ललचाता। वह उसे शीरीनी कहकर बुलाते।

इस साल मार्च में खान साहब ने फिर बात चलाई। इस बार वह निकाह के लिए राजी थे। जुल्फ़िया ने ब्योरे की बातें की। वह अपना और बेटी का पूरा प्रबन्ध करना चाहती थी।

खान साहब ने कहा, "एक मकान, मान लो यही, खरीद कर तुमको दे देंगे। तुम्हारा वजीफ़ा बँधा रहेगा।"

"और शीरी को?"

"शीरीनी तो हमारी बेगम बनेगी। उसकी फ़िक्र न करो।"

"फिर भी। मेहर तो तय कर डालिये।"

थोड़ा सोचकर खान साहब ने कहा, "जो कहो।"

अब जुल्फ़िया सोचने लगी। कुछ देर बाद बोली, "तो इतना ही बड़ा एक महल और एक लाख मेहर लिख दीजिये।"

"मंजूर।" खान साहब ने फ्रेंचकट दाढ़ी पर हाथ फेरा।

"अभी तो इम्तिहान दे रही है।"

"ऐसी जल्दी क्या, मई-जून तक।"

"पक्का।"

परीक्षा के बाद शीरीं अपने क्लास की सहेलियों के साथ स्कूल की अध्यापिकाओं की देख-रेख में दिल्ली, आगरा, फतेहपुर सीकरी देखने गयी। वहाँ से लौटकर जब आयी, तो एक दिन जुल्फ़िया ने सब कुछ शीरीं को बताया।

"अम्मी, तुम कहती क्या हो!" शीरीं ने अचरज-भरे तपाक के साथ कहा, "उस बुड्ढ़े से मेरा निकाह!"

"जुल्फ़िया उसका मुँह ताकने लगी। कुछ देर बाद बोली, "तू पागल है शीरी। बहुत बड़े आदमी हैं। राज करेगी।"

"ऐसे राज पर मैं थूकती हूँ।"

"तू मुझसे मुँहजोरी करती है! तुझे शर्म नही आती?"

"मेरी जिन्दगी से खेलने का तुमको कोई हक नही अम्मी, कान खोल-कर सुन लो।" शीरी तैश के साथ बोली। "उसका है कुछ एखलाक? मेरा हाथ माँगता है, और इधर तुम्हारे साथ···" इतना कहकर शीरीं कमरे से तेज़ी से निकलकर अपने कमरे में चली गयी। जुल्फ़िया आँखें फाड़े देखती रह गयी। कुछ देर बाद उसके मुँह से निकला, "वाह रे ज़माने!"

जुल्फ़िया कुछ देर तक सन्न बैठी रही, फिर उठी और शीरीं के कमरे में जाकर समझाने लगी, "देख शीरी, मैं तेरी माँ हूँ, दुश्मन नही, और मैंने निकाह तय किया है। तू बरी-ब्याही बन के रहेगी।"

"मुझे नहीं करनी ऐसी शादी। इससे क्वाँरी भली।"

अब जुल्फ़िया को गुस्सा आ गया। वह आँखें तरेरकर बोली, "तो एक बात समझ ले! मैं जुल्फ़िया हूँ अपने नाम की। उस ठाकुर को ठेंगे पर मारा था। तू यहाँ न रह सकेगी।" थोड़ा रुककर चेताया, "एक बात और जान ले। तू किसकी बेटी है, यह जानने पर तुझे कोई न अपनायेगा। तेरी हालत उस तोते जैसी होगी जो आजाद होने के लिए पिंजरा छोड़ता है, मगर बाहर, दूसरे तोते ही चोंचें मार-मार के उसे खत्म कर देते हैं।" और शीरी की ओर एकटक ताकने लगी।

शीरी कुछ क्षण तक सोचती रही, फिर बोली, "अम्मी, इस गलाज़त

से मैं निकलूंगी। उस बूढ़े खूसट को मुँह न लगाऊँगी। बहते धारे में कूद पड़ूँगी। ताकत होगी, तो पार कर लूँगी, वरना डूब जाऊँगी।"

ज़ुल्फ़िया के लिए ये शब्द बिलकुल अजनबी थे। वह शीरी का मुँह ताकती रह गयी।

3

महावीर सिंह को लखनऊ में कालिवन्स कालेज में भर्ती करा दिया गया था। गोमती के किनारे एक छोटी कोठी किराये पर ली गयी थी। उसमें महावीर सिंह और रणवीर सिंह के ममेरे भाई का बेटा समरजीत सिंह रहते थे। एक महराजिन खाना बनाने को थी। दो नौकर थे।

रणवीर सिंह ने महावीर को लखनऊ में पढ़ाने के बारे में जब सुभद्रा देवी से सलाह की, उन्होंने आनाकानी की। "इतना छोटा लड़का परदेस में रहे। आप तो कलक्टर की हर बात को पत्थर की लकीर मान लेते हैं। हम लाल साहब को यहीं पढ़ायेंगे किसी मोलबी से।" उन्होंने कहा।

"बात कलक्टर साहब के कहने की नहीं है," रणवीर सिंह ने समझाया। "हमें भी लगता है, अब हिन्दी, उर्दू से काम न चलेगा। अंग्रेज़ी आनी चाहिए। अफ़सरों से अंग्रेज़ी में बोलने का और असर होता है। वह तअल्लुकदारों का कालेज है। लाल साहब वहाँ अदब-कायदा सीख जायेंगे। कहाँ किसुनगढ़, कहाँ लखनऊ। कम्पू भी कुछ नहीं लखनऊ के आगे।"

आखिर समझाने-बुझाने पर सुभद्रा देवी राजी हो गयीं।

पहली गर्मी की छुट्टियों में ही महावीर सिंह और समरजीत सिंह किशनगढ़ आये, तो उनकी वेश-भूषा और चाल में नयापन था। दोनों खाकी हाफ पैण्ट और घुटनों तक के मोजे, टखनों तक के बूट और खाकी हाफ कमीजें पहने, हैट लगाये थे। दोनों घोड़ों पर जिस प्रकार सवार थे और जिस तरह उतरे, यह देखकर रणवीर सिंह खुश हो गये। दोनों को

चढ़कर गले लगाया।

दूसरे दिन सवेरे नाश्ता करने के बाद दोनों खाकी ब्रीचेज, खाकी कमीजें और फुलबूट पहने, हैट लगाये निकले और महावीर ने रणवीर सिंह से कहा, "पापा साब, हम सैर को जायेगा।"

रणवीर सिंह 'पापा साहब' सुनकर फूले न समाये। बोलने के ढंग में ही नवीनता और तेजी थी।

फौरन दो घोड़े कसाये गये और दोनों कुशल सवारों की भाँति घोड़ों पर बैठे। एक साईस और एक खिदमतगार साथ कर दिये गये।

दोनों ने घोड़े गाँव के अन्दर से दक्खिन को जाने वाले गलियारे की ओर मोड़े। सीना ताने दोनों लड़के घोड़ों पर बैठे थे। देखने वाले ठगे-से देखते और 'साहेब सलाम' कहते।

गलियारा पार करते ही दोनों ने घोड़ों को एड़ लगायी और सरपट दौड़ाने लगे। कुछ ही देर में वे रिन्द के कगार के पास पहुँच गये। साईस और खिदमतगार ने लम्बे डग भरे, कुछ दौड़े भी, फिर भी वे पीछे रह गये।

दोनों घोड़ों से उतरकर गूलर के एक पेड़ के साये में रासें पकड़कर खड़े हो गये।

"कितना अच्छा सीन (दृश्य) है, समर!" महावीर बोला।

"हाँ, वण्डरफुल (भव्य)।" समरजीत ने उत्तर दिया।

कुछ देर घोड़ों की रासें पकड़े दोनों इधर-उधर टहलते रहे। इतने में साईस और खिदमतगार आते दिखे। उनके पास आ जाने पर महावीर ने पानी माँगा। खिदमतगार ने थर्मस से पानी उँडेलकर गिलास में दिया।

"पियोगे समर?"

"नहीं, तुम पी लो। मुझे तो भूख लग आयी है।"

महावीर हँस पड़ा। उसने पानी पिया और खिदमतगार से पूछा, "खाने को कुछ लाये हो?"

"हाँ हजूर, पाव रोटी, पोलाव।"

"तो निकालो, दो बड़े भाई साब का।"

"तुम भी कुछ लो।"

"आल राइट (अच्छा)।"

दोनों ने पाव रोटियों के बीच में पोलाव रखकर सैण्डविच बनाया और खाने लगे। पानी पीने के बाद समरजीत बोला, "अब लौटा जाय, धूप तेज हो रही है।"

"चलो," महावीर ने कहा और दोनों उछलकर अपने-अपने घोड़ों पर सवार हो गये।

इस बार वे घोड़ों को आहिस्ते-आहिस्ते चला रहे थे, ढाक, सेमल और दूसरे पेड़ों और झाड़ियों से भरे जंगल की पगडण्डी से होकर।

तीसरे पहर महावीर और समरजीत सुभद्रा देवी के कमरे में बैठे खरबूजे खा रहे थे और लखनऊ के किस्से सुना रहे थे।

"अम्मा साहेब, बड़े दिन में बड़ा मजा आया," महावीर बोला।

"क्या?" खरबूजे की फांक काटकर छीलते हुए सुभद्रा देवी ने पूछा।

"मास्टर सा'ब हम सबको चर्च ले गये...।"

"चर्च क्या?" सुभद्रा देवी ने पूछा।

महावीर चर्च का हिन्दी नाम सोचने लगा।

"फूफी साहेब, वही जहां ईसाई पादरी रहते हैं।" समरजीत ने बताया।

"अरे हां, गिरजाघर।" महावीर बोला।

"अच्छा, तो गिरजाघर को क्या कहते हैं?" सुभद्रा देवी ने पूछा।

"चर्च," महावीर ने बताया।

"तो क्या तुम लोगों को इसाइयों के गिरजाघर पूजा कराने ले गये?" उत्सुकता के साथ थोड़ी व्यग्रता भी सुभद्रा देवी के स्वर में थी।

"नहीं, अम्मा साहेब," महावीर ने उत्तर दिया। "वहां लेक्चर सुना।"

"लेक्चर क्या?" सुभद्रा देवी पूछ बैठीं।

"अम्मा साहेब, आपको कुछ नहीं आता।" महावीर बोल पड़ा।

सुभद्रा देवी ने उसकी ओर एकटक देखा।

"अम्मा साहेब, सॉरी।"

"क्या गाली बकता है ?" सुभद्रा देवी ने आँखें तरेरकर पूछा।

"नहीं तो।" महावीर घबरा गया था। "मैं भला आपको गाली निकाल सकता हूँ।"

"तो क्या कहा अभी ?"

"मैंने कहा, सॉरी," महावीर ने बताया। "इसका मतलब हुआ, अफसोस है।"

सुभद्रा देवी नरम पड़ गयीं। "अंग्रेज़ी में इसका मतलब यही होता है ?"

"जी हाँ, फूफी साहेब," समरजीत ने बताया और समझाने लगा, "अगर हमसे कोई गलती हो जाय, तो कहते हैं सॉरी, यानी हमें अफसोस है।"

"तो क्या कह रहे थे तुम, बेटा ?"

"मैं बता रहा था, वहाँ एक आदमी ने लेक्चर दिया, याने बोला।"

"क्या ?"

"उसने बताया, दुनिया को ठीक राह बताने के लिए, रोशनी दिखाने के लिए प्रभु ईसा मसीह आये। अंग्रेज की हुकूमत के बाद हिन्दुस्तान में जगह-जगह यह रोशनी पहुँच रही है। जो कल तक अपढ़ थे, नंगे घूमते थे, अब अंग्रेज बहादुर की मेहरबानी से रोशनी पा रहे हैं।"

सुभद्रा देवी को बात का सिर-पैर समझ में न आया। वह फाँकें काटतीं और कहानी सुनती रहीं जैसे पं० रामअधार या शिवअधार से कथा सुना करती थीं।

महावीर की कहानी चल ही रही थी कि रणवीर सिंह आ गये।

"अच्छा, तो खरबूजों की दावत हो रही है !"

दोनों लड़के हँसते हुए खड़े हो गये।

"बैठो, बैठो," रणवीर सिंह बोले और पलंग पर बैठ गये। "हम कानपुर जा रहे हैं, कुछ मँगाना तो नहीं ?"

"अचानक ?" सुभद्रा देवी ने पूछा।

"कोई खास बात नहीं। सुना है, नये कलक्टर आये हैं। पुराने जा रहे हैं। सोचा, मिल आयें।"

"तो इस धूप में?"

"धूप लौटे जायेंगे। रात में पहुँचने से सवेरे मुलाकात ठीक से हो सकेगी।"

"तो लौटते बखत हमारे बाजूबंद···" सुभद्रा देवी ने मुसकुराते हुए कहा।

"ले आयेंगे।"

"पापा सा'ब, बैडमिंटन की दो चिड़ियाँ और दो रैकेट लेते आइयेगा।" महावीर सिंह ने कहा।

"ये क्या चीजें हैं बेटा?" रणवीर सिंह चकरा गये। "चिड़िया क्या करोगे?"

महावीर और समरजीत हँसने लगे।

"फूफा साहब, ये खेल की चीजें हैं, सचमुच की चिड़ियाँ नहीं।"

"ओह!" रणवीर सिंह जरा सकुचा गये अपने अज्ञान पर। "तो पर्चे में लिख दो।"

रणवीर सिंह चलने लगे, तो सुभद्रा देवी बोली, "लीजिये न, एक-दो फाँकें।"

"बच्चों को खिलाओ।"

"हमारे लिए तो आप भी···"

"अच्छा!" रणवीर सिंह हँसने लगे। महावीर और समरजीत भी हँस पड़े।

रणवीर सिंह फिर पलँग पर बैठ गये और थाल से खरबूजे की फाँक उठाकर खाने लगे।

4

शीरीं जब अपना सामान उठाने आयी थी, उसके साथ पुलिस का एक सिपाही और मिशन गर्ल्स स्कूल का एक चपरासी था। जुल्फ़िया सिपाही को देखकर डर गयी। करुण दृष्टि से शीरीं को ताकने लगी। चपरासी ने शीरीं का सूटकेस और किताबों की छोटी-सी पोटली उठायी।

"अच्छा अम्मी, कही-सुनी माफ करना।" शीरीं ने इतना ही कहा।

"शीरीं बेटी!" जुल्फ़िया के रुँधे गले से ये शब्द निकले। वह शीरीं के सामने पछाड़ खाकर गिर पड़ी और धाड़ मारकर रोने लगी।

शीरीं के मस्तिष्क में बिजली की कौंध की तरह बीते वर्ष गुजर गये। उसने डबडबाई आँखों को साड़ी के आँचल से पोंछा। मन-ही-मन कहा—नहीं, इस झूठे मोह के बन्धन में नहीं पड़ना।

"शीरीं, तू मुझे छोड़ के जा रही है," जुल्फिया रोते हुए बोली। "तुझे पाल-पोस कर बड़ा किया।...रुक जा शीरीं।...सब कुछ...तेरी मर्जी के मुताबिक होगा।"

"अम्मी, अब तीर हाथ से निकल गया," शीरीं ने ओठ चबाते हुए उत्तर दिया। "मैंने सब ऊँच-नीच सोच लिया है।" और आगे बढ़ गयी।

जुल्फ़िया फूट-फूट कर रोने लगी। नौकरानी के लाख समझाने पर भी एक कौर मुँह में न डाला।

शाम को फीरोज खाँ आये, तो सब कुछ जानकर उखड़े-उखड़े-से रहे। जुल्फ़िया ने मन का दर्द दबाकर उनका मनोरंजन करने की कोशिश की; लेकिन उनका मन उचटा रहा, कुछ इस तरह इधर-उधर भटकता रहा जैसे शीरीं वह डोर थी जिससे बँधा था। कोई एक घण्टे बाद वह उठ गये।

समय इस तरह बीत रहा था और जुल्फ़िया को लग रहा था जैसे उसका जीवन मसान की अँधेरी रात हो जिसमें अनिश्चय की हवा की साँय-साँय के सिवा कोई शब्द नहीं। वह शीरीं की खोज लेने मिशन गर्ल्स स्कूल गयी थी, लेकिन मदर मेरी ने उसे आड़े हाथों ही नहीं लिया था, बल्कि ऐसी कड़ी धमकी दी थी कि वह काँप गयी थी।

"देख," मदर मेरी ने आँखें तरेरकर रूखे स्वर में कहा था, "अगर

तेरा साया भी यहाँ दिखाई पड़ा, तो बड़े घर की हवा खानी पड़ेगी। उस चमड़े के बैपारी से भी कह देना, यह मिशन स्कूल है, अनाथालय नहीं।"

जुल्फ़िया वहाँ से लौट आयी थी और खान साहब ने जब जान लिया कि चिड़िया हाथ से निकल गयी, उनकी दिलचस्पी घटते-घटते बिलकुल ही जाती रही।

जब महीनों तक खान साहब ने जुल्फ़िया की सुध न ली, वह उनके कारखाने गयी।

खान साहब ने वहाँ जो कुछ कहा, उसे सुनकर तो जुल्फ़िया ने चाहा, धरती फट जाती और वह उसी में समा जाती।

खान साहब बोले, "देखो जुल्फ़िया, हम हैं चमड़े के बैपारी। जानवर तक की खाल पहचान लेते हैं। तुम्हारी इस झुर्रियों-भरी खाल को हम क्या करें?" और अनोखे विद्रूप के साथ हँसे।

जुल्फ़िया उठी। वह कुछ इस तरह वापस हुई जैसे घने अँधेरे में राह टटोल रही हो।

अब जुल्फ़िया खान साहब वाले मकान से हटकर मूलगंज आ गयी थी। सोचा था, गाने का धन्धा करूँगी। शुरू में लोग आते थे लेकिन अब तो जैसे टीस-भरा स्वर भी जुल्फ़िया से आँखें फेर चुका हो।

"खाला जान, गले की धौंकनी बन्द कर अब तुम हज को जाओ," एक दिन एक तीस-पैंतीस साल के गाहक ने कह दिया। "बूढ़ी बकरी के गोश्त में भी तुमसे ज्यादा गरमाहट होगी। उस पर यह गला!"

जुल्फ़िया उसका मुँह ताकती रह गयी।

आखिर मूलगंज से भी जुल्फ़िया को दुकान बढ़ानी पड़ी और वह इटावा बाज़ार चली गयी। लेकिन वहाँ भी उखड़ गयी। नयी-नयी छोकरियों के सामने कोई उसे घास न डालता।

हारकर वह ग्वालटोपी चली गयी और चवन्नीवालियों की पाँत में आ गयी।

शाम होने से पहले सस्ते साबुन से हाथ-मुँह धोने के बाद जुल्फ़िया चेहरे पर पाउडर लगाती, सिर के खिजाब लगे बालों को खूब खींचकर जूड़ा बाँधती ताकि चेहरे की झुर्रियाँ छिप जायँ, तो पड़ोस की कोठरियों

की लड़कियाँ देखकर हँसतीं और कह देतीं, "अरे, टूटी चारपाई का झोल अदवायन कसने से नहीं जाता।" जुल्फ़िया यह सुनकर रुआँसी हो जाती।

लेकिन एक दिन वह आया, जब चकले की मालकिन बोली, "जुल्फ़िया, तुम्हारी हालत उस भैंस जैसी है जो चारा तो पेट-भर खाती है, लेकिन दूध के बदले गोबर देती है।"

जुल्फ़िया उसकी ओर कुछ इस तरह ताकने लगी जैसे कोई भूखा भिखारी रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म पर पूड़िया खाते मुसाफिर को ताकता है। कुछ दिनों बाद जुल्फ़िया रसोईघर भेज दी गयी। अब वह सवेरे सबको चाय देती, दोपहर और शाम को खाना पकाती। वह अकसर गुनगुनाया करती—

"गिन-गिन के मुझे दाग़ फ़लक ने दिये, गोया,
आता था य' उस पर ज़रे-नायाब मेरा क़र्ज़!"

5

हलका जाड़ा पड़ने लगा था। मुरलीधर सुकुल ब्यालू करने के बाद हाथ धोने नाबदान तक गये और धोती के छोर से हाथ-मुँह पोंछकर आधी धोती ओढ़े ही चौके में लौटकर चूल्हे के पास पीढ़ा खिसकाकर बैठ गये और हाथ सेंकने लगे।

कौशल्या अपनी थाली परोस रही थीं। इधर कई दिन से एक बात उनके मन में घूम रही थी। सोचती, पूछूँ या न पूछूँ। थाली पर रोटियाँ रखते हुए तिरछी नज़र से मुरलीधर को देखा। वह सिर लटकाये, उदास-से बैठे ताप रहे थे। थाली उठाकर वह मुरलीधर के बगल में बैठ गयीं। अड़ते हुए बोलीं, "सुनो, एक बात पूछूँ जो सच-सच बताओ?"

"पूछो।" मुरलीधर ने मरे मन से उत्तर दिया।

कौशल्या मुरलीधर को एकटक देखने लगीं। उनकी समझ में न आ रहा था, कैसे पूछें। आखिर धीरे-धीरे बोलीं, "इधर, तुम उदास रहते

हों। क्या सोच है ?"

मुरलीधर जैसे सोते से जाग पड़े हों। वह पत्नी की ओर ताकने लगे, लेकिन बोले कुछ नहीं।

"बताओ न !" ज़ोर देकर कौशल्या ने कहा।

"क्या बतायें !" मुरलीधर आह भरते हुए बोले।

"बताओगे नहीं, तो काम कैसे चलेगा ?"

मुरलीधर असमंजस में पड़ गये, बतायें या न बतायें !

"बताओ !" कौशल्या ने मुरलीधर की बाँह पकड़कर कुछ इस प्रकार कहा जैसे कोई माँ अपने रूठे बच्चे को मना रही हो।

मुरलीधर फीकी हँसी हँसे। "बताता हूँ।"

कौशल्या उनकी ओर ताकने लगीं।

"एक साध थी," मुरलीधर बोले, "मुल भगवान की मर्ज़ी !" मुरलीधर रुक गये।

कौशल्या को इंगित कुछ-कुछ समझ मे आया, लेकिन फिर भी उन्होंने सोचा, हो सकता है, कोई और बात हो। पूछा, "क्या ?"

"साध थी, तुमको लल्लू की अम्मा कह के बुलाते। सो भगवान नहीं चाहता।"

खटका यही कौशल्या को था। मुरलीधर से सुनकर उनका मुँह लटक गया। थोड़ी देर तक चुप बैठी रहीं।

"रोटी खा लो।" मुरलीधर ने उनका दाहिना हाथ थाली की ओर बढ़ाया।

कौशल्या ने अनमने ढंग से 'हाँ' कहा। थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोलीं, "भगवान् पर किसी का ज़ोर है ? सब टोना-टोटका, मान-मानता कर ली। अब तो बस यह साध है, कि जैसे तुमने हाथ धरा था, उसी तरा माटी ठिकाने लगा दो। अहिवात लिये चली जाऊँ।" कौशल्या ने धोती के छोर से अपनी डबडबाती आँखें पोंछीं।

मुरलीधर ने उनकी पीठ सहलायी, "मन उदास न करो। खा लो।"

कौशल्या केवल दो-चार कौर खा सकीं। पानी पीकर उन्होंने थाली पीतल की एक तश्तरी से ढँककर रख दी।

वहाँ से उठकर दोनों सोने के लिए दालान में गये, तो देर तक सोचते रहे, कैसे मन बहलाया जाय और अन्त में तय हुआ कि माघी अमावस को दोनों जाकर त्रिवेणी-स्नान करें।

त्रिवेणी-स्नान के बाद मुरलीधर कौशल्या को लेकर काशी गये। वहाँ गंगा-स्नान किया और विश्वनाथजी के दर्शन कर गाँव लौटे।

अब तीर्थ-यात्रा दोनों के जीवन का अंग बन गयी। दूर जाने को पैसे न थे, लेकिन हर पूर्णमासी कानपुर जाकर गंगा-स्नान करते और शाम तक घर लौट आते।

यह क्रम एक साल तक चलता रहा। दूसरी बार माघ की अमावस्या आने पर मुरलीधर अकेले प्रयाग गये। पैसों का प्रबन्ध न कर सकने के कारण कौशल्या को न ले जा सके।

त्रिवेणी-स्नान के बाद मुरलीधर ने कई अखाड़ों में साधुओं के दर्शन किये, उपदेश सुने। उदासीन साधुओं के एक अखाड़े में मुरलीधर ने रात काटी और वहीं एक साधु से देर तक बातें करते रहे।

साधु ने बताया, उनकी मंडली चारों धाम करने निकली है। मुरलीधर का मन ललचाया और उन्होंने अपनी बात साधु से कही।

"तुम्हारे पास पैसे हैं, बच्चा?"

"ना महराज," मुरलीधर ने हाथ जोड़कर बताया। "सिरिफ एक रुपिया, कुछ पैसे हैं।"

"तब कैसे चारों धाम करोगे?"

"अपने साथ ले चलो।"

"हम तो साधु भेख में हैं। रेलवे वाले छोड़ देंगे। तुम?"

मुरलीधर सोचने लगे। थोड़ी देर बाद बोले, "तो हमको चेला बना लो, महराज।"

साधु ने मुरलीधर को सिर से पैर तक देखा। "तुम्हारे घर में कौन-कौन हैं?"

"सिरिफ घरवाली।"

"तो उसको छोड़ दोगे?"

"ना महराज," मुरलीधर ने तत्काल उत्तर दिया, "आधा गिरस्थ,

हो। क्या सोच है ?"

मुरलीधर जैसे सोते से जाग पड़े हों। वह पत्नी की ओर ताकने लगे, लेकिन बोले कुछ नहीं।

"बताओ न !" जोर देकर कौशल्या ने कहा।

"क्या बतायें !" मुरलीधर आह भरते हुए बोले।

"बताओगे नहीं, तो काम कैसे चलेगा ?"

मुरलीधर असमंजस में पड़ गये; बतायें या न बतायें !

"बताओ !" कौशल्या ने मुरलीधर की बाँह पकड़कर कुछ इस प्रकार कहा जैसे कोई माँ अपने रूठे बच्चे को मना रही हो।

मुरलीधर फीकी हँसी हँसे। "बताता हूँ।"

कौशल्या उनकी ओर ताकने लगीं।

"एक साध थी," मुरलीधर बोले, "भूल भगवान की मर्जी !" मुरलीधर रुक गये।

कौशल्या को इंगित कुछ-कुछ समझ में आया, लेकिन फिर भी उन्होंने सोचा, हो सकता है, कोई और बात हो। पूछा, "क्या ?"

"साध थी, तुमको लल्लू की अम्मा कह के बुलाते। सो भगवान नहीं चाहता।"

खटका यही कौशल्या को था। मुरलीधर से सुनकर उनका मुँह लटक गया। थोड़ी देर तक चुप बैठी रहीं।

"रोटी खा लो।" मुरलीधर ने उनका दाहिना हाथ थाली की ओर बढ़ाया।

कौशल्या ने अनमने ढंग से 'हाँ' कहा। थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोलीं, "भगवान् पर किसी का जोर है ? सब टोना-टोटका, मान-मानता कर ली। अब तो बस यह साध है, कि जैसे तुमने हाथ धरा था, उसी तरा माटी ठिकाने लगा दो। अहिवात लिये चली जाऊँ।" कौशल्या ने धोती के छोर से अपनी डबडबाती आँखें पोंछीं।

मुरलीधर ने उनकी पीठ सहलायी, "मन उदास न करो। खा लो।"

कौशल्या केवल दो-चार कौर खा सकीं। पानी पीकर उन्होंने थाली पीतल की एक तश्तरी से ढँककर रख दी।

वहाँ से उठकर दोनों सोने के लिए दालान में गये, तो देर तक सोचते रहे, कैसे मन बहलाया जाय और अन्त में तय हुआ कि माघी- अमावस को दोनों जाकर त्रिवेणी-स्नान करें।

त्रिवेणी-स्नान के बाद मुरलीधर कौशल्या को लेकर काशी गये। वहाँ गंगा-स्नान किया और विश्वनाथजी के दर्शन कर गाँव लौटे।

अब तीर्थ-यात्रा दोनों के जीवन का अंग बन गयी। दूर जाने को पैसे न थे, लेकिन हर पूर्णमासी कानपुर जाकर गंगा-स्नान करते और शाम तक घर लौट आते।

यह क्रम एक साल तक चलता रहा। दूसरी बार माघ की अमावस्या आने पर मुरलीधर अकेले प्रयाग गये। पैसों का प्रबन्ध न कर सकने के कारण कौशल्या को न ले जा सके।

त्रिवेणी-स्नान के बाद मुरलीधर ने कई अखाड़ों में साधुओं के दर्शन किये, उपदेश सुने। उदासीन साधुओं के एक अखाड़े में मुरलीधर ने रात काटी और वहीं एक साधु से देर तक बातें करते रहे।

साधु ने बताया, उनकी मंडली चारों धाम करने निकली है। मुरलीधर का मन ललचाया और उन्होंने अपनी बात साधु से कही।

"तुम्हारे पास पैसे हैं, बच्चा?"

"ना महराज," मुरलीधर ने हाथ जोड़कर बताया। "सिरिफ एक रुपिया, कुछ पैसे हैं।"

"तब कैसे चारों धाम करोगे?"

"अपने साथ ले चलो।"

"हम तो साधू भेख में हैं। रेलवे वाले छोड़ देंगे। तुम?"

मुरलीधर सोचने लगे। थोड़ी देर बाद बोले, "तो हमको चेला बना लो, महराज।"

साधु ने मुरलीधर को सिर से पैर तक देखा। "तुम्हारे घर में कौन-कौन हैं?"

"सिरिफ घरवाली।"

"तो उसको छोड़ दोगे?"

"ना महराज," मुरलीधर ने तत्काल उत्तर दिया, "आधा गिरस्थ,

में छिपा चेहरा अँधेरे में साफ़ नजर आया। वह एकटक ताकती रह गयीं।

"चीह्ना नहीं ?" और वह व्यक्ति बेधड़क अन्दर आ गया।

"तुम !" कौशल्या ने इतना ही कहा और सिसक-सिसक कर रोने लगीं।

मुरलीधर ने दरवाज़ा बन्द किया और कौशल्या का हाथ पकड़कर आगे बढ़े। "रोती काहे हो। हम चारों धाम करके आ रहे हैं।"

"तो एक पैसे का कारठ न डालते बना ?"

अब मुरलीधर को लगा, यह तो बड़ी भूल हुई थी। वह चुप रहे।

"तीन महीने राह ताकते-ताकते आँखें पथरा गयीं। दिन गिनते-गिनते जीभ घिस गयी।"

मुरलीधर ने सोचा, यह कहना ठीक न होगा कि चिट्ठी नहीं डाली। उन्होंने कहा, "चिट्ठी तो दो दफे डार चुके। हाँ, हम तो बहता पानी थे, सो ठिकाना कुछ न दे सके कि तुम चिट्ठी का जवाब इस पते पर दो।"

"हमें तो कोई चिट्ठी-पिट्ठी नहीं मिली।"

"आयँ !"

कौशल्या को तसल्ली हो गयी कि चिट्ठियाँ डाली थीं, मिलीं नहीं।

मुरलीधर सवेरे पं० रामअधार से मिलने गये।

दुबेजी ने आड़े हाथों लिया, "अरे सुकुलजी, तुम बड़े गावदी हो। वो बिचारी कौसिलिया, अकेली, तुम्हारी राह ताकती रही तीन महीने।"

"काका, चिट्ठी तो डारी थी, एक नहीं, दो। मिली नहीं।"

"चिट्ठी न मिले, ताज्जुब है।" पंडितजी ने कहा। फिर कुछ सोच-कर बोले, "चिट्ठीरसा नया आया है। हो सकता है, फाड़ के फेंक दी हों।"

मुरलीधर को सन्तोष हुआ कि उनकी बात सच मान ली गयी।

"तो कहाँ रहे इतने दिन ?"

"काका, चारों धाम कर आये।"

"चारों धाम !" पं० रामअधार ने आश्चर्य से आँखें फाड़ दीं। "तो बड़े भाग्यवान हो। बताओ सब हाल।"

मुरलीधर ने प्रयाग से द्वारिकापुरी, रामेश्वरम्, कालीघाट, कलकत्ता,

आधा साधू ।" फिर अपनी बात समझाते हुए कहा, "गुरमंत्र ले लूँगा। कपड़े साधुओं के पहनूँगा, मुल, घर में रहूँगा, महराज ।"

साधु हँसने लगा । "अच्छा, सबेरे सोच के बतायेंगे ।"

दूसरे दिन सुबह मुरलीधर को दीक्षा दी गयी । उन्होंने सिर मुँड़वाया और त्रिवेणी में स्नान कर भगवा कौपीन और अँचला धारण किया ।

एक सप्ताह बीत जाने पर मुरलीधर जब लौटकर न आये, तो कौशल्या का मन आशंका से भर गया । वह पं० रामअधार दुवे के पास विचरवाने गयीं । पं० रामअधार ने जब कह दिया, बहुत मजे में हैं, तब उन्हें कुछ सान्त्वना हुई ।

लेकिन जब राह देखते-देखते प्राय: एक महीना बीतने को आया, तब तो उनका धीरज छूट गया । मुरलीधर की न कोई चिट्ठी-पत्री, न संदेशा ।

कौशल्या एक जून भोजन बनातीं । कभी एक दिन बनाकर दूसरे दिन भी बासी खा लेतीं । बराबर उन्हें यही चिन्ता घेरे रहती, आखिर लौटे क्यों नहीं ? कहीं साधु-संन्यासी तो नहीं हो गये ? और यह आशंका होते ही उनकी आँखें छलछला आतीं । जीवन का अन्तहीन मरुस्थल उन्हें सामने दिखता जिसे कहीं उन्हें अकेले ही न पार करना पड़े, वह सोचतीं ।

पास-पड़ोस की औरतें पूछतीं, कोई सदेशा, चिट्ठी-चपाती नहीं आयी ?

कौशल्या सिर हिलाकर मौन उत्तर दे देतीं ।

इस तरह तीन महीने बीत गये कि एक दिन कुछ रात गये दरवाजा खटका और आवाज आयी, "दरवज्जा खोलो ।"

कौशल्या आँगन में एक फटे बोरे पर बैठी थीं । कल की बासी रोटी का टुकड़ा तोड़ा ही था कि आवाज सुनायी पड़ी । स्वर परिचित-सा लगा । वह हड़बड़ाकर उठीं और तेजी से दरवाजे की ओर लपकीं ।

"खोलो !" फिर आवाज आयी । कौशल्या को निश्चय हो गया, वही हैं ।

उन्होंने जंजीर खोलकर दरवाजा खोला । बड़े-बड़े बालों और दाढ़ी

में छिपा चेहरा अँधेरे में साफ़ नजर आया। वह एकटक ताकती रह गयीं।

"चीह्ना नहीं ?" और वह व्यक्ति बेधड़क अन्दर आ गया।

"तुम !" कौशल्या ने इतना ही कहा और सिसक-सिसक कर रोने लगी।

मुरलीधर ने दरवाजा बन्द किया और कौशल्या का हाथ पकड़कर आगे बढ़े। "रोती काहे हो। हम चारों धाम करके आ रहे हैं।"

"तो एक पैसे का कारठ न डालते बना ?"

अब मुरलीधर को लगा, यह तो बड़ी भूल हुई थी। वह चुप रहे।

"तीन महीने राह ताकते-ताकते आँखें पथरा गयीं। दिन गिनते-गिनते जीभ घिस गयी।"

मुरलीधर ने सोचा, यह कहना ठीक न होगा कि चिट्ठी नहीं डाली। उन्होंने कहा, "चिट्ठी तो दो दफे डार चुके। हाँ, हम तो बहता पानी थे, सो ठिकाना कुछ न दे सके कि तुम चिट्ठी का जवाब इस पते पर दो।"

"हमें तो कोई चिट्ठी-पिट्ठी नही मिली।"

"आयँ !"

कौशल्या को तसल्ली हो गयी कि चिट्ठियाँ डाली थीं, मिली नहीं।

मुरलीधर सवेरे पं० रामअधार से मिलने गये।

दुबेजी ने आड़े हाथों लिया, "अरे सुकुलजी, तुम बड़े गावदी हो। वो बिचारी कौसिलिया, अकेली, तुम्हारी राह ताकती रही तीन महीने।"

"काका, चिट्ठी तो डारी थी, एक नहीं, दो। मिली नही।"

"चिट्ठी न मिले, ताज्जुब है।" पंडितजी ने कहा। फिर कुछ सोच-कर बोले, "चिट्ठीरसा नया आया है। हो सकता है, फाड़ के फेंक दी हों।"

मुरलीधर को सन्तोष हुआ कि उनकी बात सच मान ली गयी।

"तो कहाँ रहे इतने दिन ?"

"काका, चारों धाम कर आये।"

"चारों धाम !" पं० रामअधार ने आश्चर्य से आँखें फाड़ दीं। "तो बड़े भाग्यवान हो। बताओ सब हाल।"

मुरलीधर ने प्रयाग से द्वारिकापुरी, रामेश्वरम्, कालीघाट, कलकत्ता,

जगन्नाथपुरी, अयोध्या और बद्रीनाथ धाम की यात्रा का बखान बड़े विस्तार के साथ कुछ उसी तरह किया जैसे कोई आठ-दस साल का लड़का मेला देखकर लौटने के बाद मेले की एक-एक बात अपनी माँ को बताता है।

रामअधार बड़े ध्यान से मुरलीधर की बातें सुनते रहे। बीच-बीच में सिर हिलाते और 'हूँ' कर देते।

मुरलीधर ने 'कथा समापत होत है' के लहजे में अन्त में कहा, "काका, बोली अलग-अलग, पहिरावा न्यारा-न्यारा, मुल आत्मा एक। दक्खिन से उत्तर तक, पुरब से पच्छिम तक, सब जगा हिन्दू धरम का जै जैकार।"

पं० रामअधार ने ज्ञान की मुहर लगायी, "बोली, पहिरावा, देस-काल के हिसाब से बदलता है, बेद, पुरान, सास्त्र थोड़े बदलते हैं।"

"ठीक है काका।" मुरलीधर ने कुछ इस प्रकार कहा जैसे वह पूरी परख के बाद इस नतीजे पर पहुँचे हों।

मुरलीधर ने गाँव-भर में घूम-घूम कर अपनी तीर्थयात्रा का अनुभव बताया।

अब मुरलीधर आधे गृहस्थ, आधे साधु की भाँति घर में रहते। कपड़े गेरुवे पहनते, परन्तु पुरोहिती का काम भी करते। चार-छः महीने में एक बार तीर्थयात्रा कर आते।

6

रणवीर सिंह तीन दिन से खुशी से फूले न समा रहे थे। अपने बैठकखाने में उन्होंने 'हिन्दुस्तान की हुंकार' की खबर को कम-से-कम दस बार पढ़ा—रामनारायण के बाजार के चमड़े के व्यापारी फ़ीरोज खाँ की हत्या के जुर्म में उनके कारखाने के कर्मचारी इलाही बख्श को आजीवन कारावास और इलाही को छिपाने के आरोप में, ग्वालटोली की वेश्या जुल्फ़िया को पाँच साल की क़ैद।

मद्दी ने कैसी चतुराई से सारा काम किया ! हत्या किसी ने की। छुरा रखा दिया चकले के रसोईघर मे जहां जुल्फ़िया काम करती थी। फिर इलाही को एक अठन्नी देकर जुल्फ़िया के पास भेजा। जुल्फ़िया के यहाँ इलाही पकड़ा गया। इलाही किसी जमाने में था फीरोज खाँ के यहाँ। अब तो ग्वालटोली के होटल में तश्तरियाँ साफ़ करता था। होटल के टुकड़ो पर जीता था। मद्दी है होशियार। जासूसी उपन्यास-जैसा ताना-बना बुना। और पुलिस ? उसे क्या पड़ी जो तह तक जाय। मुकदमा बनाकर खड़ा कर दिया। रणवीर सिंह ने सोचा और खुश हो गये।

आरामकुर्सी पर लेटे कुछ देर तक यह सब सोचते रहे। फिर मन में दूसरा विचार उठा, लेकिन अब तो यह सब हुआ बेगुनाह बेलज्ज़त। जुल्फिया अपनी करनी का फल भोग रही थी। फीरोज खाँ वाली बात को आयी-गयी मान लेना था। मगर हम ठहरे ठाकुर की औलाद ! जो रन हमैं प्रचारै कोऊ। रणवीर सिंह के विचारों का प्रवाह रुक गया। थोड़ी देर बाद एक नयी लहर उठी, इलाही बेचारा, बेकसूर, नाहक मारा गया। क्या यह उचित हुआ ? इलाही से हमें क्या लेना-देना था ? एक बेकसूर आदमी जिन्दगी-भर जेल काटेगा। और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग ! रणवीर सिंह का मन कचोटने लगा। हो सकता है इलाही के बाल-बच्चे हों। अब भूखों मरेंगे। रणवीर का सिर चकराने लगा। वह दीवार की ओर कुछ इस प्रकार देखने लगे जैसे इलाही बख्श और उसके बच्चों को ढूँढ़ रहे हों।

इलाही बख्श को हम जानते भी नहीं, आज तक देखा नहीं, रणवीर सिंह ने सोचा। वह फँसाया गया। हमने बहुत बड़ा अपराध किया, फीरोज खाँ की हत्या कराने से बड़ा।

रणवीर सिंह को लगा जैसे कोई उनका दिल मसल रहा हो, जैसे उनके सीने के भीतर जलन हो रही हो। वह छटपटाने लगे।

लेकिन यह तो मद्दी ने किया है, रणवीर सिंह के मन से आवाज आयी। मैंने तो कहा नहीं। मैंने मद्दी को रुपये दिये किसी से काम कराने को। इसके बाद का दोख-पाप मद्दी के सिर।

फिर सोचा, मद्दी से हत्या करने को न कहता, तो यह बेगुनाह क्यों

फँसता ? असली अपराधी मैं हूँ। मद्दी तो मेरे हाथ की कठपुतली था, मेरे हुक्म का जरखरीद गुलाम।

रणवीर सिंह का दिल काँप उठा। मुझे नरक में भी ठौर न मिलेगा। एक बेगुनाह को कत्ल के जुर्म में जिन्दगी-भर की जेल! फिर फीरोज खाँ ने मेरा क्या बिगाड़ा था ? जुल्फ़िया बाजारू थी। फीरोज खाँ ने फँसा लिया। मैं होता और फीरोज खाँ आता, तो मैं भी वैसा ही सलूक करता। मैंने हत्या करायी, बेकसूर की हत्या। मैं हत्यारा हूँ। रणवीर सिंह कुर्सी से उठ खड़े हुए और दरवाजे के पल्लों को अंदर से उढ़काकर किवाड़ से सिर टिका दिया। फिर वहाँ से हटे और आकर आफ़िस वाली कुर्सी पर धम-से बैठ गये और सिर सामने की मेज पर रख दिया। उनका सिर फटा जा रहा था।

"मैं खूनी हूँ। मैंने बेगुनाह का खून कराया है।" रणवीर सिंह बुदबुदाये। मेरी वजह से इलाही जेल में सड़ेगा। उसके बच्चे दाने-दाने के लिए दर-दर भीख माँगेंगे। मुझे रौरव नरक में भी जगह न मिलेगी।"

रणवीर सिंह कुर्सी से लड़खड़ाते हुए उठे और पास बिछे कोच पर औंधे मुँह लेट गये और फूट-फूट कर रोने लगे।

रणवीर सिंह की जब आँख खुली, उन्होंने अपने को जनानखाने के अपने सोने के कमरे में लेटा पाया। सुभद्रा देवी मुँह लटकाये उनके पास कुर्सी पर बैठी थी।

"कैसी है तबीयत ? क्या हो गया था आपको ?" चिंतित स्वर में सुभद्रा देवी ने पूछा।

रणवीर सिंह के मन में आया, सब कुछ बता दें। लेकिन दबा गये। औरतों के पेट में बात नहीं पचती। किसी से कह दे, तो ?

"बिलकुल ठीक हूँ ? क्या हो गया था ?"

"आप बेहोश थे। बैठकखाने से दो खिदमतगार लाद कर लाये।"

"बेहोश !" रणवीर सिंह को सचमुच अचम्भा हुआ। "बेहोश क्यों हो गये ?"

"आप बहुत काम करते हैं। पूरी रियासत का काम, ऊपर से कानपुर की भाग-दौड़।"

"हूँ," कहकर रणवीर सिंह ने आँखें बन्द कर ली। उन्हें कमजोरी लग रही थी।

शीरीं हर इतवार को तीसरे पहर करीब तीन बजे मदर मेरी के यहाँ जाती, घण्टे-आधा घण्टे उनसे बातें करती, अपना दुख-सुख सुनाती, उनकी सीख लेती। आज जब वह साढ़े तीन बजे तक न आयी, तो मदर मेरी को आश्चर्य हुआ। जब वह चार बजे तक भी न आयी, तो उनके मन में कुछ खुटका हुआ। मदर मेरी ने सवेरे अंग्रेजी के अखबार 'इण्डियन गजेट' में फीरोज खाँ के कत्ल के मुकद्दमे के फैसले का समाचार पढा था। अखबार ने यह भी लिखा था कि जुल्फ़िया कभी फीरोज खाँ की रखैल थी। लेकिन पुलिस इलाही बख्श और जुल्फ़िया की साजिश साबित नही कर पायी। अब मदर मेरी को आशंका हुई, शीरी यह खबर पढकर बेचैन तो नही हो गयी, अपने मन का सन्तुलन तो नही खो बैठी। जुल्फिया आखिर उसकी माँ थी। मदर मेरी ने होस्टल (छात्रावास) जाकर शीरी की खोज-खबर लेने का निश्चय किया।

शीरीं जब सवेरे उठी थी, भली-चंगी थी, होस्टल की दूसरी सहेलियो के साथ हँस-हँस कर बातें की, नाश्ता किया। इसके बाद रीडिंग रूम (पठन कक्ष) गयी, अखबार पढने के लिए। वहाँ 'इण्डियन गजेट' के पहले पृष्ठ मे मोटी सुर्खी देखी—फीरोज खाँ की हत्या के जुर्म में इलाही बख्श को उम्र कैद और जुल्फ़िया को पाँच साल की सजा। पूरा समाचार पढने के बाद शीरी का पेट खौल उठा, उसका सिर चकराया और उसकी आँखो के सामने अँधेरा-सा छा गया।

शीरी ने अखबार मेज पर रख दिया, दूसरी खबरें न पढ़ी। वह शिथिल और डगमगाते कदम रखती अपने कमरे में आयी और अन्दर से कुण्डी लगाकर औंधे मुंह चारपाई पर गिरी और फफक-फफक कर रोने लगी, तकिये में सिर गड़ाकर। शीरी जितना ही रोती, उसके आँसुओं का वेग उतना ही तेज़ होता जाता, जैसे विवेक का जो बाँध उसने बनाया था, इस घटना ने उसे एक ही ठोकर में तोड़कर परे कर दिया हो और माँ के लिए प्यार का नद पूरे वेग से फूट पड़ा हो।

दो घण्टे तक रोने के बाद शीरी का मन जब कुछ हल्का हुआ, तो वह सोचने लगी, अम्मी कितना प्यार करती थीं। मेरी हर जिद पूरी करती थीं। तभी उसे याद पड़ा, एक दफा जाड़ों की रात—आठ बजे मैंने जलेबियाँ खाने की फरमायश की। अम्मी ने कहा, इतनी रात गये जलेबियाँ कहाँ मिलेंगी, शीरीं ? मैं जिद पकड़ गयी, तो अम्मी ने नौकरानी को भेजा। वह जब खाली हाथ वापस आयी, उधर मैं टस-से-मस न हुई, तब अम्मी खुद गयीं और एक घंटे बाद जलेबियाँ लिये लौटीं। मुझ से मुसकराकर कहा, ले मेरी शाहजादी। पैर टूट गये यहाँ से परेड तक के चक्कर लगाते-लगाते।

कई और छोटी-बड़ी घटनाएँ याद आयीं। हर घटना ने माँ के प्यार को और उजागर किया।

शीरी उठकर बैठ गयी और हथेली पर गाल रखकर सिर झुकाये कुछ क्षण तक खोयी-सी बैठी रही। तभी उसे घर छोड़ते वक्त की घटना याद आ गयी। अम्मी ने कहा था, शीरी घर छोड़कर न जा। तू जैसा चाहेगी, वैसा ही होगा। उसके बाद उसे अम्मी की वह बात भी याद आ गयी जो उन्होंने फीरोज खाँ से निकाह के बारे में कही थी। फीरोज खाँ मुझे रखना चाहता था, मगर अम्मी राजी न हुईं। उन्होंने शादी करने को कहा।

शीरी पल-भर को रुकी जैसे कुछ सोच रही हो, तभी घर छोड़ते समय की जुल्फ़िया की बात उसे फिर याद आ गयी। अम्मी कहती थीं, तू घर छोड़कर न जा। तू जैसा चाहेगी, वैसा ही होगा।

अब शीरी के मन ने पूछा, क्या तूने घर छोड़कर भूल की ? यह प्रश्न धीरे-धीरे बड़ा आकार लेने लगा और शीरीं को लगा जैसे उसने घर छोड़ने में जल्दबाजी की। तभी दूसरा सवाल आकर सामने खड़ा हो गया। उसके मन ने कहा, शीरी, तू जिद्दी है। तूने जल्दबाजी की और घर छोड़ दिया। अम्मी की आज की विपदा के लिए तू जिम्मेदार है।

यह विचार आते ही शीरी काँप उठी और हथेलियों से मुँह ढककर वह फूट-फूट कर रोने लगी। वह बुदबुदा रही थी, 'शिरी' अम्मी की इस विपदा के लिए तू जिम्मेदार है।" शीरी ने तकिये पर ज़ोर-ज़ोर से

सिर पटका और औंधे मुँह लेटकर इतना रोयी कि उसकी घिग्घी बँध गयी।

शीरी जब बिस्तर पर लेटी हिचकियाँ भर-भर के रो और तिलड़ रही थी, तभी उसे लगा जैसे कोई दरवाज़ा खटखटा रहा हो। शीरी न उठी। उधर दरवाज़ा खटखटाने के साथ ही किवाड़ों की साँस से पतली-सी आवाज़ आयी, 'शीरी'। लेकिन शीरी तब भी न उठी। इसके बाद आवाज़ आयी, "शीरी बेटी"। उसे आवाज मदर मेरी की जान पड़ी। वही होंगी, उनके अलावा तो और कोई शीरी बेटी कहता नहीं, शीरी ने सोचा। वह अनमनी-सी उठी, तभी एक बार फिर "शीरीं बेटी" शब्द कानों में गये। मदर मेरी ही हैं, शीरीं ने मन-ही-मन कहा। वह चारपाई से उतरकर खड़ी हो गयी, जल्दी-जल्दी साड़ी के आँचल से आँसू पोंछे, साड़ी को ज़रा ठीक किया, बालों पर हाथ फेरा और दरवाज़ा खोला। लेकिन मदर मेरी के अन्दर आते ही उसने फिर साँकल लगा दी।

मदर मेरी आकर कुर्सी पर बैठने के बदले शीरी की चारपाई पर बैठ गयी। शीरी के पूरे बदन में कँपकँपी-सी आयी और वह बिना किसी संकोच के मदर मेरी की जाँघ पर सिर रखकर फूट-फूट कर रोने लगी।

मदर मेरी ने उसके सिर पर और पीठ पर हाथ फेरा। फिर सान्त्वना-भरे स्वर में बोली, "हिम्मत कर बेटी। ख़ून का रिश्ता, माँ का लगाव बड़ा मजबूत होता है। मगर यह मौका हिम्मत से काम लेने का है।"

उधर शीरी हिचकियाँ भरती हुई कह रही थी, "मदर···अम्मी को···इस हालत में ··पहुँचाने के लिए···मैं जिम्मेदार हूँ।···मैंने···घर छोड़ने में···जल्दबाजी की।"

यह सुनकर मदर मेरी के मन में धक-सा हुआ। वह कुछ क्षण तक सोचती रही। फिर शीरी की पीठ पर हाथ फेरते हुए उसे समझाने लगी, "विवेक से काम लो, बेटी। यह कोई नहीं कह सकता, तुम्हारी अम्मी कौन-सा रास्ता अपनाती। तुम्हारा वहाँ रहना ज़िन्दगी के साथ जुआ खेलना होता। उस गन्दगी से हटकर तुमने ठीक किया था।"

मदर मेरी ज़रा रुकीं, फिर बोलीं, "तुम्हारी माँ की ज़िन्दगी औरतों

पर सदियों से नहीं, हजारों साल से हो रहे जुल्म की तस्वीर है। इसके पीछे है हमारे समाज का ढाँचा जिसमें औरत और मर्द को बराबरी का दर्जा हासिल नहीं। अभी तुम बच्ची हो, यह सब न समझोगी। जब बी० ए०, एम० ए० तक पढ़ जाओगी, इतिहास की गहराइयों में पैठोगी, सब समझोगी।"

शीरी का सिर मदर मेरी की जाँघ पर था, लेकिन अब वह गर्दन जरा मोड़कर उनके मुँह की ओर ताक रही थी।

मदर मेरी ने समझाया, "चीप इमोशनलिज्म (हलकी-फुलकी भावुकता) से काम न चलेगा। औरत को आजादी तब मिलेगी, जब वह पराये आसरे न होकर अपने पैरों पर खड़ी होगी और समाज में अमीर-गरीब का भेद न रह जायेगा। वह दिन कैसे लाना होगा, यह तुम अभी नहीं समझ सकती। पढ़-लिखकर औरतों में बेदारी लाने और मामूली लोगों में नया समाज बनाने का शऊर पैदा करने के काम में लगो। यही ठीक और अकेला रास्ता होगा माँ के लिए सच्चा प्यार दिखाने का।"

मदर मेरी इतना कहकर खामोश हो गयी। फिर शीरी को मुँह-हाथ धोकर खाना खाने की सलाह दी।

मदर मेरी कमरे से निकलीं, तो बरामदे में खड़ी दो लड़कियों से कहा, "तुम्हारी सहेली, शीरी की तबीयत कुछ खराब है। उसकी देख-भाल करो, उसे खाना खिलाओ।" चलते-चलते इतना और जोड़ा, "चिन्ता की कोई बात नहीं। शायद पढ़ती बहुत ज्यादा है, रात-रात-भर।"

दोनों लड़कियाँ मदर मेरी के जाते ही शीरीं के कमरे में आयीं।

एक ने पूछा, "क्या हुआ शीरी? सवेरे तो तुम भली-चंगी थीं।"

"कुछ नहीं। सिर चकरा रहा है। मन ठीक नहीं।"

"तुम रात-रात-भर पढ़ती हो। पिछली रात बारह बजे मैंने देखा था, तुम्हारी बत्ती जल रही थी।" दूसरी बोली।

शीरी ने कुछ उत्तर न दिया।

रात में वही दोनों सहेलियाँ शीरी को अपने साथ मेस (भोजनालय) ले गयीं। शीरी ने बेमन कुछ खाया। सोमवार को वह कालेज न गयी।

तब उन सहेलियों में से एक शाम को कालेज के डाक्टर को ले आयी।

"मैं बिलकुल ठीक हूँ, डाक्टर।" शीरी ने कहा।

डाक्टर ने नाड़ी और दिल की परीक्षा की।

"शी इज पर्फेक्टली आल राइट (बिलकुल ठीक है)।" डाक्टर ने बताया।

तभी मदर मेरी आ गयी। उन्होंने डाक्टर से कहा, "शीरी को कुछ नहीं हुआ, डाक्टर। कुछ थकान है, थोड़ी कमजोरी।" फिर शीरी की ठुड्डी ऊपर उठाते हुए बोली, "लगता है, बहुत पढ़ती है, रात-रात-भर।"

शीरी ने आँखें झुका लीं। पास खड़ी उनकी सहेली ने मदर मेरी के सन्देह की पुष्टि की।

"हम नींद लाने की कोई दवा न देंगे। आराम करो, मिस शीरी।" डाक्टर इतना कहकर चला गया। जो सहेली डाक्टर को लायी थी, वह भी चली गयी। मदर मेरी थोड़ी देर तक शीरी को समझाती-बुझाती रहीं।

शीरीं मंगल को भी कालेज न गयी, लेकिन बुधवार को उसके कालेज की दो सहेलियाँ उसे ज़बर्दस्ती कालेज ले गयीं। शीरी कालेज जाने लगी, फिर भी उसे सहज होने में कोई एक महीना लग गया।

7

पं० रामअधार नाती (पोते) को अंग्रेज़ी पढ़ाने के विरुद्ध थे। जब रामशंकर के पिता शिवअधार ने सलाह करने के ख़याल से उनसे पूछा था, तो साफ ना कर दिया था, "तुम विद्या का मोल पैसे से आँकते हो। लड़का अंग्रेज़ी पढ़े, थानेदार बन जाय, बस।" और शिवअधार की ओर ताकते हुए पूछा था, "कभी सोचा है, बेद-सास्त्र में जो ज्ञान है, वह कहाँ मिलेगा?" शिवअधार ने उत्तर दिया था, "बप्पा, विद्या अर्थकरी होने के साथ-साथ लोक-परलोक सुधारे, सो तो ठीक, पै यह पंडिताई है भिक्षावृत्ति।

हम नहीं चाहते, बच्चे भी दर-दर मारे-मारे फिरें।"

पं० रामअधार ने काटा, "हम तो भीख माँगना नही मानते। बड़े-बड़े अपसर, राजा-रहीस हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। तुम धर्म का मार्ग बताते हो लोगों को, मनुष्य का कर्तव्य।"

रामशंकर के चाचा शिवशंकर अब तक बैठे सुन रहे थे। अब उनसे न रहा गया। बोल पड़े, "मनुष्य-धर्म, लोक-परलोक-सुधार! आकास-पाताल बाँधने की लम्बी-चौड़ी बातें!" साथ ही एक लतीफा सुना गये, "एक था ओझा। वह एक किसान के घर भूत झाड़ने गया और मंत्र पढ़ने लगा—ओंग् आकास बाँधो, पाताल बाँधो, दिग बाँधो, दिगन्तर बाँधो। यही मंत्र उसने जब दोहराया, तो किसान कसमसाया। जब ओझा तीसरी बार यही मंत्र बोला, तब किसान से न रहा गया। वह गरजा, ओझा, आकाश-पाताल बाद में बाँधना, पहले अपने दरवाजे में टटिया बाँध दे। टटिया न होने से कूकुर जाँत की मेड़ से पिसान खा जाता है, रसोई तक घुस जाता है।" और हँसे।

"तुम तो सिरिफ बंदकी जानते हो। भागवत पढ़ी नहीं, काव्य-सास्त्र देखे नही। तुम हो आधे पढ़े। धर्म का मर्म क्या जानो।" रामअधार बोले और हँसने लगे।

शिवशंकर तिनक गये और पूछा, "सरकार लाल साहेब को अंग्रेजी पढ़ाते हैं। उनका कोई धरम-ईमान नही?"

"फिर वही बेपढ़ों-जैसी बात।" रामअधार ने हँसकर उत्तर दिया। "समरथ को नहिं दोष गोसाईं। वो बड़े आदमी हैं। वो सराफ पीते हैं। पतुरिया नचाते हैं। तुम भी ऐसा करोगे?" और शिवशंकर की ओर एकटक ताकने लगे।

बहस दो घण्टे चली। अन्त में पं० रामअधार बेमन राजी हो गये और रामशंकर को अंग्रेजी पढ़ने कानपुर भेजा गया।

रामशंकर डी० ए० वी० स्कूल के स्पेशल ए में भर्ती हुआ। यह दर्जा छ: के बराबर था और वर्नाक्युलर मिडिल पास लड़के इसमे लिये जाते थे। वे स्पेशल ए में इंग्लिश और संस्कृत पढ़ते। स्पेशल बी में इंग्लिश पर विशेष जोर रहता। इस तरह दो साल में उनको अंग्रेजी में दर्जा सात के

बराबर कर दिया जाता ।

रामशंकर डी० ए० वी० स्कूल के बोर्डिंग हाउस में रहने लगा। उसके कमरे में दो और लड़के रखे गये। दोनों उसके सहपाठी थे। एक था उन्नाव जिले का विमल शुक्ल और दूसरा घाटमपुर का उमाकान्त गुप्त ।

डी० ए० वी० के बोर्डिंग हाउस में नियम-पालन कड़ाई से होता जैसे गुरुकुल-आश्रम हो। सवेरे साढ़े चार बजे घण्टी बजती । पाँच बजे सब लड़के बोर्डिंग के अहाते में इकट्ठे होते और 'शन्नो देवी रभिष्टये, आपो भवन्तु पीतये', के साथ प्रार्थना आरम्भ होती । अन्त में लड़के गाते, 'हे प्रभो आनन्ददाता, ज्ञान हमको दीजिये ।' हर इतवार को सवेरे हवन होता जिसमें सब जातियों के लड़के शामिल होते। रामशंकर के लिए यह नया अनुभव था। उसके गाँव में हवन में केवल ब्राह्मण शामिल होते थे। इतवार की शाम को बोर्डिंग के लड़कों को दो घण्टे की छुट्टी बाज़ार जाने के लिए मिलती। अकेला कोई न जाने पाता । रामशंकर अपने कमरे के साथियों के साथ जाता ।

मिडिल पास कर आने वाले लड़के शहर वालों से ज़्यादा तगड़े होते, पढ़ने में ज़्यादा मेहनती । शहर वाले उन्हें तेली के बैल कहते ।

बोर्डिंग हाउस के अहाते में छोटा-सा अखाड़ा था । ये लड़के शाम को दण्ड-बैठक करते, कुश्ती लड़ते। खेलों में फुटबाल में इनकी रुचि रहती।

रामशंकर जब भर्ती हुआ, उसकी धज निराली थी। दोकछी धोती; मोटे कपड़े की डोरियादार कमीज, देहाती दर्जी की सिली हुई, जिसके कालर पिल्ले के कानों-जैसे थे, सिर पर देवबन्द के मौलवियों-जैसी गोल टोपी और चमरौधा जूते—यह थी रामशंकर की पोशाक । स्कूल के बरामदे में लडके उसे देखते और कुछ अजीब ढंग से मुसकुराते । रामशंकर का नाम बनबिज्जू पड़ गया ।

कुछ दिन बीतने पर रामशंकर के कमरे के साथी विमल शुक्ल ने उसको एक दोपलिया टोपी दी लखनउवा बेल टँकी हुई और कहा, "इसे लगाया करो। गोल टोपी पर लड़के मजाक उड़ाते हैं।"

अब रामशंकर की समझ में आया कि उसे देखकर लड़के क्यों मुँह बनाकर मुसकुराते थे। उसने मन-ही-मन कहा, ऐसी टोपी बाबा लगाते

हैं और गाँव-भर में उनका इतना मान ! लेकिन बाहर वालों के लिए मैं बनविज्जू ! रामशंकर ने गोल टोपी रख दी और बेलदार दोपलिया टोपी लगाकर स्कूल गया।

चमरौधा जूते न घिसें, इस खयाल से रामशंकर ने उनमें नालें जड़वा ली। स्कूल के पक्के बरामदे के फर्श पर जब यह चलता, खट-खट की ऐसी आवाज होती, जैसे कोई घोड़ा दुलकी चल रहा हो। उसे बछेड़ा कहा गया। रामशंकर ने उसी शाम स्कूल के बाहर बैठे मोची से नालें निकलवा दी जिस दिन उसे यह नयी पदवी मिली थी।

अब यह अपने पहनावे पर ध्यान देने लगा। दोकछी धोती की जगह एक लांग की पण्डिताऊ धोती ले ली, कमीज पर लोहा होने लगा, टोपी पर कलफ। जूतों को यह पोंछ डालता।

ज्यादातर मिडिलची लड़के ब्वाय स्काउट भी बनते। जिस तरह द्रोणाचार्य की परीक्षा मे अर्जुन को चिड़िया की केवल दाहिनी आँख दिखती थी, पढ़ाई, खेल-कूद या दूसरे कामों में इन लड़कों का लक्ष्य रहता थानेदार बनने की तैयारी करना।

सी ए टी कैट, कैट माने बिल्ली; आर ए टी रैट, रैट माने चूहा या राम: रामौ रामा:—यह थी स्पेशल ए की पढ़ाई। रटन्त की ये सीढ़ियाँ चढ़कर ही लडकों को दो साल में सातवें दर्जे की मंजिल से ऊपर जाना था। जब रटन्त के कीर्तन से जी ऊब जाता, तब इस रामधुन की एक-रसता दूर करने के लिए वे हिन्दी-उर्दू में किस्से-कहानियों की किताबें पढ़ते, खासकर जासूसी उपन्यास।

रामशंकर को अपने एक दोस्त से चन्द्रकान्ता मिली थी पढ़ने को। उसने पढी और उसके कमरे के साथियों ने भी। सब चन्द्रकान्ता के ऐयारों के कामों से बड़े प्रभावित हुए।

तीनों ने इतवार को पुराना कानपुर देखने का प्रोग्राम बनाया। हिन्दी के मास्टर पं० रामरतन पाठक ब्वाय स्काउटों के इंचार्ज भी थे। उन्होंने नाना साहब का किस्सा सुनाया था। यह भी बताया था कि पुराने कानपुर मे उनकी छावनी के खँडहर हैं। तीनों वे खँडहर देखना चाहते थे।

एक घण्टे तक भटकने पर भी वे खँडहर तो न मिले, लेकिन एक पक्के तालाब के पास छोटा-सा मकबरा-जैसा दिखा। ये लोग उसके अन्दर गये। बीच-बीच में जालियाँ थी। उन्हें लगा, जैसे दोहरी दीवारें हों। स्काउटिंग में कन्धों पर चढ़कर छत पर चढ़ना सिखाया गया था। विमल तीनों में तगड़ा था। वह नीचे खड़ा हो गया। उसके कन्धों पर उमाकान्त चढ़ा। उमाकान्त के कन्धों पर चढ़कर रामशंकर मकबरे की छत पर पहुँचा। इसके बाद हाथ पकड़कर उमाकान्त को चढ़ाया। दोनो ने मकबरे को गौर से देखा, फिर एक परिक्रमा लगायी। एक जगह झँझरी की जगह उन्हें झरोखा दिखायी पड़ा। भीतर की तरफ झांकने मे उन्हें लगा जैसे इस झरोखे से अन्दर जाने की राह हो। इसे दोनो ने चन्द्रकांता के ऐयारों की पारखी दृष्टि से देखा। दोनों इस नतीजे पर पहुँचे कि यह मकबरा नही, कोई तिलस्म है।

दोनों कूद कर नीचे आये और सब कुछ विमल को बताया। अगले इतवार को तीनों ऐयार रस्सा, चाकू, टार्च और सीटी लेकर आये। रामशंकर पहले की तरह कन्धों पर चढ़कर ऊपर गया। फिर रस्से को पत्थर की बनी जालीदार मुंडेर से बाँधा। बाकी दोनों भी रस्से के सहारे ऊपर आ गये।

तिलस्म के रहस्य-भेदन का बीड़ा रामशंकर ने उठाया। उसने दाहिने हाथ मे खुला चाकू और बायें में टार्च लिया और सीटी ओठों से दबायी। मुंडेर मे बँधे रस्से का दूसरा छोर उसकी कमर से बाँधा गया। रामशंकर को आगाह कर दिया गया कि खतरा होने पर वह सीटी बजाये। रस्सा खींचकर उसे बाहर निकालने की जिम्मेदारी विमल और उमाकान्त ने ली। रामशंकर बढ़ा और झरोखे में घुसा। अभी एक ही कदम रखा था कि हाथ-पैर पटकने लगा। मुँह से चीख निकली और सीटी वहीं गिर गयी। टार्च और चाकू भी हाथ से छूट गये। मकबरे की छत पर विमल और उमाकान्त ताण्डव नृत्य रचाये थे। हुआ यह कि झरोखे में लगे भिड़ों के छत्ते पर चाकू चुभ जाने से भिड़े भन्नाकर निकली और पहले रामशंकर पर टूट पड़ी। इसके बाद विमल और उमाकान्त पर धावा बोला। भावी थानेदारों की ऐयारी के हिसाब में हाथ लगे सूजे चेहरे जिन पर कई

दिन तक अस्पताल का मरहम पोता गया।

8

बी० ए० फाइनल की परीक्षा हो चुकी थी। शीरीं आँखें आधी मूँदे आरामकुर्सी पर लेटी सोच रही थी, कहाँ जाऊँ ? जयपुर ? वहाँ तो धूप और तेज़ हो गयी होगी। बम्बई ? बहुत दूर है। तभी होटल की नौकरानी ने कमरे में आकर एक लिफ़ाफ़ा थमा दिया, "आपका ख़त।" शीरीं ने आँखें खोलीं। लिफ़ाफ़े पर लिखा था—फ्राम नीलम खन्ना, दिल्ली। वह हड़बड़ाकर ठीक से बैठ गयी और जल्दी-जल्दी लिफाफा खोला। हलका गुलाबी काग़ज़, उसे लगा, जैसे उसकी गोरी-चिट्टी सहेली नीलम खड़ी मुसकरा रही हो। लिखा था—डियर शीरीं, माफ करिये, छः महीने के बाद लिख रही हूँ। हमारे वो यानी तुम्हारे जीजा शिमला ले जाने की तैयारी कर रहे हैं। इम्तहान तो हो गये। चलोगी ? और भैया से मिली या नहीं ? मैं उनको लिख नहीं सकती। छोटी जो ठैरी। तुम मिलो। मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त, यह भी कोई बात हुई !

शीरीं के मस्तिष्क में एक बार फिर पिछले चार साल घूम गये। क्राइस्ट चर्च कालेज के फर्स्ट इयर में नीलम भी दाखिल हुई थी। अंग्रेज़ी और इतिहास के क्लासों मे दोनों साथ रहतीं। धीरे-धीरे पहचान दोस्ती में बदल गयी। शीरीं उसके घर जाती। नीलम के माता-पिता सुलझे विचारों के थे। हिन्दू-मुसलमानों में भेद न करते। नीलम की माँ मँगौड़ियाँ बनातीं। नीलम और शीरीं रसोई घर के दरवाज़े पर बैठ जातीं। एक ही तश्तरी मे दोनों खातीं। तभी कहीं से नीलम का भाई विनोद आ टपकता और एक मँगौड़ी उठाते हुए कहता, "अम्मा, तुम पच्छपात करती हो। इस मलेच्छ को चौके में बिठा लिया ! छीःछी !" इसके बाद वह मँगौड़ी मुँह में डालकर दूसरी उठाता और शीरीं के होठों से लगा देता। "काट लो अँगुली, शीरीं," नीलम कहती। माँ बोलतीं, "देख, अब मेरे दो

बेटियाँ हैं—नीलू, शीरी। कैसे प्यारे नाम हैं।"

इण्टर के बाद नीलम की शादी हो गयी। शीरीं शादी में गयी थी। विदा के वक्त नीलम गले लगकर खूब रोयी थी। "भूल न जाना शीरी!" उसने कहा था और नीलम की माँ डबडबायी आँखों सिसकती हुई बोली थी, "एक दिन शीरीं भी हम सबको रुलाकर चली जायेगी।" शीरी ने शर्म से आँखें झुका ली थी।

नीलम ही थी जिससे शीरी अपने मन की बात कहा करती। नीलम का अभाव उसे बहुत खला था। नीलम जब विदा होकर आयी थी, शीरी भागी-भागी गयी थी। लेकिन इसके बाद वह उसके घर नहीं गयी। हाँ, एक बार जरूर गयी थी, जब विनोद जेल से छूटकर आया था।

विनोद कपूर राजनीति में एम० ए० कर रहा था। फाइनल इयर था। तभी असहयोग आन्दोलन छिड़ गया। विनोद जेल गया और इसके बाद पढ़ाई का सिलसिला टूट गया। पिता की बजाजे की बड़ी दुकान थी। वह दुकान में बैठने लगा। जेल से छूटने पर शीरी उसे देखने गयी थी। विनोद उसे ताँगे पर बैठाने के लिए चौराहे तक आया था और कहा था, "अम्मा-दादा हिन्दू-मुसलमान में भेद नहीं करते।" और अड़ते-अड़ते जोड़ दिया था, "तुम···शीरीं···अपने पेरेण्ट्स (माता-पिता) के मन की थाह लो।"

शीरी कुछ उत्तर न दे सकी थी। पेरेण्ट्स शब्द ने ही उसका मन क्षोभ से भर दिया। पिता? जिनसे कभी बोली नहीं। माँ? जिसे छोड़कर चली आयी। मदर मेरी न होती, तो शायद आज इस दुनिया में भी न होती।

शीरीं को जिस दिन ज़ुल्फ़िया ने धमकाया था, उसी दिन वह मदर मेरी से मिली थी और अपना कच्चा चिट्ठा बता दिया था। अटकते-अटकते यह भी कहा था, "मदर, इन लोगों में माया-ममता, प्रेम-मुहब्बत नहीं होती। बेटी को पसन्द करती हैं कारूँ का खजाना समझ कर। हो सकता है, मुझे जान से हाथ धोना पड़े, या अग़वा करा दी जाऊँ।"

मदर मेरी ने बड़े प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरा था। "तुम डरो नहीं मेरी बच्ची। मेरे पास रहो। यहाँ कोई तुम्हारा बाल बाँका नहीं कर

सकता।"

तब से वह वहीं रह रही है। हाईस्कूल पास होने पर उसे वजीफ़ा मिला था। क्रिश्चियन मिशन ने एक और वजीफ़ा दे दिया था। इस तरह वह निश्चिन्त पढ़ रही थी।

"क्या किया जाय?" शीरी ने लेटर पेपर को अपने सामने कर मन-ही-मन कहा जैसे लेटर पेपर नहीं नीलम हो। वह सोचने लगी, यह भी कोई बात हुई। मान न मान, मैं तेरा मेहमान। मैं पूछने जाऊँ! वह खुद क्यों न आयें? बस एक मर्तबे कह दिया, पेरेण्ट्स के मन की थाह लो। थाह लेकर ऊपर आयी, या वहीं डूब गयी। पता तो लेते। शीरी मुसकराने लगी और गुनगुनायी, "कशिशे इश्क अगर सच है, तो इंशाअल्लाह; कच्चे धागे मे चले आयेंगे सरकार बँधे।"

वह आरामकुर्सी से उठी और कमरे में बिछी चारपाई पर लेट गयी। खत अँगुलियों मे दबा था, जैसे चिपक गया हो।

कुछ देर बाद शीरी ने सोचा, जाने में हर्ज ही क्या है? घर जाऊँ, नीलम की खबर पूछने। कह दूँगी, छः महीने से कोई खत नहीं आया। विनोद उन छिछोरों मे नहीं जो गलियों के चक्कर काटते हैं। संजीदा किस्म का है। मुख्तिर-सी बात कह दी। हो सकता है, मान बैठा हो, मेरे माँ-बाप राजी न हुए होंगे। मुसलमान कम कट्टर थोड़े ही होते हैं। गैर मुसलमान से शादी कैसी? मजहब तब्दील कर ले, तो निकाह हो जाय।

शीरी देर तक दुविधा में पड़ी रही। अन्त में तय किया, जाऊँ। पहले दुकान—कपड़े खरीदने के बहाने। शायद वहीं मुलाकात हो जाय। नहीं तो, बाद में घर।

शीरी सादा रहती थी। उसने सफेद साड़ी पहनी जिस पर बहुत छोटे-छोटे गुलाबी बूटे थे, बालों पर कंघी कर जूड़ा बाँधा और चप्पलें पहन पाँच बजे निकल पड़ी।

विनोद दुकान में था। शीरी को देखते ही हाथ जोड़कर नमस्ते किया। शीरी दंग रह गयी। यह नयी बात!

"आइये।" विनोद ने शिष्टाचार के साथ कहा।

शीरी को दूसरा धक्का लगा। वह कुछ समझ न सकी। दुकान में

रखी कुर्सी पर वह बैठ गयी और सोचने लगी, क्या कहूँ ? कैसे कहूँ ?

"प्यास लगी है।" वह बोली।

"राम औतार, गंगा सागर ठीक से साफ कर प्याऊ से जल ले आओ। जल्दी।"

"बहुत अच्छा।" और नौकर चला गया।

"हाँ, बताइये। आज कैसे भूल पड़ी बरसों बाद ?"

शीरीं को अब कुछ थाह मिली।

"भूल गये, तो सोचा···" शीरी ने इतना ही कहा।

"अगर वक्त हो, तो बिरहना रोड वाले जनता रेस्टोरेंट चलें ?" विनोद ने पूछा।

शीरी को अब धीरज बँधा। "जनता रेस्तोरां ! फटीचर !" और हँसने लगी।

"तो इम्पीरियल चलें !" विनोद ने हँसकर पूछा।

"जनता और इम्पीरियल के बीच भी कुछ है ?" अब शीरीं में पहले जैसी शोखी थी।

"तो नवप्रभात ?"

"ठीक है।"

"आप ताँगे से पहुँचिये, मैं आधे घंटे के भीतर साइकिल से आया। दद्दा दुकान आ जायें।"

इस 'आप' ने शीरी को फिर चौंका दिया, लेकिन उसने हामी भर ली।

नवप्रभात के एक बड़े केबिन में दोनों घुसे। कुर्सियाँ चार थीं। विनोद शीरी की बगल वाली कुर्सी पर न बैठ सामने की कुर्सी पर बैठा। शीरीं को फिर आश्चर्य हुआ। लेकिन वह कुछ न बोली।

विनोद ने बैरे को आर्डर दिया और इसके बाद बिना किसी भूमिका के बोला, "मिस शीरीं, एक पेचीदा बात कहनी है। अगर आप बुरा न मानें, तो···"

शीरी उलझन में पड़ गयी, लेकिन सिर हिलाकर अनुमति दे दी।

विनोद ने बताया कि उसने बात अम्मा से की। उन्होंने दद्दा से कहा।

दद्दा मदर मेरी से मिले।

शीरी की समझ में न आया, विनोद का अभिप्राय क्या है। थोड़ी देर तक वह खामोश रही, फिर पूछा, "तो क्या तय पाया?" और विनोद ने बता दिया कि हिन्दू-मुसलमान तक तो कोई बात न थी, लेकिन अम्मा-दद्दा इतनी दूर तक जाने को तैयार नहीं। मतलब साफ था, मैं अम्मा-दद्दा की बात काट नहीं सकता।

शीरी के पूरे बदन में कंपकंपी-सी आ गयी, उसका मन रोष से भर गया।

"विनोद बाबू," अजीब व्यंग्य के स्वर में शीरी बोली, "तो आपके लम्बे-चौड़े आदर्शों का महल जो आप उन दिनों बनाया करते थे, हकीकत की इस आँच के सामने मोम की तरह पिघल गया!" शीरी की वाणी में बिजली का वेग था। "ज़हर तो पीना ही पड़ता है, चाहे सुकरात पिये या स्वामी दयानन्द। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की कहानी आपने ही बतायी थी। उन्होंने अपने बेटे की शादी बेवा लड़की से की थी। उस ज़माने के लिए वह भी इनक़लाब था।" वह खड़ी हो गयी। "हर ईसा को अपना सलीब अपने कन्धे पर ढोना पड़ता है।" उसने कहा और तेज़ी से केबिन से निकलकर लम्बे डग भरती सड़क पर आ गयी।

9

डी० ए० वी० के बोर्डिंग हाउस की गुरुकुल जैसी दिनचर्या में मनोरंजन के अवसर भी आते थे। कृष्ण जन्माष्टमी बोर्डिंग हाउस में मनायी जाती। हाँ, आर्यसमाजी ढंग से। झाँकी बनती, कृष्ण के साथ-साथ स्वामी दयानन्द का फोटो रहता, मालाएँ पहनायी जातीं, लेकिन सनातनियों की तरह पूजा न की जाती।

जन्माष्टमी से दो दिन पहले रात आठ बजे रामशंकर ने अपने कमरे के साथियों से कहा, "पहली जन्माष्टमी गाँव से बाहर पड़ रही है। हमारे

गाँव में जन्माष्टमी को बड़ी धूम रहती है। झांकी बनती है। फूल डोल निकलता है। चांचर होती है..."

"चांचर क्या?" उमाकान्त ने पूछा।

"चांचर में लोग दो-दो लकड़ियाँ लेकर ताल से लकड़ियाँ बजाते और गाने गाते हैं।"

"कोई सुनाओ न चांचर का गाना।" विमल ने कहा।

"सुनाऊँ?" रामशंकर ने बड़े सरल ढग से पूछा।

"हाँ सुनाओ!" उमाकान्त ने ज़ोर देकर कहा।

"तो दरवाज़ा उढ़का दो।"

रामशंकर ने स्टूल पर बैठे-बैठे दोनों हाथ इस तरह उठाये जैसे वह दो लकड़ियाँ लिये हो और गाने लगा :

"चल चल छबीली बाग में
मेवा खिलाऊँगा।
मेवे की डाली टूट गयी,
चद्दर बिछाऊँगा।"

उसने दोनों हाथों को उसी तरह एक-दूसरे से लड़ाया जैसे लकड़ियाँ बजायी जाती हैं और ख़ामोश हो गया।

"बस?" उमाकान्त ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"गाना लम्बा है।"

"तो सुनाओ ना!" विमल बोला।

रामशंकर फिर दोनों हाथ उठाकर गाने लगा :

"चद्दर का कोना फट गया,
दर्ज़ी बुलाऊँगा।
दर्ज़ी की सूई टूट गयी,
लुहार बुलाऊँगा।
लुहार का हथौड़ा टूट गया,
बढ़ई बुलाऊँगा।
बढ़ई बेचारा क्या करे,
रंडी नचाऊँगा।"

अभी रामशंकर के गाने की गूंज समाप्त भी न हुई थी कि खम्भा फाड़कर नरसिंह भगवान का अवतार-जैसा हुआ। दरवाज़ा ज़ोर से खुला और रामशकर के गाल पर इतने ज़ोर का चांटा पड़ा कि वह स्टूल से लुढ़का। बायाँ हाथ पास पड़े तख्त से टिक गया, नही तो फर्श से सिर टकराता।

उस कमरे के दोनो साथी और दूसरे कमरे से आये दो दूसरे लड़के एक क्षण को स्तम्भित रह गये। फिर बड़ी तेज़ी से उछल कर खड़े हो गये जैसे पैरों तले अंगारे आ गये हों। बोर्डिंग हाउस के सुपरिंटेंडेंट मि० वर्मा तमतमाये खड़े थे।

"चलो हमारे आफ़िस!" मि० वर्मा का रोष-भरा कड़कीला स्वर निकला और भेड़ो की तरह पाँचों आगे-आगे चले, मि० वर्मा उनके पीछे-पीछे।

कमरे में पहुँचते ही मि० वर्मा ने इधर-उधर देखा और बेंत उठाकर आँखें तरेरते हुए रामशकर से बोले, "हाथ खोलो।" और छः बेंत जड़ दिये।

"तुम दोनों वहाँ क्यों गये थे?" दूसरे कमरे वालों से पूछा। सात्विक क्रोध से मि० वर्मा का चेहरा लाल था जैसे उगता सूर्य।

'सर···" अभी वे इतना ही बोल पाये थे कि मि० वर्मा गरजे, "हाथ खोलो।"

दोनों के हाथ आगे बढ़ गये और छः-छः बेंत प्रसाद के रूप में मिले।

इसके बाद विमल और उमाकान्त की पूजा हुई और वर्मा जी बोले, "ये मिडिलची, सब गुनभरी बँदरा मोंठ! जाओ, चुपचाप पढ़ो।"

पाँचो हाथ मलते बाहर निकले, तो विमल ने मस्ती के साथ कहा, "वर्मा साहब ने अच्छी चाँचर खेली!"

रामशंकर सवेरे उदास-सा तख्त पर बैठा था। इतने मे विमल और उमाकान्त नहाकर लौटे।

"क्यों साथी, अभी चाँचर का नशा नहीं उतरा?" विमल ने मुसकुराकर पूछा।

"अरे साथी, ऐसा तो होता ही रहता है।" रामशंकर ने लापरवाही के साथ उत्तर दिया और गाँव के स्कूल की कहानी सुनाने लगा, "मिडिल में पढ़ते थे। दिन में पढ़ना, रात मे स्कूल में ही सोना और पढ़ना। गाँव में रात को नौटंकी होती थी, लेकिन हम लोग देख न पाते थे। रात-दिन पंडिज्जी और मोलवी साब घेरे रहते। हम लोगों ने स्कूल का नाम रख दिया था कांजी हौस। तो हमारा एक साथी था छंगा। उसने ऐसी जुगत बतायी कि रोज नौटंकी देखने लगे।" इतना बताकर रामशंकर खामोश हो गया।

"तुम हमेशा आधी बात कहते हो, रामशंकर," उमाकान्त ने शिकायत की। "कैसे देखने लगे?"

रामशंकर विमल का मुँह ताक रहा था।

"बताओ ना, शरमाते क्यों हो?" विमल बोला।

रामशंकर बताने लगा, "छंगा की सलाह पर हम सब रजाई के भीतर सिरहाने एक औंधा लोटा और पायताने खड़े जोड़ा जूते रख देते। मास्टर समझते, सब सोये पड़े हैं।"

"ये तो यार, बड़े गुनी।" उमाकान्त बोला।

"लेकिन राज एक दिन खुल गया," रामशंकर ने कुछ झेंपते हुए बताया, "गाँव वालों के बारम्बार शिकायत करने पर पंडिज्जी ने एक रात रजाइयाँ खोलकर देखी। सवेरे इमली की छड़ी चली। तीन दिन तक हमें बुखार आया।"

"कुछ परवाह नहीं साथी, सौ-सौ जूते खायें, तमाशा घुस के देखें।" विमल ठठाकर हँसा।

रामशंकर ने झेंपकर मुँह लटका लिया।

"अरे, बुरा मान गये!" विमल ने रामशंकर की ठुड्डी ऊपर को उठायी। "लो, हम आपबीती सुनाते हैं।"

विमल बताने लगा, "हमजोलियों ने धार पर चढ़ा दिया, तो अपन एक गधे पर चढ़ गये। पीछे से सालों ने उसके लकड़ी कोंची। गधा बिदककर ऐसा उछला कि हम छिटककर नाबदान में जा गिरे। जाड़ों में शाम के वक्त नहाना पड़ा। तालाब से नहाकर लौटे, तो अम्मा ने सोटी से खबर

सी—दोखी कहीं का, गधे पर चढ़ता है !"

रामशकर के ओठों पर हलकी-सी मुसकुराहट आ गयी।

अब उमाकान्त अपनी करतूत बखानने लगा, "मैं जब चार में था, पास के एक आदमी से इन्द्रजाल ले आया। उसमें बसीकरन की जुगत थी। मैं चारपाई पर बैठा पढ रहा था। इतने में चाचा आ गये। उन्होंने पूछा, क्या पढ़ते हो उमाकान्त ? मैंने किताब दिखायी, तो उनकी त्योरी चढ़ गयी। बसीकरन की जुगत पढ़ते ही उन्होंने ऐसे जोर का झापड़ दिया कि मैं चारपाई पर लुढ़क गया। किताब छीनकर फेंक दी। फिर देखने को न मिली। चाचा चुपचाप लौटा आये।"

तीनों हँसने लगे।

"वर्मा साहब ने हम मिडिलचियों को ठीक पहचाना।" विमल ने मस्ती के साथ टिप्पणी की।

कृष्ण जन्माष्टमी को शाम के वक्त सभा हुई। ऐसी धार्मिक सभाओं में मुख्य वक्ता हिन्दी के अध्यापक पं० रामरत्न पाठक होते।

पाठक जी ने "ओउम् विश्वानिदेव सवितुर्दुरितानिपरासुव, यद्भद्रं तन्नआसुव" के साथ अपना भाषण आरम्भ किया। थोड़ी भूमिका के बाद गीता का श्लोक पढ़ा, 'यदायदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानम् सृजाम्यहम्' और व्याख्या की, "इसका मर्म यह है, जब-जब अधर्म बढता है, तब-तब परमब्रह्म की अनुकम्पा से कोई महान् आत्मा जन्म लेती है। वह आती है, परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां धर्मसंस्थापनार्थाय, अर्थात् साधु पुरुषों की रक्षा करने, दुष्टों का नाश करने और धर्म की पुनः स्थापना के लिए। राम, कृष्ण, स्वामी दयानन्द ऐसे ही महापुरुष थे। कुछ लोग राम, कृष्ण को अवतार मान लेते हैं उनके अलौकिक गुण देखकर।"

इसके बाद पाठक जी ने विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए समझाया, "गीता का यह उपदेश आर्य-धर्म का मर्म है कि आत्मा अमर है। आग उसे जला नहीं सकती, शस्त्र उसे काट नहीं सकता। इसलिए देश, धर्म और जाति के लिए हँसते-हँसते प्राण न्योछावर करने को तत्पर रहो।

ह्तो वा प्राप्यसिस्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् अर्थात् मारे जाने पर मुक्ति और विजयी होने से अपने देश का उद्धार।…"

सभा के बाद रामशंकर के मन मे शंका का कीड़ा घुस गया, बाबा राम और कृष्ण को भगवान् का अवतार कहते हैं, पंडित जी कहते हैं, महापुरुष। सच क्या है?

10

रामशंकर दशहरे में गाँव आया, तो तीन महीने में ही हुलिया बदला हुआ। मारकीन की गोल टोपी की जगह फेल्ट की बनी टोपी ले ली थी। अंग्रेजी बाल रखाये था। उधर चोटी का घेर आर्य समाजी प्रभाव में गाय के खुर की नाप का था, इसलिए चोटी का कुछ भाग टोपी के भीतर रहता, कुछ बाहर। कमीज साफ-सुथरी, लोहा की हुई, धोती भी धोबी की धुली जिस पर इस्त्री थी। पैरों में मुंडाकट बूट जो न न्यू कट थे और न चमरौधा। रामनारायण के बाजार में इस प्रकार के सस्ते मुंडा बूट बनते थे।

रामशंकर को नगरवासी बनाने में विमल का विशेष हाथ था। उसके पिता शिवलाल कलकत्ते में किसी सेठ के मुनीम थे। विमल की मिडिल की परीक्षा के बाद वह उसे कलकत्ते ले जाना चाहते थे। सोचा था, किसी गद्दी में चिपका देंगे। लेकिन गाँव के कलकत्ता कमाने वाले लोगों ने समझाया, "दस पास करा दो। ज्यादा अच्छी नौकरी मिल जायगी। फिर, अभी लड़का बहुत छोटा है।" कुछ और पढ़ ले, यह बात तो शिवलाल की समझ में आयी, लेकिन छोटा होने का तर्क उनके दिमाग़ मे न घुसा। उन्होंने सोचा, हम भी तो सिर्फ़ तेरह साल के थे और प्राइमरी तक पढ़े हुए। पिता के न रह जाने पर विवश होकर कलकत्ते को रुख करना पड़ा था। गाँव के रामनाथ तिवारी, थे तो किसी ड्योढी मे जमादार, लेकिन दो पीढ़ी से कलकत्ता कमा रहे थे। उन्होंने शिवलाल की माँ को

समझाया था, भौजी, भेज दो सिउलाल को हमारे साथ। कहीं न कहीं फिट्ट कर देंगे। सिउलाल तो पढ़ा-लिखा भी है। इस प्रकार शिवलाल कलकत्ते गये थे और पच्चीस रुपये महीने पर लगे थे। धीरे-धीरे मेहनत और योग्यता के सहारे आज पचहत्तर रुपये महीने कमा रहे थे। गाँव के खाते-पीते, प्रतिष्ठित व्यक्तियों में उनकी गिनती थी। विमल अपने पिता के कारण शहरी सभ्यता से थोड़ा परिचित हो गया था। कानपुर में शिवलाल के साले कलक्टरी में चपरासी थे। शिवलाल ने खूब सोच-समझकर विमल को कानपुर में भर्ती कराया था। आखिर घर के आदमी हैं। लड़के पर नजर रखेंगे। रहने की जगह शिवलाल के साले के पास काफी न थी—ग्वाल टोली के एक हाते में साझे में एक कोठरी ले रखी थी—इसलिए विमल बोर्डिंग में रहता था।

माँ बने-सँवरे रामशंकर को देखकर खुश हो गयीं, गले से लगाया, लेकिन पिता शिवअधार का माथा ठनका। उन्हें लगा, लक्षण अच्छे नहीं। अभी लगाम लगाना ठीक होगा।

दूसरे दिन सवेरे-सवेरे मन्ना नाई को लिये आये और रामशंकर से कहा, "बड़कऊ, ये बार बनवा डालो, अच्छे नहीं लगते।" साथ ही मन्ना से कहा, "मन्ना, छुरा ठीक से चलाना। बना दो सब।"

मन्ना उनको कुछ अचरज से ताकने लगा।

"हमारा मुँह क्या ताकते हो? पंडितों के लड़के ऐसे बार नहीं रखते।" शिवअधार ने शान्त भाव से समझाया।

रामशंकर एक बोरा डालकर चौपाल में बैठ गया और मन्ना उसका मुंडन करने लगा। शिवअधार पास ही चारपाई पर बैठे थे।

जब करीब आधा सिर मुँड़ चुका, शिवशंकर कहीं बाहर से आये। उन्होंने गौर से रामशंकर को देखा, लेकिन सिर्फ गर्दन हिलाकर अन्दर चले गये।

भीतर गये, तो रामशंकर की माँ को सुनाकर अपने आप कहने लगे, "भैया पर तो सतजुग सवार है।"

"क्या हुआ?" रामशंकर की माँ ने पूछा।

"अरे, कुछ न पूछो भौजी, बच्चा जुल्फें रखाये था, तो मन्ना को

बुलाकर मुंड़वा दी।"

"ठीक तो किया लाला, सादा-बोदा रहे, सो ठीक।"

"हाँ, ढोल का साथी डंडा," शिवशंकर तिनककर बोले। "हुआं चार लड़कों के बीच रहना। क्या हरज है जो जुल्फें रखे?"

शिवअधार निश्चिन्त हो गये थे कि अब, तो सिर मुंड़ ही जायेगा, इसलिए वह उठकर अन्दर आये। बरोठे से ही उन्होंने शिवशंकर का अन्तिम वाक्य सुना।

"का है?"

उनकी पत्नी ने सब बताया, तो हँसकर कहने लगे, "हमें जुलफें नहीं सोहातीं। गाँव में नाऊ-बारी जुलफें रखाये हैं। बाँभन-ठाकुर मे सिरिफ बिसेसर काका और धनेसर काका का लडका रखे हैं।"

बड़े भाई से शिवशंकर मुँहजोरी न करते थे। फिर अब तो साँपों की लड़ाई में जीभों की लपालप के सिवा कुछ लाभ न था।

वह धीरे से बोले, "सहर में भैया, सब लड़के रखाते हैं। बच्चा आखिर रहैगा सहर में, तो खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलैगा।"

शिवअधार को शिवशंकर की बात जँची, इसलिए उन्होंने इतना ही कहा, "अभी पहिला साल है। नौ-दस दर्जा पास करें, तब देखा जायगा।"

दोनो के खामोश हो जाने पर रामशंकर की माँ बोलीं, "बडकऊ कहते हैं, उनके कपरा भठिया वाले से धोवा दो। अपना धोबी साफ़ नहीं धोता, भठिया नही लगाता।"

"इसमें कुछ हरज नहीं," शिवअधार ने निर्णय दिया।

शिवशंकर डरे थे, कही भैया मना न कर दें। उन्होंने सम्मति की मुहर लगा दी, तो शिवशंकर खुश हो गये।

इस साल से गढ़ी में दशहरे के उत्सव के साथ एक नया प्रोग्राम जुड़ गया था। दशहरे से पहले दौड़, ऊँची कूद और लम्बी कूद में होड़ें हुईं और फुटबाल का मैच हुआ। दशहरे के दिन महावीर सिंह दौड़ और कूदों में अव्वल और दोयम आने वाले को और फुटबाल में जीती टीम को इनाम देगा। यह समारोह गढ़ी के भीतर के सहन में होता था। महावीर सिंह ने

सिपाही भेजकर रामशंकर को भी आने का न्योता भेजा था। रामशंकर अब अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ता था, इसलिए उसका दर्जा गाँव वालों से कुछ बड़ा हो गया था।

महावीर सिंह पढ़ने में होशियार न था। तीन साल से वह पढ़ रहा था, लेकिन तीसरे दर्जे में दो साल रहने के बाद अब वह चौथे में आया था। उसका ममेरा भाई समरजीत उससे कुछ तेज़ था। वह पाँचवें में था।

कालिवन्स कालेज के प्रिंसिपल ने रणवीर सिंह को बताया था कि लड़के अंग्रेज़ी में बहुत कमजोर हैं। उर्दू भी ठीक नहीं बोल पाते। उच्चारण ग़लत करते हैं।

प्रिंसिपल की सलाह पर एक मेम दोनों लड़कों को अंग्रेज़ी बोलना सिखाने के लिए रखी गयी थी। वह आधे घंटे के लिए आती। डेढ़ सौ रुपये महीना लेती। वह बोलचाल के तरीके बताती, अंग्रेज़ी शिष्टाचार के नियम सिखाती। एक मौलवी साहब आते। वह आधा घंटे उर्दू में बातें करना सिखाते—शीनक़ाफ से दुरुस्त बामुहावरा उर्दू बोलना, दरबारी अदब-क़ायदे। वह पचास रुपये पाते थे।

रामशंकर साफ़-सुथरी धोती ढंग से पहन, कमीज डाल और ऊसर ज़मीन पर उगे बबूल जैसी चोटी को फ़ेल्ट की टोपी से ढँक, मुँडा बूट पहनकर गढ़ी जाने को तैयार हुआ। कुन्ती मायके आयी हुई थी। छोटे भाई की सजधज देखकर उसका मन खिल गया और उसने लपककर रामशंकर को गले से लगा लिया। "मेरा रामू," और प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरा।

रामशंकर की माँ बेटे को देखकर हँसती हुई बोली, "आज बड़कऊ ऐसे सजे-बजे हैं जैसे देखुवा आ रहे हों।"

रामशंकर शरमा गया।

"आयेंगे ही।" कुन्ती ने उछाह भरे स्वर में कहा, "ऐसी ही छोटी-सी भौजी आयेगी हमारी।"

रामशंकर ने अपने को कुन्ती की बाँहों से छुड़ा लिया और जल्दी-जल्दी बाहर चला गया। माँ और बहन के हँसने की आवाज़ उसके कानों

में अनोखा संदेश दे रही थी। वह चला, तो गर्दन मोड़-मोड़ कर अपने-आपको देखने लगा, जैसे अपने पर स्वयं मुग्ध हो रहा हो। अपने ब्याह की बात से उसके मन में एक पुलक आयी, अजानी, अरूप पुलक।

रामशंकर गढ़ी पहुँचा, तो महावीर सिंह को आशीर्वाद दिया। महावीर सिंह ने हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ बढ़ा दिया। रामशंकर ने कुछ इस तरह हाथ बढ़ाया जैसे वह ऊँघता रहा हो और मास्टर ने अचानक कुछ पूछ दिया हो।

इसके बाद महावीर ने रामशंकर का परिचय समरजीत से कराया।

समरजीत ने मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया और साथ ही बोला, "हाऊ डू यू डू ?"

रामशंकर ने ढीले ढंग से अपना हाथ बढ़ा दिया। समरजीत को लगा, जैसे वह हाथ के बदले कोई लत्ता थामे हो।

इस बीच रामशंकर 'हाऊ डू यू डू' का अर्थ निकालने लगा। "हाऊ माने कैसे; डू यू डू माने करते हो," रामशंकर ने मन-ही-मन कहा। उसकी समझ में न आया, किस काम के बारे में समरजीत पूछ रहा है।

रामशंकर पूछ बैठा, "कौन-सा काम ?"

समरजीत हँसने लगा। महावीर ने भी मुसकरा दिया। समरजीत ने सोचा, एटीकेट (शिष्टाचार) खाक नहीं जानता और बोल उठा, "ईडियट, रस्टिक। (बुद्धू, गँवार)।"

रामशंकर के पल्ले कुछ न पड़ा। समरजीत खुश था।

"आओ बैठो, रामशंकर," महावीर ने कहा।

समरजीत से न रहा गया। वह बोला, "महावीर, तुम तो कहते थे, रामशंकर जिस क्लास में पढ़ते हैं, वह छठे के बराबर है।..."

रामशंकर ने ही समझाया, "है तो छठे के बराबर, लेकिन मुझे तो स्कूल में भर्ती हुए सिर्फ़ तीन महीने हुए हैं। स्पेशल ए और स्पेशल बी के बाद मेरी अंग्रेज़ी सात पास के बराबर होगी।"

"ओ, आई सी।" समरजीत बोला।

रामशंकर फिर चकरा गया, सोचा, "आई सी माने मैं देखता हूँ। ऐसा कहने का मतलब क्या ?" लेकिन वह बोला कुछ नहीं।

रामशंकर गाँव का पहला लड़का था जो अंग्रेजी पढ़ने गया था। रणवीर सिंह का बेटा महावीर भी गया था, लेकिन वह बड़े आदमी थे, इसलिए उनकी गिनती गाँव वालों में न होती थी। पंडिताई करने वाले शिवअधार की औकात ऐसी कि वह बेटे को अंग्रेजी पढ़ा सकें, यह ब्राह्मणों, ठाकुरों के लिए, खासकर ब्राह्मणों के लिए ईर्ष्या की बात थी। धनेश्वर मिश्र राज पुरोहित थे। उनकी माली हालत पं० रामअधार से बहुत अच्छी थी। लेकिन उनका बेटा केशव दो कौड़ी का भी न था। मिडिल स्कूल से भाग जाता था। हारकर उसे पुरोहिती में डाला गया। वह सत्य-नारायण की कथा और दुर्गा सप्तशती जैसे-तैसे बाँच लेता था और शुद्ध-अशुद्ध संस्कृत में संकल्प पढ़ लेता था, अमुक मासे, अमुक तिथौ कहकर काम चलाता था। फिर भी धनेश्वर को जलन हुई और वह अपने मन का भाव छिपा न सके।

एक दिन मुरलीधर के चौपाल में शिवसहाय दीक्षित, मुरलीधर सुकुल और रामजोर सिंह बैठे थे। धनेश्वर उधर से निकले, तो रामजोर ने आवाज दी, "काका, कहाँ जा रहे हो आँख बचा के ?"

धनेश्वर चौपाल की ओर मुड़ गये और हँसते हुए उत्तर दिया, "आँख तो नहीं चुरा रहे थे। कौन किसी का करज काढ़ा है। जा रहे थे बाजार तरफ, बाभनी देखने।"

"आओ, आओ, दोहरा-सुपारी खा लो।" मुरलीधर ने बुलाया। "छोड़ो निन्यानबे का फेर।"

"अभी गेरुवा नहीं पहिरा।" धनेश्वर ने मुसकराकर उत्तर दिया। शिवसहाय और रामजोर भी मुसकरा दिये। मुरलीधर अपने गेरुवा वस्त्रों पर कटाक्ष से कुछ सकुचा गये। धनेश्वर चौपाल में आकर एक खाली चारपाई पर बैठ गये।

इधर-उधर की कुछ बातों के बाद धनेश्वर ने बिना प्रसंग ही राम-शंकर के अंग्रेजी पढ़ने की चर्चा चला दी।

उनकी बातें सुनकर शिवसहाय बोले, "सिउअधार चतुर हैं। सोचा, क्या धरा है पंडिताई में। पढ़ाओ अंग्रेजी, लड़का किसी ओहदे पर पहुँचे।"

"सो तो ठीक," धनेश्वर ने उत्तर दिया, "पै सात पीढ़ी की विद्या पर तो पानी फेर दिया।" थोड़ा रुककर जोड़ा, "रामअधार भैया ने यह न सोचा, लड़के को खिरिस्टान बना रहे हैं।"

"सो तो है," मुरलीधर ने हामी भरी। "अब लड़का हाथ से बेहाथ हो गया। अंग्रेजी पढ़ा लड़का, जूता पहने पानी पियेगा, होटल में खायगा। सन्ध्या-गायत्री से कुछ सरोकार नहीं।"

इसकी पुष्टि धनेश्वर और शिवसहाय, दोनों ने की।

"मति मारी गयी है, माया के मोह में," धनेश्वर ने टिप्पणी की।

"हाँ, लछमिनिया बड़ी ठगिनी है। कबीर दास संत थोड़ै कह गये हैं—माया महा ठगिनी हम जानी।" शिवसहाय ने व्याख्या की।

"दिच्छित जी ने ठीक कहा," रामजोर ने पुष्टि की।

"अपना क्या, देखते चलो," धनेश्वर बोले। "हम तो भाई पुरखों की लीक पर चल रहे हैं।" और उठ खड़े हुए, बोले, "वज़ार हो आवें।"

11

मुरलीधर की तीर्थ-यात्रा होती रहती थी। वही किशनगढ़ को बाहरी दुनिया से जोड़ते थे।

इस बार वह घूम-घाम कर लौटे, तो अपने साथ एक संन्यासी जी को लेते आये और घर-घर जाकर गाँव-भर को बताया कि संन्यासी जी बहुत बड़े विद्वान हैं, चारों वेदों के ज्ञाता।

संन्यासी जी के आने के तीसरे दिन मुरलीधर ने महादेव जी के मन्दिर में संन्यासी जी का भाषण करा दिया। भाषण सुनने के लिए मिडिल स्कूल के लड़के और गाँव के लोग इकट्ठे हुए। मुरलीधर किसी तरह राजी करके शिवअधार को भी ले आये।

संन्यासी जी ने अपने भाषण में मूर्ति-पूजा का खंडन किया। कहने लगे, "महमूद गजनवी ने सोमनाथ की मूर्ति तोड़ डाली, लेकिन मूर्ति

उनका कुछ न बिगाड़ सकी।"

इससे सुनने वालों में खलबली मच गयी। शिवअधार की बगल में बैठे दीनानाथ भगत ने उनके कान में कहा, "पंडित बाबा, तुम कुछ कहो।" शिवअधार ने हाथ के इशारे से उन्हें चुप रहने को कहा।

संन्यासी जी का हौसला बढ़ा और उन्होंने श्राद्ध-तर्पण का, पिंडदान का मजाक उड़ाया। कहने लगे, "पंडित पिंडदान कराते हैं और वह पुरखों को मिल जाता है, यह बिलकुल बकवास है। अगर हम यहाँ पेड़ा उठायें, तो क्या वह किसी गाँव घर तक पहुँचेगा? यह सब पोप लीला है।"

अब तो सुनने वालों से रहा न गया। एक साथ कई आवाजें आयीं, "शिवअधार बाबा, करो शास्त्रार्थ। खंडन करो संन्यासी जी की बातों का।"

अन्त में तय हुआ कि दूसरे दिन उसी समय संन्यासी जी और पं० शिवअधार का शास्त्रार्थ यहीं, महादेव जी के मन्दिर में हो।

दूसरे दिन के शास्त्रार्थ की तैयारी कुछ उसी तरह होने लगी जैसे दंगल लगने जा रहा हो। पूरे गाँव में मनादी की गयी। दीनानाथ भगत ने गाँव के चुने हुए लोगों को इकट्ठा करने का बीड़ा उठाया। धनेश्वर मिश्र कर्मकांडी राजपुरोहित। उनको भगत ने राजी किया। शिवसहाय दीक्षित की गिनती संस्कृत जानने वालों में होती थी। बारात-ज्योनारों में शिवसहाय यह श्लोक स्वर के साथ पढ़ते—पयसा कमलं कमलेन पयः, पयसा कमलेन विभाति सरः। फिर बताते कि अब हम इसका भाषा में

जुड़ने लगे। धनेश्वर और शिवसहाय साथ-साथ आये और सबसे आगे की पाँत में जा बैठे। भगत पं० शिवअधार को लिये आया। शिवअधार भी आकर धनेश्वर की बगल में बैठ गये। त्रिपुण्डधारी पं० शिवअधार एक लाँग की धोती और मिर्जई पहने, गोल पण्डिताऊ टोपी लगाये और आधी धोती कन्धे पर दुपट्टे की तरह डाले थे।

संन्यासी जी मुरलीधर सुकुल के साथ आये। उनके बैठने के लिए एक चौकी थी। लेकिन संन्यासी जी ने इस पर आपत्ति की। उनका कहना था कि शास्त्रार्थ समान आसन पर हो। संन्यासी जी के इस विनय-भाव का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। जब शिवअधार के लिए एक और चौकी लाने की बात उठी, तो शिवअधार ने आपत्ति की। उनका कहना था कि धनेश्वर काका पद में हम से बड़े हैं। हमारा ऊँचे आसन पर बैठना ठीक नहीं। उनकी इस नम्रता से भी लोग प्रसन्न हो गये। धनेश्वर प्रसन्न तो हुए, फिर भी उन्होंने शिवअधार के इस तर्क को यह कहकर काटा कि बच्चा, भागवत बाँचते समय तो तुम ऊँचे आसन पर रहते हो। लेकिन उनका यह तर्क न चला। शिवअधार ने चट उत्तर दिया कि भागवत बाँचते समय हम व्यास गद्दी पर रहते हैं। उसकी तुलना शास्त्रार्थ से करना उचित नहीं। तब संन्यासी जी ने एक कम्बल मंगवाने का सुझाव दिया। दीनानाथ लपका हुआ अपने घर गया और कम्बल ले आया।

संन्यासी जी और पं० शिवअधार कम्बल पर आमने-सामने बैठे। सभी लोगों की निगाहें दोनों पर इस तरह गड़ी थीं जैसे दोनों तीतर हों जिन्हें लड़ने के लिए पिंजड़ों से बाहर किया गया हो।

संस्कृत-साहित्य और व्याकरण में पं० शिवअधार की अच्छी पैठ थी। उन्होंने लघुत्रयी और बृहत्त्रयी का अध्ययन बहुत अच्छी तरह किया था। पुराण प्रायः सब उनके पढ़े हुए थे। हाँ, वैदिक संस्कृत वह न जानते थे।

शास्त्रार्थ आरम्भ करते हुए पं० शिवअधार ने थोड़ी क्लिष्ट संस्कृत में और ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हुए जिनके दो अर्थ हों, संन्यासी जी से कुछ कहा। उनकी बात संन्यासी जी के पल्ले न पड़ी। इसी से

उसका कुछ न बिगाड सकी।"

इससे सुनने वालों में खलबली मच गयी। शिवअधार की बगल में बैठे दीनानाथ भगत ने उनके कान में कहा, "पंडित बाबा, तुम कुछ कहो।" शिवअधार ने हाथ के इशारे से उसे चुप रहने को कहा।

संन्यासी जी का हौसला बढ़ा और उन्होंने श्राद्ध-तर्पण का, पिंडदान का मजाक उड़ाया। कहने लगे, "पंडित पिंडदान कराते हैं और वह पुरखों को मिल जाती है, यह बिलकुल बकवास है। अगर हम यहाँ पेड़ा उछालें; तो क्या वह किसी खास घर तक पहुँचेगा ? यह सब पोप लीला है।"

अब तो सुनने वालों से रहा न गया। एक साथ कई आवाजें आयीं, "सिउअधार बाबा, करो सास्त्रार्थ। खंडन करो संन्यासी जी की बातों का।"

अन्त में तय हुआ कि दूसरे दिन उसी समय संन्यासी जी और पं० शिवअधार का शास्त्रार्थ वहीं, महादेव जी के मन्दिर में हो।

दूसरे दिन के शास्त्रार्थ की तैयारी कुछ उसी तरह होने लगी जैसे दंगल लगने जा रहा हो। पूरे गाँव में मनादी की गयी। दीनानाथ भगत ने गाँव के चुने हुए लोगों को इकट्ठा करने का बीड़ा उठाया। धनेश्वर मिश्र कर्मकांडी राजपुरोहित। उनको भगत ने राजी किया। शिवसहाय दीक्षित की गिनती संस्कृत जानने वालों में होती थी। बारात-न्योतनी में शिवसहाय यह श्लोक स्वर के साथ पढ़ते—पयसा कमलं कमलेन पयः, पयसा कमलेन विभाति सरः। फिर बताते कि अब हम इसका भाखा में अपना किया उल्था सुनावेंगे, और कुछ-कुछ गाते हुए उचारते—जल से कमल, कमल से जल की शोभा बढ़ती। और जल-कमल से सरवर में आभा चढ़ती। इसीलिए उनकी गिनती संस्कृत जानने वालों में होती थी। दीक्षित जी ने संस्कृत पढ़ने की ठानी भी थी, लेकिन अकः सवर्णे दीर्घः सूत्र ने ऐसा दीर्घ रूप धारा कि दीक्षित जी डर-से गये और लघु सिद्धान्त कौमुदी की पोथी ताक में रख दी। सो भगत ने उनके भी हाथ-पैर जोड़ कर उन्हें शास्त्रार्थ के समय आने को राजी कर लिया।

दूसरे दिन तीसरे पहर महादेव जी के मन्दिर में बिछे टाट पर लोग

जुड़ने लगे। धनेश्वर और शिवसहाय साथ-साथ आये और सबसे आगे की पांत में जा बैठे। भगत पं० शिवअधार को लिये आया। शिवअधार भी आकर धनेश्वर की बगल में बैठ गये। त्रिपुण्डधारी पं० शिवअधार एक लांग की धोती और मिर्जई पहने, गोल पण्डिताऊ टोपी लगाये और आधी धोती कन्धे पर दुपट्टे की तरह डाले थे।

संन्यासी जी मुरलीधर सुकुल के साथ आये। उनके बैठने के लिए एक चौकी थी। लेकिन संन्यासी जी ने इस पर आपत्ति की। उनका कहना था कि शास्त्रार्थ समान आसन पर हो। संन्यासी जी के इस विनय-भाव का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। जब शिवअधार के लिए एक और चौकी लाने की बात उठी, तो शिवअधार ने आपत्ति की। उनका कहना था कि धनेश्वर काका पद में हम से बड़े हैं। हमारा ऊँचे आसन पर बैठना ठीक नहीं। उनकी इस नम्रता से भी लोग प्रसन्न हो गये। धनेश्वर प्रसन्न तो हुए, फिर भी उन्होंने शिवअधार के इस तर्क को यह कहकर काटा कि बच्चा, भागवत बाँचते समय तो तुम ऊँचे आसन पर रहते हो। लेकिन उनका यह तर्क न चला। शिवअधार ने चट उत्तर दिया कि भागवत बाँचते समय हम व्यास गद्दी पर रहते हैं। उसकी तुलना शास्त्रार्थ से करना उचित नहीं। तब संन्यासी जी ने एक कम्बल मंगवाने का सुझाव दिया। दीनानाथ लपका हुआ अपने घर गया और कम्बल ले आया।

संन्यासी जी और पं० शिवअधार कम्बल पर आमने-सामने बैठे। सभी लोगों की निगाहें दोनों पर इस तरह गड़ी थीं जैसे दोनों तीतर हों जिन्हें लड़ने के लिए पिंजड़ों से बाहर किया गया हो।

संस्कृत-साहित्य और व्याकरण में पं० शिवअधार की अच्छी पैठ थी। उन्होंने लघुत्रयी और बृहत्त्रयों का अध्ययन बहुत अच्छी तरह किया था। पुराण प्रायः सब उनके पढ़े हुए थे। हाँ, वैदिक संस्कृत वह न जानते थे।

शास्त्रार्थ आरम्भ करते हुए पं० शिवअधार ने थोड़ी क्लिष्ट संस्कृत में और ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हुए जिनके दो अर्थ हों, संन्यासी जी से कुछ कहा। उनकी बात संन्यासी जी के पल्ले न पड़ी। इसी से

शिवअधार ने संन्यासी जी के संस्कृत-ज्ञान की थाह ले ली।

दूसरा प्रश्न उन्होंने सरल संस्कृत में किया। उसका उत्तर संन्यासी जी ने अड़ते हुए अशुद्ध संस्कृत में दिया।

अब तो पं० शिवअधार की बाँछें खिल गयीं। वह संस्कृत के बदले हिन्दी मे कहते, "संन्यासी जी, यह यजुर्वेद का मंत्र है," और ओम् से आरम्भ कर सरल संस्कृत में कुछ कहते। बीच-बीच में र्व शब्द का प्रयोग कर मूर्ति शब्द बार-बार दुहराते। फिर पूछते, "बताइये, यजुर्वेद को आप मानेंगे या नहीं ?" फिर ऋग्वेद और सामवेद के दृष्टान्त इसी प्रकार देने लगे। संन्यासी जी की बोलती बन्द हो गयी और वहाँ बैठे लोगों ने मान लिया कि संन्यासी जी हार गये।

शास्त्रार्थ समाप्त होने के बाद धनेश्वर मिश्र और शिवसहाय दीक्षित साथ-साथ घर जा रहे थे, दीनानाथ भगत उनके पीछे-पीछे।

शिवसहाय ने धनेश्वर से हँसते हुए कहा, "संन्यासी जी महराज को संस्कृत आती न थी, इधर श्रोता थे, काला अच्छर भैंस बराबर। सो सिउअधार की बन आयी। आँधर राजा, बहिर पतुरिया, नाचे जा परतीतिन है, वाली बात भई।"

धनेश्वर हँसने लगे। लेकिन दीनानाथ को दीक्षित की यह टिप्पणी अच्छी न लगी। उसने मन-ही-मन कहा, "जल रहे हैं सिउअधार बाबा से। बाँभन, कूकुर, हाथी, ये नहीं जाति के साथी।" भगत ने बगली काटकर लम्बे डग भरते हुए अपने घर की राह ली।

उधर संन्यासी जी शास्त्रार्थ में भले ही हार गये हों, उन्होंने हिम्मत न हारी थी। उन्होंने नयी योजना बनायी सात दिन की। पहले दिन महादेव जी के मन्दिर में शाम के वक्त हवन का आयोजन किया। हवन के बाद प्रवचन। दूसरे दिन चौभुजी माता के मन्दिर में। इसके बाद एक-एक दिन दूसरे छोटे-बड़े देवालयों में। हवन के बाद प्रवचन रोज होता। सातवें दिन हवन गाँव के पूर्व वाले बरगद के नीचे हुआ। ठाकुरों को संन्यासी जी दो दिन बाद से ही हवन में शामिल करने लगे थे। ननकू, शंकर और रामजोर गायत्री मंत्र का जोर-जोर से उच्चारण करने के बाद गलाफाड़ स्वर में 'स्वाहा' कहते हुए शाकल्य हवन-कुण्ड मे छोड़ते। लेकिन

बरगद के नीचे हुए हवन में संन्यासी जी ने नाइयों, बारियों आदि को भी शामिल किया। मन्ना नाई भी झिझकते-झिझकते, हवन करने वालों में आ बैठा।

संन्यासी जी तो विदा हो गये थे, लेकिन उनके हवनों और प्रवचनों की तेज आँच ने ब्राह्मण-समाज को बुरी तरह से झुलसा दिया था। "बारी, नाऊ, कहार हवन करें, ऐसा अनाचार तो कभी न हुआ था।" ऐसा घनेश्वर खीझ के साथ शिवसहाय से कहते। "ठाकुर ही नहीं, बारी, कहार तक पाँयलागी के बदले नमस्ते कहते हैं।" शिवसहाय 'नमस्ते' शब्द पर जोर देते हुए चेताते। "छोटे सरकार के साथ की वही चण्डाल चौकड़ी फिर आ जुटी है।" घनेश्वर दाँत पीसते हुए बताते। "ननकू, संकर, रामजोर और वह ब्राह्मण-कुल-कलंक मुरली सुकुल।" घनेश्वर 'ब्राह्मण-कुल-कलंक' खूब जोर से कहते। उनका पूरा शरीर क्रोध से काँपने लगता।

इस अँधेरे से निकलने की राह खोजने के लिए, आखिरकार, एक शाम घनेश्वर के चौपाल मे ब्राह्मणो की पंचायत हुई, आत्मरक्षा के उपाय ढूँढ़े जाने लगे। एक घण्टे की मगजमारी के बाद यह तय पाया कि अगर कोई ब्राह्मण 'नमस्ते' कहे, तो उसके जवाब में 'नमस्कार' कहा जाय; लेकिन किसी दूसरी जाति का आदमी यदि 'नमस्ते' कहे, तो 'आशीर्वाद' कहा जाय, या कुछ भी उत्तर न दिया जाय। शिवसहाय ने नमस्ते का अर्थ कर दिया, नहीं है मस्ते माने मत्थे में कुछ—दिमाग खाली।

एक दिन घनेश्वर मिश्र कहीं जा रहे थे। मुरलीधर सुकुल के दरवाजे से निकले, तो मुरलीधर ने 'नमस्ते' किया।

घनेश्वर ने उनकी तरफ़ देखा और अनमने भाव से 'नमस्कार' कहा।

मुरलीधर के पास ही रामजोर सिंह बैठा था। वह भी बोला, "काका, नमस्ते।"

घनेश्वर ने कुछ उत्तर न दिया और बढ़कर मुरलीधर के चौपाल में घुस गये।

"जैसे सुकुल," घनेश्वर बड़े रोब के साथ बोले, "आरिया तो बनते हो, देवता मानते नहीं, कहते हो पत्थर हैं, कबीरदास का पद बघारते हो—दुनिया ऐसी बावरी पत्थर पूजन जाय। फिर उपरहिती काहे करते हो ?"

"तो भैया, इसमें दोस क्या है ?" मुरलीधर ने पूछा।

"हुआँ गौर-गनेस की पूजा नही कराते ?"

मुरलीधर के पास कुछ उत्तर न था।

"बड़े कौल के सच्चे हो, तो छोड़ दो उपरहिती।"

"काका, वह बात छोड़ो। यह बताओ, पत्थर जो देवता है, तो सोमनाथ के मन्दिर को गजनी का सुल्तान कैसे लूट ले गया ? अपने को न बचा पाये सोमनाथ बाबा !" रामजोर ने आड़े हाथों लिया।

"तुम मुंह न खोलवाओ, यही अच्छा !" घनेश्वर तैश में थे।

"तो गुस्सा काहे हो रहे हो, बात का जवाब तर्क से दो," रामजोर ने टोका।

"जैसे तर्क से जवाब तो सिउअधार दे चुके, तुम्हारे संन्यासी को," घनेश्वर ने झाड़ा। "अब अलुवा किन पियादों मे ? हाँ, नौआ, कहार, बारी, इनके बीच विद्या छाँटौ। बात हम इनसे कर रहे थे। कुलीन बांभन, पै हाँथी के खाने के दाँत और देखाने के और।"

"तो जनम से जात हम नही जानते, काका," रामजोर बोला। "जनम से सब बरोबर। काम से जाति। जो बिद्या पढ़ै, सो बांभन।"

"हाँ, तुम काहे जनम से मनोगे," घनेश्वर ने कटाक्ष किया। "वो, जिसको बियाह लाये हो हमीरपुर से, या न जाने कहाँ से, पूरा गाँव जानता है, अहिरिन के पेट की है ?" घनेश्वर कह गये और रामजोर की आँखों में आँखें डालकर देखने लगे। "कहो दयानन्द स्वामी की कसम खाके, हम झूठ कहते हैं, या अपने गदेल की कसम खाव।"

चौपाल से उतरकर चलते-चलते घनेश्वर ने एक और रद्दा दिया, "देउता पत्थर, पै बरगद-पूजा आरियों के घर-घर में भई। रामजोर, तुम्हारे औ' ननकू के मुँह पर मालिन ने कहा, 'सब आरियों के घर मे बरगद की टहनी मंगायी गयी औ' मैं दे आयी।' तुम दोनों उसका मुँह

ताकते रह गये। बाका न फूटा।" फिर हाथ बढ़ाकर मुसकुराते हुए जोड़ा, "औ' हरछठ ? ननकू हैं तो बड़े तेज़। पै मेहरारू सिंघिनी की नाईं दहाड़ी, 'बरगद तुम्हारी खातिन पूजती हैं। उसमें चुप रही। हरछठ है औलाद का त्योहार। जो हमारे गदेल को कुछ हो गया, तो किसकी गोहार लागेगी, तुम्हारी या दयानन्द स्वामी की ? खबरदार, जो हरछठ माता को कुछ कहा!' रह गये ननकू अपना-सा मुँह लेकर। आरियों की सब मेहरियाँ गयीं, डंके की चोट, चौमुजी माता में हरछठ पूजने।"

धनेश्वर हँसे और अपनी मूँछों पर हाथ फेरा। मुरलीधर ने गर्दन झुका ली। रामजोर मुँह फेरकर दीवार की ओर ताकने लगा।

धनेश्वर वहाँ से पं० रामअधार की ओर गये और उनको सारा किस्सा सुनाया। "बड़ा संकट जान पड़ता है, भैया," धनेश्वर बोले।

पं० रामअधार ने धनेश्वर मिश्र को समझाया, "धन्नू, बिसेख चिन्ता न करो। बरसाती पानी, आप से आप थिर हो जायगा समय पर। अरे, यह देस भगवान की लीला भूमि है। सत्य सनातन धर्म की जड़ पत्ताल तक है। चारों खूँट फैला है, जैसे बरगद का पेड़। जटा पर जटा लटक रही हैं। एक जटा धरती तक पहुँची, एक पेड़ और तयार। इसे कोई मिटा नही सकता। मुसलमान सुलतान, पादसाह आये, नौरंगजेब तक। सब चले गये। भगवान राम, कृश्न की बानी गंगा की तरह बह रही है। बर्नासम पहिले की तरह चल रहे हैं। सास्त्र-पुरान, अगाध ग्यान-सागर। कितने मोती भरे हैं! बड़े-बड़े ग्यानी चक्कर खा जाते हैं। सुकुल जी औ' रामजोर बिचारे किस खेत की मूरी। इनके मुँह लगना बेफजूल। सास्त्रार्थ करो। अरे, किसुनगढ के आरियो में है कोई जो शास्त्रार्थ सब्द सुद्ध लिख दे, संस्कृत की पोथी का एक श्लोक सुद्ध पढ़ना तो दूर किनार। तो अपने काम से काम रखो। परपंच में न परो।"

"ठीक कहा भैया," धनेश्वर मिश्र बोले, "अच्छा चलूँ, नमस्कार।"

"बैठो। कुछ दोहरा-सुपारी तो खा लो," पं० रामअधार ने कहा।

"नही भैया, जल्दी है। बजार तक जाना है।" धनेश्वर बोले। "फिर अब दाँत दोहरा नही फोर पाते।" और हँसने लगे।

उधर ननकू सिंह ने जब रामजोर से सुना, तो बोला, "तुम हो उल्लू।

तुम्हारे मुँह में दही जमाया था ? नौरंगिया कुँजरिन वाली बात न कहते बनी ?" फिर थोड़ा रुककर कहा, "पै भाई, महादेव बाबा या देबी-देउता का मजाख उड़ाना ठीक नहीं। अपनी-अपनी मर्जी। जो मानते हैं, तुम्हारा क्या लेते हैं ? अब रामअधार काका हैं, पढ़े-लिखे बिद्वान, सच्चे ब्राह्मण। उनके पाँव जरूर छुवेंगे। स्वामी जी कब कहते हैं, बिद्वान का आदर न करो ?"

जब मुरलीधर अकेले रह गये, कौशल्या उनसे उलझ गयी। "तुम काहे दुनिया के परपंच मे परे हो। चार के बीच रहना, अपनी अलग लकीर खींचना। धन्नू भैया ठीक तो कहते हैं। गौर-गनेस की पूजा न करो, नहीं तो उपरहिती छोड़ दो।"

"तुम बैठो चुपचाप।" मुरलीधर ने नरमी से कहा।

"काहे बैठें चुपचाप ?"

"तो मूँड़ के बल खड़ी होइ जाव।"

12

इधर कुछ समय से रणवीर सिंह की हालत अजीब हो गयी थी। रात में सोते समय वह सपना देखते जैसे परम सुन्दरी जुल्फ़िया सजी-धजी खड़ी मुसकरा रही हो, गोद में बच्ची को लिये हुए। फिर, वह धीरे-धीरे आगे बढ़ती और उसकी मुखाकृति बिगड़ने लगती। सुन्दर मुखड़े की जगह क्रूर, भयावना चेहरा ले लेता, दाँत लम्बे होकर आगे निकल आते। आँखें लाल हो जाती और एकटक घूरने लगतीं। बच्ची जुल्फ़िया की गोद से ग़ायब हो जाती। उसके हाथ में होता एक बड़ा छुरा। वह लाल-लाल आँखें फाड़े दाँतों से ओठ काटती, दाँत पीसती बढ़ती। रणवीर सिंह चीख पड़ते। उनकी नींद टूट जाती। आँखें खोलकर राम-राम करने लगते।

जब घर में होते, सुभद्रा देवी पूछतीं, "क्या हुआ ? क्यों चीख पड़े ?"

रणवीर के मस्तिष्क में फीरोज खाँ की हत्या कराने वाली सारी बात घूम जाती। वह सिर थाम लेते और धीरे से कहते, "एक डरावना सपना देखा था।"

"सीने पर हाथ रहा होगा," सुभद्रा देवी कहतीं।

रणवीर सिंह के गले में सुइयाँ-सी चुभतीं, सिर चकराता। वह पानी पीते और लेट जाते।

फिर इस हालत ने और संगीन रूप ले लिया। रणवीर सिंह सपने में देखते, काली जुल्फ़िया बाल खोले, बड़े-बड़े दाँत बाहर निकाले, हाथ में चमचमाता बड़ा-सा छुरा लिए तेजी से उनकी ओर झपटी। उसके साथ कोई और आदमी है, मैली लुंगी, फटी कमीज पहने। दोनों हाथों से उनका गला जोरों से दबोच लिया। रणवीर सिंह तड़फड़ाकर जोर से चीखते और छटपटाने लगते। सुभद्रा देवी की नींद टूट जाती। वह रणवीर सिंह के सिर पर, पीठ पर कुछ उसी तरह हाथ फेरतीं जैसे कोई माँ अपने डरे हुए बच्चे पर फेरती है।

अब रणवीर सिंह कुछ घबराये-से, डरे हुए-से रहने लगे और दिन में भी, जागते हुए भी अचानक चीख पड़ते, "बचाओ, मार डालेगा। बचाओ।" अपने मुँह के सामने दोनों हाथ बचाव के लिए उठाये वह ऐसे सिकुड़ते जैसे कोई उन पर हमले के लिए बढ़ रहा हो। वह दीवार से टिक जाते और गिड़गिड़ाते हुए बोलते, "मुझे न मारो, इलाही। मुझे न मारो। कोई है, बचाओ।"

एक दिन सवेरे नाश्ता कर रहे थे। पास ही सुभद्रा देवी भी बैठी थीं। अचानक, "बचाओ इलाही, बचाओ!" चीखते हुए उठे और दहशत में दूध-दलिये से भरा कटोरा अपने ऊपर उँडेल लिया। सुभद्रा देवी ने तौलिये से ज़ल्दी-जल्दी पोंछा। फिर भी, रणवीर के हाथों में और सीने पर गरम दूध-दलिया गिरने से कुछ फफोले पड़ गये।

सुभद्रा देवी को शक हुआ, हो न हो, रामप्यारी ने जादू-टोना कराया है। यह इलाही कौन है? कोई मुसलमान जिन्द? वह मुसलमान झाड़-फूंक करने वालों की खोज करने लगीं।

एक दिन झम्मन मियाँ ने सुभद्रा देवी से मिलने की इजाजत माँगी

और पर्दे की ओट से सलाम करते हुए कहा, "रानी साहेब, मैं तो कुछ पढ़ा-लिखा नहीं, फिर भी मेरे ख़याल से सरकार को मदार साहेब के मजार ले जाइये। कैसा भी जिन, भूत हो, उनके हुजूर में टिक नहीं सकता।"

सुभद्रा देवी वहाँ ले गयी, लेकिन कुछ लाभ न हुआ। इसके बाद एक दिन करीम खाँ की बीवी मिलने आयी और समझाया, "आप सरकार को ख्वाजा मुईउद्दीन चिश्ती की दरगाह ले जाइये। चिश्ती बड़े पहुँचे औलिया गुज़रे हैं। सरकार ज़रूर ठीक हो जायेंगे।"

यही सलाह एक चिट्ठी में कुँवरजू ने जयपुर से दी थी।

आखिर सुभद्रा देवी ने रणवीर सिंह को लेकर अजमेर गयीं। वहाँ चादर चढ़ायी, मानता मानी, लेकिन फल कुछ न निकला।

अब रणवीर सिंह की बीमारी ने और बुरा रूप ले लिया था। वह बैठे-बैठे अचानक चीख पड़ते और बुरी तरह छटपटाने लगते। कहते, "रीढ़ के नीचे से दर्द उठता है जो सिर तक जाता है, ऐसे जोर का दर्द जैसे कोई बर्छी हूल रहा हो।" उनके मुँह से झाग निकलने लगता और हाथ-पैर काँपने लगते।

सुभद्रा देवी रात-दिन चिन्ता से घुलने लगीं। उनकी समझ में न आया, यह नयी बीमारी क्या लग गयी है। अन्त में, सुभद्रा देवी रणवीर सिंह को लेकर बरेली गयीं। मुंशी सूबचन्द, बिन्दा सिपाही और सुखिया उनके साथ गये।

डाक्टर ने रणवीर सिंह की अच्छी तरह जाँच की। इसके बाद सब को बाहर जाने को कहा और अकेले में रणवीर सिंह से पूछा, "ठाकुर साहब, आपको कोई सदमा पहुँचा है?"

"कोई नहीं, डाक्टर साहब," रणवीर सिंह ने सादा-सा उत्तर दिया।

फिर अपने को बड़ा विश्वासी जताते हुए डाक्टर बोले, "मैं किसी से न कहूँगा। रायबहादुर साहब, यह बताइये, किसी से आपकी दुश्मनी थी?"

रणवीर सिंह के मन में आया, सब कुछ बता दें, लेकिन उनके मन ने ही गवाही न दी। कौन जाने, बाद में क्या बवाल उठ खड़ा हो। उसी समय उनके मन में फीरोज खाँ की हत्या की सारी साजिश बिजली की तरह

कौंध गयी। जुल्फ़िया का चेहरा, एक और अस्पष्ट मुखाकृति उनके सामने उभरी और वह जोर से चीख पड़े, "डाक्टर साहब, मर गया। रीढ़ में इतने जोर का दर्द, जैसे किसी ने बर्छी हूल दी हो।" उनके मुँह से झाग निकला और हाथ-पैर काँपने लगे।

चीखने की आवाज सुनकर बगल में बैठीं सुभद्रा देवी दौड़ी आयीं।

"क्या हुआ, डाक्टर साहब ?" सुभद्रा देवी के स्वर में चिन्ता और घबराहट थी।

डाक्टर ने कुछ उत्तर न दिया और हाथ के इशारे से उन्हें बाहर जाने को कहा।

रणवीर सिंह को लगा जैसे कोई जोर से उनका गला घोंट रहा हो।

"मेरा गला न घोंटो इलाही, मेरा गला न घोंटो," उन्होंने रुँधे हुए स्वर में कहा।

डाक्टर गौर से उन्हें देख रहे थे। "यह इलाही कौन है, ठाकुर साहब ?" आत्मीयता-भरे स्वर में डाक्टर ने पूछा। लेकिन रणवीर सिंह ने कुछ उत्तर न दिया। वह थोड़ी देर तक काँपते रहे, फिर बेहोश हो गये।

रणवीर सिंह दो महीने बरेली में रहे, लेकिन डाक्टर उनके मानसिक रोग का कारण न जान सके। इस बीच उनके हाथ-पैर और अधिक काँपने लगे। वह ठीक से खड़े न हो पाते। चलते समय किसी के कन्धे का सहारा लेते। किसी भी जोर के धमाके से उनका दिल जोरों से धड़कने लगता। एक दिन बाहर बन्दूक छूटी। उसकी आवाज से रणवीर बुरी तरह से बेचैन हो उठे, दिल धड़कने लगा और वह बेहोश हो गये।

डाक्टर ने चलते समय समझाया, "इनके सामने शोर-शराबा न हो। किसी तरह की चिन्ता की बात या डर पैदा करने वाली बात इनके सामने न की जाय। आराम से लेटे रहें बेफिक्र। काम-धाम का बोझ इन पर न रहे।"

13

रामशंकर आठवीं कक्षा में पढ़ता था। बड़े दिन की छुट्टियों में वह घर आया था। एक दिन जब वह सवेरे छंगा से मिलने जा रहा था, शिवसहाय दीक्षित के चौपाल में बैठे धनेश्वर मिश्र, शिवसहाय, मुरलीधर सुकुल और मुंशी खूबचन्द गरमागरम बहस कर रहे थे।

बहस इस पर हो रही थी कि दुलारे सिंह को जाति-बिरादरी में ले लिया जाय या नहीं। दुलारे सिंह चाहते हैं कि वह सत्यनारायण की कथा सुनें, जिसमें सब ब्राह्मण, ठाकुर, बनिये और दूसरी जाति वाले उनके यहाँ भोजन करने आयें।

मुरलीधर इसके पक्ष में थे कि दुलारे सिंह को हिन्दू जाति में मिला लिया जाय।

धनेश्वर मिश्र के एकतारे में एक ही सुर बज रहा था, "जैसे दुलारे सिंह हैं महिपाल सिंह के बाप दिगपाल सिंह की रखेल, बेड़िन की औलाद से। क्या स्वामी जी कह गये हैं, सब गवड़सट्ट? बेड़िन-पतुरिया, बाँभन-ठाकुर, सब एक?"

शिवसहाय मंजीरे की तरह धनेश्वर के सुर पर टुन-टुन कर रहे थे।

मुंशी खूबचन्द सबकी सुन रहे और गोल-मोल बातें कर रहे थे।

रामशंकर को सामने से जाते देखकर मुरलीधर बोले, "अच्छा, बच्चा को बुलाओ। आखिर पढ़े-लिखे हैं। इनकी राय लो।"

ये शब्द कान में जाने पर रामशंकर ने रास्ते से ही सबको प्रणाम किया।

"हैं तो ढोल के साथी डंडा," धनेश्वर ने टिप्पणी की, "पै कुछ हरकत नहीं।"

"आओ रामसंकर," शिवसहाय ने बुलाया।

रामशंकर आकर एक चारपाई पर बैठ गया।

सारी बात सुनने के बाद वह धनेश्वर को सम्बोधित करते हुए बोला, "जैसे बाबा, करीम खाँ भी इसी तरह के हैं। अब भी आजी वगैरा उनके घर को पतुरियों का घर कहती हैं। लेकिन करीम खाँ ने अपनी दोनों

बहनों की शादी अच्छे मुसलमानों से कर दी। सब मुसलमान उनको अपनी विरादरी का मानते हैं। कभी रही होंगी पतुरिया करीम खाँ की दादी या कोई और। करीम खाँ की भी शादी किसी अच्छे मुसलमान घर में हो गयी है।" इतना लम्बा लेक्चर देने के बाद रामशंकर साँस लेने के लिए रुका। धनेश्वर, शिवसहाय और खूबचन्द रामशंकर को एकटक ताक रहे थे।

रामशंकर ने अपना दाहिना हाथ जरा-सा हिलाते हुए आगे कहा, "तो बाबा, हम हिन्दू क्यों एक-एक डाल काटते जायें ?" थोड़ा रुककर, "फिर दुलारे काका, नेम-धरम से रहते हैं, शिव के भक्त हैं, गाँजा-चरस को हाथ से नहीं छूते। तीन पीढ़ी पहिले जो कुछ हुआ, उसी को हम रटते जायें, यह कहाँ की बुद्धिमानी है, कहाँ का न्याय है ?"

मुरलीधर ने रामशंकर की पीठ थपथपायी, "स्याबास सपूत !"

"हाँ, तुम दो स्याबासी।" धनेश्वर चिढ़ गये। "रामअधार भैया के घर तीसरी पीढी कोदो जामा है।" थोड़ा रुककर और प्रणाम के लिए दोनों हाथ जोड़कर बोले, "रामअधार भैया, साष्टांग प्रणाम के योग्य हैं। सिउअधार सिउसंकर पद में छोटे हैं, पै बिद्या, नेम-धरम के खयाल से हाथ जोड़कर नमस्कार जोग्य हैं। औ' ये हैं उनके कुल तारन !"

रामशंकर को धनेश्वर की बातें बहुत बुरी लगी, फिर भी वह चुप रहा। गाँव नाते धनेश्वर बाबा लगते थे। उनके मुँह लगना ठीक न समझा।

"तो मैं चलूँ बाबा," रामशंकर ने धीमे से कहा। "जा रहा था, छंगा से मिलने।"

"जाव बेटा," धनेश्वर बोले, "हमारे कहने का अनख न मानना। तुम्हारी भलाई की खातिन कहते हैं। कुलीन घर के लड़के हो।"

रामशंकर के जाने के बाद धनेश्वर ने मुरलीधर के एक खोंचा मारा। वह मुँह बनाते हुए गर्दन हिलाकर बोले, "यह बताओ सुकुल, कभी छोटे सरकार के हिसकाने पर तुमने हमारी करैहा में खाने से इनकार कर दिया था। तब कहा था, बिसेसर मुसलमान हो गया। अब यह लीला काहे ?"

शिवसहाय मुसकराये। मुंशी खूबचन्द ने बारी-बारी से मुरलीधर

और धनेश्वर के चेहरों पर नजर डाली।

मुरलीधर ने अपने सिर पर हाथ फेरते हुए कुछ क्षण बाद धीमे स्वर में उत्तर दिया, "तुम भी भैया, कब के गड़े मुर्दे उखाड़ते हो!"

"बात तो वसूल की है, सुकुल जी," शिवसहाय ने टोका।

मुरलीधर से कुछ उत्तर न बन पड़ा। वह धनेश्वर मिश्र और शिवसहाय दीक्षित को राजी न कर सके और दुलारे सिंह के यहाँ सत्यनारायण की कथा और सारे गाँव के ब्राह्मणों, ठाकुरों आदि के भोजन की बात जहाँ की तहाँ रह गयी।

धनेश्वर से न रहा गया। रामशंकर ने जो कुछ कहा था, वह सब उन्होंने पं० रामअधार को नमक-मिर्च मिलाकर बताया। लेकिन पं० रामअधार ने इतना ही कहा, "बच्चा है, अभी समुझ नहीं। बचनुवा के कहने से क्या होता है? अभी हम जो बने हैं।"

"तुम्हारा तो भरोसा है, भैया," धनेश्वर ने रुख बदला। "कहने का मतलब यह कि लरिका-लौंदरी न जाने कौन रस्ते पर जा रही है। थोरा समझाओ।"

"सब ठीक हो जायेगा," पं० रामअधार ने पूरे विश्वास के साथ कहा। "छुट्टा बछेरा चौकरी न भरै, तो क्या करै?"

धनेश्वर हँसने लगे। "तो खूँटे की जुगत कर रहे हो कहीं, भैया?"

"यह सब उसके हाथ है," पं० रामअधार ऊपर की ओर हाथ उठाकर बोले, "जथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि।" साथ ही हिन्दी में कह दिया, "होइहि सोइ जो राम रचि राखा।"

14

महावीर सिंह की पढ़ाई प्राइवेट ट्यूटरों की पालकी पर रईसी ढंग से चल रही थी। कॉल्विन्स कालेज के लड़कों में होड़ पढ़ने की नहीं, पार्टियाँ देने की होती थी। कौन कितनी बड़ी पार्टी दे, किसकी पार्टी में

ज्यादा अफ़सर आयें, इसी गर्ज से इज्जत नापी जाती थी। इतवार प्रायः पार्टियों का दिन रहता।

महावीर सिंह एक पार्टी अपने जन्म-दिन पर करता। उसमें शामिल होने को रणवीर सिंह गाँव से आते। पार्टी लड़कों के बदले सयानों की हो जाती। रणवीर सिंह रईसों के लड़कों को ही दावत न देते, रईसों को भी बुलाते। लखनऊ के जिला कलेक्टर और पुलिस सुपरिटेंडेंट के यहाँ धरना देकर, हाथ-पैर जोड़कर उन्हें आने के लिए राजी करते। पुलिस लाइन्स का बैण्ड बुलवाते। ग्रामोफोन पर अंग्रेजी रेकार्ड बजवाते। रात दस बजे तक ऐसा धूम-धड़ाका रहता कि महावीर सिंह के साथी साल-भर याद रखते। महावीर सिंह की गिनती बड़े रईसों के लड़कों में होने लगी थी। कालेज में लड़के उसे विशेष सम्मान देते। उसका सम्मान और अधिक फले-फूले, इसके लिए महावीर पैसों की वर्षा में कोताही न करता। किसी बड़े चाय घर में चार दोस्तों के साथ पहुँच जाता और सबका खर्च अपने सिर लेता जिसके पन्द्रह-बीस रुपये से कम होने में हेठी थी।

चाय घर तक बढ़े कदम कुछ और आगे गये और महावीर कभी-कभार मुजरे सुनने भी जाने लगा। प्याले ने चाय की जगह शराब को अपनाया। महावीर सिंह की हालत उस आम-जैसे हो गयी जिसे पाल में रखकर समय से बहुत पहले पका लिया गया हो। एक शाम जब वह मुजरा सुनने के बाद समरजीत के साथ घर लौट रहा था, उसने ताँगे में कहा, "समरजीत, नफीस जान का गला कमाल का है।"

"गला नहीं, कमर," समरजीत पारखी की तरह बोला। "मुँदरी बरन करिहांव।" और दोनों हाथों का गोफा बाँधकर ऐसा इशारा किया कि बेहयाई भी लजा जाये।

चौक की राह खुलने के बाद महावीर की कोठी में कभी भांड़ आ जुटते, लतीफे सुनाते, मसखरी करते और बख्शीश ले जाते, तो कभी कव्वाल आकर लाल साहब का दिल बहलाते। इस तरह लाल साहब के मन की पतंग वैभव की डोर के सहारे विलास के आकाश पर बहुत ऊँची उड़ने लगी।

महावीर सिंह की कोठी के सामने मिस्टर सक्सेना की कोठी थी।

सक्सेना साहब लखनऊ के बड़े वकीलों में थे। अफ़सरों की दुनिया में उनकी अच्छी पैठ थी। वह महावीर सिंह के पड़ोसी थे, इसलिए रणवीर सिंह उन्हें पार्टी में बुलाना न भूलते। सक्सेना साहब भी कभी-कभी महावीर को दावत दे देते। महावीर जब भी सक्सेना के यहाँ जाता, ललचायी निगाहों से उनकी बेटी को देखता जो किसी स्कूल मे दसवें दर्जे में पढ़ती थी। बात दोनों में हो सके, इतनी निकटता उनमें न थी। अपनी कोठी की छत से महावीर उसे ताकता, उसे देखकर तरह-तरह के मनसूबे बनाता। एक दिन उसने अपने मन की बात समरजीत से कही।

समरजीत गाँव की दुनिया से वाकिफ था। घर में काम करने वाली नाइन या बारिन की लड़की से छेड़छाड़ करने, खेतों में काम करने वाली मजदूरिनों को सिपाही के जरिये फुसलाने या धुँधलके मे सिपाही की मदद से जबर्दस्ती किसी अरहर के खेत में पकड़ने जैसी कलाएँ उसको आती थीं। लेकिन शहर की दुनिया उसके लिए अजनबी थी। वह काफी देर तक सोचता रहा। जब कोई भी युक्ति उसे न सूझी, तो खिसियाने स्वर में बोला, "महावीर, कुछ समझ में नहीं आता।"

"कभी-कभी वह शाम को धुँधलका होने पर भी तो इधर-उधर से आती है," महावीर ने बताया।

अब समरजीत को अपनी ग्रामीण कला का एहसास हुआ, जैसे हनुमान को अपने बल का बोध जाम्बवान के कहने पर हुआ था। उसे याद आया, नथुनी कुँजड़िन की लड़की हमारी फुलवारी में घुसी अपनी बकरी पकड़ने आयी थी। मैंने उसे धर दबोचा। वह लड़की डर के मारे चिल्ला तक न सकी। हाथ जोड़कर बोली, "छोड़ दो सरकार, तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।" लेकिन मैं नहीं माना था।

"तब तो हो सकता है," उसने कुछ राज के साथ सिर हिलाकर कहा और इसके बाद दोनों शाम के वक्त कोठी के बाहर सड़क पर टहला करते।

एक शाम वह लड़की आती दिखी। दोनों ने कनखियों में बातें की और जब वह अपनी कोठी का गेट खोलने लगी, पीछे से दोनो ने बाज की तरह झपट्टा मारा। समरजीत ने एक तौलिया उसके मुँह पर डाल दिया

और महावीर उसकी कमर पकड़कर अपनी कोठी की तरफ़ घसीटने लगा। लड़की अपने को छुड़ाने के लिए छटपटा रही थी। इस धींगा-मुश्ती में वह सड़क पर गिर पड़ी और दोनों उसे उठाकर कोठी मे ले जाने लगे। लड़की बराबर छटपटा रही थी। उसे सँभालना दोनों के लिए कठिन हो रहा था।

इतने में एक कार की तेज़ रोशनी पड़ी और पलक मारते वह कार बिलकुल पास आ गयी। डरकर महावीर और समरजीत लड़की को छोड़कर अन्दर भाग गये। लड़की ने उठते ही शोर मचाया। कार वहीं रुक गयी थी।

शोर सुनकर मिस्टर सक्सेना और उनका एक नौकर बाहर निकले। सारा किस्सा सुनकर सक्सेना साहब आगबबूला हो गये और महावीर की कोठी की तरफ़ लपके। महावीर ने इस बीच अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लिया था। महावीर और समरजीत कमरे में दुबके बैठे थे।

लड़की तो अपने घर चली गयी, लेकिन शोर-शराबा सुनकर वहाँ काफ़ी भीड़ जुट गयी। सक्सेना साहब का पारा अब कुछ नीचे आ गया था। उन्होंने सोचा, खामोश रहना ही ठीक होगा। बात बढ़ाने से अपनी ही बदनामी होगी।

उन्होंने घटना को कुछ दूसरा ही रंग दिया, लेकिन मुहल्ले में काना-फूसी हुई।

चौबाइन के घर वाले बैंक में मैनेजर थे। चौबाइन का घर दिन में पड़ोस की स्त्रियों के सम्मेलन के लिए जनता का चौपाल बन जाता था। सबके घर वाले दस बजे तक दफ़्तर चले जाते थे और स्त्रियाँ वहाँ इकट्ठी होकर लोक चर्चा करती थीं।

मुसद्दी लाल की सोने-चाँदी की बडी दुकान थी, अमीनाबाद में। उनकी पत्नी चमेली देवी रोज सवेरे गोमती नहाने जाती और लौटते समय जन-सम्पर्क करती। वह सवेरे नहाकर लौटी, तो चौबाइन के पिछवाड़े के दरवाज़े से झांकी। चौबाइन ने बडे प्रेम से बुलाया, "आओ बहिन।"

चमेली देवी आ गयी और अन्दर पैर रखते ही बोलीं, "बहन, बड़ा बुरा ज़माना लगा है। रात-बिरात बहू-बेटी का बाहर निकलना मुश्किल।"

"कुछ गुल-गपाड़ा तो सुना था बहिन, मुग जान न सके, क्या हुआ।" चौबाइन ने हाथ पसारकर कहा, "वो बंक से देर से आये थे, तो उनके पास बैठी थी।"

"अब कुछ न कहो। ये जो दो छोकरे रहते हैं न, किसुनगढ़ के ज़िमीदार के लड़के," चमेली देवी डोलची फर्श पर रखते हुए बतलाने लगीं, "सरेआम सक्सेना जी की लड़की को उठाये लिये जा रहे थे।"

"आंय?" चौबाइन ने आँखें फाड़ दी।

"वो तो कहो, ऐन बखत में हमारे वो आ गये।" चमेली देवी अपनी साड़ी का खिसकता पल्लू सँभालते हुए बोली। "गाड़ी ठीक छोकरों के सामने रुकी। भाग खड़े हुए।"

"बड़ी बेजा बात है, बहिन," चौबाइन का स्वर भर्राया हुआ था। "मुल, एक बात कहूँ," वह धीमे से बोली जैसे कोई राज की बात बता रही हों। "ये सक्सेना भी बड़ी छूट दिये हैं, सयानी लड़की को। भला बताओ, क्या जरूरत साम के बाद बाहेर फिरने की?"

"सो तो ठीक है," चमेली देवी ने पुष्टि की।

उनके जाने के बाद निर्मला की माँ आ गयी। निर्मला के पिता रिटायर्ड सर्किल इन्सपेक्टर हैं। अपने जमाने मे खूब पैसा कमाया। अब यहाँ कोठी बनवा ली है। लड़का पुलिस विभाग में ही है। निर्मला की शादी बड़े ठाठ से की थी। निर्मला की माँ दुनियाँ-जहान की खबर रखती हैं। घर-घर का कच्चा चिट्ठा उनके पास है। वह आते ही बोली, "अजी बहू, कुछ सुना?"

चौबाइन समझ तो गयीं, निर्मला की माँ का इशारा सक्सेना की बेटी वाली घटना की ओर है, लेकिन अनजान बन गयी। "नही कक्की, क्या है?"

"है क्या!" निर्मला की माँ ने मुँह बिदकाया, "भला पानी का हगा उतराने को रहता है?" थोड़ा रुकी और फिर पूरे वेग से डाक गाड़ी दौड़ायी, "ये सक्सेना हैं ना! लड़की तितली बनी फिरती थी। उन किसुनगढ़ वाले छोकरों से यारी गाँठ रही थी। तुम्हारे कक्का ने कई दफे देखा, छोकरे छत पर खड़े हैं, छोकरी अपने कमरे की खिड़की के पास।

इशारे चल रहे हैं। हमारा मकान ऐसी जगह है, जहाँ से दोनों मकानों की रसोई तक देख लो। फिर पुलिस वाले की आँख। वह तो महीनों पहले कह चुके थे, यह छोकरी सक्सेना की नाक पर माछी बैठायेगी। वही हुआ। वह तो लाला मुसद्दीलाल की गाड़ी आ गयी, सो भाँड़ा फूट गया।"

कई दिन तक खिचड़ी-सी पकती रही और सक्सेना साहब की बेटी के प्रेमियों की लम्बी लिस्ट तैयार हो गयी।

इस घटना से और कुछ भले न हुआ हो, महावीर को वह कोठी छोड़ देनी पड़ी।

15

हिन्दी के अध्यापक पाठक जी इस साल जरूरत से ज्यादा संजीदा रहते। पाठक जी जब भी नवें दर्जे में घुसते, रामशंकर और विमल देखते जैसे पाठक जी कुछ सोच रहे हों। एक शेर वह अकसर गुनगुनाते—'वक्त आने दे, बता देंगे तुझे ऐ आसमाँ; हम अभी से क्या बतायें, क्या हमारे दिल में है।' कभी-कभी एक शेर और जुड़ जाता—'रहरवे राहे मुहब्बत, रह न जाना राह में; लज्जते सहरा नवर्दी दूरिये मंजिल में है।'

पाठक जी पढ़ाते समय राजनीति की चर्चा पहले भी करते थे, लेकिन *सँभलकर, सीधे न कह, लक्षणा में अपनी बात व्यक्त करते थे। इस साल* वह बहुत साफ-साफ प्रचार करने लगे थे।

एक दिन 'जय-जय प्यारी भारत माता' कविता का अर्थ समझा रहे थे। उसमें एक पंक्ति आयी 'हिन्द महासागर पद धोता'। इसे समझाते हुए पाठक जी कहने लगे, "उर्दू के कवि इक़बाल ने हिमालय को भारत का संतरी और पासवाँ कहा है। यह कवि कहता है—हिन्द महासागर भारत माता के पैर धोता है। हिन्द महासागर के ही बारे में एक और कवि कहता है—हिन्द सागर, तुम हमारे गार्ड थे, की मगर तुमने हमारी यह

दशा। जब घुसा था शत्रु छाती फाड़ के, टाँग धर पाताल में देते धँसा। यहाँ कवि का इशारा अंग्रेजों के उस काल की ओर है जब वे व्यापारी बनकर भारत आये थे। बाद मे शासक बन बैठे।" इसके बाद पाठक जी थोड़ा और आगे बढ गये, "सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी कविता 'झाँसी की रानी' मे व्यापारी अंग्रेज़ों के शासक बनने का वर्णन बड़े तीखे ढंग से किया है—

अनुनय-विनय नही सुनता है, विकट फिरंगी की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था, जब यह भारत आया।"

पाठक जी कविता इतनी ही पढ़ पाये थे कि रामशंकर ने अपनी सीट से ज़रा उठकर कहा, "पंडित जी, पूरी कविता सुना दीजिये।"

"पूरी तो बडी लम्बी है, रामशंकर," पाठक जी ने उत्तर दिया। "फिर हमें पूरी याद भी नही। तुम लोग खोज कर पढ़ो।"

पाठक जी कविता की अगली पंक्तियाँ पढ़ने की जगह उनका अभिप्राय समझाते हुए बताने लगे, "देखो, बंगला के कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने भी व्यापारी से शासक बनने वाले अंग्रेज़ों के बारे में एक कविता में लिखा है— जब रात मे बंग जननी अपनी सन्तानों को अंक से लगाये पद्म पत्रों पर सो रही थी, तब बंगाल की खाड़ी के रास्ते से बनियों का एक दल आया। हमने गंगा-जल से उसका तिलक भी कर दिया। लेकिन 'वणिकेर मानदण्ड द्याखा दिलो, पुहाले शर्वरी, राजदंड रूपे'।" फिर बंगला का अर्थ समझाया, "रात बीतने पर बनिये के तराजू की डण्डी शासक के राजदण्ड के रूप मे दिखायी पड़ी।" इसके बाद पाठक जी ने पूरी कविता का मर्म समझाया।

अपने देश की मिलों का कपड़ा भारत में खपाने के लिए अंग्रेजों ने किस तरह भारत के कपड़ा उद्योग को नष्ट किया, इसका वर्णन भी पाठक जी कर गये। उन्होंने बताया, देश के उद्योग की रक्षा के लिए सबसे पहले बंगाल में स्वदेशी आन्दोलन चला था। अंग्रेजी राज्य को हटाने के लिए देशभक्त बराबर लड़ते आ रहे हैं, यह बताते हुए पाठक जी ने खुदीराम बोस, राजा महेन्द्र प्रताप, आदि के नाम लिये और कहा, "बच्चो, तुम्हें अपने देश का इतिहास, आजादी के लिए लड़ने वालों की कहानियाँ, समाज

के विकास का इतिहास पढ़ना चाहिए।"

"पंडित जी, ऐसी पुस्तकों के नाम और पते बताइये।" विमल बोला। इतिहास में विमल की विशेष रुचि थी।

"जिन खोजा, तिन पाइयाँ," पाठक जी ने उत्तर दिया। फिर तुरन्त जोड़ा, "बतायेंगे समय पर।" इसके बाद साहित्य की व्याख्या करते हुए बोले, "साहित्य वह है जो मन का पूर्ण विकास करे, जो उदात्त भाव भरे। प्याज के छिलके उतारने की तरह मन की परतें उघाड़ने के बहाने जो कामुक, अश्लील काव्य या कहानियाँ रचते हैं, वे गटर इन्सपेक्टर हैं—पूरे घर को न देख, महज बाथरूम देखते हैं। ऐसे साहित्य में शब्द-आडम्बर कितना ही क्यों न हो, वह फोफले धान के समान है। लेखक बनने की कसौटी एक रूसी लेखक ने बड़ी अच्छी बतायी है।" और पाठक जी रुक-रुक कर रूसी में बोलने लगे। सब लड़के उनका मुँह ताक रहे थे। फिर पाठक जी ने हिन्दी में उसका अर्थ समझाया, "क्या लेखक बनना चाहते हो? तो अपनी जाति की सचित व्यथाओं का इतिहास पढ़ो। यदि उसे पढ़ते हुए दिल न पसीजे, तो क़लम को फेंक दो। वह तुम्हारे दिल की मनहूस मुर्दनी प्रकट करने का काम करे।"

इतने मे पाठक जी की दृष्टि बरामदे पर गयी। संस्कृत के पंडित जी बरामदे मे खड़े थे। पाठक जी ने अपनी घड़ी पर निगाह डाली, तो पता चला, दस मिनट वह संस्कृत-क्लास के भी ले चुके हैं।

"बाकी कल।" पाठक जी बोले और मुड़कर संस्कृत के पंडित जी से कहा, "पंडित जी, क्षमा कीजियेगा।"

"कोई बात नहीं," पंडित जी हँसने लगे। "हम भी आपका व्याख्यान सुन रहे थे।"

कतकी पूर्णमासी को बिठूर में बड़ा मेला लगता था। कानपुर की कई स्वयं सेवक संस्थाएँ मेले में सेवा-कार्य करने के लिए जाती थीं। डी० ए० वी० स्कूल के ब्वाय स्काउट भी जाते थे। स्काउट मेले में सेवा-कार्य करने के अलावा रात में कैम्प-फायर करते थे। उसमे खुले मैदान में छोटे-छोटे नाटक, प्रहसन आदि दिखाते थे। दूसरी जगहों के स्काउट भी

कैम्प-फायर में शामिल होते थे।

इस बार पाठक जी ने एक महीना पहले ही मेले में जाने की तैयारी शुरू कर दी। एक शाम स्काउटों की परेड के बाद उन्होंने विमल और रामशंकर को बुलाकर दो किताबें दीं। "रमाशंकर, एक किताब है—राष्ट्रीय गीतों की। उसे तुम लोग पढ़ो। जो गीत ठीक जान पड़ें, उन्हें मार्चिंग सॉंग (कवायद या जुलूस के गीत) के लिए चुन लो। दूसरी किताब—देश-भक्तों के जीवन-चरितों की है। उसे पढ़कर किन्हीं एक की जीवनी चुन लो। उस पर हम नाटक लिख डालेंगे, इस बार बिठूर में दिखाने के लिए।"

रमाशंकर और विमल ने बोर्डिंग में दोनों किताबें देखीं। देशभक्तों के चरितों वाली किताब का नाम था—'कांटों भरी राह' और उसमें भारत के कई क्रान्तिकारियों के जीवन-चरित और गदर पार्टी का इतिहास था। दोनों विषय-सूची देखकर ही फड़क उठे।

राष्ट्रीय गीतों की पुस्तक के ज्यादातर गीतों को रामशंकर ने कापी में उतार लिया। फ़ुर्सत के समय वह इनमें से कोई-न-कोई गीत या शेर गुनगुनाता। कभी-कभी रामशंकर और विमल मिलकर गाते—

"माँ कर विदा आज जाने दे!
माँ न रोक जायें दुख झेलें,
भर देवें जेलों पर जेलें,
फांसी के तख्ते पर खेलें,
जीवन-ज्योति जगाने दे!"

चकबस्त के मुसद्दस का यह बन्द तो दोनों का गायत्री मंत्र बन गया था—

मादरे हिन्द की तस्वीर हो सीने पै बनी,
गले में तौक हो औ' सर से बँधी हो कफ़नी।
अयाँ सूरत से हो यह आशिक़े आजादी है,
जुबान बन्द है जिसकी ये वो फ़रियादी है।
सन्तरी देख के इस जोश को थर्रायेंगे,
गीत जंजीर की झनकार पै हम गायेंगे।

नवें और दसवें दर्जों के लड़कों को बोर्डिंग में सिंगल (एक) सीट के कमरे मिलते थे, ताकि वे ठीक से पढ़ सकें। एक शाम जब रामशंकर अपने कमरे में बैठा कुछ पढ़ रहा था, उसका एक सहपाठी आया और बोला, "लो, एक नायाब किताब।"

"किस विषय की ?" रामशंकर ने उत्सुकता से पूछा।

"राजनीतिक है। जब्त कर ली गयी है।" उसने बताया। "पढ़ो, लेकिन एकान्त में। खतरा है।"

सहपाठी किताब दे गया जिस पर किसी अखबार की जिल्द चढ़ी थी। रामशंकर ने खोला, तो अन्दर के पृष्ठ पर किताब का नाम लिखा था—'काकोरी के शहीद'।

रामशंकर ने अखबारों में काकोरी केस के कुछ समाचार पढ़े थे। इस पुस्तक में पूरा ब्योरा मिलेगा, उसने सोचा।

रामशंकर ने करीब नौ बजे कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया और किताब पढ़ने लगा। वह किताब पढ़ता जाता और उसका मन कुछ अजीब ढंग से मथता जाता। रामप्रसाद बिस्मिल की गरीबी का हाल पढ़ते समय उसकी आँखें छलछला आयीं।

हिन्दी के अध्यापक पाठकजी ने 'काँटों भरी राह' दी थी। 'काकोरी के शहीद' रामशंकर को उस जंजीर की नयी कड़ी लगी। पुस्तक समाप्त होने के बाद रामशंकर देर तक कुर्सी पर बैठा अपने भविष्य के बारे में सोचता रहा। इस पुस्तक ने जैसे उसे चौराहे पर ला खड़ा किया हो।

16

किशनगढ़ में एक हफ्ते से हलचल थी। अब तक कोई सौ किसानों को गढ़ी बुलाया जा चुका था। रामखेलावन, ननकू सिंह, रामजोर सिंह और शंकर सिंह को बुलाने तीन दिन सिपाही आया, लेकिन घरों में हर रोज कह दिया गया, नहीं हैं।

मुंशी खूबचन्द ने रात ही चार सिपाहियों को कह दिया था, एक-एक के घर एक-एक सिपाही तड़के जाये और बुलाकर लाये। खुद मुंशीजी आज समय से बहुत पहले आ गये। ड्योढ़ी में ये चारों क़रीब-क़रीब एक साथ पहुँचे।

ननकू सिंह, रामजोर और शंकर जब पहुँचे, रामखेलावन मुंशीजी के पास बैठा था और मुंशीजी कह रहे थे, "चौधरी भैया, सिपाही तीन दिन गया। तुम कहते हो, पता नहीं चला। अन्धेर है। घर में किसी ने बताया नहीं, कैसे मान लूँ?"

तीनों को देखकर मुंशीजी उठ खड़े हुए। "चलो सब पंच, सरकार के पास।"

मुंशीजी आगे हुए, चारों उनके पीछे। ड्योढी के दरवाज़े से अन्दर जाने पर चारों ने देखा, रणवीर सिंह बारहदरी में आरामकुर्सी पर आधे लेटे हैं। उनके चेहरे में पहले वाली चमक नहीं।

चारो गये और रामजोहार की। रणवीर सिंह ने थके-से स्वर में राम-राम कहा। चारों उनके सामने थोड़ी दूरी पर खड़े हो गये।

"अरे चौधरी," रणवीर गर्दन ज़रा उठाकर बोले, "तुम पंच मुँह काहे चुराते हो?"

मुंशीजी पहले ही टिप्पणी कर चुके थे, इसलिए किसी ने उत्तर न दिया।

रणवीर सिंह कुछ क्षण तक चारो के चेहरे देखते रहे, फिर कहा, "भाई, दो-दो साल का लगान बाकी है। बताओ, काम कैसे चले?"

रामखेलावन को कुछ सहारा मिला। उसने उत्तर दिया, "बच्चा साहेब, कसूरवार हैं, पै मुसीबत है। जुल्लरी रुपिया की एक मन। जितनी भई, सब पन्द्रा रुपिया में उठ गयी। समुझ नही परता, कैसे बाल-बच्चों का तन ढकें।"

तन ढकने की बात पर ननकू, रामजोर और शंकर की आँखें एक साथ रामखेलावन पर इस तरह गयीं जैसे रामखेलावन ने बिजली का बटन दबा दिया हो और छः बल्ब एक साथ जल उठे हों। इसके बाद सब एक-दूसरे को देखने लगे। रामखेलावन के कुर्ते मे कई जगह चिथड़े लगे थे।

सिर पर बँधा अँगोछा। लत्ता जान पड़ता था। ननकू की बण्डी में रंग-बिरंगे पैबंद थे। रामजोर और शंकर की बंडियों की बाँहें ऐसी थीं कि कहना मुश्किल, बंडियाँ हैं या बनयायनें।

रणवीर सिंह थोड़ी देर तक कुछ सोचते रहे, फिर बोले, "मन्दी आयी है, सो तो ठीक, पै रियासत का काम भी तो चले। हम खजाने से मालगुजारी कब तक भरते रहें ?"

रामखेलावन को अब कुछ साहस हुआ। उसने हाथ जोड़कर कहा, "सरकार समरथ हैं निबाहो हम सबको। माटी मूँड़ दै कै काम करते हैं, पै पैदावार में बरक्कत नहीं। चार मन बिगहा उपज।"

"निबाह तो रहे हैं," रणवीर सिंह बोले। "पै कब तक ? खजाना समुद्र तो नहीं।" फिर थोड़ा रुककर कहा, "तीन साल का लगान न मिला, तो नालिश करनी पड़ेगी। तब कहोगे, नालिश कर दी।"

"अरे, ना सरकार," चौधरी ने दाहिने हाथ को पसारकर हिलाया। "नालिस-कचेहरी की न सोचो। या ड्योढ़ी हमारी कचेहरी रही, आज भी है। निबाह करो, जैसे बने।"

रामखेलावन जिस तरह आरज़ू-मिन्नत कर रहा था, उससे रणवीर सिंह दुविधा में पड़ गये। कड़ाई करें, तो कैसे ? फिर रामखेलावन बराबर हमारे साथ रहा और आज वही इन तीनों के साथ आया है, उन्होंने सोचा और मन-ही-मन कहा, 'हमने ग़लती की, एक साथ बुलवाकर।'

थोड़ी देर बाद बोले, "संकर, ननकू, रामजोर, एक-एक साल का लगान तो दो, हमारा भी काम चले।"

अब तक तीनों खुश थे, चौधरी ढाल बना था। अब उनके नाम लेने पर संकट में पड़ गये।

रामजोर ने अड़ते हुए कहा, "भैया साहेब, सात दिन की मोहलत दो, एक साल का लगान चुकाने की तदबीर के लिए।"

"सात दिन मे क्या छप्पर फाड़ के आ जायेगा ?" रणवीर सिंह ने गले को जरा ऊँचा किया।

रामजोर चुप रहा।

ननकू बोला, "भैया साहेब, कहीं से कांढ़-मूस के•••।"

"ऐसा तो पहिले भी कर सकते थे?" रणवीर का गला पहले जैसा ही ऊँचा था।

"बड़ी दिकदारी है, भैया साहेब।" शंकर गिड़गिड़ाया और गर्दन झुका ली।

"दिकदारी तो हम समझते हैं। पै नालिश हो जाय और खेत हाथ से निकल जायें, तो हमें दोख न देना" रणवीर सिंह ने जमींदारी रोब के साथ कहा।

सब खामोश खड़े रहे।

"मुंसीजी," रणवीर सिंह ने हुक्म दिया, "एक हफ्ते की मोहलत सबको दो। हफ्ते-भर में जो एक-एक साल का लगान न अदा करें, उनके खिलाफ़ नालिस कर दो।"

"जो हुकुम सरकार!" मुंशीजी का पुराना रेकार्ड बज उठा।

चारों ने 'जै राम जी' की और गर्दन झुकाये विदा हुए।

मुंशीजी रुके रहे, लेकिन उन चारों के जाते ही रणवीर सिंह काँपते हुए उठे और बिन्दा के कन्धे का सहारा लेकर जनानखाने का रास्ता लिया। तब मुंशीजी भी ड्योढ़ी की तरफ़ चल पड़े।

गढ़ी के बाहर निकलने पर ननकू सिंह ने समझाया, "रामजोर, संकर, जैसे खेलावन काका हैं उनके हितुवा, तुम पंच गफलत न करना। तीन साल का लगान बकाया न रहे।"

"खूब समझते हैं," शंकर बोला। "ठाकुर औ' करिया बारा साल तक नहीं भूलता, दाँव लेता है।"

"करिया दाँव लेता है, सो तो ठीक," रामखेलावन ने कहा। "हमारे बप्पा का पाँव पड़ गया था, पै करिया मैंधन निकल भागा। फिर जब देखो, उनका रस्ता रोकता। एक दफे दाँव में पा गये। बप्पा ने सारे का भर्ता बना दिया, तब चैन मिली।"

"तो साँप का सुभाव औ' ठाकुर का सुभाव एक," ननकू सिंह ने टीका की, लेकिन रामखेलावन चुप रहा।

रामशंकर होली की छुट्टियों में घर आया था। छंगा से मिलने गया

था। चौपाल में रामखेलावन मिल गया और अपना दुखड़ा रोने लगा। रामशंकर ने धीरज के साथ सुना, फिर पहले स्वाधीनता-दिवस की सभा में फूलबाग में कांग्रेस के नेता अशोक जी ने जो कुछ कहा था, वही तोते की तरह पढ़ गया।

"चौधरी बाबा, अंग्रेज हमारे देस से कच्चा माल सस्ते में खरीदता है, इसी से सारी दिकदारी है।"

रामखेलावन के पल्ले कुछ न पड़ा। उसने सोचा, रामअधार बाबा कम्पू मे पढ़ा रहे हैं। इतना रुपिया खरिच रहे हैं। ज़रूर ज्ञान की कोई गूढ़ बात कही होगी। थोड़ी देर तक रामशंकर का मुँह ताकने के बाद बोला, "हो सकता है छोटे पंडित, पै हियाँ तो अंग्रेज खरीदने आता नहीं। क्या तौलता है या फिर भगत के हियाँ से सौदा-सुलुफ अनाज देकर लाते हैं।"

रामशंकर चकराया, कैसे समझाऊँ ? थोड़ी देर तक सोचते रहने के बाद फिर सुना-सुनाया पाठ दुहराया, "बाबा, सारी दुनिया में मन्दी आयी है। मिलें बन्द हो रही हैं। मजूर हटाये जा रहे हैं। दुकनदार हाथ-पर-हाथ धरे बैठे हैं। पढ़े-लिखे दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं।" और राम-खेलवान की ओर देखने लगा।

रामखेलावन को सिर्फ दुनिया में मन्दी की बात समझ में आयी। वह बोला, "यह तुमने ठीक कहा, छोटे पंडित। छंगा की ससुरार नरखेरा में भी यही हाल है। चौगिर्दा एक रुपिया मन जुआर।" फिर सिर को सहलाते हुए बोला, "चीजें पहिले भी सस्ती थीं, पै अब पैदावार में बरक्कत नहीं। मुद्दा बात यह है। अब बताओ, कैसे लगान दें, कैसे बाल-बच्चों का तन ढके ?" और अपना हाथ आगे को बढ़ाकर रामशंकर को ताकने लगा।

रामशंकर की जानकारी का भण्डार चुक गया था। वह सिर खुज-लाने लगा।

रामखेलावन को उस पर जैसे तरस आ गया हो, बोला, "जाव भीतर। अपनी काकी से मिलि आओ, भौजी को देखि आओ। छंगा साइत भीतर है।" थोड़ा रुककर, "बच्चे हो, खेलने-खाने के दिन। क्या धरा है, दुनिया के परपंच में।"

रामशंकर के मन में आया, कह दे, अंग्रेज़ी राज्य को हटाये बिना काम न चलेगा, लेकिन वह आहिस्ते-आहिस्ते क़दम रखता आगे बढ़ गया। यह बात तो छंगा से कहने की है, उसने सोचा।

17

रामशंकर ने बाज़ार में मुनादी करा दी थी, किशनगढ़ में 'कवि दरबार' नाटक होगा। इससे गाँव में ही नहीं, जँवार में नाटक देखने की चाह जाग उठी।

इतवार को कोई नौ बजे सवेरे तीन नौजवान और एक किशोरी ताँगे पर किशनगढ़ पहुँचे। उनके पहुँचते ही पूरे गाँव में ख़बर फैल गयी, ठेठर मण्डली वाले आ गये। उनमें एक मेहरिया भी है। मण्डली में किसी औरत के होने से नाटक देखने की ललक और बढ़ गयी, लेकिन साथ ही खिचड़ी-सी पकने लगी।

शिवसहाय दीक्षित की स्त्री धनेश्वर मिश्र के घर गयी थी आग लेने, लेकिन आँगन में ही हाथ फैलाकर और आँखें फाड़कर बोली, "अरे कुछ सुना बहिनी, रामसंकर पतुरिया लाया है, नचाने को।"

"जो न करैं, थोरा," धनेश्वर की स्त्री ने मुँह बिदकाकर कहा, "दुइ अच्छर अंगरेज़ी पढ़ गया, सो अक्कास से मूत रहा है।"

धनेश्वर दालान में बैठे पूजा कर रहे थे, वहीं से बोले, "रामअधार भैया गढ़ी तक न जाते थे, पतुरिया के नाच में। अब कुमूत, खिरिस्टान सब कुल-मरजाद माटी में मिला रहा है।" साँस लेने को थोड़ा रुके, फिर बोले, "बज़ार के दिन तो बड़ा लिच्चर झाड़ा, गन्धी महत्मा का नाम लिया। अब यह करम!"

"बारे का बेगरा है," धनेश्वर की दुलहिन ने जोड़ा। "नारा नहीं सूखा था, तब इस्कूल से भाग जाता था छंगा के साथ, नौटंकी देखने।"

"छंगा से दाँत काटी रोटी है," शिवसहाय की दुलहिन ने कहा।

"सेंत थोरै है," कुटिल मुसकान के साथ धनेश्वर की दुलहिन ने फुसफुसाते हुए कहा। "जहाँ गुड़, हुआँ चींटा। सहर से आया नहीं कि छूट घोड़ी मुसौले ठाढ़ी। दिन-भर छंगा के घर में। छंगा की दुलहिन जो है।"

शिवसहाय की दुलहिन भी मुसकरायीं।

"अरे छंगा," रामखेलावन ने चौपाल के पास खड़े अपने नाती (पोते) से पूछा, "सुना, छोटे पण्डित मेहरारू लाये हैं, ठेठर में नचाने की खातिन?"

छंगा कुछ क्षण तक सोचता रहा, फिर अपने सिर पर हाथ फेरते हुए बोला, "छोटे पण्डित कहते हैं, वो लरकी किसी देसभगत की बहिनी है। पढ़ रही है कालिज में।"

"क्या?" रामखेलावन कुछ समझ न सका था।

"कहते हैं," छंगा ने बताया, "इसका बडा भाई गवर्मिण्ट का बगी है, बम-पिस्तौल बनाता है, जेल में है!"

"जेहल में! बगी!!" रामखेलावन छंगा की ओर अचरज से ताकने लगा। "तब भला आदमी कैसे? होगा कोई चोर-उचक्का, डाँकू।" फिर अपनी तर्जनी छंगा की ओर उठाते हुए चेताया, "देख छंगा, छोटे पंडित तेरे साथी हैं, पै तू इस बवाल में न परना।"

"ठेठर में कुछ परबन्ध तो देखना परैगा," छंगा ने उत्तर दिया।

"इसमें कुछ हरक्कत नहीं। हाँ, अगी-बगी के फन्दे में न फँसना।" साथ ही जोड़ा, "भले घर की लरकी, कम्पू से आयी लठलुँवरों के साथ, ठेठर में नाचने।"

नाटक का मंच बन रहा था। बल्ली गाड़ने के लिए जमीन खोदते हुए छंगा ने यह सब रामशंकर को बताया जो उसके बाबा ने कहा था।

रामशंकर फीकी हँसी हँसते हुए बोला, "मैं अच्छा उल्लू बन गया, मीना को लेकर।" फिर बताने लगा, "हमारा एक स्कूल का साथी है, विमल। उसने कहा, हमारे यहाँ नाटक में लड़की का काम लड़के करते

हैं। यह ठीक नहीं। बंगाली हमसे कितना आगे हैं। उनके यहाँ भले घरों की लड़कियाँ नाटक में काम करती हैं। उसी ने कह-सुन कर मीना को राज़ी किया। यहाँ मीना को लेकर जितने मुँह, उतनी बातें।" रामशंकर साँस लेने को ज़रा रुका, फिर बताया, "बिसेसर बाबा मिल गये, जब मैं घर से निकला। उन्होंने पूछा, बच्चा, या लरकिनी नाचैगी कि गायेगी? मैंने जवाब दिया, देख लेना बाबा, जब नाटक हो। इसके बाद एक बेहूदा सवाल पूछ बैठे।"

रामशंकर चुप हो गया। छंगा ने तब उत्सुक होकर पूछा, "क्या सवाल पूछा?"

"अरे साथी, बिसेसर बाबा बुजुर्ग आदमी, सो सुन लिया। और कोई पूछता, तो वह रहपट देता कि पाँचों उँगलियाँ गाल पर उभर आतीं।"

"कहा क्या?" छंगा ने ज़ोर देकर पूछा, रामशंकर के बाँभन-रोष की डींग सुनकर आती हँसी को रोककर।

"उन्होंने पूछा," रामशंकर ने संकोच के साथ, अड़ते-अड़ते बताया, "कहाँ से लाये हो इसको? मूलगंज से या इटावा बज़ार से?"

"ये कोई खराब जगा हैं क्या?" छंगा पूछ बैठा।

"तू छंगा भैया, है मुझसे भी बड़ा उल्लू!" रामशंकर ने तिनककर उत्तर दिया, "निरा गदहा!"

"छोटे पंडित, तुम्हारा नाराज़ होना बेफ़जूल है। मैं जब कभू कभी गया नहीं, तो यह बताओ, मैं भला कैसे जानूँ, ये क्या हैं, साँप कि बीछी?"

रामशंकर ने जब बता दिया कि वहाँ चकले हैं, तब छंगा ने टिप्पणी की, "बिसेसर महराज हैं माछी। वो सब जगा मैला-मवाद सूँघते हैं।"

रामशंकर को छंगा के कथन पर हँसी आ गयी। ज़रा देर बाद वह बोला, "फ़ुर्ती के हाथ चला, छंगा भैया, अभी बहुत काम पड़ा है।"

"सब चुटकी बजाते टंच हो जायेगा।" छंगा ने मस्ती के साथ उत्तर दिया और कुदाल से गड्ढा खोदने में जुट गया।

रहुनी वाले मैदान में कई तख्त जोड़कर नाटक का मंच बनाया गया। यह तीन तरफ़ से तिरपालों से घिरा था। सामने एक रंगीन जाजिम पर्दे

की भाँति लगा दी गयी थी। ऊपर आकाश में पूर्णमासी का चन्द्रमा गैस के हंडे की तरह लटका था।

नाटक रात में साढ़े आठ बजे से होना था, लेकिन साढ़े सात बजे तक ही मैदान खचाखच भर गया। पर्दे के लिए बाँसों के सहारे तीन जाजिमें बाँधकर औरतों के बैठने का अलग प्रबन्ध किया गया था। गोद के बच्चे षड़ज, पंचम और निषाद में स्वर साध रहे थे। बड़े बच्चे किलकारियों की ताल दे रहे थे।

घनेश्वर मिश्र, शिवसहाय दीक्षित, मुरलीधर सुकुल सबसे आगे की पाँत में बैठे थे। दर्शकों की अगली पाँत में प्राइमरी और मिडिल स्कूल के अध्यापक भी थे। मिडिल स्कूल के लड़के स्काउटों की वर्दी पहने प्रबन्ध कर रहे थे।

निश्चित समय पर बिगुल बजा और मंच का पर्दा उठा। सामने सुभद्रा कुमारी चौहान बनी मीना बनर्जी बैठी थी। उसके पीछे बीच में सनेही जी बना युवक, उसके दाहिनी ओर नवीन जी बना और बायीं ओर सोहनलाल द्विवेदी बना युवक बैठे थे।

पर्दा उठते ही दर्शकों में हलचल मच गयी। सब गर्दनें उठा-उठाकर मीना को देखने लगे।

उन दिनों लाउडस्पीकर थे नहीं और सामने जहाँ तक निगाह जाती थी, जन-समूह दिखायी पड़ रहा था। रामशंकर टीन की चद्दर का बना वैसा ही लम्बा चोंगा हाथ में लिये मंच पर आया जैसा कानपुर के परेड मैदान के सरकस में जोकर लिये रहता है और चोंगे को मुँह से लगाकर खूब ज़ोर से चिल्लाकर कवियों के नाम बताये और समझाया कि उन कवियों का रूप भरकर यहाँ कालेजों के जो विद्यार्थी बैठे हैं, वे उनकी कविताएँ सुनायेंगे। इस कवि-दरबार का संचालन श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान करेंगी।

मीना ने खड़े होकर सबको नमस्कार किया, फिर बताया, "अब हम सब में बुजुर्ग, सनेही जी कविता-पाठ करेंगे।"

सनेही जी दाहिना हाथ आगे को बढ़ाकर बुलन्द आवाज़ में अपनी कविता सुनाने लगे :

"कहाँ वह तख्त, कहाँ वह ताज, कहाँ है वह क़ैसर, वह ज़ार।
उलट इस उलट फेर ने दिये, अनय के मूर्तिमान अवतार।"

श्रोताओं ने तालियाँ बजाकर 'वाह-वाह' कहा। सनेही जी ने दाहिने हाथ की तर्जनी हिलाते हुए अगला छन्द पढ़ा :

"काँपते अत्याचारी हृदय, न जाने क्या होगा भगवान,
हो चुकी विधि-विडम्बना बहुत, सफल होने को हैं बलिदान।"

कोई एक मिनट तक तालियाँ बजती रहीं, तब कहीं सुभद्रा जी यह बता पायीं कि अब नवीन जी विप्लव-गान सुनायेंगे।

खद्दर का कुर्ता-धोती पहने और ज़रा तिरछी गांधी टोपी लगाये कद्दावर नवीन जी सामने आये और "अन्धे मूढ़ विचारों की अचल शिला को विचलित" करने का आह्वान करते हुए विप्लव-गान के चुने हुए पद सुनाने लगे। उनके मेघ-गर्जन में ऐसा ओज कि बीच की पाँत में बैठे विद्यार्थी उत्साह से उछलकर कुछ इस प्रकार खड़े हो जाते जैसे बिजली का तार छू जाता हो।

जब नवीन जी ने अपना अन्तिम पद समाप्त किया, लड़कों ने खड़े होकर नारा लगाया—"इनकलाब ज़िन्दाबाद!"

पीछे एक कोने में बैठे कुछ किसान अचरज से ताकने लगे और कानाफूसी की।

एक बोला, "क्या कहा, इनका लाओ जिन्दा बाँध!"

दूसरे ने हामी भरी।

"किनको?" उसने पूछा।

दूसरा कुछ उत्तर न दे सका।

पास बैठा एक और किसान बोला, "अंगरेजन को।"

"अँगरेज हियाँ कहाँ हैं?" पहले ने पूछा।

दूसरे को अँधेरे में जैसे राह कुछ सूझी हो। उसने कहा, "ज़िमींदार को।"

यह बात सबको जँची और सब मंच की ओर ताकने लगे, जैसे ज़मींदार जिन्दा बाँधकर लाया जाने वाला हो।

उधर सोहनलाल द्विवेदी राणा प्रताप का आह्वान कर रहे थे :

"हम कसे कवच, सज अस्त्र-शस्त्र, उद्यत हैं रण में जाने को।
मेरे सेनापति कहाँ छिपे, तुम आओ शंख बजाने को।"

कविता पूरी होते ही जोर से आवाज़ आयी, "भारत माता की जै !"

रामशंकर ने मंच पर आकर कहा, "अब अनुरोध है कि सुभद्रा जी अपनी कोई रचना सुनायें।"

सुभद्रा जी ने खड़े होकर मधुर स्वर में गाते हुए कहना शुरू किया। नवीन बने युवक ने सितार पर संगत की।

"वीरों का कैसा हो वसन्त ?
फूली सरसों ने दिया रंग, मधु लेकर आ पहुँची अनंग।
वधु-वसुधा पुलकित अंग-अंग, हैं वीर-वेश में किन्तु कन्त।
वीरों का कैसा हो वसन्त ?"

भाव-विभोर सुनने वाले मीना को एकटक ताक रहे थे, सम्मोहित-से। उधर मीना ने दोनों हाथों की गलबाहें बनाकर और इसके बाद दाहिने हाथ को कुछ इस प्रकार घुमाकर जैसे तलवार चला रही हो, अगला छन्द सुनाया :

"गलबाहें हों, या हो कृपाण, चल चितवन हो, या धनुष-बाण,
हो रस-विलास, या दलित-त्राण, हो रही समस्या यह दुरन्त।"

"वीरों का कैसा हो वसन्त ?" की पूर्ति श्रोताओं ने गर्दनें हिलाते हुए की। द्रुत पर बजते सितार के बोल वातावरण में तैर रहे थे। तभी रामशंकर ने मंच पर आकर बताया कि अब कवि-दरबार समाप्त करने से पहले हम सब मिलकर झण्डा-गान करेंगे। आप सब अपनी-अपनी जगह शान्त खड़े हो जाइये। सब हड़बड़ाकर खड़े होने लगे।

तिरंगा झंडा सुभद्रा कुमारी चौहान बनी मीना के हाथ में दिया गया। उसके इर्द-गिर्द कवि बने युवक खड़े हो गये और सबने एक स्वर से गाया :

"विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊँचा रहे हमारा।
इस झंडे के नीचे निर्भय, लें स्वराज्य हम अविचल निश्चय।
बोलो भारत माता की जय, स्वतंत्रता है ध्येय हमारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।"

युवक एक पंक्ति गाते, जन-समाज उसे दुहराता।

झंडा-गान बन्द होते ही घनेश्वर मिश्र और शिवसहाय दीक्षित चल पड़े। घनेश्वर कुछ भेद-भरे ढंग से मुसकराये।

"नाँव बड़े औ' दरसन थोड़े," शिवसहाय बोले। "इससे अच्छी तो नरखेड़ा मण्डली की नौटंकी होती है।"

घनेश्वर हँसने लगे।

कार्यक्रम 'कवि-दरबार' नाटक खेलने का था, लेकिन विद्यार्थियों ने जुलूस निकालने का आग्रह किया और एकत्र जन-समुदाय ने भी उनका समर्थन किया, इसलिए रात साढ़े दस बजे जुलूस निकला। आगे तिरंगा झंडा लिये हुए मीना और उसके पीछे जन-समूह गाँव में घुसा और बड़े गलियारे से होता हुआ आगे बढ़ा।

रणवीर सिंह और सुभद्रा देवी के पलँग दोमंजिले महल की छत पर पड़े थे। दोनों अपने-अपने पलँगों पर लेटे गपशप कर रहे थे। एक पंखा-कुली दीवार की ओट में बैठा पंखा खींच रहा था। जुलूस के अस्पष्ट स्वर गढ़ी तक आ रहे थे।

"यह शोर कैसा हो रहा है?" रणवीर सिंह ने पूछा।

"कांग्रेसी होंगे। वह दुबे का नाती आसमान को सिर पर उठाये है।" सुभद्रा देवी ने उपेक्षा-भरे स्वर में उत्तर दिया।

"पंडित सोचते थे, दो अक्षर अंग्रेज़ी पढ़ लेगा, तो ठीक से घर चलेगा। सो नाती कुपूत निकला।" यह रणवीर सिंह की टिप्पणी थी।

अब जुलूस गढ़ी के इतने निकट आ गया था कि "भारत माता की जय", "इन्कलाब जिन्दाबाद" के नारे साफ़ सुनाई पड़ रहे थे। चाँदनी के प्रकाश में जन-समूह का चलना ऐसा लगता था जैसे गंगा की उफनती लहरें बढ़ रही हों। रणवीर सिंह पलँग से उतरकर डंडा टेकते मुँडेर के पास जाकर खड़े हो गये।

"अंग्रेज़ी राज मुर्दाबाद!" का नारा रणवीर के कानों में गोली की तरह जा लगा। इतने में कुछ लड़कों ने असमय प्रभात फेरी गाना शुरू कर दिया :

"जागो हुआ सवेरा, गांधी जगा रहा है।
अन्याय की निशा से, अन्धेर से न डरना,
सूरज स्वराज्य अपनी लाली दिखा रहा है।"

अब जुलूस गढ़ी के छोर पर पहुँच गया था। रणवीर थोड़ी देर तक मुंडेर पर दोनों हाथ टिकाये खड़े देखते रहे। जुलूस जब और आगे जाकर मुड़ गया, वह धीरे-धीरे वहाँ से हटे। वह सोच रहे थे, लच्छन अच्छे नहीं। जिसे हम लत्ता समझते थे, वह तो साँप जान पड़ता है। अंग्रेज़ी राज मुर्दाबाद! अगर अंग्रेज का राज न रहा, तो हम कहाँ होंगे? उन्हें लगा जैसे अन्याय और अन्धेर की निशा को फाड़ते स्वराज्य-सूर्य की लाली ठीक उनके सामने एक बड़े दहकते गोले की भाँति लटकी हो। वह काँपने लगे। उनके मन में आशंका और आतंक की आँधी उठ रही थी। उन्हें लग रहा था जैसे उनका रोब-दाब, रुतबा-दबदबा यह नकुछ, भिखारी का नाती पैरों तले रौंद रहा है। अंग्रेज को नहीं, सीधे उन्हें चुनौती दे रहा है। उन्हें रीढ़ में हलका-सा दर्द जान पड़ा। वह धीरे-धीरे आये और पलँग पर लेट गये।

अचानक उन्हें दस-ग्यारह साल पहले की कलक्टर की चेतावनी याद आयी, गांधी उठ रहा है। अभी कांग्रेस का असर शहरों में है। आगे चल-कर देहातों में भी कांग्रेस पैर पमारेगी। यह सरकार के लिए और आप ज़मीदारों के लिए भी खतरा है। इसे रोकना होगा।

तब हमने कलक्टर की बात पर ख़ास ध्यान नहीं दिया था, रणवीर सिंह ने सोचा। वह ठीक कहते थे। आज यह नकुछ छोकरा हमारी गढ़ी के पास चिल्ला रहा है, अंग्रेज़ी राज मुर्दाबाद।

"इसे रोकना होगा," उन्होने कलक्टर की चेतावनी को मन-ही-मन दुहराया। "लेकिन कैसे?" अपने आपसे पूछा। अजाने बियाबान में भटका-सा उनका मन कोई राह न बता सका। उन्हें लगा जैसे रीढ़ का दर्द बढ़ रहा हो।

संजय उवाच : राजन्, जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, उसी भाँति किशनगढ़ घूमता था गढ़ी के इर्द-गिर्द, गढ़ी के इशारों पर नाचता था। फिर नव प्रकाश की कुछ किरणें किशनगढ़ के आँगन पर भी पड़ीं। महात्मा गांधी ने दस साल पहले असहयोग की धारा बहायी थी। सन् तीस में वह जन-विक्षोभ का ब्रह्मपुत्र नदी बन गयी। नमक-आंदोलन के रूप में छिड़े सत्याग्रह का ज्वार डांडी के सागर-तट से उठकर हिमालय तक पहुँचा।

धरती ने करवट ली। गढ़ी का मुँह ताकने वाला किशनगढ़ विमुख होकर नया केन्द्र खोजने लगा।

तो अब सुनिये जीवन के कुरुक्षेत्र में गढ़ी और किशनगढ़ की संघर्ष-पर्व की कथा।

संजय उवाच : राजन्, जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, उसी भाँति किशनगढ़ घूमता था गढ़ी के इर्द-गिर्द, गढ़ी के इशारों पर नाचता था। फिर नव प्रकाश की कुछ किरणें किशनगढ़ के आँगन पर भी पड़ीं। महात्मा गांधी ने दस साल पहले असहयोग की धारा बहायी थी। सन् तीस में वह जन-विक्षोभ का ब्रह्मपुत्र नदी बन गयी। नमक-आंदोलन के रूप में छिड़े सत्याग्रह का ज्वार डांडी के सागर-तट से उठकर हिमालय तक पहुँचा।

धरती ने करवट ली। गढ़ी का मुँह ताकने वाला किशनगढ़ विमुख होकर नया केन्द्र खोजने लगा।

तो अब सुनिये जीवन के कुरुक्षेत्र में गढ़ी और किशनगढ़ की संघर्ष-पर्व की कथा।

संघर्ष पर्व

सत्याग्रह-आन्दोलन बन्द हो गया। कांग्रेस वालों को ऐसा झटका लगा जैसे तेजी से चलती डाक गाड़ी पूरा ब्रेक लगाकर रोक दी गयी हो। विद्यार्थी क्षोभ से तिलमिला गये। रामशंकर बौखलाया-सा कालेज-होस्टलों में दौड़-धूप करने लगा। कभी डी० ए० वी० होस्टल जाता, कभी क्राइस्ट चर्च। पाँच दिन की भाग-दौड़ के बाद विद्यार्थियों की एक बैठक हुई। विद्यार्थियों ने तय किया कि हम आन्दोलन चलायेंगे। यह भी तय हुआ कि विद्यार्थियों के तीन प्रतिनिधि कांग्रेस के नेता अशोक जी से मिलें। उनको आगे करके आन्दोलन चलाया जाय। इन तीन में रामशंकर भी था।

ये लोग अशोक जी से मिले। उन्होंने बड़े ध्यान से इनकी बातें सुनीं। सुनने के बाद थोड़ी देर तक कुछ सोचते रहे, फिर बोले, "रामशंकर, अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। गांधी जी ने आन्दोलन बन्द कर दिया है। सब बड़े नेता उनके साथ हैं। हम तीन तिलंगे क्या कर लेंगे?"

अशोक जी ने कहा था समझाने के लिए, लेकिन रामशंकर को उनकी वाणी में निराशा का स्वर सुनायी पड़ा। वह तिलमिला गया और क्षोभ-भरे स्वर में बोल पड़ा :

> "आज खड्ग की धार कुण्ठित,
> खाली है तूणीर हुआ।
> खिसक गया गाण्डीव हाथ से,
> लक्ष्य भ्रष्ट है तीर हुआ।
> बढ़ती हुई कतार फ़ौज की,
> सहसा अस्त-व्यस्त हुई।
> त्रस्त हुई भावों की गरिमा,
> महिमा सब सन्यस्त हुई।"

अशोक जी बड़े गौर से रामशंकर को ताक रहे थे। उसके खामोश होने पर जरा मुसकराकर बोले, "तुम्हारी भावना की कद्र करते हैं, रामशंकर, लेकिन भावुकता को यथार्थ के धरातल पर खड़ा करना होगा।"

रामशंकर का क्षोभ शायद अभी शान्त न हुआ था। उसने अशोक जी की चेतावनी को जैसे अनसुनी करते हुए एक कड़ी और जोड़ी, "मैं हूँ विजित, जीत का प्यासा, इसे भूल-जाऊँ कैसे ?" और अशोक जी की ओर देखने नहीं, बल्कि घूरने लगा।

अशोक जी गर्दन जरा झुकाये सिर सहला रहे थे जैसे उचित उत्तर खोज रहे हों। तभी एक विद्यार्थी पूछ बैठा, "तो हम लोग हथियार डाल दें ?"

"इसे हथियार डालना नही कहा जायेगा।" अशोक जी ने समझाया। "पटेबाजी में पैंतरे बदले जाते हैं। लड़ाई में सेना कभी-कभी पीछे हटती है। फिर और तैयारी करके धावा बोलती है।"

विद्यार्थियों पर अशोक जी के समझाने का कुछ असर न पड़ा। रामशंकर ने मन-ही-मन कहा, समझौतापरस्ती। एक अन्य विद्यार्थी ने पूछा, "तो अब हम लोग क्या करें ?"

"फिर पढ़ाई शुरू करो।"

"उन्हीं स्कूलों, कालिजों में जिनके बारे में गांधी जी ने कहा था—तुम कब तक उसी तरह चिपके रहोगे जिस तरह मक्खी पैखाने से ?" रामशंकर ने प्रश्न किया।

"भाई, शास्त्रार्थ से कुछ फल न निकलेगा," अशोक जी ने दो-टूक बात कह दी और कुछ इस तरह का भाव दिखाया जैसे और बहस के लिए समय न हो।

तीनों उठ खड़े हुए और बिना नमस्कार किये ही बाहर चले आये।

विद्यार्थियों में रोष-भरी बौखलाहट थी, लेकिन रास्ता सूझता न था। रामशंकर कानपुर में दो दिन और रहा। इसके बाद घर आ गया।

पढ़ाई छोड़ने के बाद से घर मे सब रामशंकर से नाराज थे। माँ कई बार कह चुकी थी, "किये-कराये पर पानी फेर दिया।" पिता चुप थे, लेकिन मन-ही-मन क्षुब्ध। चाचा औरों के सामने तो रामशंकर का पक्ष

लेते, कहते, "कोई चोरी-छिनारा तो कर नहीं रहा। देस की खातिर दर-दर मारा-मारा फिर रहा है।" लेकिन घर में भाभी या भाई से बमक पड़ते। कहते, "कुत्ते का गू, न लीपने का, न पोतने का। घर फूंक तमाशा दिखा रहा है।" सिर्फ बाबा थे जो कहते, "बच्चा है, सँभल जायेगा।" लेकिन छोटे लड़के के सामने वह भी चुप रहते। उसने एक-दो बार उन्हें खरी-खरी सुनायी थी, "तुम्ही तो बिगारे हो छोकरे को। सिर पर चढ़ा रखा है।" दादी भी रामशंकर को बहुत प्यार करती थी, दोनों बेटों से जो कुछ पैसे उन्हें मिल जाते, वे रामशंकर को चुपके-से दे देतीं।

रामशंकर घर आने पर दो-तीन दिन तक बिलकुल चुप रहा। घर में किसी से विशेष बात न की। चौथे दिन पिता को अकेला पाकर अड़ते हुए कहा, "बप्पा, कहो तो पढ़ाई शुरू कर दें।"

शिवअधार कुछ न बोले, जैसे सुना ही न हो।

रामशंकर थोड़ी देर बाद बोला, "बीच में पढ़ाई टूटने से न इत्त में, न उत्त मे।"

अब शिवअधार से न रहा गया। जो क्रोध मन में बराबर घुमड़ता रहता था, फूट पड़ा। वह रामशंकर पर बरस पड़े, "हमसे क्या पूछते हो? जाव उसी गन्धी से पूछो। चले नेता बनने। घर मे नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने। नाम दुनियापति, भुंइ बिसुवा-भर नहीं।" साँस लेने को जरा रुके और फिर कहा, "गाँव-गाँव लिच्चर देने-भर को पढ़ गये हो। इससे ज्यादा की जरूरत?"

रामशंकर समझ गया, पिता आगे पढ़ाई के लिए एक पैसा तक न देंगे। अब उसकी हालत उस कटी पतंग-सी थी जो आकाश में निरुद्देश्य उड़ती जा रही हो, पता नहीं, कहाँ गिरे।

गाँव मे किसी से विशेष बात न करता। धनेश्वर मिश्र मिल जाते, तो अदबदाकर व्यंग्य-भरे स्वर में कहते, "अरे बच्चा, बताओ तो देस का हाल! सुराज मिला कि नहीं?" उनका प्रश्न रामशंकर के मन में तीर-सा चुभता। वह कुछ उत्तर न देकर, मुसकरा देता, जो मुसकराहट जैसे उसका रोना हो और धनेश्वर मन-ही-मन प्रसन्न हो जाते। चला था थानेदार बनने, बौना चाँद छूने। चौबे गये थे छब्बे बनने। धनेश्वर के इस

प्रश्न से बचने के लिए रामशंकर उनसे कतराकर निकल जाता। शाम को प्राय: अकेला नहर की तरफ़ जाकर घूमता रहता। फिर नहाकर रात गये घर आता। उसे खाना ज़रूर मिलता था, लेकिन पहले की तरह कोई आग्रह करके न खिलाता। खुद ही चौके में जाकर बैठ जाता और जो कुछ थाली में आ जाता, खाकर उठ आता।

2

रणवीर सिंह अब ज़मींदारी का काम बिलकुल न देखते। वह सारे दिन जनानखाने में पड़े रहते। सुबह-शाम बिन्दा के सहारे थोड़ा टहलते। पहले सुभद्रा देवी ने काम सँभाला, लेकिन कानपुर का काम मुंशी खूबचन्द पर छोड़ना पड़ता। इससे ड्योढ़ी का काम ठीक से न हो पाता। अन्त में सुभद्रा देवी ने महावीर सिंह को सलाह दी, "लाल साहब, पढ़ाई बन्द कर ज़मींदारी का काम देखिये।"

महावीर सिंह ने जब बागडोर अपने हाथ में ली, तब सबसे पहला काम उन्होंने यह किया कि लखनऊ से बाबू रामप्रसाद गुप्ता, बी० ए०, एल० एल-बी० को मैनेजर बनाकर लाये। मि० गुप्ता की वकालत तो चली न थी। हाँ, रायबरेली और प्रतापगढ़ के एक-दो तअल्लुक़दारों के यहाँ वह कुछ समय तक सेक्रेटरी या मैनेजर ज़रूर रह चुके थे। जब महावीर सिंह सातवें दर्जे में पढ़ते थे, मि० गुप्ता लखनऊ में किसी तअल्लुक़दार के लड़के के गार्जियन ट्यूटर (अभिभावक अध्यापक) थे। उम्र तीस-पैंतीस की थी, लेकिन लड़कों के बीच लड़के बन जाते और दिलचस्प लतीफ़े सुनाते थे। महावीर से वहाँ परिचय हो गया था। कभी-कभी हम-प्याला बनने में भी मि० गुप्ता को आपत्ति न थी।

महावीर सिंह लखनऊ गये और वहाँ मि० गुप्ता से मिले। उनसे कहा, "मास्टर साहब, हमारी रियासत के लिए कोई मैनेजर बताइये।"

मि० गुप्ता ने खोजने की जिम्मेदारी ले ली और धीरे-धीरे दो-चार

दिनों के भीतर बात को ऐसा मोड़ दिया कि महावीर ने उनसे कहा, "मास्टर साहब, आप कानून भी जानते हैं, कई रियासतों मे काम का तजर्बा है, क्यों न आप यह जिम्मेदारी उठायें ?"

मि० गुप्ता बोले, "थोड़ा सोचने का मौका दीजिये, कुँवर साहब।"

"सोच लीजिये," महावीर सिंह ने कहा, "लेकिन यह जिम्मेदारी तो आपको ही लेनी होगी।"

मि० गुप्ता थोड़ी देर तक चुप रहे, फिर बोले, "भाई, जब कहते हैं, तो आपकी बात तो टाल नहीं सकता, कुँवर साहब, लेकिन जरा घर में पूछ लूँ। गाँव में रहना। सच पूछिये तो इसी वजह से दूसरी जगहों से भी मुझे चले आना पड़ा।"

महावीर हँसने लगे। "गाँव में आपके रहने का शानदार इन्तजाम रहेगा। फिर कानपुर है कितनी दूर ? जब चाहिए, आकर सिनेमा देखिये। कानपुर क्या, लखनऊ भी आना-जाना रहेगा।"

"कल मैं आपको डेफिनिट, बिलकुल पक्का बता दूँगा," मि० गुप्ता बोले।

मि० गुप्ता दूसरे दिन मिले और राजी हो गये। वेतन की माँग उन्होंने काफी बड़ी रखी थी, लेकिन ढाई सौ पर मान गये। रहना-खाना मुफ्त।

मि० गुप्ता का अलग आफ़िस का कमरा था। दरवाज़े पर चिक पड़ी रहती। एक अर्दली बाहर स्टूल पर बैठा रहता। मि० गुप्ता ने अर्दली से कह दिया था, "बिना इत्तिला किये कोई अन्दर न आये।" जब वह बाहर निकलते, तो उड़ती हुई अफसराना नजर कारिन्दों और दूसरे नौकरों पर डालते।

नये मैनेजर के आने से कारिन्दों मे बड़ी खलबली मची। न जाने कैसा व्यवहार करें। लेकिन मुंशी खूबचन्द मस्त थे। एक कारिन्दा ने कहा, "मुंशी जी, नये मनीजर आये हैं।"

मुंशी जी लापरवाही के साथ बोले, "अपना काम करो। अपन तो यह जानते हैं—लंका में राजा कोई हो, रानी मन्दोदरी ही रहेगी।"

प्रश्न से बचने के लिए रामशंकर उनसे कतराकर निकल जाता। शाम को प्राय: अकेला नहर की तरफ़ जाकर घूमता रहता। फिर नहाकर रात गये घर आता। उसे खाना ज़रूर मिलता था, लेकिन पहले की तरह कोई आग्रह करके न खिलाता। खुद ही चौके में जाकर बैठ जाता और जो कुछ थाली में आ जाता, खाकर उठ आता।

2

रणवीर सिंह अब ज़मींदारी का काम बिलकुल न देखते। वह सारे दिन जनानखाने में पड़े रहते। सुबह-शाम विन्दा के सहारे थोड़ा टहलते। पहले सुभद्रा देवी ने काम सँभाला, लेकिन कानपुर का काम मुंशी खूबचन्द पर छोड़ना पड़ता। इससे ड्योढ़ी का काम ठीक से न हो पाता। अन्त में सुभद्रा देवी ने महावीर सिंह को सलाह दी, "लाल साहब, पढ़ाई बन्द कर ज़मींदारी का काम देखिये।"

महावीर सिंह ने जब बागडोर अपने हाथ में ली, तब सबसे पहला काम उन्होंने यह किया कि लखनऊ से बाबू रामप्रसाद गुप्ता, बी० ए०, एल० एल-बी० को मैनेजर बनाकर लाये। मि० गुप्ता की वकालत तो चली न थी। हाँ, रायबरेली और प्रतापगढ़ के एक-दो तअल्लुकदारों के यहाँ वह कुछ समय तक सेक्रेटरी या मैनेजर ज़रूर रह चुके थे। जब महावीर सिंह सातवें दर्जे में पढ़ते थे, मि० गुप्ता लखनऊ मे किसी तअल्लुकदार के लड़के के गार्जियन ट्यूटर (अभिभावक अध्यापक) थे। उम्र तीस-पैंतीस की थी, लेकिन लड़कों के बीच लड़के बन जाते और दिलचस्प लतीफ़े सुनाते थे। महावीर से वहाँ परिचय हो गया था। कभी-कभी हम-प्याला बनने में भी मि० गुप्ता को आपत्ति न थी।

महावीर सिंह लखनऊ गये और वहाँ मि० गुप्ता से मिले। उनसे कहा, "मास्टर साहब, हमारी रियासत के लिए कोई मैनेजर बताइये।"

मि० गुप्ता ने खोजने की जिम्मेदारी ले ली और धीरे-धीरे दो-चार

दिनों के भीतर बात को ऐसा मोड़ दिया कि महावीर ने उनसे कहा, "मास्टर साहब, आप कानून भी जानते हैं, कई रियासतों में काम का तजर्बा है, क्यों न आप यह जिम्मेदारी उठायें ?"

मि० गुप्ता बोले, "थोड़ा सोचने का मौका दीजिये, कुंवर साहब।"

"सोच लीजिये," महावीर सिंह ने कहा, "लेकिन यह जिम्मेदारी तो आपको ही लेनी होगी।"

मि० गुप्ता थोड़ी देर तक चुप रहे, फिर बोले, "भाई, जब कहते हैं, तो आपकी बात तो टाल नहीं सकता, कुंवर साहब, लेकिन जरा घर में पूछ लूँ। गांव में रहना। सच पूछिये तो इसी वजह से दूसरी जगहों से भी मुझे चले आना पड़ा।"

महावीर हँसने लगे। "गाँव में आपके रहने का शानदार इन्तजाम रहेगा। फिर कानपुर है कितनी दूर ? जब चाहिए, आकर सिनेमा देखिये। कानपुर क्या, लखनऊ भी आना-जाना रहेगा।"

"कल मैं आपको डेफिनिट, बिलकुल पक्का बता दूंगा," मि० गुप्ता बोले।

मि० गुप्ता दूसरे दिन मिले और राजी हो गये। वेतन की माँग उन्होने काफी बड़ी रखी थी, लेकिन ढाई सौ पर मान गये। रहना-खाना मुफ्त।

मि० गुप्ता का अलग आफिस का कमरा था। दरवाजे पर चिक पड़ी रहती। एक अर्दली बाहर स्टूल पर बैठा रहता। मि० गुप्ता ने अर्दली से कह दिया था, "बिना इत्तिला किये कोई अन्दर न आये।" जब वह बाहर निकलते, तो उड़ती हुई अफसराना नजर कारिन्दो और दूसरे नौकरों पर डालते।

नये मैनेजर के आने से कारिन्दों मे बड़ी खलबली मची। न जाने कैसा व्यवहार करें। लेकिन मुंशी खूबचन्द मस्त थे। एक कारिन्दा ने कहा, "मुंशी जी, नये मनीजर आये हैं।"

मुंशी जी लापरवाही के साथ बोले, "अपना काम करो। अपन तो यह जानते हैं—लंका में राजा कोई हो, रानी मन्दोदरी ही रहेगी।"

बात कारिन्दा की समझ में आ गयी। मुंशी जी के बिना काम नहीं चल सकता। लेकिन डर उसे अपना और दूसरे कारिन्दों का था। उनका क्या होगा? उसने अपनी यह आशंका व्यक्त भी की।

मुंशी जी ने हँसकर अभयदान दिया, "बेफिकर रहो। जब तक मुंशी खूबचन्द जिन्दा हैं, तुम्हारा कोई बाल बाँका नहीं कर सकता।"

इससे वह आश्वस्त हो गया। दूसरे कारिन्दों और सिपाहियों को भी ढाढ़स बँधा।

मैनेजर साहब का यह हाल था। उधर तअल्लुकदारों के स्कूल में पढ़े महावीर सिंह का नया साहबी खून ऐसा कि हर किसी से डपटकर बात करते। मुंशी खूबचन्द को रणवीर सिंह हमेशा मुंशी जी कहते थे, लेकिन महावीर ने मैनेजर के आने के बाद पहली बार जब मुंशी जी को बुलाया, तो 'खूबचन्द' कहा। खूबचन्द ने सुना, उन्हें धक्का लगा, लेकिन सुनी अन-सुनी कर गये।

"खूबचन्द!" महावीर सिंह गरजे। "सुनायी नहीं पड़ता क्या?"

"जी छोटे सरकार!" खूबचन्द लपककर उनके पास पहुँचे। "सुना नहीं।"

छोटे सरकार सम्बोधन महावीर को बुरा लगा। बुड्ढा न मरता है, न माचा छोडता है। मन-ही-मन उन्होंने कहा। "यह छोटे सरकार क्या?" महावीर ने डाँट बतायी। "सरकार या लाल साहब कहो!"

"गलती हो गयी अन्नदाता।" खूबचन्द के हाथ अभ्यास वश जुड़ गये।

"सब बही-खाते मुकम्मल हैं?" महावीर ने पूछा।

"कारिन्दे सब कर रहे हैं, सरकार।"

"क्या कर रहे हैं सरकार?"

अब तो मुंशी जी की घिग्घी बंध गयी। महावीर सिंह ने आँखें तरेर कर उन्हें देखा और चले गये। मुंशी जी कुछ क्षण वहीं खड़े रहे, फिर आकर ड्योढ़ी में बैठ गये।

दूसरे दिन सवेरे कोई नौ बजे महावीर सिंह अपने आफ़िस के कमरे

में आये और अर्दली को हुक्म दिया, "खूबचन्द को बुला ला।"

"जो हुकुम सरकार," कहकर अर्दली लपका हुआ ड्योढ़ी गया और हुक्म तामील किया, "मुंशी जी, तुमको सरकार बोलाते हैं।"

इतना सुनते ही मुंशी जी का दिल धड़कने लगा। कांपते हुए उठे और पूछा, "कहां हैं?"

"अपने आपिस में।"

मुंशी जी कुछ लड़खड़ाते-से गये। महावीर एक बड़ी कुर्सी पर बैठे थे। सामने बढ़िया मेज जिस पर कलमदान, कलमें, पेपरवेट, कुछ कागज आदि रखे थे।

"अनदाता ने तलब किया?" खूबचन्द ने हाथ जोड़कर पूछा।

महावीर सिंह मुंशी जी के चेहरे की ओर देखने लगे। मुंशी जी ने अपनी गर्दन थोड़ी झुका ली।

"देखो खूबचन्द!" महावीर कड़ककर बोले।

मुंशी जी ने गर्दन ज़रा ऊंची कर ली।

"तुमको आंखों से दिखता नहीं। काम कुछ करते नहीं। ड्योढ़ी में बैठे रहते हो। कल से तुम्हारी छुट्टी।"

इतना सुनना था कि खूबचन्द का पूरा शरीर कांप गया, सिर चकराने लगा। हाथ जोड़कर लड़खड़ाती ज़बान से बोले, "सरकार माई-बाप हैं। इसी दरबार के टुकड़ों पर पला हूं। अब बुढ़ापे में••" आगे वह कुछ न बोल सके।

"लेकिन यहां सदाबरत नहीं बँटता, खूबचन्द!" महावीर सिंह ने दृढ़ता से कहा। "काम प्यारा होता है, चाम नहीं।"

"सरकार मेरी अरदास सुनें।" खूबचन्द ने गिड़गिड़ाते हुए कहा। "जवान लड़का न रह गया। गले बराबर सोरह साल की नातिन (पोती) के हाथ पीले करने हैं, अनदाता।"

"तो इस सबका ठेका रियासत ने ले रखा है?"

खूबचन्द हाथ जोड़े, गर्दन झुकाये चुप खड़े रहे।

"जाओ," महावीर सिंह ने अन्तिम फैसला सुना दिया, "कल से छुट्टी। आज तक का हिसाब मैनेजर साहब से दिला देंगे।"

खूबचन्द फिर भी खड़े रहे।

"जाओ!" महावीर तैश के साथ बोले। "अब खड़े मुँह क्या ताकते हो!"

मुंशी खूबचन्द ने हाथ जोड़कर महावीर सिंह को "जय राम जी" कहा और दीवार का सहारा लेकर बाहर आ गये।

मुंशी खूबचन्द के हटाये जाने की खबर रणवीर सिंह के कानों तक पहुँची। वह छटपटा गये। दोपहर में सुभद्रा देवी से कहा, "रानी साहेब, सारी कुल-मरजाद को मिट्टी में मिला दिया, लाल साहब ने। मुंसी जी बप्पा साहब के बखत से थे।...हमारे यहाँ किसी को निकाला न जाता था। जिसे पाला, उसे निकाल दें!...फिर मुंशी जी की गलती? उनके बराबर वफादार कौन है?" और दोनों हाथों से सिर पीट लिया। "कुल के सब अदब-कायदे पैरों तले रौंद डाले, लाल साहब ने। हम से पूछा तक नहीं।" और कुछ ऐसे कसमसाये जैसे रीढ़ में दर्द उठा हो, फिर रोने लगे।

"अदब-कायदा नहीं तोड़ा, राजा साहब," सुभद्रा देवी ने सान्त्वना के स्वर में उत्तर दिया और सिर पर हाथ फेरा। "आप शान्त रहिये। हम समझा देंगी। असली मालिक आप हैं। लाल साहब तो काम देखते हैं।"

सुभद्रा देवी ने रणवीर वाली बात जब लाल साहब से कही, तो वह बिगड़ गये, "अम्मा साहब, इस तरह काम कैसे चलेगा? मैं जिन्दगी-भर पापा साहब की अँगुली पकड़ के चलूँ?"

सुभद्रा देवी के मन को धक्का लगा, लेकिन चुप रहीं। थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं, "कुछ पेंशन दे दो।" फिर अटकते-अटकते कहा, "आखिर वो सयाने हैं। उनके कान में बात डाल दिया करो।"

महावीर सिंह सोचने लगे, सयाने! जिन्दगी-भर इशारे पर नाचूँ! बोले, "अम्मा साहेब, पेंशन किस-किस को देंगे? इससे तो कुबेर का खजाना भी चुक जायेगा।"

सुभद्रा देवी महावीर का मुँह ताकने लगी। फिर बोली, "हम उनसे कह देंगी, मुंसी जी को पेंसन दी जायगी। तुम कुछ न कहोगे।"

महावीर सिंह खामोश रहे।

मुंशी खूबचन्द के बाद दो और बूढ़े कारिन्दे और तीन बूढ़े सिपाही हटा दिये गये। झम्मन मियाँ भी चपेट में आ गये।

महावीर सिंह ने झम्मन मियाँ से कहा, "झम्मन, जब तुम वर्दी पहनते हो, तो सरकस के जोकर लगते हो। अब तुम्हारी जरूरत नहीं।"

3

रामशंकर नहर की पटरी पर अकेला टहल रहा था। मन में विचारों का तूफान उठा हुआ था। गांधी जी ने सत्याग्रह बन्द कर दिया। कहते थे, मैं स्वराज्य लेकर वापस आऊँगा या मेरी लाश समुन्दर में तैरती नजर आयेगी। *अब ? अब* कहते हैं, *मुझे स्वाधीनता का सार मिल गया।*

वह ठिठककर नीम के पेड़ पर काँव-काँव करते एक कौवे को देखने लगा। मेरी हालत इस कौवे जैसी है, रामशंकर ने सोचा। गाँव-गाँव, गली-गली काँव-काँव करता फिरा, झण्डा लिये। क्या फल मिला नमक बनाने, शराब की दुकान और विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरने देने का ? तीन महीने की जेल काटी। अशोक जी ने पीठ थपथपायी, शाबाशी दी। लेकिन अब ? दर-दर की खाक छान रहा हूँ। अशोक जी वकालत करने लगे। कहते थे, रामशंकर हाईस्कूल पास होते, तो किसी वकील का मुंशी लगवा देता या म्युनिसिपैलिटी में क्लर्क बनवा देता।

विचारों की इस उधेड़बुन में खोये रामशंकर के पैर में आम की जमीन से ऊपर उभरी जड़ की ठोकर लगी। वह अगूठा सहलाने लगा। ये साली चप्पलें, उसने मन-ही-मन कहा, न अंगूठा बचायें, न ऐड़ी।

रामशंकर आगे बढ़ा और अब विचारों ने पलटा खाया। तो स्वराज्य क्या पके आम की तरह टपक पड़ता ? तीन महीने की जेल ! इतना सस्ता है स्वराज्य ? उसके मन में हिन्दी के अध्यापक, पाठक जी के उपदेश गूँजने लगे। खुदीराम बोस से लेकर रामप्रसाद 'बिस्मिल' तक सब, एक-एक

कर याद आये । वह तन कर मधे कदम रखता गाँव की ओर मुड़ा-। नया रास्ता खोजना होगा, उसने मन-ही-मन कहा ।

दो दिन तक सोचने-गुनने के बाद रामशंकर कानपुर चला गया । ग्वाल टोली के एक हाते में छोटी-सी कोठरी एक रुपये महीने किराये पर ली । वहीं एक जून रोटी बनाता और एक जून सत्तू या चने-चबेने पर काटता । थोड़ी दौड़-धूप के बाद उसे दो-दो रुपये घण्टे के चार ट्यूशन मिल गये । अब उसे लगा कि पाँव रखने को ठौर हो गया । वह डी० ए० वी० स्कूल गया और मास्टरों से मिला । मास्टर राजी हो गये कि उसे जो कुछ समझ में न आयेगा, बता दिया करेंगे ।

संस्कृत के पण्डित जी ने सलाह दी, "क्यों न हेडमास्टर साहब से मिलो । बिना नाम लिखे तुम्हें क्लासों में बैठने की अनुमति दे दें ।"

रामशंकर पहले झिझका, फिर हेडमास्टर के पास गया, अपना किस्सा सुनाया और आगे पढ़ने की इच्छा प्रकट की ।

"तो भर्ती हो जाओ, फीस माफ कर देंगे ।" हेडमास्टर बोले ।

"लेकिन सर, मैं सुबह-शाम ट्यूशन करता हूँ ।"

यह सुनकर हेडमास्टर ने कुछ सोचा, फिर बोले, "तो तुम समय निकालकर क्लास अटेण्ड किया करो । प्राइवेट इम्तिहान दो ।"

रामशंकर ने इस तरह हाईस्कूल पास किया, लेकिन डिवीजन न ला सका । ट्यूशन तो करता ही था, उधर राजनीति ऐसा नशा है जिसकी लत छूटती नहीं । वह विद्यार्थियों के आन्दोलनों में भाग लेता । ग्वालटोली में रहने के कारण उसका कुछ झुकाव मज़दूर-आन्दोलन की ओर भी हो गया था ।

हाईस्कूल पास करने के बाद रामशंकर कानपुर के एक हिन्दी पत्र 'देश की बात' का रिपोर्टर बन गया । अब ट्यूशन की जगह पत्रकारिता ने ले ली ।

रामशंकर ने कालेज में पढ़ने का इरादा छोड़ दिया, लेकिन राजनीति, अर्थशास्त्र, हिन्दी और अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन निजी तौर पर करता रहा । वह कांग्रेस और ट्रेड यूनियन का सरगरम कार्यकर्ता बन गया । अखबार के काम से फ़ुर्सत के बाद वह मज़दूरों की पाठशाला चलाता ।

मजदूरों को भारत के इतिहास, दुनिया के इतिहास, समाज के विकास की बातें सीधी-सादी भाषा में समझाता।

4

बनियों के यहाँ से पंसारी की चीजें और हलवाइयों के यहाँ से मिठाइयाँ पर्चियों से गढ़ी आती थीं। उनका सालाना हिसाब दशहरे पर होता था और सबकी एक-एक पाई चुकता कर दी जाती थी। लेकिन अब एक ओर छंटनी करके बचत की जा रही थी, दूसरी ओर खर्च के नये दरवाजे खुल रहे थे। विलायती शराबों की पेटियाँ आने लगी थीं और आये दिन मि० गुप्ता महावीर सिंह को लेकर लखनऊ तफरीह को जाते, चौक में मुजरे, बड़े होटलों में दावतें। नतीजा यह था कि बनियों, हलवाइयों का दो-दो साल का हिसाब बकाया पड़ा था। अगर तकाजा करते, तो मि० गुप्ता डपट कर कहते, "बोरिया-बिस्तर बाँधो और दफा हो जाओ। तुम्हारी इतनी हिम्मत! इतने बड़े रईस का विश्वास नहीं?" उन्हें चुप रह जाना पड़ता।

बेगार पर चमार-पासी रोज ही पकड़ लिये जाते। वे सारे दिन पेट बाँधकर थोड़े से सत्तुओं या चबेने पर काम करते। शाम को अधेले मे भी भेंट न होती। कारिन्दा कह देता, "तुम्हारा हिसाब लिख लिया है, मिल जायेगा।"

चैतुवा एक दिन अकड़ गया। कहने लगा, "करिन्दा साहेब, कागद में लिखे से पेट नहीं भरता। पैसा देव।"

जब वह इस तरह कह रहा था, अचानक मि० गुप्ता उधर से निकले। गरजकर बोले, "क्या कहा? दो पाँच जूते इसे!"

चैतुवा गर्दन झुकाकर चुपचाप चला गया।

बेगार से बचने के लिए इन लोगों ने एक तरकीब निकाली। औरतों से कह दिया, "बड़े सवेरे बाहर से ताला लगाकर चली जाओ।"

घर में ताला लगा देखकर सिपाही वापस हो जाते। लेकिन मि० गुप्ता ने इसका काट निकाल लिया। उन्होंने सिपाहियों को समझा दिया कि दिन में किसी समय दिखायी पड़ने पर अगले दिन आने के लिए कह दिया करो।

महावीर सिंह बिलकुल साहबी ढंग से रहते। जिस तरह मन्दिरों के दरवाज़े हरिजनों के लिए बन्द थे, उसी तरह महावीर सिंह के आफ़िस का कमरा भी पहुँच के बाहर था। सन्देशा भेजवाने पर भी प्रायः कह देते, "अभी फ़ुर्सत नहीं।"

एक दिन अनहोनी हो गयी। पं० रामअधार नवरात्रि के बाद गढ़ी गये और धड़धड़ाते हुए महावीर सिंह के आफिस वाले कमरे में घुस गये। अर्दली उस समय वहाँ न था। महावीर ने ही किसी काम से मैनेजर के पास भेजा था।

"आशीर्वाद बबुआ साहेब," पं० रामअधार बोले।

महावीर ने इसके उत्तर में 'पायलागी' न कहा, बल्कि पूछ दिया, "आप अन्दर कैसे आ गये?"

पं० रामअधार कुछ देर तक ठगे-से खड़े रहे, फिर बोले, "नवरात्रि के बाद बबुआ साहेब को आशीर्वाद देने..."

"आशीर्वाद अर्दली के हाथ भेजवा देते। बिना इत्तिला यहाँ आना मना है।" महावीर सिंह ने दो टूक उत्तर दिया।

पं० रामअधार तुलसीदल और कुछ फूल लिये थे। उन्हें महावीर सिंह को दिये बिना कमरे से निकल आये।

तब तक अर्दली आ गया था और उसने कुछ बातें सुन ली थीं। थोड़ा आगे बढ़कर हाथ जोड़कर उसने फुसफुसाते हुए कहा, "पंडित बाबा, पुराना ज़माना चला गया। हमें माफ़ी दो। हमारी कोई चूक नहीं।"

"नहीं, तुमको दोख नहीं देते।" पं० रामअधार की ... ी आवाज़ निकली। "ठीक है। नये सरकार, नयी विद्या,

पं० रामअधार को इस तरह अपमानित कि ... सारे गाँव में फैल गयी।

"बड़े सरकार म ... पाँव ... यह

सल्लूक !" रामखेलावन मर्माहत होकर बोला।

"विद्वान की कदर नहीं। लौंडे-लफाड़े जुड़े हैं," मुरलीधर सुकुल की टिप्पणी थी।

दीनानाथ भगत के घर में रात के वक्त बनियों और हलवाइयों की गुप्त बैठक हुई। एक लोटे में पानी भरकर रखा गया। भगत ने कहा, "सब गंगाजली उठाओ कि हियां की बात किसी से न कहोगे। घर में मेहरारू से भी नहीं।" सबने गंगाजली उठायी।

अब भगत बोला, "बताओ, दुइ-दुइ साल का बकाया परा है। रोजगार चले, तो कैसे ?"

कुछ देर तक खामोशी रही जैसे सब हिसाब लगा रहे हों, रोजगार कैसे चले। फिर धीमा-सा स्वर फूटा, "तो समान देना बन्द कर दें।"

"कहना आसान है, करना मुश्किल," एक कोने से चट काट हुआ।

"रामअधार बाबा का अपमान हो गया। हम बनिया-बक्काल ?" यह भगत का दीन स्वर था। "बड़ी-बड़ी बही जायें, भेड़ें थाँव मांगें !"

बात घण्टे-भर तक हुई, लेकिन किसी नतीजे पर न पहुँचा जा सका। सामान देने से इनकार करने की हिम्मत किसी की न हुई।

उधर चमार-पासियों की पंचायत कुछ अधिक खुलकर हुई। उनके घर ऐसे न थे जहाँ पचास-साठ बैठ सकते। कुछ घरों के बीच छोटा-सा मैदान था। वहीं सब इकट्ठे हुए।

चैतुवा बोला, "जैसे सोचो, यह अन्धेर कब तक चलेगा ? बेगार पहिले भी रही, पै ऐसी नहीं। अब तो बिना थूक लगाये···!"

इतवा ने राजमार्ग बता दिया, "गाँव छोड़ के चल दें। नंगा खोदा से चंगा। हमें जाँगरतोड़ मसक्कत करनी है। हाथ-पाँव बने रहैं, जहाँ रहेंगे, कुछ कर लेंगे।"

अनुभव की आँच में पकी एक बूढ़ी आवाज आयी, "पुरखों की डेहरी···कहाँ जायें छोड़ के ? फिर कोरी के लरिका को सुरग में भी बेगार।"

यह कहावत कोली ने ही कही थी, इसलिए सब हँस पड़े।

"बात हँसने की नहीं," बूढ़े ने यथार्थ की रोशनी दिखाई। "जिमीदार सब जगा हैं। सब बेगार लेते हैं। तो भागने से बचाव कहाँ ?"

"तो तुम सयाने हो, कुछ रस्ता बताओ," चँतुवा बोला।

रास्ता सूझता न था। उसने सिर खुजलाते हुए कहा, "सब पंच सोचो।"

एक आवाज़ आयी, "सरकार से मिलें।"

"सरकार से मिलें!" इतवा के स्वर में व्यंग्य था। "रामअधार बाबा निकार दिये गये। हम किस खेत की मूरी हैं?"

इनकी पंचायत का भी कुछ नतीजा न निकला। दो घण्टे तक मन का मलाल निकालने के बाद सब अपने-अपने घर जाने लगे।

बूढ़े ने चलते-चलते कहा, "सही, और कोई रस्ता नहीं।"

5

रामशंकर गाँव आया, तो शाम को बाबा के पास बैठ गया और महावीर सिंह के कमरे वाली घटना का ज़िक्र कर कहने लगा, "बाबा, तुम नाहक उनके पीछे-पीछे भागते हो। तुम समझते नहीं, ये अंग्रेज़ के दलाल हैं। जोंक की तरह गरीब का खून चूसकर मोटे हो रहे हैं।"

रामशंकर का यह व्याख्यान बाबा की समझ में न आया, वह बोले, "पुराना ब्योहार था, महिपाल सिंह के समय से। हम चले गये आसिरबाद देने। अब कभी न जायेंगे।"

रामशंकर चुप रहा। उनसे और-और बातें करता रहा। बातचीत का प्रसंग संस्कृत काव्य की ओर मुड़ गया तो पं० रामअधार मेघदूत के श्लोक सुनाने लगे। संस्कृत में रामशंकर की रुचि थी। कालिदास की रचनाएँ पढ़ी थीं। पं० रामअधार ने आरम्भ के कम-से-कम पच्चीस श्लोक सुनाये। बीच-बीच में अटक जाते, याद करने का प्रयत्न करते, तब कहते, "अब स्मरन सक्ति छीन हो गयी है, बचनुवा। हमें मेघदूत पूरा कण्ठस्थ था।"

दूसरे दिन रामशंकर बाजार से होकर जा रहा था, तभी दीनानाथ भगत ने देख लिया। भगत ने सोचा, रामशंकर से बात करें। वह शायद कोई रास्ता बता सकें।

भगत ने रामशंकर को बुलाया। अपने अँगोछे से एक टाट को झाड़ा और बोला, "आओ, छोटे पंडित बैठ जाव आराम से।" इधर-उधर देखा, फिर बनियों, हलवाइयों के सताये जाने की कहानी विस्तार से सुनायी। इसके बाद रामशंकर को आशा-भरी दृष्टि से ताकते हुए बोला, "कुछ रास्ता बताओ, बच्चा।"

रामशंकर थोड़ी देर तक सोचता रहा; फिर बोला, "परसों बाजार है। कल मुनादी कराके परसों सभा की जाय। सबसे कह रखो, सभा में आयें।"

भगत को यह तरकीब ठीक जँची। वह प्रसन्न होकर बोला, "बस, पढ़े-लिखे औ' जाहिल जट्ट में यही फरक है।"

रामशंकर ने सभा करने की चर्चा छंगा से की, तो वह बोला, "किसान क्यों आने लगे। किसानों के खिलाफ़ तो कुछ कर नहीं रहे। फिर भी हम ब्रह्रिरोहे से लायेंगे।" साथी होने के नाते वह चमरौढ़ी जाने को [illegible] गया और इनवा चैतुवा से मिला। दोनों ने चमार-पासियों को सभा में लाने की जिम्मेदारी ली।

सभा में रामशंकर ने सलाह दी, "गाँव सभा बनाओ। उसमें सब शामिल हो जाओ।" उसने किसानों को चेतावनी दी, "यह न समझो कि यह जुल्म बनियों, हलवाइयों, चमारों, पासियों तक ही रहेगा। वह दिन दूर नहीं जब तुम भी लूटे जाओगे। तुम्हारी मशक्कत से जमींदार मोटे हो रहे हैं।"

चमार-पासियों को रामशंकर की सलाह बहुत अच्छी लगी। [illegible] ने पसन्द तो की, लेकिन उनके मन में प्रश्न उठा, पूरा गाँव कैसे [illegible] होगा? यह काम कौन करेगा?

"रामशंकर तो कल चले जायेंगे कम्पू," एक बोला, "[illegible] को कोई या दूसरे?"

भगत को उसकी बात पायेदार लगी। [illegible]

निकस्ता नहीं। आगे कौन आवै ?" उसने कहा। "मियाँव का ठौर कौन पकरै ?"

मुंशी खूबचन्द सभा में भगत के पास ही बैठे थे। वह बोले, "जैसे हम तो गाँव के रंग-ढंग देखते-देखते बुढा गये। हर एक की नस-नस से वाकिफ हैं। पूरा गाँव सात जनम एक होने से रहा। तुम सब दुकनदार, चमार, पासी जाव कलट्टर साहेब के पास। फरियाद करो, सुनवाई जरूर होगी। अन्धेर थोड़े है। राँड़ का राज नहीं है, अंग्रेज बहादुर का है। सेर-बकरी एक घाट पानी पियें।"

किसानों की समझ में यह बात न आयी कि हमारी मशक्कत से जमींदार कैसे मोटे हो रहे हैं।

"पराये धन को चोर रोवै," दुलारे सिंह ने मत दिया।

"भाई, सब अपना-अपना भाग्य," रामजोर ने जोड़ा। "पूरब जनम तपस्या की, इस जनम राज कर रहे हैं। जैसी करनी, वैसी भरनी।"

दीनानाथ भगत को मुंशी खूबचंद की बात वजनदार लगी थी। सभा के बाद उसने रामशंकर से बात की। रामशंकर ने समझाया, कलक्टर के पास जाने से कुछ लाभ नहीं। फिर भी अन्त में वह दुकानदारों, चमारों, पासियों को लेकर जाने को राजी हो गया।"

6

तिलक हॉल में बहुत बड़ी दरी बिछी थी और कानपुर के सभी कवि, लेखक और पत्रकार जमा थे। गोष्ठी बुलायी थी 'बेदार वतन' की एडीटर शीरीं ने। अशोक जी, विमल शुक्ल, कई डाक्टर और वकील भी गोष्ठी में आये थे। वे लिखते तो न थे, लेकिन साहित्य-प्रेमी और नये विचारों के थे। युगबोध और युगधर्म पर तीन घंटे तक गरमागरम बहस हुई थी।

शीरीं बहस को समाप्त करती हुई बोली, "फार्म (रूप) और कण्टेण्ट

(विषय-वस्तु) का झगड़ा है तो पुराना, लेकिन मेरे खयाल से कण्टेण्ट खुद अपने ढंग का फार्म खोज लेता है। छ. महीने के बच्चे का झंगूला अठारह साल के नौजवान को नहीं पहनाया जा सकता। कबीर के पास कुछ कहने को था। उन्होंने फार्म की कब परवा की ? उनकी ठेठ, कुछ-कुछ गँवारू जुबान में वह ज़ोर है जो बड़े-बड़े सुखनदानों को नसीब नहीं। 'कण्ठी बाँधे जो हरि मिलें, तो कबिरा बाँधे कुन्दा', या 'गला काट बिस्मिल करें··· औरन को काफिर कहे, अपनो कुफुर न सूझ' कितनी जानदार जुबान है ! फार्म सीधा-सादा, लेकिन कण्टेण्ट पायेदार। 'जो कबिरा काशी मरें तो रामहि कौन निहोर', उनके अकीदे की सचाई की गवाही देता है। काशी छोड़ मगहर चले जाना मामूली बात न थी।"

वह थोड़ा रुकी, इधर-उधर देखा, अशोक जी प्रसन्नता से सिर हिला रहे थे। फिर कहने लगी, "'लहरा रही खेती दयानन्द की' या 'चर्खे से लेंगे सोराज हमार कोऊ का करिहै' जैसी मजीरें देकर युगधर्म के हामियों का मखौल उडाना सतही जहनियत की बात है। ऐसी तुकबन्दियाँ हर जमाने में हुई हैं, होती रहेंगी। इनको नजीरें मान कर साहित्य की परख नहीं हो सकती। 'जानेमन भूल न जाना ये कहे जाते हैं, साथ गैरों को न लाना ये कहे जाते हैं'—इसमें ही कौन-सा भाव भरा है ? जो शाश्वत साहित्य की आड़ में युगधर्म को घटिया बताने की कोशिश करते हैं, उसे महज प्रचार कहते हैं, वे खुद भी प्रचार करते हैं। वे नहीं चाहते कि स्टेटसक्वो यानी मौजूदा हालात बदलें। इस तरह शाश्वत के नाम पर स्टेटस को बनाये रख कर वे खुद रूढ़िवाद की हिमायत करते हैं और लोगों को भरमाते हैं। शीरी रुकी। साड़ी के कन्धे से खिसक आये आँचल को ठीक किया। फिर सिर खुजलाने लगी जैसे कुछ सोच रही हों। इसके बाद बोली, "शाश्वत के बारे में अपने खयालात अर्ज करने की मेरी गुस्ताखी को आप साहेबान मुआफ़ फरमायेंगे। बदकिस्मती से," शीरीं ने दाहिने हाथ की तर्जनी हिलाते हुए कहा, "सामन्ती निज़ाम ने हमारे यहाँ बड़ी लम्बी उमर पायी। इसकी वजह से ठहराव आ गया है। इसी को हम शाश्वत मान बैठे हैं।" फिर दाहिना हाथ आगे बढाकर हिलाते हुए जोड़ा, "कल-कारखानों का जाल बिछाने से समाज तेज़ी से बदलेगा, जैसा

निकस्ता नहीं। आगे कौन आवै ?" उसने कहा। "मियाँव का ठौर कौन पकरै ?"

मुंशी खूबचन्द सभा में भगत के पास ही बैठे थे। वह बोले, "जैसे हम तो गाँव के रंग-ढंग देखते-देखते बुढ़ा गये। हर एक की नस-नस से वाकिफ हैं। पूरा गाँव सात जनम एक होने से रहा। तुम सब दुकनदार, चमार, पासी जाव कलट्टर साहेब के पास। फरियाद करो, सुनवाई जरूर होगी। अन्धेर थोड़े है। राँड़ का राज नहीं है, अंग्रेज बहादुर का है। सेर-बकरी एक घाट पानी पियें।"

किसानों की समझ में यह बात न आयी कि हमारी मशक्कत से जमींदार कैसे मोटे हो रहे हैं।

"पराये धन को चोर रोवैं," दुलारे सिंह ने मत दिया।

"भाई, सब अपना-अपना भाग्य," रामजोर ने जोड़ा। "पूरब जनम तपस्या की, इस जनम राज कर रहे हैं। जैसी करनी, वैसी भरनी।"

दीनानाथ भगत को मुंशी खूबचंद की बात वजनदार लगी थी। सभा के बाद उसने रामशंकर से बात की! रामशंकर ने समझाया, कलक्टर के पास जाने से कुछ लाभ नहीं। फिर भी अन्त में वह दुकानदारों, चमारों, पासियों को लेकर जाने को राजी हो गया।"

6

तिलक हॉल में बहुत बड़ी दरी बिछी थी और कानपुर के सभी कवि, लेखक और पत्रकार जमा थे। गोष्ठी बुलायी थी 'बेदार वतन' की एडीटर शीरीं ने। अशोक जी, विमल शुक्ल, कई डाक्टर और वकील भी गोष्ठी में आये थे। वे लिखते तो न थे, लेकिन साहित्य-प्रेमी और नये विचारों के थे। युगबोध और युगधर्म पर तीन घंटे तक गरमागरम बहस हुई थी।

शीरीं बहस को समाप्त करती हुई बोलीं, "फार्म (रूप) और कंटेण्ट

(विषय-वस्तु) का झगड़ा है तो पुराना, लेकिन मेरे खयाल से कण्टेण्ट खुद अपने ढंग का फार्म खोज लेता है। छः महीने के बच्चे का झंगूला अठारह साल के नौजवान को नही पहनाया जा सकता। कबीर के पास कुछ कहने को था। उन्होने फार्म की कब परवा की ? उनकी ठेठ, कुछ-कुछ गँवारू जुबान में वह जोर है जो बड़े-बड़े सुखनदानों को नसीब नही। 'कण्ठी बाँधे जो हरि मिलैं, तो कबिरा बाँधे कुन्दा', या 'गला काट बिस्मिल करें··· औरन को काफिर कहे, अपनो कुफ्र न सूझ' कितनी जानदार जुबान है। फार्म सीधा-सादा, लेकिन कण्टेण्ट पायेदार। 'जो कबिरा काशी मरें तो रामहिं कौन निहोर', उनके अकीदे की सचाई की गवाही देता है। काशी छोड़ मगहर चले जाना मामूली बात न थी।"

वह थोड़ा रुकी, इधर-उधर देखा, अशोक जी प्रसन्नता से सिर हिला रहे थे। फिर कहने लगी, "'लहरा रही खेती दयानन्द की' या 'चर्खे से लेंगे सोराज हमार कोऊ का करिहै' जैसी नजीरें देकर युगधर्म के हामियों का मखौल उडाना सतही जहनियत की बात है। ऐसी तुकबन्दियाँ हर जमाने में हुई हैं, होती रहेंगी। इनको नजीरें मान कर साहित्य की परख नहीं हो सकती। 'जानेमन भूल न जाना ये कहे जाते हैं, साथ गैरों को न लाना ये कहे जाते हैं'—इसमें ही कौन-सा भाव भरा है ? जो शाश्वत साहित्य की आड़ मे युगधर्म को घटिया बताने की कोशिश करते हैं, उसे महज प्रचार कहते हैं, वे खुद भी प्रचार करते हैं। वे नही चाहते कि स्टेटसक्वो यानी मौजूदा हालात बदलें। इस तरह शाश्वत के नाम पर स्टेटस को बनाये रख कर वे खुद रूढ़िवाद की हिमायत करते हैं और लोगों को भरमाते हैं। शीरी रुकी। साड़ी के कन्धे से खिसक आये आँचल को ठीक किया। फिर सिर खुजलाने लगी जैसे कुछ सोच रही हों। इसके बाद बोली, "शाश्वत के बारे मे अपने खयालात अर्ज करने की मेरी गुस्ताखी को आप साहेबान मुआफ़ फरमायेंगे। बदकिस्मती से," शीरीं ने दाहिने हाथ की तर्जनी हिलाते हुए कहा, "सामन्ती निज़ाम ने हमारे यहाँ बड़ी लम्बी उमर पायी। इसकी वजह से ठहराव आ गया है। इसी को हम शाश्वत मान बैठे हैं।" फिर दाहिना हाथ आगे बढ़ाकर हिलाते हुए जोड़ा, "कल-कारखानों का जाल विछाने से समाज तेजी से बदलेगा, जैसा

निकस्ता नहीं। आगे कौन आवै ?" उसने कहा।
पकरै ?"

मुंशी खूबचन्द सभा में भगत के पास ही बैठे
तो गाँव के रंग-ढंग देखते-देखते बुढ़ा गये। हर एक
हैं। पूरा गाँव सात जनम एक होने से रहा। तुम
पासी जाव कलट्टर साहेब के पास। फरियाद करो।
अन्धेर थोड़े है। राँड़ का राज नहीं है, अंग्रेज बहा
एक घाट पानी पियें।"

किसानों की समझ में यह बात न आयी कि हमा
दार कैसे मोटे हो रहे हैं।

"पराये धन को चोर रोवै," दुलारे सिंह ने मत

"भाई, सब अपना-अपना भाग्य," रामजोर ने
व्यवस्था की, इस जनम राज कर रहे हैं। जैसी करनी,

दीनानाथ भगत को मुंशी खूबचंद की बात बजन-
के बाद उसने रामशंकर से बात की। रामशंकर ने
के पास जाने से कुछ लाभ नहीं। फिर भी अन्त में वह दु
पासियों को लेकर जाने को राजी हो गया।"

6

तिलक हॉल मे बहुत बड़ी दरी बिछी थी और कान
लेखक और पत्रकार जमा थे। गोष्ठी बुलायी थी 'बैरिस
टर शीरी ने। अशोक जी, विमल शुक्ल, कई डाक्टर
गोष्ठी मे आये थे। वे लिखते तो न थे, लेकिन साहित्य
विचारों के थे। युगबोध और युगधर्म पर तीन घंटे तक
हुई थी।

शीरी बहस को समाप्त करती हुई बोलीं, "फार्म (

एक-एक करके सब चले गये। अशोक जी और शीरीं रह गयी। शीरीं जब जाने के लिए उठी, तो अशोक जी बोले, "बैठिये। आपने दावत दी, मगर एक प्याली चाय के लिए भी न पूछा। हमने आर्डर दिया है। आती होगी।"

शीरीं शर्मिन्दा हो गयीं। "ग़लती हो गयी, अशोक जी।" कहते हुए वह बैठ गयीं।

शीरीं बी० ए०, एल० टी० कर मिशन गर्ल्स स्कूल में ही अध्यापिका हो गयी थी। उन्हें लिखने का भी शौक था। उन्होंने ग़ज़लों से आरम्भ किया, लेकिन गुल-बुलबुल, कैफस-नशेमन को नये अर्थ दिये। ग़ज़ल को राष्ट्रीयता के रंग में रँगा और बहुत जल्द उर्दू साहित्यकारों की नज़रों में चढ़ गयीं। लेकिन सन् तीस के आस-पास उन्हें लगा जैसे ग़ज़ल की अन्योक्ति काफ़ी नहीं। वह ग़ज़ल से नज़्म पर आ गयी और 'वतन की पुकार', 'खवातीन के नाम' जैसी जोरदार नज़्में लिखीं। उपमाओं और रूपकों में अर्जुन-भीम, प्रताप-शिवाजी को नया अर्थ दिया, भीष्म और सावित्री को युगधर्म के साँचे में ढाला। नज़्मों में उनकी भाषा ने भी नया रूप लिया। वह इतनी सरल, सहज रहती कि नागरी में लिखने से कोई उसे उर्दू न कह पाता। गांधी जी की डांडी-यात्रा पर उन्होंने 'अंगद का पैर' नज़्म लिखी। इसे हिन्दी के पत्र 'हिन्दुस्तान की हुंकार' ने छापा। उससे पाँच हज़ार की जमानत माँगी गयी। फल यह हुआ कि प्रकाशन बन्द हो गया। शीरीं पर राजद्रोह के अपराध में धारा 124 ए के अधीन मुकद्दमा चला और वह तीन साल के लिए सरकार की मेहमान बना दी गयीं।

जेल में उन्हीं दिनों सत्याग्रह आन्दोलन के कैदी भी थे—कालेज की लड़कियाँ, दूसरी स्त्रियाँ, कोई तीस थीं। ये सब अलग बैरक में रहती थीं। सबने आन्दोलन किया, इतवार को पुरुष और स्त्री राजनीतिक कैदियों को चार घंटे के लिए मिलने दिया जाय। जब नौबत भूख हड़ताल तक पहुँची, सरकार को झुकना पड़ा।

इतवार को राजनीतिक कैदी मिलते, साहित्य-चर्चा होती, राजनीतिक बहसें होतीं। शीरीं और अशोक जी में प्रायः नोंक-झोंक होती।

इण्डस्ट्रियल रेवोल्यूशन (औद्योगिक क्रान्ति) के बाद यूरोप में हुआ था और हमारे यहाँ भी कल होगा, अंग्रेजों की अमलदारी खत्म होने पर। उस हालत में वे सब क़दरें और अक़ादे बीतते जमाने की यादगार बनकर रह जायेंगे जिनको हम शाश्वत माने बैठे हैं। जगत् और संसार शब्दों का अर्थ ही है चलने वाले, जो ठहरे न हों"

"यह नया नुक्ता! क्या कहना! क़ुर्बान जाऊँ।" अशोक जी कन-पुरिया अन्दाज में बोल पड़े। विमल शुक्ल उनकी ओर निहारकर मुस-कराया। उधर पीछे से एक आवाज आयी, "किस पर क़ुर्बान जा रहे हैं, नुक्ते पर या नुक्ता उठाने वाली पर?"

अशोक जी इस प्रकार चुटकी लेने से हतप्रभ न हुए। झट उत्तर दिया, "दोनों पर।" फिर पीछे की ओर गर्दन मोड़कर सिर हिलाते और मुस-कराते हुए जोड़ा अवधी लहजे में, "बच्चू, कम्पू की राजनीति के अखाड़े की माटी फाँसी है। हियाँ न ब्यापै राउरि माया।"

शीरी 'क़ुर्बान जाऊँ' सुनकर सकुचा गयी थी। उन्हें कुछ बुरा भी लगा था। अशोक जी की टिप्पणी सुनकर वह पुलक उठी। जरा मुस-कराते हुए उन्होंने अपने विचारों की अगली कड़ी पेश की, "चन्द साहेबान सब राहों को ग़लत बताते हैं। मेरी गुजारिश है कि अगर सब राहें ग़लत हैं तो नयी राह खोजिये। एक ही जगह पाँव पटकते रहने में क्या तुक है? या सब राहों को ग़लत होने का फतवा देकर इनसान की तक़दीर को खाने, बच्चे पैदा करने और मर जाने तक महदूद कर उसे कुत्ता-बिल्ली बना देना कहाँ की अक़्लमन्दी है? यह स्टेटसक्वो बनाये रखने का दूसरा तरीक़ा है।"

"बहुत खूब!" अशोक जी शीरी की ओर देखते हुए बोले।

शीरी कहे जा रही थी, "प्रचार सबने किया है, तुलसीदास ने, शेक्स-पियर ने और टालसटाय ने।"

"वाह!" अशोक जी और विमल शुक्ल एक साथ बोल पड़े।

"मैं आप सब कलम के धनियों का शुक्रिया अदा करती हूँ, यहाँ आने के लिए और धीरज के साथ मेरे ये अधकचरे विचार सुनने के लिए।" शीरी मुसकरायी और उनके दोनों हाथ नमस्कार के लिए जुड़ गये।

एक-एक करके सब चले गये। अशोक जी और शीरी रह गयीं। शीरी जब जाने के लिए उठी, तो अशोक जी बोले, "बैठिये। आपने दावत दी, मगर एक प्याली चाय के लिए भी न पूछा। हमने आर्डर दिया है। आती होगी।"

शीरी शर्मिन्दा हो गयीं। "ग़लती हो गयी, अशोक जी।" कहते हुए वह बैठ गयी।

शीरी बी० ए०, एल० टी० कर मिशन गर्ल्स स्कूल में ही अध्यापिका हो गयी थीं। उन्हें लिखने का भी शौक था। उन्होंने गजलों से आरम्भ किया, लेकिन *गुल-बुलबुल, केफस-नशेमन* को नये अर्थ दिये। गजल को राष्ट्रीयता के रंग मे रँगा और बहुत जल्द उर्दू साहित्यकारों की नजरों में चढ़ गयी। लेकिन सन् तीस के आस-पास उन्हें लगा जैसे गजल की अन्योक्ति काफ़ी नही। वह ग़जल से नज्म पर आ गयीं और 'वतन की पुकार', 'खवातीन के नाम' जैसी जोरदार नज्में लिखीं। उपमाओं और रूपकों में अर्जुन-भीम, प्रताप-शिवाजी को नया अर्थ दिया, भीष्म और सावित्री को युगधर्म के साँचे मे ढाला। नज्मों में उनकी भाषा ने भी नया रूप लिया। वह इतनी सरल, सहज रहती कि नागरी में लिखने से कोई उसे उर्दू न कह पाता। गांधी जी की डांडी-यात्रा पर उन्होंने 'अंगद का पैर' नज्म लिखी। इसे हिन्दी के पत्र 'हिन्दुस्तान की हुंकार' ने छापा। उससे पाँच हजार की जमानत माँगी गयी। फल यह हुआ कि प्रकाशन बन्द हो गया। शीरी पर राजद्रोह के अपराध में धारा 124 ए के अधीन मुकद्दमा चला और वह तीन साल के लिए सरकार की मेहमान बना दी गयी।

जेल में उन्ही दिनों सत्याग्रह आन्दोलन के कैदी भी थे—कालेज की लड़कियाँ, दूसरी स्त्रियाँ, कोई तीस थीं। ये सब अलग बैरक में रहती थीं। सबने आन्दोलन किया, इतवार को पुरुष और स्त्री राजनीतिक कैदियों को चार घंटे के लिए मिलने दिया जाय। जब नौबत भूख हड़ताल तक पहुँची, सरकार को झुकना पड़ा।

इतवार को राजनीतिक कैदी मिलते, साहित्य-चर्चा होती, राजनीतिक बहसें होती। शीरी और अशोक जी में प्रायः नोक-झोंक होती।

एक दिन शीरीं गालिब पर बोल रही थीं। एक शेर पढ़ा, "हम पुकारें औ' खुले यूँ कौन जाय। यार का दरवाजा पायें गर खुला।"

शीरीं ने इसका सरल अर्थ किया, "यदि यार को दस्तक दें तब दरवाजा खुले, तो इस तरह कोई खुद्दार प्रेमी क्यों जाय ? जाना तो तब अच्छा अगर यार दरवाजा खोले इन्तज़ार कर रहा हो।"

अशोक जी बोले, "यह अर्थ जँचा नहीं। उर्दू काव्य-परम्परा में, यार के कई प्रेमी होते हैं। अगर दरवाजा खुला है, तो क्या पता किसके लिए। स्वाभिमानी प्रेमी तो तभी जायेगा जब उसके दस्तक देने पर दरवाज़ा खुले।"

शीरीं ने मुसकराते हुए कहा, "माफ कीजियेगा अशोक जी, यह तो खींचतान वाला अर्थ हुआ।"

शीरीं ने उत्तर तो दे दिया था, लेकिन अशोक जी की व्याख्या उनके दिमाग में गूँजती रही। खा-पीकर रात में अपनी बैरक में लेटीं, तब भी अशोक जी के शब्द दबे पाँव उनके मन में आ बैठे। 'स्वाभिमानी प्रेमी तो तभी जायेगा जब उसके दस्तक देने पर दरवाज़ा खुले।' अशोक जी ने कहा था। इसका मतलब ? शीरीं ने अपने-आप से पूछा। 'इशारा तेरी ओर था शीरीं।' उनके मन ने कहा। शीरीं ज़रा मुसकरायीं, अँगड़ाई ली और अशोक जी के चिन्तन में डूब गयी।

प्रेम-विवाह को लेकर भी दोनों में खूब चोंचें लड़ी थीं। बहस हो रही थी, माँ-बाप शादी तय करें या प्रेम-विवाह हो ? जाति, धर्म के बन्धन न रहें, विवाह लड़की-लड़के अपनी मर्जी से करें, इतनी दूर तक दोनों सहमत थे। टकराव एक नाजुक जगह पर था।

शीरीं का कहना था, "दिल का सौदा एक-ही मर्तबे होता है। दिल मिट्टी का कूज़ा नहीं कि 'और बाज़ार से ले आयें, अगर टूट गया'।"

अशोक जी कह रहे थे, "हमारे समाज की जैसी हालत है, जहाँ लड़की-लड़के मिल-बैठ नहीं पाते, वहाँ अठारह-बीस साल की कच्ची उम्र में लड़की को जिस एक लड़के से मिलने का मौका मिला या लड़के को जिससे दो बातें करने का चांस हुआ, उसे प्रेम मान बैठना पागलपन है। यह तो लगाव के कारण पैदा सिर्फ शारीरिक आकर्षण है, गधापचीसी

की उम्र का। दोनों रुकें, एक-दूसरे को देखें-परखें, तोलें, पाँच-सात साल। कच्ची उम्र की बरसात की बाढ़ के बाद जब पानी का गंदलापन दूर हो, धारा कुछ मद्धिम हो, तब सच्चा प्रेम होगा।" साथ ही उन्होंने कच्ची उम्र के प्रेम को अनोखी उपमा भी दे दी थी जिस पर शीरीं तिनक गयी थीं।

उन्होंने कहा था, "कच्ची उम्र का प्रेम फसली बुखार है जो खाते-पीते घरों के लड़कों को अकसर लग जाता है। गरीबी कुनैन है। वह इसे फटकने नहीं देती।"

अशोक जी की उपमा पर शीरीं वहाँ तिनक गयी थीं, लेकिन बैरक पहुँचने पर सोचने लगीं, ठीक तो कहते हैं अशोक जी। नज़रें मिलते ही प्रेम, बचकाना हरकत। फिर अशोक जी का गोरा, गठा हुआ शरीर, सुलझे विचार, कुन्दन-सा खरा देश-प्रेम शीरीं के मन के पर्दे पर उतरने लगा।

राजनीतिक क़ैदियों के मिलने का यह सिलसिला चलता रहा और हर बार अशोक जी का एक न एक नया पहलू शीरीं के सामने आया।

शीरीं अपनी बैरक जाने पर हफ्ते-भर अशोक जी की बातों पर सोचती-गुनती रहतीं। कभी हँसतीं, कभी गम्भीर हो जातीं।

उधर 'सत्य-आग्रही' अशोक जी के विवेक के तराज़ू पर 'यहिं पाखे पतिव्रत ताखे धरो' की उक्ति बापू के उपदेशों से भारी पड़ती और वह अलग-अलग कोणों से शीरीं के चित्र अपने मानस-पटल पर उरेहते और मन-ही-मन भाव-विगलित तरल स्वर में कह जाते, "रति-सरस्वती"।

शीरीं जब जेल से छूटीं, स्कूल के दरवाज़े उनके लिए बन्द हो चुके थे। वह खुद भी कहा करती थीं, 'कुछ और चाहिए वसअत मेरे बयाँ के लिए।' उन्होंने उर्दू में मासिक पत्रिका निकाली 'बेदार वतन' और तन-मन से राजनीति में आ गयीं। 'बेदार वतन' का दफ़्तर राजनीति का केन्द्र बन गया था।

लड़का चाय की ट्रे लेकर आया।

अशोक जी बोले, "हमारे अवध में कहते हैं—जब तक खाने में चूड़ियों का धोवन न मिला हो, जायका नहीं आता।"

शीरी कनखियों से मुसकरायी और उत्तर दिया, "मैं चाय बनाती हूँ। कितनी शकर ?"

"आप बना रही हैं, बगैर शकर के भी चल सकता है।" अशोक जी ने जवाबी दागी। "चाहिए, तो डेढ़ चम्मच डाल दीजिए।"

"मैं हिसाब में कमजोर हूँ, ड्योढ़ा-ढैया नहीं जानती।" प्यालों में चाय डालते हुए शीरी ने दहला जमाया।

"आपकी जात तो जनम से हिसाब-किताब जानती है," अशोक जी बोल गये।

शीरी का माथा ठनका, क्या मेरे वंश पर कटाक्ष ? केतली का हैंडिल जरा काँप गया। थोड़ा जोर से पूछा, "मतलब ?"

अशोक जी ने सहज भाव से उत्तर दिया, "नारी जाति को घर सँभालना पड़ता है। हिसाब-किताब का ज्ञान प्रकृति देकर भेजती है।"

शीरी के मन का प्याला जो छलक-सा रहा था, ठीक हो गया।

चाय पीते हुए अशोक जी ने पूछा, "आप जीवन में पूर्णता की हामी हैं ?"

शीरी को अशोक जी की पहेली समझ में न आयी। वह उनका मुँह ताकने लगी।

"जीवन को एकांगी रखना, एक कोने को सूना-सूना।" अशोक जी ने दूसरी ओर देखते हुए कहा।

अब बात शीरी की समझ में आ गयी। उन्होंने चाय की चुस्की ली और बोली, "साफ ही कहूँ ?"

"हम जीवन की तीस सीढ़ियाँ कभी के पार कर गये हैं। हर्ज नहीं।"

शीरी को अशोक जी की वह बात याद आ गयी जो उन्होंने जेल में कच्ची उम्र के प्रेम पर कही थी।

"अशोक जी, माँ-बाप का कर्ज लड़की को चुकाना पड़ता है। फिर आज साइंस साबित कर चुकी है कि औलाद तन-मन की बहुत सारी बातें माँ-बाप से पाती है।" शीरी ने बड़ी संजीदगी से कहा। फिर पीड़ा का पुट देते हुए जोड़ा, "तो गांधीजी ने देस की आजादी का जो बड़ा जग्य रचाया है, मैं चाहती हूँ, उसमें अपनी माँ के और उनकी माँ के सारे दोख-

पाप जलाकर राख कर दूँ, विरसे मे जो कर्ज मिला है, उसे सूद-दर-सूद चुका दूँ! ...'' और अशोक जी के मुँह की ओर एकटक ताकने लगी।

"इसमें भावुकता बहुत ज्यादा है, चिन्तन बहुत कम।" अशोक जी ने सधे धीमे स्वर मे टिप्पणी की।

"हो सकता है," शीरीं बोलीं। "मैं जानती हूँ, पेड़ तभी भला लगता है जब फलों से डालें झुक रही हों। लेकिन विषवृक्ष बनना ठीक नहीं। नस-नस में रचा ज़हर कोई शंकर भगवान् ही पी सकते हैं।" और शीरीं भावावेश में विनोद कपूर वाली कहानी बता गयी।

अशोक जी थोड़ी देर तक खामोश रहे। फिर कुछ इस तरह बोले, जैसे शीरीं को नहीं, दीवारों को सुना रहे हों, "प्राइमरी स्कूल के मास्टर का बेटा, साया जाता रहा जब नवें दर्जे में था। माँ ने पसीना पीस-पीस कर और सुबह-शाम मन्दिरों में फूल-माला देकर बड़ा किया। वहाँ से जो परसाद लाती, उससे पेट भरता। फिर रोज कुआँ खोदने, पानी निकालने का सिलसिला चला और ट्यूशनों के बल पर, बी० ए०, एल० एल-बी० बना। सब कुछ माँ के आशीर्वाद और जनसाधारण के प्रसाद से। माँ भी चली गयी।"

इसके बाद अशोक जी भावविह्वल हो गये और शीरीं को सीधे ताकते हुए कहने लगे, "जनसाधारण के प्रसाद से पला यह तन तिल-तिल कर जनसेवा के महायज्ञ में होम हो जाय, यही कामना है।" और दाहिना हाथ ज़रा आगे बढ़ाकर बोले, "लेकिन शीरीं, तुम जानती हो, यज्ञ अधूरा रहता है। भगवान् रामचन्द्र को सोने की सीता बनानी पड़ी थी।"

शीरीं बड़े ध्यान से सुन रही थी। मन में अनोखी पुलक थी, आँखें थोड़ी झुकी हुई। अनायास उनकी दाहिनी हथेली अशोक जी की बढ़ी हुई हथेली पर आ गयी और दो मोती उन हथेलियों पर झर पड़े।

7

कलक्टर के पास व्यापारियों और चमार-पासियों के जाने की बात ऐसी न थी जो छिपी रहती। सब कुछ मि० गुप्ता और महावीर सिंह को मालूम हो गया। ये लोग जिस दिन गाँव पहुँचे, उसके दूसरे ही दिन एक सिपाही भगत के दरवाज़े पर हाज़िर हो गया और आवाज़ लगायी। भगत घर से निकला।

"मनीजर साहेब बोलाते हैं," सिपाही ने कहा।

"अभी कुल्ला-दतून तक नही किया।" भगत बोला। "थोरी देर में हाज़िर हुआ।"

"थोरी देर नही," सिपाही ने कहा और बताया, "मनीजर कहेन, साथ ही पकड़ ला।"

अब तो भगत का दिल धुक-धुक करने लगा। नंगे बदन था। बण्डी पहनी, एक मैली-सी टोपी सिर पर रखी और नंगे पाँव चल पड़ा, सिपाही के साथ।

मैनेजर ड्योढ़ी में कुर्सी पर बैठे थे। एक सिपाही उनके पीछे अर्दली की तरह खड़ा था।

"यह है हुज़ूर, दीनानाथ भगत।" सिपाही ने भगत को पेश किया।

भगत ने हाथ जोड़कर "जै रामजी साहेब" कहा।

मैनेजर ने इसका कुछ उत्तर न दिया। नीचे से ऊपर तक भगत को देखने के बाद उसके चेहरे पर आँखें गड़ाकर बोले, "क्यों, लीडरी का शौक हुआ है, नेता बनने का ?"

"नही सरकार," भगत गिड़गिड़ाया।

"नहीं सरकार के बच्चे !" मि० गुप्ता ने ओठ काटते हुए कहा, "तो कानपुर अपने बाप के पास क्यों गया था ?"

भगत चुप था।

"अगर एक पैसा न दिया जाय, तो क्या कर लेगा ?" मैनेजर ने धुड़ककर पूछा।

"कुछ नही हुज़ूर।"

"तब फिर क्यों गया था ?"

भगत ने गर्दन झुका ली।

"जा," मैनेजर बोले और धमकाया, "आयन्दा कोई हरकत की, तो हण्टर से खाल खींच ली जायेगी।"

भगत चला आया। उसने सारी बात दूसरे बनियों, हलवाइयों को बतायी। सब सहम गये।

वह दिन बीता, दूसरे दिन दो सिपाही इतवा और चैंतुवा के घर गये और उन्हें पकड़ लाये। मि० गुप्ता इस समय ड्योढ़ी में नहीं, बल्कि ड्योढ़ी के सामने के एक बड़े सहन में कुर्सी पर बैठे थे। उनके हाथ में हंटर था। दो सिपाही उनकी कुर्सी के पीछे खड़े थे।

"ये हैं इतवा-चैंतुवा, साहेब," लाने वाले दोनों सिपाहियों ने एक साथ कहा।

"हूँ!" और मैनेजर कुर्सी से उठ खड़े हुए। हंटर को हवा में फटकारा।

"खता माफ हो सरकार!" इतवा और चैंतुवा गिड़गिड़ाते हुए बोले।"

"अभी माफ करता हूँ।" एक हंटर इतवा की पीठ पर पड़ा। "उस पंडित के बच्चे के भड़काने से गया था, कानपुर।" दूसरा सड़ाक की आवाज करता चैंतुवा की पीठ पर आया। "अब बुला रामसंकर को।"

दोनों पीठ सहला रहे थे। मैनेजर ने आँखें तरेरकर कहा, "ढोर कैसे हाँके जाते हैं, हमें मालूम है। हटो, दफ़ा हो जाओ।"

दोनों पीठ सहलाते गर्दन झुकाये चल पड़े।

इस खबर ने पूरी चमरौड़ी में खलबली पैदा कर दी। बेगार और लात-जूते मिलते थे। लेकिन इधर जब से कांग्रेस की हवा चली थी, कुछ कमी आ गयी थी।

चमार-पासियों ने फिर पंचायत की यह तय करने के लिए कि क्या किया जाय। कुछ ने कहा, "थाने में रपट की जाय," औरों ने राय दी, "कम्पू जाकर कांग्रेस वालों से कहा जाय। थानेदार कुछ न करेगा।

कांग्रेसी बीच में पड़ेंगे, तब मामला ठीक होगा।"

कलक्टर को जो अर्जी दी गयी थी, वह उसने परगना अफ़सर के पास उचित कार्रवाई के लिए भेज दी। परगना अफसर ने जाँच के लिए उसे हलके के थानेदार के पास चलता किया। थानेदार अर्जी लेकर घोड़े पर किशनगढ़ गया और सीधा गढ़ी पहुँचा।

अफ़सरों को खुश करने की कला में चतुर मैनेजर मि० गुप्ता थानेदार से अपने आफ़िस में बड़े तपाक से मिले और सिगरेट पेश करते हुए बातों-बातों में जान लिया कि थानेदार को पीने से परहेज नहीं। अपनी अलमारी से बोतल और दो प्याले निकाले। एक तश्तरी में आगरे से आया नमकीन रखा। प्याला थानेदार की ओर बढाया। फिर अपना प्याला उसके प्याले से छुआते हुए बोले, "पहली मुलाकात की खुशी में जामे सेहत।"

थानेदार खुश हो गया। प्याले को उठाकर मुसकराते हुए कहा, "आपसे जान-पहचान की खुशी में।"

"ख्वाहिश है, यह पहचान पक्की दोस्ती में बदल जाय।" मि० गुप्ता चट बोले।

"जरूर-जरूर!" थानेदार ने गर्दन हिलाते हुए उत्तर दिया।

मि० गुप्ता ने इस बीच अर्जी पढ़ी और एक सिपाही को बुलवाकर भगत और इतवा को पकड़ लाने का हुक्म दिया।

प्याला समाप्त होने पर मि० गुप्ता ने बोतल उठाई। थानेदार रोकने लगा, "बस, मैनेजर साहब। सुबह-सुबह ज्यादा ठीक नहीं। बहुत-सा काम करना है।"

"तभी तो एक और," मि० गुप्ता प्याले में शराब ढालते हुए हँसकर बोले। "चुस्ती की दवा।"

दोनों ने एक-एक प्याला और चढ़ाया। इस बीच मि० गुप्ता कांग्रेसियों की शिकायत कर गये और लगे हाथ-यह भी बता गये, "रामसंकर सारी खुराफात की जड़ है।"

थानेदार सिर हिला-हिला कर सुनता रहा।

इतने में एक सिपाही ने आकर बताया, "हजूर, भगत औ' इतवा आ गये। ड्योढ़ी में हैं।"

"चलिये, वहीं चलें थानेदार साहब," मि० गुप्ता बोले।

दोनों ड्योढ़ी गये और दो कुर्सियों पर पास-पास बैठ गये।

थानेदार ने रुखाई के साथ दीनानाथ भगत से पूछा, "क्या नाम है तेरा ?"

"दीनानाथ।" भगत ने काँपते स्वर में उत्तर दिया।

इसमें तो दीनानाथ भगत लिखा है।

"भगत भी लोग-बाग कहते हैं, साहेब।"

"तब पूरा नाम क्यों नहीं बोलता !" थानेदार ने डाँटा।

"इस अर्जी में तूने दस्तखत किये हैं ?"

भगत चुप खड़ा रहा।

"अबे, बोलता क्यों नहीं ? मुँह क्यों सिल गया ?" थानेदार गरजा।

"सरकार, मालूम नहीं क्या लिखा है। छोटे पंडित ने कहा, दसखत कर दिया।" भगत ने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुए उत्तर दिया।

"यह छोटा पंडित कौन है ?" थानेदार ने पूछा।

"रामसंकर दुबे।"

थानेदार एक कागज पर लिखता जाता था। बाद में अपनी तरफ़ से इतना और लिख दिया, मुझे कोई शिकायत नहीं।

"इस कागज पर नीचे दस्तखत कर !" थानेदार ने हुक्म दिया।

भगत ने दस्तखत कर दिये।

"तेरा क्या नाम है ?" थानेदार ने इतवा से पूछा।

"इतवा।"

"क्या करता है ?"

इतवा चुप खड़ा रहा।

"क्यों बे, चुप क्यों है ? मुँह में जबान नहीं है क्या ?" थानेदार ने कड़ककर पूछा। "क्या काम करता है ?"

"मेहनत-मजूरी," इतवा ने अड़ते-अड़ते बताया। "इस बखत कुछ काम नहीं है, हजूर।"

"तो आवारागर्दी करता है।" थानेदार आँखें तरेरकर बोला।

इतवा खामोश खड़ा रहा।

थानेदार ने इतवा के बारे में लिख लिया, कुछ काम नहीं करता। गाँव में आवारा घूमता रहता है।

"कर दस्तखत यहाँ!"

"सरकार, मैं पढ़ा-लिखा नहीं।"

"तो अँगूठे का निशान लगा!"

इतवा ने अँगूठा बढ़ा दिया। वहीं बैठे दो कारिन्दों के दस्तखत गवाहों के रूप में ले लिये गये। उनके घर के पते दर्ज कर लिये गये।

जाब्ते की कार्रवाई पूरी कर थानेदार मैनेजर के साथ उनके आफ़िस में वापस आ गया।

"अब तो दोपहर होने को है। खाना खाके जाइयेगा, थानेदार साहब।" मि० गुप्ता बोले। साथ ही जोड़ा, "आज आप हमारे मेहमान हैं।"

"शुक्रिया मैनेजर साहब।" थानेदार बहुत प्रभावित था। "फिर कभी। आज काम बहुत ज्यादा है।" और मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया।

मि० गुप्ता ने हाथ मिलाया और दस-दस के दो नोट थानेदार को थमा दिये। रुख्सत करने के लिए ड्योढ़ी तक साथ आये।

थानेदार ने मौके पर जाकर जाँच करने की रिपोर्ट बयानों के साथ-साथ परगना अफ़सर को भेज दी। परगना अफ़सर ने उस रिपोर्ट के आधार पर अर्जी को दाखिल दफ़्तर करा दिया और कलक्टर को सूचना भेज दी।

8

इस घटना के दो-तीन दिन बाद शाम को महावीर सिंह और मि० गुप्ता बारहदरी के सामने वाले आँगन में कुर्सियाँ डाले बैठे थे। मेज पर दो

प्याले रखे थे और एक बोतल। थोड़ी दूर पर एक खिदमतगार खड़ा था।

"सरकार, थानेदार के आने का बड़ा अच्छा असर पड़ा है," मि० गुप्ता ने बताया।

"अच्छा!"

"जी हाँ," मि० गुप्ता ने समझाया, "लोगों में दहशत छा गयी है। सबका ख्याल है कि थानेदार दरबार के कहने से जांच करने आया था।"

"तब तो बहुत अच्छा हुआ, कलक्टर तक इनका जाना?"

"जी हाँ। गये थे नमाज बख्शाने, रोजे गले पड़े।"

दोनों हँसने लगे।

"अब सबसे पहले दक्खिन के जंगल का इन्तजाम करना है," मि० गुप्ता ने कहा।

"किस तरह?"

"मनादी करा देंगे, जंगल सरकारी है। उसकी लकड़ी काटना या वहाँ जानवर चराना सख्त मना है।"

"लोग बावेला मचायेंगे।"

"इस वक्त तवा गरम है। यही मौका है अगला कदम उठाने का। सब पस्त हैं। चुपचाप मान जायेंगे।"

महावीर सिंह एक क्षण तक कुछ सोचते रहे, फिर राजी हो गये।

दूसरे दिन मनादी का होना था कि पूरे गाँव की हालत ऐसी जैसे भूकम्प आ गया हो। अब किसान भी सुगबुगाये।

"मतलब यही है कि हल की मुठिया की खातिर बँबूल की डाल न काटें।" छगा ने अपनी बिरादरी के पड़ोसी बसन्ता से कहा। "काहे काका?"

"मतलब तो यही है।"

"तो फिर खेती कैसे हो?"

"बँबूल खरीदो जिमीदार से।" बसन्ता बोला।

"औ' जिनके चरागाहें नहीं, उनके गोरू भूखों मर जायँ?"

बसन्ता ने हामी भरी और कहा, "अब दो मुंठी घास तीखुर के भाव बिकेगी।

ननकू सिंह ने रामजोर को ताना दिया, "रामजोर, और लो पच्छ गढ़ी का। अब बताओ, बँबूल कहाँ से लाओगे ?"

रामजोर के पास कुछ उत्तर न था।

"अब करौ पंचाइत। सब किसान मिल के रस्ता निकारैं।" ननकू बोला।

"कुछ करना होगा।" रामजोर ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

दो दिन तक इसी तरह खिचड़ी-सी पकती रही। उधर मि० गुप्ता ने कुछ सिपाही लगा दिये जो किसी को जंगल में न घुसने देते।

तीसरे दिन शाम को रामजोर के चौपाल में गाँव के किसानों की पंचायत हुई। रामखेलावन बहुत बूढ़ा हो गया था, लेकिन उसको भी बुलाया गया।

"खेलावन बाबा," रामजोर ने रामखेलावन को सम्बोधित करते हुए कहा, "जैसे तुम सबसे सयाने हो। बताओ, क्या किया जाय!"

रामखेलावन की गर्दन कुछ हिलने लगी थी। हिलती गर्दन को जरा सँभालकर वह बोला, "जैसे जंगल तो अब तक पूरे गाँव का रहा। बड़े सरकार महिपाल सिंह के वखत से अब तक सबका रहा। पटवारी के खाते में चाहे सरकार का हो। अब नया बन्दोबस्त। सरकार की रीझ-बूझ!"

"खेलावन काका," ननकू बोला, "रीझ-बूझ से तो काम नहीं चलता। आखिर हल की मुठिया, कहाँ से लावें लकरी? जिनके चरी, चरागाह नहीं, कहाँ लै जायँ गोरू-बछेरू?"

ड्योढ़ी पर तैनात सिपाही ने किसानों के आने की खबर मैनेजर को दी। मैनेजर गये महावीर सिंह के पास। दोनों में कुछ देर तक सलाह हुई। इसके बाद मैनेजर ने बाहर निकलकर सिपाही से कहा, "जाकर कह दो, अगर रियासत के मामले मे कुछ बात करनी है, तो हमसे करें। माता जी नहीं मिलेंगी। उन्होंने इनकार कर दिया है।"

सिपाही ने जाकर यही बात राह देखते लोगों से कही।

अब सब एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे।

"मनीजर से मिलने से कुछ निकसता नहीं," ननकू सिंह बोला।

शंकर सिंह और छंगा ने भी हामी भरी।

रामजोर ने पूछा, "मिलने में हरज क्या है?"

"हरज बहुत है," ननकू ने उत्तर दिया। "मनीजर बाहरी आदमी। क्या जाने हियाँ का हाल? नाइक साँपो की लड़ाई में जीभों की लपालप।"

"यह तो ठीक है," रामखेलावन बोला। "गैर आदमी, उसे क्या पता, यहाँ कैसा चलन था।"

सब थोड़ी देर तक ठगे-से खड़े रहे। फिर वापस अपने-अपने घर चले गये।

जंगल किसानों से छिन गया।

9

कोई छः महीने पहले मुरलीधर ने आँखें मूँद ली थीं और कौशल्या को तिनके का जो सहारा था, वह भी न रह गया था। यजमानों के जो थोड़े घर थे, उन्हें धनेश्वर के लड़के केशव और शिवसहाय के बेटे रामनिवास ने हथिया लिये। पहले कौशल्या के कहने पर केशव या रामनिवास उनकी यजमानी में चले जाते थे। जो कुछ मिलता, आधा ले लेते थे। बाद में ढील देने लगे, हीला-हवाला करने लगे। फल यह हुआ कि यजमानों का काम ठीक से न होने लगा। अन्त में तंग आकर यजमानों ने सीधे

ननकू सिंह ने रामजोर को ताना दिया, "रामजोर, और लो पच्छ गढ़ी का। अब बताओ, बँबूल कहाँ से लाओगे ?"

रामजोर के पास कुछ उत्तर न था।

"अब करो पंचाइत। सब किसान मिल के रस्ता निकारें।" ननकू बोला।

"कुछ करना होगा।" रामजोर ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

दो दिन तक इसी तरह खिचड़ी-सी पकती रही। उधर मि० गुप्ता ने कुछ सिपाही लगा दिये जो किसी को जंगल में न घुसने देते।

तीसरे दिन शाम को रामजोर के चौपाल मे गाँव के किसानों की पंचायत हुई। रामखेलावन बहुत बूढ़ा हो गया था, लेकिन उसको भी बुलाया गया।

"खेलावन बाबा," रामजोर ने रामखेलावन को सम्बोधित करते हुए कहा, "जैसे तुम सबसे सयाने हो। बताओ, क्या किया जाय !"

रामखेलावन की गर्दन कुछ हिलने लगी थी। हिलती गर्दन को जरा सँभालकर वह बोला, "जैसे जंगल तो अब तक पूरे गाँव का रहा। बड़े सरकार महिपाल सिंह के वखत से अब तक सबका रहा। पटवारी के खाते में चाहे सरकार का हो। अब नया बन्दोबस्त। सरकार की रीझ-बूझ !"

"खेलावन काका," ननकू बोला, "रीझ-बूझ से तो काम नहीं चलता। आखिर हल की मुठिया, कहाँ से आवै लकरी ? जिनके चरी, चरागाह नही, कहाँ लै जायँ गोरू-बछेरू ?"

"सो तो तुम ठीक कहते हो, ननकू," रामखेलावन ने उत्तर दिया, "पै आज कोई सुनने वाला नही।"

"तो भौजी साहेब से मिलें। वह भैया साहेब तक फरियाद पहुँचावें।" रामजोर बोला।

कुछ देर तक सब सोचते रहे। अन्त में तय हुआ कि सवेरे महावीर सिंह की माँ से मिलने चला जाय।

सवेरे घर पीछे एक के हिसाब से कोई सौ लोग रामजोर के चौपाल में इकट्ठे हुए। रामखेलावन के साथ छंगा भी आया और सब चले गढ़ी की ओर।

ड्योढ़ी पर तैनात सिपाही ने किसानों के आने की खबर मैनेजर को दी। मैनेजर गये महावीर सिंह के पास। दोनों में कुछ देर तक सलाह हुई। इसके बाद मैनेजर ने बाहर निकलकर सिपाही से कहा, "जाकर कह दो, अगर रियासत के मामले में कुछ बात करनी है, तो हमसे करें। माता जी नहीं मिलेंगी। उन्होंने इनकार कर दिया है।"

सिपाही ने जाकर यही बात राह देखते लोगों से कही।

अब सब एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे।

"मनीजर से मिलने से कुछ निकसता नहीं," ननकू सिंह बोला।

शंकर सिंह और छंगा ने भी हामी भरी।

रामजोर ने पूछा, "मिलने में हरज क्या है?"

"हरज बहुत है," ननकू ने उत्तर दिया। "मनीजर बाहरी आदमी। क्या जाने हियाँ का हाल? नाइक साँपों की लडाई में जीभों की लपालप।"

"यह तो ठीक है," रामखेलावन बोला। "गैर आदमी, उसे क्या पता, यहाँ कैसा चलन था।"

सब थोड़ी देर तक ठगे-से खड़े रहे। फिर वापस अपने-अपने घर चले गये।

जंगल किसानों से छिन गया।

9

कोई छः महीने पहले मुरलीधर ने आँखें मूंद ली थीं और कौशल्या को तिनके का जो सहारा था, वह भी न रह गया था। यजमानों के जो थोड़े घर थे, उन्हें धनेश्वर के लड़के केशव और शिवसहाय के बेटे रामनिवास ने हथिया लिये। पहले कौशल्या के कहने पर केशव या रामनिवास उनकी यजमानी में चले जाते थे। जो कुछ मिलता, आधा ले लेते थे। बाद में ढील देने लगे, हीला-हवाला करने लगे। फल यह हुआ कि यजमानों का काम ठीक से न होने लगा। अन्त में तंग आकर यजमानों ने सीधे

केशव या रामनिवास को पुरोहिती दे दी। कौशल्या से कुछ करते-धरते न बन पड़ा।

अब फसल कटने के बाद जब लांक उसायी जाती और किसान अनाज घर ले जाने की तैयारी करता, तब नाई, धोबी, कहार, आदि प्रजाजनों की तरह कौशल्या भी खलियान में हाज़िर होतीं। दूसरों का रेट बँधा था। उन्हें उसी हिसाब से अनाज मिल जाता। कौशल्या को गरीब ब्राह्मणी समझकर एक दो अँजुली अनाज दे दिया जाता। अमावस, पूर्णमासी वह बनियों, अहिरों के घर जातीं। "अमावस का व्रत रखा था, सो प्रसाद," कहकर तुलसी के चार पत्ते दे देतीं। घर की मालकीन कभी सीधा दे देती और कभी पैर छूकर यों ही टाल देती।

दिन इसी तरह जैसे-तैसे कट रहे थे। इस बीच शहर के नये ओवरसियर को भोजन बनाने वाली महराजिन की जरूरत हुई। उनकी बबुवाइन का सातवाँ महीना चल रहा था, इसलिए वह अपने मायके चली गयीं। बिना खाने के तीन रुपये महीने पर कौशल्या उनका भोजन बनाने लगीं। अगर कुछ खाना बच जाता, तो ओवरसियर का बेलदार खा लेता था। वह पानी भरता और घर के दूसरे काम करता था, जैसे झाड़ू लगाना, कपड़े धो डालना, आदि। बेलदार जाति का केवट था और ओवरसियर अग्रवाल बनिया, इसलिए ओवरसियर उसकी बनायी रोटी न खाते थे।

बबुवाइन दो महीने का बच्चा लेकर आयीं। बच्चा जिस दिन आया था, अच्छा-भला था। दूसरे दिन भी ठीक रहा। बबुवाइन ने उसे नहला-धुला कर कपड़े पहनाये, उसकी आँखों में काजल लगाया और माथे पर काजल का डिठौना। तभी कौशल्या खाना बनाने के लिए आयीं। उन्होंने चुटकी बजाकर "लल्ला", "छोटे बाबू" कहा और पुचकारा। बच्चा हँसने लगा।

"आओ," कौशल्या ने हाथ फैला दिये।

बबुवाइन ने बच्चे को कौशल्या की गोद में दे दिया। कुछ देर तक बच्चे को दुलराने के बाद कौशल्या ने उसे वापस बबुवाइन को दे दिया और रसोई के काम में लग गयीं। इसी बीच बच्चा अचानक रोने लगा, किसी

भी तरह चुप न होता। माँ ने उसे इधर-उधर टहलाया, गोदी में हिलाया, झूले पर लिटाकर झुलाया, लेकिन बच्चे का रोना बन्द न हुआ। कुछ देर में बबुवाइन ने उसका बदन छुआ, तो वह तवे की तरह तप रहा था।

उन्होंने बेलदार से ओवरसियर को बुलवाया। वह आये और आग छूकर बच्चे के पास गये। देखा, बच्चे को तेज़ बुखार है।

गाँव मे डाक्टर कोई था नहीं, शिवशंकर वैद्य को बुलवाया। वैद्य जी आये और उन्होंने कुछ दवा दी। लेकिन बच्चे का रोना बन्द न हुआ और न बुख़ार ही उतरा।

बच्चे की ऐसी हालत देखकर बेलदार ने बबुवाइन से कहा, "बहू जी, बच्चे को नज़र लग गयी है।"

"नज़र भला किसकी लगी ?" बबुवाइन बोली। "घर महराजिन के सिवा कोई आया नहीं। उसी ने ज़रा देर दुलराया था, गोद में लेकर।"

"तो राँड़, निपूती महराजिन की नज़र क्या नहीं लग सकती ?" बेलदार बोला।

बबुवाइन का मन शंका से भर गया। "तू किसी झाड़ने वाले को जानता है ?"

"हाँ, पास के पुरवे में एक डोम है। नज़र क्या, डाइन भी लगे, तो उतार देता है।"

"तो जाना, बुला ला।" बबुवाइन ने मिनती की।

ओवरसियर की साइकिल लेकर बेलदार गया और कोई आधा घण्टे में डोम को लेकर आ गया।

बबुवाइन बच्चे को गोद में लेकर उसके सामने बैठ गयीं। डोम गौर से बच्चे को देखकर बोला, "नज़र लगी है, बहुत ज़्यादा।"

अब उसने झाड़ना शुरू किया। आकाश-पाताल, दिग्-दिगन्तर बाँधने का हुंकार भरकर डोम 'ह्रीं', 'क्लीं', 'ग्लौं' जैसे कुछ स्वर बोला। फिर 'छू' कहकर बच्चे पर ज़ोर से फूँक मारी।

डोम तीन बार इस तरह झाड़कर चला गया। लेकिन बच्चे की हालत में ज़रा भी सुधार न हुआ। वह इतना रोया कि उसका गला बैठ गया।

कौशल्या ने रसोई बनाई थी, लेकिन भोजन किसी ने न किया। कौशल्या थोडी देर रहीं। फिर जाते-जाते कहा, "बहू जी, साइत पेट में दरद हो। थोड़ा काला निमक दूध में मिलाकर दो।"

बबुवाइन ने सिर्फ 'हूँ' कहा।

शाम तक बच्चा न रह गया और दूसरे दिन से कौशल्या को छुड़ा दिया गया।

तिनके का यह सहारा तो गया ही, साथ ही सारे गाँव में खबर फैल गयी कि कौशल्या टोना जानती है। नतीजा यह हुआ कि औरतें अपनी गोद के बच्चों को कौशल्या की नजर से बचाने लगी। इससे कौशल्या की कठिनाई और बढ़ गयी। अब अमावस, पूर्णमासी किसी के घर जाते हुए वह झिझकतीं। लेकिन न जायँ तो पेट कैसे भरे? वह आधी पागल-सी हो चली और दिन-भर अपने आप कुछ बड़बड़ाया करतीं।

10

रामशंकर कानपुर से गाँव आया, तो उसे मालूम हुआ—किस तरह मैनेजर ने भगत को डाँटा, इतवा और चैतुवा को हंटर लगाये; थानेदार आया जाँच करने और अब जंगल में कोई घुस नही सकता। वह छंगा के घर गया। देर तक बातें की।

रामशंकर ने छंगा को समझाया, "अब भी भलाई इसी में है, गाँव-सभा बनाओ और सब मिलकर सामना करो।"

"तुम रहो उतनी दूर," छंगा बोला, "छठे-छमासे आके दूध-पूत दे जाओ। इससे भला कैसे काम चले? हम सब ठहरे गँवार, अपढ़। रस्ता कौन बताये?"

रामशंकर सोचने लगा। "यह बात साथी तुम ठीक कहते हो," रामशंकर ने कहा। "लेकिन मुश्किल मेरी भी है। पेट की खातिर तो कुछ करना होगा।"

"सो तो है।" छंगा ने समर्थन में सिर हिलाया।

"मैं हर इतवार को आया करूँ?" रामशंकर ने पूछा। "छः दिन तुम देखो। इतवार को आके मैं सलाह दूँ जो कुछ बन पड़े।"

"कुछ काम चल सकता है," छंगा बोला। "वैसे हियाँ हर एक आदमी बरोबर रहे, तो अच्छा।"

रामशंकर समझा-बुझा कर कानपुर गया और किशनगढ़ के जमींदार के अत्याचारों की एक रिपोर्ट अपने अखबार में छपने के लिए सम्पादक को दी। वह सम्पादक भी थे और मालिक भी।

उन्होने रिपोर्ट पढ़ी और रामशंकर को बुलाकर कहा, "देखिए दुबे जी, यह समाचार हम नहीं छाप सकते।"

"क्यों?" रामशंकर ने आश्चर्य के साथ पूछा। "बिलकुल सच्ची घटना है।"

"हम यह नही कहते कि झूठी है," सम्पादक ने समझाया, "लेकिन जमींदार, मैनेजर और थानेदार के खिलाफ संगीन आरोप हैं, जंगल हड़पने, मारने-पीटने और झूठी जाँच करने के।" थोड़ा रुककर, "मान-हानि का मुकदमा चल सकता है।" थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोले, "सरकार का रुख कितना कड़ा है, यह आपसे छिपा नही। इतनी बड़ी जोखिम उठाना हमारे बूते के बाहर है।" उन्होने रिपोर्ट रामशंकर को वापस कर दी।

रामशंकर शाम को अशोक जी से मिला और सारा किस्सा सुनाया।

"हमें दो रिपोर्ट," अशोक जी ने कहा, "हम 'हिन्दुस्तान की हुंकार' में छपा देंगे। वे इससे बड़े-बड़े खतरे रोज लेते रहते हैं। यह तुम्हारा 'देश की बात' निकलता है लाला लोगों से पैसे ऐंठने के लिए। उनमें दम नही, सरकार के खिलाफ़ एक शब्द लिखें।"

'हिन्दुस्तान की हुंकार' ने पूरी रिपोर्ट छाप दी। उस पर शीर्षक जोड़ा : किशनगढ़ में जमींदार का अत्याचार—मैनेजर की नादिरशाही—पुलिस की साँठ-गाँठ।

रामशंकर ने दूसरे दिन सवेरे यह खबर पढ़ते ही अखबार की दस प्रतियाँ खरीदीं—एक-एक कलक्टर, परगना अफसर और किशनगढ़

हलके के थानेदार को भेजीं, बाकी लेकर-इतवार को सबेरे-सबेरे गाँव पहुँचा। वहाँ छंगा से कहा, "कल ही एक अखबार मिडिल-स्कूल में और एक प्राइमरी मे दे आना। एक अपने पास रखना। बाकी पढ़े-लिखे लड़कों में बाँट देना। खुद ननकू सिंह, शंकर सिंह, इतवा, चैतुवा वगैरा को पढ़कर सुनाना।"

दोपहर में भोजन करने के बाद रामशंकर घर से निकला, तो काफी रात गये लौटा। उसके आने पर बाबा शिकायत के लहजे मे बोले, "अरे बचनुवा, तुम कहाँ रहे सारे दिन? हम तो देखने को तरस गये।"

रामशंकर उनकी चारपाई के पायताने चुपचाप बैठ गया।

"कम्पू मे कोई तकलीफ़ तो नही है?" बाबा ने पूछा।

"नही बाबा, खूब मजे में हूँ।"

"मजे मे तो क्या हो! खुद टिक्कर लगाओ, तब चार कौर खाओ।" बाबा ममता-भरे स्वर में बोले।

रामशंकर ने उन्हें यह नही बताया कि स्वयं भोजन बनाने के झंझट से मैं कभी का छुटकारा पा गया हूँ। अब मैं किसी भी ढाबे में खा लेता हूँ।

"अब कुछ बंदोबस्त करना होगा जिससे तुम्हें रोटी-बनाने से छुट्टी मिले," बाबा ने जोड़ा।

रामशंकर यह सुनकर उठा और चल पडा। बाबा हँसने लगे।

रामशंकर जब हाईस्कूल में पढ़ता था, हर साल दो-चार जगह से देखुवे आते थे, लेकिन कांग्रेस-आंदोलन मे पड़कर जब उसने पढ़ाई छोड़ दी, तब से कोई न आता। अब तो रामअधार को चिन्ता थी कि कहीं विवाह हो जाये।

बाबा की बात का आशय समझकर रामशंकर ने सवेरे कानपुर को रवाना होने से पहले माँ से बिलकुल साफ़-साफ़ कह दिया, "अम्मा, मेरे शादी-ब्याह की हामी कोई न भरे। मैं इस झंझट में पडने का नही।"

"तुम काहे डरे जाते हो," माँ बोली, "हियाँ कोई भूल से भी दुबारा नही झाँकता।"

11

जानवरों को चराने की समस्या सबसे कठिन थी। वह प्रायः पूरे गाँव को छू रही थी। लोगों ने खूँटों से बाँधकर खली-भुस देकर गायों और भैंसों का पेट भरने की कोशिश की, लेकिन चौबीसों घण्टे खूँटों से बँधा रहना जानवरों के लिए जेलखाना था। गायों, भैंसों का दूध कम हो गया। वे सारे दिन छटपटाया करतीं।

सबसे विकट समस्या थी बैलों की। दिन-भर हल में चलने के बाद बैल रात में खुले मे चरते थे। इससे उनकी थकान दूर होती थी, उनमें ताजगी आती थी। अब हल से छूटने पर खूँटे से बँधे रहना, जेल की एक कोठरी से हटाकर दूसरी में बंद करने जैसा था।

पूरब की तरफ जिनकी चरागाहें थीं, उनके यहाँ सब किसान दौड़-धूप करने लगे, साझे में चराने का प्रबन्ध करने के लिए।

रामखेलावन शाम के वक्त चौपाल के चबूतरे पर बैठा हुक्का पी रहा था। इतने में छंगा और बसन्ता आये।

"बाबा, ठीक कर लिया," छंगा ने बताया।

"किसके साथ?"

"ननकू काका के साथ।"

"औ' तेरा काम कुछ बना बसन्ता?" रामखेलावन ने पूछा।

"हाँ, संकर राजी हो गये।"

"चलो, बहुत अच्छा हुआ। कातिक का महीना। बैल हरा चारा न पावें, तो किस बल पर हर जोतें। बहुत ठीक रहा।" रामखेलावन ने सिर हिलाते हुए प्रसन्नता प्रकट की। साथ ही चेतावनी दी, "जो जाय बैल चराने, ठीक से चरावें। किसी से रार-टण्टा न करें। समझे छगा, सुना बसन्ता?"

दोनों ने 'हाँ' कहा।

छंगा ने कुर्ता और दोहर कन्धे पर डाली, अँगोछे को सिर से लपेट लिया और लाठी उठाकर अपने बैलों की दोनों जोड़ियों को खूँटों से

खोला। वह उन्हें डहराकर चराने के लिए चल पड़ा।

कुछ मकानों के बाद ही वसन्ता का घर था। उसके दरवाज़े के सहन में बैलों को चुमकारकर खड़ा किया। वसन्ता के बेटे सिधुवा को भी साथ लेना था।

सिधुवा ब्यालू करके उठा था। आँगन में खड़े-खड़े उसने अपनी स्त्री से कहा, "कुर्ता-चादर दे जा।"

सिधुवा की स्त्री कोठरी से कुर्ता और चादर लाकर देने लगी, तो सिधुवा ने उसकी कलाई पकड़ ली।

"छोड़ो भी," उसकी स्त्री बोली।

लेकिन सिधुवा ने उसे ज़ोर से खींचकर अपने गले से लगा लिया।

"छोड़ो। यह क्या!" उसने छुड़ाने की कोशिश की।

इतने में बाहर से आवाज़ आयी, "सिधुवा, ओ सिधुवा भैया!"

"देखो, छगा बुला रहा है। छोड़ दो। अभी वह धड़धड़ाता हुआ यहीं आ जायगा।"

लेकिन सिधुवा ने उसे और कसकर अपने अंक से लगा लिया।

छगा को जब बुलाने पर कोई जवाब न मिला, तो वह थोड़ा बढ़कर दरवाज़े के पास आ गया और वहीं से आवाज़ लगायी, "अरे सिधुवा, चल जल्दी। अबेर हो रही है।"

आवाज इतने नजदीक से आयी कि सिधुवा डर गया, कहीं छंगा अन्दर ही न घुस आये। उसने अपनी स्त्री को छोड़ दिया। वह हँसती हुई पीछे हट गयी और दाहिने हाथ का अँगूठा दिखाकर बोली, "अब!"

सिधुवा भी हँसने लगा। "दाल-भात में मूसरचन्द," धीरे से कहा और ज़ोर से आवाज़ लगायी, "आया छगा, आ गया।"

उसकी स्त्री मजे में हँस रही थी।

बाहर आया, तो छंगा ने चुटकी ली, "भीतर से निकलने का नाम ही नहीं लेता।"

"अरे तेरी भौजी···" सिधुवा इतना ही कह पाया था कि छंगा बोल पड़ा, "यही तो मैं कहता हूँ," और हँसने लगा।

सिधुवा ने अपने बैलों की जोड़ी खोली और उन्हें हाँका।

बैलों को आगे किये दोनों आहिस्ते-आहिस्ते बढ़े और ननकू सिंह के दरवाजे पर पहुँचे।

ननकू बण्डी पहने, कन्धे पर दोहरा रखे, लाठी लिये खड़ा था, जैसे इनकी राह ही देख रहा हो।

"चलो," कहकर ननकू ने अपने बैलों की दोनों जोड़ियों को खोला और छंगा ने सब बैलों को आगे डहराया।

ये लोग शंकर सिंह के दरवाजे पर पहुँचे। शंकर सिंह छोटा-सा हुक्का हाथ में लिये पी रहा था। वह कुर्ता पहने था और अँगोछा सिर से बाँधे था। लाठी चौपाल के कोने में दीवार से टिकी हुई थी।

"आओ ननकू," शंकर ने कहा और हुक्का उसकी ओर बढ़ा दिया। ननकू ने हुक्का थामा और दो फूंक पीने के बाद छंगा और सिधुवा से पूछा, "तुम पंच पियोगे चिलिम ?"

"ना काका," सिधुवा ने उत्तर दिया।

छंगा ने हुक्के से चिलम उतार ली और दो फूंक लिए।

इस बीच शंकर ने अपने दोनों बैल खोले, लाठी उठायी और चलने को तैयार हो गया।

रास्ते में ननकू ने छंगा से कहा, "आज दीनानाथ भगत आया था।"

छगा ने 'हूँ' किया। वह न समझ सका, ननकू कहना क्या चाहता है।

"कह रहा था, ननकू काका चरागाह में साझा दे दो।"

अब छंगा के कान खड़े हो गये। उसने उत्सुकता से पूछा, "तुमने क्या कहा, काका ?"

"हमें क्या कहना था," ननकू बोला। "हमने कह दिया, खेलावन काका के साथ बप्पा के बखत से ब्योहार रहा। हम भला कैसे तोड़ दें ?"

"फिर ?"

"फिर क्या ? चला गया अपना-सा मुँह लेकर।"

शंकर ने बताया कि भगत उसके पास भी गया था। उसने कह दिया, "जेठू काका के बखत से हमारा-अहीरों का मेल है। तुम अभी किसान बने हो।"

बातें करते-करते सब लोग चरागाह में पहुँचे। बैल चरने लगे और

ये चारों एक ऊँचे टीले पर बैठ गये, जहाँ से बैलों पर आसानी से नजर रख सकें।

कृष्ण पक्ष की चौथ का चन्द्रमा उग आया था और चाँदनी चरागाहों पर छिटकी थी। दूसरी चरागाहों में भी किसान अपने-अपने बैल चरा रहे थे। जंगल में खूब चहल-पहल थी।

ननकू सिंह को सारंगा सदाब्रज, छैल बटोही और ढोला मारू के किस्से याद थे। जितने दिन रात में चरागाहों मे बैल चराये जाते, ननकू सिंह कोई-न-कोई किस्सा गा-गाकर सुनाता, दूसरे हूँका देते। बीच-बीच में कोई जाकर आगे बढ़ते बैलों को हाँककर ले आता जिससे बैल कहीं दूसरी जगह न चले जायँ।

आज ननकू सिंह ने सारंगा सदाब्रज की कहानी शुरू की। हंस और हंसिनी की कहानी सुनाते हुए उसने कहा, "हंसिनी जब सुन्दर रानी बनकर राजा के साथ जाने लगी, तब पंछी की बोली मे हंस से कहा—

मन की गति जानो सजन,
तुम हो चतुर सुजान।
तुम बिन मैं कैसे जिऊँ,
दो सरीर एक जान।"

"आहा हा," सिधुवा बोला, "दो सरीर एक जान! और क्या, प्रेम हो, तो ऐसा!"

"अच्छा चुप रह!" छंगा ने टोका।

शंकर हँसने लगा। ननकू सिंह ने कहानी आगे बढ़ायी, "हंसिनी ने और कहा—

साजन ये मत जानियो, तोहिं बिछड़े मोहिं चैन।
जैसे जल बिन मछरिया, तड़पूँगी दिन-रैन।

यह सुनकर हंस आँखों में आँसू भरकर कहने लगा—

पत्ता टूटा डार से, लै गयो पवन उड़ाय।
अबके बिछुड़े कब मिलें, दूर पड़ेंगे जाय।

इस पर हंसिनी बोली—

मान सरोवर तुम बसो, हम जमना के तीर।
अब तो मिलना है कठिन, पाँव परी जंजीर।

हंसिनी की यह बात सुन हंस बोला—

सोच-समुझकर हे प्रिये, लीजो खोज मँगाय।
राजमहल के बीच में…"

अचानक रुकावट। थोड़ा पहले सिधुवा किसी झाड़ी के पीछे छिप गये बैलों को ढूँढता-ढूँढ़ता झाड़ी के पास पहुँचा था। उसने 'धो, धो' कहकर चुमकारा और लपककर हलके से लाठी मारते हुए बैलों को हाँका। बैल मुड़ पड़े, लेकिन इतने में सिधुवा चीख पड़ा, "अरे साँप ने फाड़ खाया, ननकू काका !"

ननकू कहानी का पद बोल रहा था। पद बीच में ही रह गया और उसके मुँह से 'आँय' की आवाज निकली।

ननकू सिंह फौरन उठा और लाठी लेकर उधर को दौड़ा जिधर से आवाज आयी थी। सिधुवा पैर का अँगूठा पकड़े बैठा था।

ननकू उसके पास बैठ गया। अपने सिर से अँगोछा खोलकर उसे फाड़ा और एक पतली पट्टी को रस्सी की तरह मरोड़कर अँगूठे को कसकर बाँध दिया।

छंगा और शंकर भी ननकू के पीछे-पीछे दौड़े थे।

ननकू ने कहा, "संकर, इसकी पिंडली कस के दबा। मैं अँगोछा टखने पर बाँधूं।"

शंकर ने जोर से सिधुवा की पिंडली दोनों हाथों से दबा ली। ननकू ने अँगोछे का एक और टुकड़ा रस्सी की तरह मरोड़कर टखने से बाँध दिया। इसके बाद कहा, "संकर, बैल रामजोर को सका दे। हम दोनों इसको घर ले चलें। ओ छंगा, तू दौड़ता जा, रमजानी फकीर को जगा के बसन्ता भैया के दुवारे ला।"

छंगा दौड़ पड़ा गाँव की ओर नंगे पैर, कुर्ता पहने, दोहर कंधे पर डाले और अँगोछा सिर पर बाँधे, लाठी लिए।

शंकर ने रामजोर को आवाज देकर बुलाया और बैल उसकी देख-रेख में कर दिए गये।

ननकू और शंकर ने सिधुवा को अपने कंधों पर उठाया घर ले चलने के लिए। कुछ दूर तक दोनों उसे इसी तरह लाये। फिर एक जगह जरा दम लेने के लिए उसे ज़मीन पर उतारा।

"संकर, मेरी पीठ पर बैठा दे," ननकू ने कहा, "तू पीछे रहना।"

"हाँ, यह ठीक होगा। बारी-बारी पीठ पर ले चलें। इससे जल्दी पहुँचेंगे।"

ननकू और शंकर बारी-बारी से पीठ पर लादकर चले।

"बड़ा भारी लग रहा है," ननकू बोला।

"तो दोनों लाद लें," शकर ने सलाह दी।

थोड़ी देर के बाद ननकू ने कहा, "बात क्या है? इतना भारी क्यों?"

सिधुवा को ज़मीन पर लिटा दिया गया और शंकर ने उसके सीने पर हाथ रखकर देखा।

"ननकू दाल मे कुछ काला है," शंकर शंकित स्वर में बोला।

"यह तो चल बसा!" ननकू ने नथुनों के पास हथेली लगाने के थोड़ी देर बाद कहा और धाड़ मारकर रो पड़ा।

सिधुवा की लाश दरवाज़े पर लायी गयी। रमजानी, बसन्ता, रामखेलावन और पड़ोस के लोग पहले से इकट्ठा थे।

"साँप नही, विपखोपड़े का काटा है," रमज़ानी ने देखकर बताया, "साँप काटने से इतनी जल्दी ऐसा नही होता।"

सिधुवा की लाश देखते ही बसन्ता पछाड़ खाकर गिर पड़ा। सिधुवा की माँ और उसकी स्त्री बिलखती हुई आयी और सिधुवा की छाती पर सिर रखकर फूट-फूट कर रोने लगी।

रामखेलावन नीम की उभरी हुई जड़ पर बैठा था। वह लड़खड़ाता हुआ उठा और सिधुवा की लाश के पास आकर धम से बैठ गया। रोते हुए बोला, "बसन्ता, न रो। जिन्दगी-भर रोना है। झुमरा को आज तक रोता हूँ। अब सिधुवा एक घाव और दे गया।"

शंकर सिंह सिधुवा के सिरहाने बैठा था। वह रामखेलावन का कन्धा पकड़कर रोने लगा, "खेलावन काका, ऐसा सीधा, गऊ लरिका···", आगे

वह कुछ न बोल पाया।

पं० रामअधार डण्डे के सहारे धीरे-धीरे चले आ रहे थे। रोने की आवाज से चौंक गये। लम्बे डग भरते हुए उन्होंने "हा राम" कहा।

पास आकर सबको समझाते हुए बोले, "बहुत सुख को हँसना क्या, बहुत दुख को रोना क्या! जिसकी चीज, ले गया।" और झुककर बसन्ता की पीठ पर हाथ फेरा। "दुनिया है, जो जितने दिन की साथी, उतने दिन साथ रहता है। धीरज धरो!"

बसन्ता और सिधुवा की माँ का बुरा हाल था, लेकिन सिधुवा की कोई बीस साल की स्त्री तो ऐसी मर्माहत हुई कि वह न कुछ बोलती, न खाती, गुमसुम बैठी रहती। पाँचवें दिन छगा किसी तरह एक कौर उसके मुँह में डालने में सफल हुआ। लेकिन वह कौर मुँह में कुछ देर तक तो रहा, फिर अपने आप जमीन पर गिर गया। सातवें दिन दो कौर सिधुवा की स्त्री के पेट मे गये। उसे सँभलने में कोई डेढ महीने लग गये। इस बीच तन और मन दोनों से इतनी टूट गयी थी कि चलते समय उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा जाता, उसका सिर चकराता। कभी दीवार का सहारा लेकर खड़ी रहती, कभी उसी जगह बैठ जाती। सिर का चकराना दूर होने पर उठती। रात में सोते-सोते चीख पडती और उठकर रोने लगती। कभी-कभी सिधुवा का कुर्ता या लाठी लिये घंटों बैठी देखा करती।

बसन्ता की स्त्री अपनी बहू को समझाती, गुट्टी अब उस बूँद से भेंट नही। अब अपना तन काहे गार रही है? उसकी पीठ सहलाती। उसका सिर अपनी छाती से लगा लेती। सिधुवा की स्त्री सिसक-सिसक कर रोने लगती।

सिधुवा की नारायण बलि के कोई तीन महीने बाद बसन्ता ने रामखेलावन को बुलवाया। चौपाल के फर्श पर एक छोटा-सा फटा टाट पड़ा था। उसी पर दोनों बैठ गये।

बसन्ता बोला, "जैसे काका, जो कुछ होना था, सो तो हो गया। अब गुट्टी का···"

रामखेलावन ने सर्द आह भरी, अपना सिर सहलाया, फिर बोला, "हाँ, सिधुवा चला गया। यह अभी दो दाँत की···" फिर थोड़ी देर तक

ननकू और शंकर ने सिघुवा को अपने कंधों पर उठाया घर ले चलने के लिए। कुछ दूर तक दोनों उसे इसी तरह लाये। फिर एक जगह ज़रा दम लेने के लिए उसे ज़मीन पर उतारा।

"संकर, मेरी पीठ पर बैठा दे," ननकू ने कहा, "तू पीछे रहना।"

"हाँ, यह ठीक होगा। बारी-बारी पीठ पर ले चलें। इससे जल्दी पहुँचेंगे।"

ननकू और शंकर बारी-बारी से पीठ पर लादकर चले।

"बड़ा भारी लग रहा है," ननकू बोला।

"तो दोनों लाद लें," शंकर ने सलाह दी।

थोड़ी देर के बाद ननकू ने कहा, "बात क्या है? इतना भारी क्यों?"

सिघुवा को ज़मीन पर लिटा दिया गया और शंकर ने उसके सीने पर हाथ रखकर देखा।

"ननकू दाल में कुछ काला है," शंकर शंकित स्वर में बोला।

"यह तो चल बसा!" ननकू ने नथुनों के पास हथेली लगाने के थोड़ी देर बाद कहा और धाड़ मारकर रो पड़ा।

सिघुवा की लाश दरवाज़े पर लायी गयी। रमजानी, बसन्ता, रामखेलावन और पड़ोस के लोग पहले से इकट्ठा थे।

"साँप नहीं, विषखोपड़े का काटा है," रमजानी ने देखकर बताया, "साँप काटने से इतनी जल्दी ऐसा नहीं होता।"

सिघुवा की लाश देखते ही बसन्ता पछाड़ खाकर गिर पड़ा। सिघुवा की माँ और उसकी स्त्री बिलखती हुई आयीं और सिघुवा की छाती पर सिर रखकर फूट-फूट कर रोने लगीं।

रामखेलावन नीम की उभरी हुई जड़ पर बैठा था। वह लड़खड़ाता हुआ उठा और सिघुवा की लाश के पास आकर धम से बैठ गया। रोते हुए बोला, "बसन्ता, न रो। जिन्दगी-भर रोना है। झुमरा को आज तक रोता हूँ। अब सिघुवा एक घाव और दे गया।"

शंकर सिंह सिघुवा के सिरहाने बैठा था। वह रामखेलावन का कन्धा पकड़कर रोने लगा, "खेलावन काका, ऐसा सीधा, गऊ लरिका···" आगे

वह कुछ न बोल पाया।

पं० रामअधार डण्डे के सहारे धीरे-धीरे चले आ रहे थे। रोने की आवाज से चौंक गये। लम्बे डग भरते हुए उन्होंने "हा राम" कहा।

पास आकर सबको समझाते हुए बोले, "बहुत सुख को हँसना क्या, बहुत दुख को रोना क्या! जिसकी चीज, ले गया।" और झुककर बसन्ता की पीठ पर हाथ फेरा। "दुनिया है, जो जितने दिन की साथी, उतने दिन साथ रहता है। धीरज धरो!"

बसन्ता और सिधुवा की माँ का बुरा हाल था, लेकिन सिधुवा की कोई बीस साल की स्त्री तो ऐसी मर्माहत हुई कि वह न कुछ बोलती, न खाती, गुमसुम बैठी रहती। पाँचवें दिन छंगा किसी तरह एक कौर उसके मुँह में डालने मे सफल हुआ। लेकिन वह कौर मुँह मे कुछ देर तक तो रहा, फिर अपने आप जमीन पर गिर गया। सातवें दिन दो कौर सिधुवा की स्त्री के पेट मे गये। उसे सँभलने में कोई डेढ़ महीने लग गये। इस बीच तन और मन दोनों से इतनी टूट गयी थी कि चलते समय उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा जाता, उसका सिर चकराता। कभी दीवार का सहारा लेकर खड़ी रहती, कभी उसी जगह बैठ जाती। सिर का चकराना दूर होने पर उठती। रात में सोते-सोते चीख पड़ती और उठकर रोने लगती। कभी-कभी सिधुवा का कुर्ता या लाठी लिये घंटों बैठी देखा करती।

बसन्ता की स्त्री अपनी बहू को समझाती, गुट्टी अब उस बूँद से भेंट नहीं। अब अपना तन काहे गार रही है? उसकी पीठ सहलाती। उसका सिर अपनी छाती से लगा लेती। सिधुवा की स्त्री सिसक-सिसक कर रोने लगती।

सिधुवा की नारायण बलि के कोई तीन महीने बाद बसन्ता ने रामखेलावन को बुलवाया। चौपाल के फर्श पर एक छोटा-सा फटा टाट पड़ा था। उसी पर दोनों बैठ गये।

बसन्ता बोला, "जैसे काका, जो कुछ होना था, सो तो हो गया। अब गुट्टी का···"

रामखेलावन ने सर्द आह भरी, अपना सिर सहलाया, फिर बोला, "हाँ, सिधुवा चला गया। यह अभी दो दाँत की···" फिर थोड़ी देर तक

चुप रहा जैसे कुछ सोच रहा हो। रामखेलावन ने धीरे से कहा, "बुधुवा से गुट्टी साल खाँड़ छोटी है। उसके तरे ठीक रहेगा।" और बसन्ता की ओर देखने लगा। बसन्ता चुप था।

रामखेलावन ने ही कहा, "अभी घाव ताजा है। अभी तो बतायेगी नहीं। महीना खाँड़ बाद गुट्टी से पूछ। राजी हो, तो यह उचित होगा। घर की लच्छमी घर में रहे।"

करीब सात महीने बाद बसन्ता और उसकी दुलहिन ने पतोहू को राजी कर लिया और गुट्टी ने अपने देवर बुधुवा के नाम की चूड़ियाँ पहन ली।

12

'हिन्दुस्तान की हुंकार' की एक प्रति मैनेजर मि० गुप्ता तक भी पहुँच गयी थी। शाम के वक्त जब वह महावीरसिंह के प्राइवेट कमरे में बैठे थे, उन्होंने अखबार महावीर को दिया।

समाचार पढ़कर महावीर ने कहा, "यह रामसंकर, दो कौड़ी का आदमी, आसमान सिर पर उठाये है। इसे सबक सिखाइये।"

"हम तय कर चुके हैं," मैनेजर ने पूरे आत्मविश्वास के साथ कहा। "कल थानेदार से मिलेंगे। कुछ न कुछ दवा करा देंगे।"

"जरूर कुछ कीजिये। पैसे का मुँह न देखियेगा।" महावीर सिंह बोले।

"नहीं साहब, पैसे का मुँह देखेंगे, तो मारे जायेंगे। जमीन का पूरा बन्दोबस्त करना है। ऊँघने का वक्त कहाँ? अभी नाकेबन्दी कर लेनी है।" मि० गुप्ता ने समझाया।

दूसरे दिन सवेरे मैनेजर घोड़े पर थाने गये। उनके साथ दो लट्ठ-बन्द सिपाही थे।

थाने पहुँचने पर मैनेजर ने दुआसलाम के बाद 'हिन्दुस्तान की हुंकार'

का अंक थानेदार के सामने रखा। पहले पृष्ठ पर छपे समाचार को थानेदार ने पढा और बोला, "हम तो आपसे पहले ही कह चुके थे, यह अखबार बागियों का है। आये दिन सरकार के खिलाफ़ कुछ-न-कुछ लिखता रहता है।"

"लेकिन इस खबर के पीछे जानते हैं थानेदार साहब, कौन हैं?" मैनेजर ने पूछा।

थानेदार कुछ इस तरह उनकी ओर देखने लगा जैसे उसे कुछ पता न हो।

मैनेजर ने ही उत्तर दिया, "वही रामसंकर दुबे।"

"हो सकता है," थानेदार चलताऊ ढंग से बोला।

मैनेजर कुछ देर तक थानेदार को ताकते रहे जैसे उसके मन का भाव पढ़ना चाहते हो. फिर बोले, "वही है, और कोई नही, थानेदार साहब!"

थानेदार चुप रहा। तब मैनेजर ने मन-ही-मन गाली दी, साला कुत्ता, खाने का मीत और गिड़गिडाते हुए बोले, "अब तो कुछ करना होगा, दरोगा साहब।"

"लेकिन रामसंकर शहर में रहता है। फिर शहर में उसके कई अच्छे जान-पहचान के हैं। उस पर हाथ डालना मेरे लिए मुमकिन नहीं।"

मैनेजर कुछ देर तक सोचते रहे। फिर बोले, "उसे छोड़िये। आप जड़ पर कुल्हाड़ी चलाइये। यह तो पत्ती है। जड़ें कट जायेंगी, पत्ती आपसे आप मुरझा जायेगी।"

"मैंने आपकी बात समझी नहीं," थानेदार के स्वर में रूखापन था।

मैनेजर ने मन-ही-मन कहा, साला कन्नी काट रहा है। फिर जेब से निकालकर दस-दस के पचास नोटों की गड्डी थानेदार के हाथ में थमा दी और ऐसे स्वर मे बोले जिसमें नरमी के साथ-साथ नोटों की गर्मी भी थी, "किशनगढ़ में कुछ लोग हैं जो उसके इशारे पर नाचते हैं। इन्हें सबक सिखा दीजिये। सब ठीक हो जायेगा।"

थानेदार कुछ देर तक चुप रहा, फिर बोला, "आप कुछ नाम बताइये। मैं सोच-समझ कर दो-चार दिन में कारवाई करूंगा।"

मैनेजर ने कुछ नाम बताये, उनके पेशे भी। थानेदार ने एक कागज़

पर लिख लिया। थोड़ी देर तक सोचने के बाद कहा, "आप बेफ़िक्र रहिये। तीन-चार दिन में कुछ किया जायेगा।"

"आपका एहसानमन्द रहूँगा, थानेदार साहब," मि० गुप्ता बोले और चलने की इजाजत चाही। थानेदार ने हाथ मिलाया।

किशनगढ़ पहुँचने पर मि० गुप्ता ने महावीर सिंह को बताया, "एक हज़ार दिये हैं। एक हफ़्ते के अन्दर कार्रवाई करने का थानेदार ने वादा किया है।"

"रामसंकर के खिलाफ़?" महावीर सिंह ने पूछा।

"नहीं। जो लोग यहाँ रहते हैं, उनके खिलाफ़," मैनेजर ने बताया। "ये लोग रास्ते पर आ जायेंगे, तो रामसंकर उड़ता रहेगा कटी पतंग की तरह।" उन्होंने समझाया।

13

महावीर सिंह की शादी बस्ती जिले के एक अच्छे जमींदार घर में हुई थी। लड़की बहुत सुन्दर थी, थोड़ी पढ़ी-लिखी भी, लेकिन वह महावीर के मन को कभी न जीत सकी।

आरम्भ में उसने विशेष ध्यान न दिया, लेकिन जब महावीर किसी भी तरह रास्ते पर न आये, तो नौकरानियों ने वशीकरण के जो भी टोटके बताये, सब किये। मंत्र पढ़ी सुपारी पान में डालकर खिलायी। मंत्र पढ़े चावलों की खीर खिलायी। लेकिन कुछ असर न हुआ।

महावीर को पीने की आदत ऐसी पड़ गयी थी कि सवेरा होते ही दो घूंट पीते। इसके बाद नाश्ता करने के बाद पीते और दोपहर के खाने तक अच्छा सुरूर आ जाता। खाना एक ही थाल में महावीर और उनकी पत्नी का आता। खाना खाने के बाद महावीर सिंह पान खाते और रनवास में थोड़ी देर आराम करते। उनकी पत्नी रूप कुमारी कुछ बातें करती, वह हाँ, हूँ, में जवाब देते और सो जाते। वह एक लम्बी आह भरती और

उनके पास ही पलँग पर लुढ़क जाती। महावीर उठते। मुँह-हाथ धोकर बाहर आ जाते। शाम को इतनी पीते कि प्रायः दो खिदमतगार उनको सहारा देकर अंदर पहुँचाते। अंदर जाकर वह लेट जाते।

आज हालत इतनी खराब हो गयी कि चार नौकर उनको लादकर अंदर लाये। उन्हें पलँग पर लिटा दिया गया। महावीर छटपटा रहे थे। रूप कुमारी सारी रात पलँग के पायताने बैठी रही। तड़के महावीर शान्त हुए, तब उसने पलँग पर पीठ टेकी। लेकिन नींद गायब। रूप कुमारी सोच रही थी, मेरा जीवन अकारथ। इनको मेरी परवाह नहीं। जब यहाँ रहते हैं, सारे दिन पीना, रात नशे में धुत आना। लखनऊ में न जाने किस राँड़ ने डोरे डाल रखे हैं। वहाँ महीने में दो बार जरूर जाना। क्या किया जाय? सब जंत्र-मंत्र कर लिये, तुलसी जी में रोज जल चढ़ाती हूँ, पाठ करती हूँ, लेकिन कुछ असर नहीं। इसी तरह की बातें सोचते-सोचते उसे अपनी शादी के दिन याद आ गये।

शादी के बाद वह नयी-नयी आयी थी। सास, सुभद्रा देवी रोज तीसरे पहर उसका सिंगार कराके एक कालीन पर गाव तकिये के सहारे बिठलातीं। वह थोड़ा घूंघट निकाले बैठी रहती। गाँव की औरतें उसे देखने आतीं। मुंह देखतीं और निछावर करके पास बैठी खिदमतगारनी को एक रुपया दे देतीं।

एक दिन शिवसहाय दीक्षित की स्त्री और धनेश्वर मिश्र की स्त्री अपनी-अपनी बेटियों, रत्ती और लक्ष्मी के साथ देखने आयीं।

शिवअधार की स्त्री ने मुँह देखकर कहा, "सरकार, बहू रानी तो बिलकुल पान-पान हैं।"

"गुलाब की कली," धनेश्वर की स्त्री ने जोड़ा।

"हाँ, देखो तो बस देखती रह जाओ, जुन्हैया जैसी," रत्ती बोली।

"बहूरानी का एक-एक अंग रच-रच के बनाया है, भगवान् ने।" लक्ष्मी का मत था।

अपनी इतनी प्रशंसा सुनकर रूप कुमारी ने गर्दन जरा नीची कर ली। जरा-सी मुसकान उसके होंठों पर आ गयी।

रूप कुमारी को ये बातें याद आयीं, तो उसने आह भरी और आँखों

में आये आँसुओं को हाथ से पोंछ डाला।

जिन्हें यह रूप देखना चाहिए, उन्हें कुछ परवाह नहीं। उनके लिए यह मिट्टी-मोल है, रूप कुमारी ने सोचा और करवट लेकर महावीर का मुंह ताकने लगी। रूप कुमारी की चाह-भरी आँखें महावीर पर टिकी थी। कब झपकी लग गयी, पता नहीं।

सवेरे महावीर सिंह की आँख खुली, तो देखा, रूप कुमारी अभी सोयी पड़ी है। उन्होंने मुंह-हाथ धोये, नाश्ता किया और बाहर आ गये।

रूप कुमारी ने जागने पर देखा, उसका नाश्ता ढंका रखा है। नौकरानी से मालूम हुआ, सरकार नाश्ता करके बाहर चले गये।

रूप कुमारी की आँखें छलछला आयी। वह बिना नाश्ता किये पलंग पर लेट गयी और सिसकियां भरने लगी।

14

थानेदार कोई पन्द्रह दिन पहले किस तरह ननकू, शंकर और छंगा को डाकुओं के साथी होने, भगत को चोरी के गहने गिरवी रखने और इतवा, चैतुवा को शराब बनाने के जुर्म में पकड़ ले गया, थाने में ननकू, शंकर और छंगा को डांटा-धमकाया और उनसे मुचलके लिखा लिये, भगत को डरा-धमका कर उसके गिरवी रखे गहने हजम कर लिए और इतवा, चैतुवा को मारा-पीटा—यह सब रामशंकर को उसकी माँ ने कानपुर से उसके आने पर बताया। सवेरे रामशंकर छंगा से मिला और इतवा, चैतुवा को बुलवाया। फिर सब दीनानाथ भगत से मिलने चले।

भगत ने रामशंकर को अपने घर की तरफ़ आते देख लिया था। वह आँख बचाकर घर के अन्दर घुस गया।

रामशंकर ने दरवाजे से आवाज लगायी, "भगत भैया ?"

भगत ने कोई जवाब न दिया, तो रामशंकर अन्दर चला गया। उसके साथी बाहर ही खड़े रहे। भगत आँगन के दासे पर बैठा था। घर के

भीतर आ जाने पर क्या करे ? बोला, "आओ छोटे पंडित, पांव लागों।"

रामशंकर ने 'आशीर्वाद' कहा और उसके पास खासे पर ही बैठने लगा।

"अरे रुको," भगत ने रामशंकर का हाथ पकड़कर रोका और दीवार के सहारे टिकी चारपाई बिछा दी।

"बैठो आराम से।"

रामशंकर चारपाई पर बैठने के बाद बोला, "भगत भैया, उस दिन थानेदार ने जो बदमाशी की, सब सुना···"

रामशंकर आगे कुछ कहे, इसके पहले ही भगत बोल पड़ा, "छोटे पंडित, जैसे तुम ठहरे परदेसी। फिर, बाँभन-ठाकुर की और बात। हम बनियाँ-बक्काल सरकार से मुकाबला करने लायक नहीं।" थोड़ा रुककर, "माने समझो, मनीजर गुप्ता की चढ़ती कला है। वह सरकार को जिस कर बैठाये, वह उसी कर बैठते हैं।" इसके बाद हाथ जोड़कर कहा, "तो महराज, हमारी हिम्मत नहीं। गधे की लात गधा सहता है। हम पिद्दी, एक दुलत्ती में ढेर।"

"लेकिन भगत भैया, कब तक सहोगे ?" रामशंकर ने पूछा।

"जितना बर्दास के भीतर होगा। नहीं, गाँव छोड़ के चले जायँगे, कहीं कम्पू, जबलपुर।"

रामशंकर ने सोचा, भगत बहुत डर गया है। अभी इसे साहस बँधाने से कुछ लाभ नहीं। चारपाई से उठते हुए बोला, "हम गाँव न छोड़ने देंगे। कुछ न कुछ करेंगे, भगत भैया।"

"तो, बाँभन हो, असीस हम कैसे दें? हाँ, भगवान् से बरोबर मनायेंगे, कि या जुलुम खतम करने में भगवान् तुम्हारी सहायता करें।" और भगत ने आकाश की ओर हाथ उठाकर दोनों हाथ इस प्रकार जोड़े जैसे भगवान् से प्रार्थना कर रहा हो।

यहाँ से ये लोग ननकू सिंह के घर पहुँचे। ननकू चौपाल में बैठा हुक्का पी रहा था। रामशंकर को आता देख खड़ा हो गया। "आओ, छोटे पंडित, पाँय लागों।"

रामशंकर ने 'आशीर्वाद' कहा।

"कहाँ आज सब जने ?" ननकू ने पूछा।

रामशंकर ने थानेदार वाली घटना की बात कही। अभी बात पूरी भी न हो पायी थी कि ननकू हुक्का दीवार से टिकाते हुए बोला, "बच्चा, तुम जो कुछ करो, हम साथ हैं। ठाकुर के मूत से पैदा नहीं, जो दोगलापन करें। तुम गाँव-सभा बनाओ, सबसे आगे ननकू। तुम आन्दोलन करो, सबसे आगे मैं।" और अपने सीने पर दाहिना हाथ रखा।

"काका, तुमसे यही उम्मेद है," छंगा बोला।

"बच्चा, बार जरूर कुछ सपेत हो चले हैं, पै हिम्मत किसी ज्वान से कम नहीं।"

"आओ चलें, संकर काका की तरफ़," रामशंकर बोला।

"संकर न मिलैगा। अब ही खेत की तरफ गया है।" ननकू ने बताया। "पै जहाँ हम, हुआँ संकर। दुइ सरीर, एक जिउ।" थोड़ा रुककर दाँत पीसते हुए बोला, "या मनीजर औ' वा मोगा महाबीर, मनीजर के इसारे पर नाचने वाला, दोनों को मजा चखाओ। हम साथ हैं।"

रामशंकर ने समझाया, अब सिर्फ अखबार में छपाने से काम न चलेगा। अगले इतवार तक बड़ी सभा करेंगे, गाँव-सभा बनायेंगे। कानपुर से एक बड़े नेता को लायेंगे। वह नेता भी हैं, अच्छे वकील भी।

"औ' जो जरूरत पड़ी ननकू काका, तो हम गाँव में रह के संगठन करेंगे," रामशंकर दृढ़ स्वर में बोला।

"हम यह न कहेंगे बच्चा, कि रोजी-रोटी छोड़ो," ननकू ने चट टोका। "हफ्ता में एक दिन आओ, सब कुछ देखो। रस्ता बताओ। बाकी, ये लूँबर छंगा, इतवा, चँतुवा काहे को हैं ?" ननकू ने तीनों की ओर अँगुली से इशारा किया।

"हम हर तरह से साथ हैं," तीनों की आवाजें एक में मिल गयीं।

रामशंकर घर पहुँचा, तब तक दोपहरी हो गयी थी।

"तुम तो बचनुवा, एक दिन को आते हो, फिर भी सारे दिन गायब रहते हो," बाबा, रामअधार ने स्नेह-भरी शिकायत की।

"अब घर में ही रहूँगा बाबा, तुम्हारे पास।"

"अच्छा, अच्छा !" पं० रामअधार ने कुछ इस तरह कहा जैसे

समझ रहे हों, यह तो दिलासा देना है। फिर बोले, "जाओ, नहाओ, भोजन करो, फिर बातें करेंगे।

15

रणवीर सिंह की बीमारी के बाद से सुभद्रा देवी की दिनचर्या ही बदल गयी थी। चाहे जाड़ा हो या गर्मी, वह बड़े तड़के उठ जातीं, शौच के बाद स्नान करतीं और पूजा करने बैठ जातीं। पूजा के बाद एक थाली में दो रोटियाँ, थोड़ा भात और दाल नौकरानी को देतीं, गाय को खिलाने के लिए। इसके बाद पाँच कुँआरियों को भोजन करातीं। जब तक इतना काम पूरा न हो जाता, वह एक बूँद पानी तक न पीती थीं। थोड़ा-सा नाश्ता करने के बाद वह रणवीर सिंह के पास जा बैठतीं।

तीसरे पहर बहू उनके पास आती। थोड़ी देर तक दोनों बातें करतीं। इसके बाद बहू अपने दुमंजिले वाले कमरे में चली जाती और सुभद्रा देवी रणवीर सिंह के पास।

दो दिन से रूप कुमारी उनसे मिलने न आयी थी, इसलिए दूसरे दिन शाम को उन्होंने नौकरानी से पूछा, "बहूरानी की तबीयत खराब है क्या ?"

नौकरानी चुप रही।

"अरे, बोलती क्यों नहीं ?"

"सरकार, कल से···" आगे नौकरानी कुछ न कह सकी।

"कल से क्या ?"

"कल से साइत कुछ खाया-पिया नहीं।"

"क्यों ?"

नौकरानी कुछ न बोली।

सुभद्रा देवी को पता था कि महावीर सिंह एक दिन पहले लखनऊ गये हैं। वह उठी और धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़कर रूप कुमारी के कमरे के

पास पहुँची। रूप कुमारी की नौकरानी बाहर ही मिल गयी।

"क्यों, बहूरानी की तबीयत खराब है क्या ?" सुभद्रा देवी ने पूछा।

नौकरानी कमरे से थोड़ी दूर हटकर धीरे से बोली, "मौजी, पता नहीं बहूरानी कल से क्यों रो रही हैं। खाना जैसे का तैसा रखा रहा। न खाना खाया, न नास्ता किया, न दूध लिया।"

वह कमरे के अन्दर घुस गयी। रूप कुमारी बिस्तर पर औंधे मुंह लेटी थी।

सुभद्रा देवी उसके पलँग पर बैठ गयीं और पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा, "क्या बात है, बहूरानी ?"

सास की आवाज सुनकर रूप कुमारी हड़बड़ाकर उठ बैठी। साड़ी के पल्लू से आँखें पोंछी और पलँग से उतरकर नीचे खड़ी हो गयी।

सुभद्रा देवी ने देखा, बहू की आँखें लाल और सूजी हुई हैं। पलकें अब भी गीली।

"आओ, हमारे पास बैठो," बड़े प्यार से सुभद्रा देवी ने बहू का हाथ पकड़कर खींचा।

रूप कुमारी पलँग के पायताने एक कोने मे मुंह लटकाकर बैठ गयी।

"क्या बात है, बहूरानी ?"

रूप कुमारी चुप रही।

"बताओ ना !" सुभद्रा देवी ने स्नेह के साथ अपना हाथ उसकी पीठ पर रखते हुए कहा, "माँ हैं, तो हम हैं, सास हैं, तो हम हैं। बताओ, क्या तकलीफ है ?"

अब रूप कुमारी का बांध टूट गया। वह सुभद्रा देवी की जाँघ पर सिर रखकर सिसकने लगी।

सुभद्रा देवी ने पीठ सहलायी और बोली, "हमें बताओ, क्या बात है ? रोते नहीं।"

रूप कुमारी ने सिसकते हुए अड़ते-अड़ते कहा, "अम्मां साहिब, मुझे नाहक ब्याह कर लायी।"

इतना सुनना था कि सुभद्रा देवी सन्न रह गयी। "हम समझी नहीं, साफ-साफ बताओ।"

"खाना तो आपके आशीर्वाद से उस घर में भी मिलता था," रूप कुमारी ने कहा और रुक गयी।

"तो लाल साहब तुमसे बोलते नहीं?"

रूप कुमारी जब कुछ न बोली, तब सुभद्रा देवी ने ही बात आगे चलायी, "जब भी यहाँ रहते हैं, रनवास में भोजन करते हैं, रात यहीं रहते हैं। फिर?"

रूप कुमारी को लगा, अब साफ ही कहना पड़ेगा। उसने अटकते-अटकते कहा, "यह ठीक है।···लेकिन इसके आगे बस।···दोपहर खाना खाने के बाद···थोड़ा आराम।···रात इतनी पीकर आना···कि दो नौकर सहारा देकर लायें।···पलँग पर बेहोश लेटे रहना।"

सुभद्रा देवी थोड़ी देर तक सोचती रही, फिर पूछा, "तो अब तक तुम्हारे साथ कभी प्रेम नहीं दिखाया?"

रूप कुमारी चुप थी।

"बताओ ना! सरम काहे की?" सुभद्रा देवी चुमकारते हुए बोली। "आखिर, ब्याह होता ही है प्रेम करने के लिए।"

"लखनऊ में कोई राँड है, जहाँ जाना महीने में दो दफे।" रूप कुमारी एक साँस में कह गयी। "फिर मेरी किसे जरूरत?"

सुभद्रा देवी सोचती रही। कुछ क्षण बाद बोली, "बहूरानी, एक बात कहें। मरद होता है भौंरा। एक फूल के रस से उसका मन नहीं भरता। फिर रईसों के लड़के!" थोड़ा रुकने के बाद बताया, "तुम्हारे पापा साहब, हैं बड़े अच्छे, बहुत चाहते हैं हमें। लेकिन एक नाइन की लड़की पर मन मचल गया। आती थी यहाँ काम करने। दो साल तक उस पर लट्टू रहे। हम कुढ़ती रहीं, लेकिन हिम्मत नहीं हारी। आखिर उस छोकरी का गौना हो गया। सारी बात आयी-गयी हो गयी।" फिर बहू को समझाने के लहजे में बोली, "तुममें बहूरानी, रूप है, गुन हैं। तुम ऐसा बाँधो कि लाल साहब तुम्हारे आगे-पीछे घूमें।"

रूप कुमारी ने शिकायत की, "वह मैनेजर गुप्ता और बिगाड़ता है।"

"गुप्ता इन्तजाम अच्छा करता है। सारी रियासत को संभाले है।" सुभद्रा देवी बोली। फिर समझाया, "देखो बहूरानी, गुप्ता को हटा दें,

तो कोई और गुप्ता आ जायेगा। रईसों के आस-पास लगुवे-भगुवे रहते ही हैं। तुम चतुरता से अपनी चीज अपनी मुट्ठी में रखो।"

सुभद्रा देवी ने रूप कुमारी को अपने सामने भोजन कराया, पहला कौर अपने हाथ से खिलाया। थोड़ी देर तक वहीं बैठी रहीं, सान्त्वना दी, समझाया-बुझाया। इसके बाद यह कहकर उठीं, "तुम मजे से आराम करो। हम सब ठीक कर देंगी। यह गुर याद रखो—मरद को मुट्ठी में रखने में ही मेहरारू की चतुरता की परख होती है।"

16

रविवार को तीसरे पहर किशनगढ़ के दक्षिण के मैदान में बहुत बड़ी सभा हुई। करीब-करीब पूरे गाँव के लोग आये। बूढ़े रामखेलावन भी लाठी टेकते पहुँचे।

कानपुर से अशोक जी आये थे। अशोक जी ने अन्याय और अत्याचार का डटकर मुकाबला करने को ललकारा। लोगों ने जोरों से तालियाँ बजायीं। अशोक जी ने कांग्रेस का इतिहास बताते हुए कहा, "अन्त में जनसाधारण का राज होगा, मेहनत करने वाले किसानों, मजदूरों का।" यह सुनकर सब बहुत प्रसन्न हुए। परन्तु अशोक जी ने अपना भाषण कुछ इस प्रकार समाप्त किया कि सभा में आये सभी लोगों को लगा जैसे उन्होंने पहले जो कुछ कहा, बाद में उस पर पानी फेर दिया हो।

उन्होंने कहा, "कांग्रेस अन्याय के खिलाफ़ लड़ती है, लेकिन वह वाजिब हक सबका मानती है। गांधी जी ने जमींदारों से कहा था, तुम्हारे वाजिब हक के लिए मैं जिन्दगी-भर लड़ूँगा।" इसके बाद चेतावनी-सी दी, "इस समय हमें अंग्रेजी राज को मिटाना है, इसलिए पूरे देश में एकता होनी चाहिए। किसान-जमींदार, मजदूर-मिल मालिक, पढ़े-लिखे बाबू और अफ़सर सब मिलकर अंग्रेज का मुकाबला करें और उसे हटायें।"

अशोक जी ने भाषण जिस ढंग से समाप्त किया, वह रामशंकर को

रत्ती-भर भी अच्छा न लगा। "सब गुड़-गोबर कर दिया," उसने मन-ही-मन कहा। "किसानों, मजदूरों का राज बनाने और किसान-ज़मींदार-गंठजोड़ की बात एक ही सांस मे कह गये।" उसने अपने आप से पूछा, "क्या स्वराज्य का यही अर्थ है कि गोरे साहब की जगह, काले साहब को गद्दीनशीन कर दिया जाय? माना कल-कारखाने के मालिकों की भूमिका अभी है, वैसे यह ज़रूरी नही कि मिलें और फैक्टरियां निजी मालिकों के ही हाथों में रहें, लेकिन राजाओं, महाराजाओं, ज़मींदारों, ताल्लुकदारों, पराया रस चूसकर हरी रहने वाली इन अमर बेलों की भी क्या कुछ भूमिका है? क्या ये अंग्रेजी राज्य के पाये नही हैं? तब इनसे समझौता क्यों और किस प्रकार का?"

रामशंकर सबसे बाद में बोला। बोलने को खड़ा हुआ, तो अपने-आप से पूछा, क्या इन सब मसलों को सबके सामने रखूं? फिर सोचा, ये सब लोग बहुतेरी बारीक बातें समझ न सकेंगे। यहां आलोचना करना ठीक न होगा। उसने अपने भाषण में अशोक जी के कथन पर लीपा-पोती करने की कोशिश की, लेकिन सुनने वालों पर उसका प्रभाव शायद उलटा पड़ा।

अशोक जी तो उसी शाम कानपुर चले गये, परन्तु उनके भाषण ने रामशंकर का पिंड न छोड़ा। वह घर गया, तो सोचने लगा, शेर और बकरी को एक ही घाट पानी पिलाने का नुस्खा अनोखा है। सबका उदय सुनने में कितना लुभावना! लेकिन क्या ऐसा करना सम्भव है? एक ओर आसमान से बातें करती गढ़ी, दूसरी ओर इतवा, चैंतुवा की फूस की झोपड़ियां; उधर महावीर सिंह का वैभव, इधर चीथड़ों मे लिपटा पूरा गांव! और यह गढ़ी, यह शान-शौकत, सब कुछ है इन फटेहालों की मशक्कत की बदौलत।

रामशंकर सोमवार को रुक गया और छंगा, ननकू, शंकर, इतवा, चैंतुवा से मिला, लेकिन सब जगह एक ही प्रश्न उठा, "मिलकर रहने की बात, है तो बहुत अच्छी, पै यह तो बताओ, अन्याय कौन करता है?" नतीजा यह हुआ कि गांव-सभा न बन सकी।

अब रामशंकर को लगा, मैंने सभा मे सब बातों का खुलासा न करके भूल की थी।

उधर वकालत पास रामस्वरूप गुप्ता ने शतरंज के चतुर खिलाड़ी की भाँति एक नयी चाल चली।

महावीर सिंह जब लखनऊ से लौटे, मि० गुप्ता ने उनके सामने प्रस्ताव रखा, "गाँव के दक्खिन में जो मैदान है, उसे काँटेदार तारों से घेरकर उसमें जुआर बुवा दें, अपने जानवरों के चारे के लिए।"

"वह तो रहूनी है, गोचरभूमि," महावीर सिंह ने कहा। "पूरे गाँव के जानवर वहाँ इकट्ठे होते हैं।"

"लेकिन ज़मीन किसी के पट्टे में नहीं है।" मि० गुप्ता बोले।

"जब सारे गाँव की है, तब एक के पट्टे में कैसे हो सकती है?" महावीर सिंह ने तर्क पेश किया।

"पटवारी के खसरे में कहीं नहीं लिखा कि यह सारे गाँव की ज़मीन है या गोचरभूमि है।"

"उसमें क्या लिखा है?" महावीर ने पूछा।

"उसमें वह परती दिखायी गयी है," मि० गुप्ता ने बताया, "और परती का मतलब, ज़मींदार की।"

महावीर सिंह थोड़ी देर तक सोचते रहे, फिर बोले, "कानूनी ढंग से तो आपकी बात ठीक लगती है।"

"ठीक लगती है, नहीं साहब, ठीक है!" मि० गुप्ता ने ज़ोर देते हुए कहा। "हम उसे तारों से घेरकर उसमें जुआर बुवाकर कब्ज़ा करेंगे।" उन्होंने पूरी योजना समझायी और मुसकराते हुए महावीर सिंह की ओर ताकने लगे।

महावीर सिंह भी मुसकराये। "मान गये आपकी वकील बुद्धि का लोहा!"

"यह तो हुज़ूर की ज़र्रानवाज़ी है।" मि० गुप्ता ने नम्रता के साथ उत्तर दिया।

दो दिन के भीतर वह ज़मीन तारों से घेर दी गयी जो गाँव के जानवरों के खड़े होने की रहूनी थी, जहाँ कुछ घास उग आने पर इक्के-दुक्के जानवर, किसी की गाय या किसी बनिये का सद्दू घोड़ा चरा करता था। तीसरे दिन उस पर ज़मींदार के हल चलने लगे।

17

अशोक जी ने कोई दस बजे रात दरवाजे पर दस्तक दी। शीरीं शाम से ही प्रतीक्षा कर रही थी, फिर भी पूछा, "कौन ?"

"हम पुकारें औ खुले," अशोक जी ने मस्ती के साथ जवाब दिया।

शीरी ने दरवाजा खोल दिया और कनखियों से निहारते हुए कहा, "अच्छा, तो आज गालिब का अपने मन का अर्थ निकाल लिया।" और मुसकराते हुए जोड़ा, "वकील साहब की याददाश्त तो इतनी अच्छी, मगर बी० ए० में रायल डिवीजन ही ला सके।"

"क्योंकि किन्हीं मदर मेरी का साया न था," अशोक जी ने हँसते हुए उत्तर दिया।

"तो चूड़ियों का धोवन इतनी रात गये भी ?" शीरी जब कभी चाय के लिए पूछती, इसी ढंग से।

"यहाँ ना कहना सीखा नहीं।"

"वैसे विर्मा रेस्तोराँ झाँककर आये होंगे।"

"शक करना, दाई नेम इज वोमन ! (शक औरत का दूसरा नाम) !"

"शेक्सपियर की रूह पनाह माँगेगी इस तरमीम पर !" शीरीं चहकी, फिर कहा, "अब बताओ कुछ वहाँ के हाल ?"

"वहाँ के !" अशोक जी ने शीरी का हाथ थाम लिया था। वह आहिस्ते से शीरी को खींचते हुए पलँग पर बैठ गये। "वहाँ आपके भाई साहब···" और शीरीं की ओर छेड़ने वाली शरारत-भरी निगाह डाली।

"देखो, कित्ती बार कहा, मुझे मेरे हाल पर छोड़ो। न मेरे भाई, न बाप। मगर तुम मानते नहीं।" शीरी ने नकली नाराजगी दिखायी। "मान लो, मैं जमीन फोड़कर निकली।"

"अच्छा, माफ कर दो जनकदुलारी !" अशोक जी हँसने लगे।

"हँसो, जा भरकर हँसो," अशोक जी के कन्धे पर हाथ रखते हुए

शीरीं बोलीं। "देश के पूरे इतिहास में सीता जी और सावित्री के लिए मेरे दिल में खास, सबसे ऊँची जगह है।" और थोड़ा थमकर संजीदा स्वर में जोड़ा, "सीता जी की तरह काँटों-भरी राह पर तुम्हारे साथ हँसती हुई चल सकूँ, तो समझूँगी, उनकी सच्ची बेटी हूँ।"

अशोक जी भाव-विभोर हो गये और शीरीं को अपने और निकट कर लिया। वह ललक-भरे प्यार से शीरीं को निहारने लगे। फिर अपना हाथ शीरीं की पीठ की ओर से लाकर आगे बढ़ाया।

"यह वकील साहब की फ़ाइल नहीं, मेरा ब्लाउज है।" शीरीं ने उनके बढ़े हुए हाथ को थामकर कहा।

"थोड़ा सम्पादन कर रहे थे।"

शीरीं ज़ोर से हँस पड़ीं। "वकालत तक ही रहिये, नजीरों की बल्लियों से मुकद्दमे की टूटी थम्नियों को सहारा देने तक! इस क्यारी में नित नये फूल खिलाने पड़ते हैं।"

"नये फूल ही खोज रहे थे," अशोक जी के ओठ शीरीं के अधरों के बहुत निकट पहुँच गये। "ज्यों-ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि, त्यों-त्यों खरी निकरै सी निकाई!" उन्होंने कहा और ओठ शीरीं के ओठों पर रख दिये। बलिष्ठ भुजपाश में बँधी, स्पर्श-सुख-विभोर, शीरीं अपलक अशोक जी को देख रही थीं। कुछ क्षण बाद बोलीं, "छोड़ो, चाय बना लायें।"

लेकिन अशोक जी ने उनको और कसकर जकड़ लिया।

"हाथ-मुँह धोओ, कपड़े बदलो। यह भी कोई बात हुई!"

अशोक जी मौन थे जैसे सुध-बुध खो बैठे हों। आँखें शीरीं के चेहरे पर ऐसी गड़ी थीं, जैसे जनम-जनम की प्यासी हों और अगस्त्य मुनि की भाँति एक घूँट में रूप-सागर पीने को आतुर।

शीरीं हर इतवार को ग्वालटोली और चमनगंज में हरिजन और मुसलमान औरतों के क्लास चलाती थीं। वहाँ वह औरतों को दीन-दुनिया की बातें बताती, उनमें नये विचार भरने की कोशिश करतीं। लौटने पर अपने अनुभव अशोक जी को बतातीं। यह तो उनका सदा का नियम था। लेकिन इस इतवार को ग्वालटोली में उन्हें अनोखा अनुभव हुआ था।

यह बताने को शाम से ही उनके पेट में खिचड़ी-सी पक रही थी। अशोक जी के देर से आने के कारण रात में वह न बता सकीं।

सवेरे जब दोनों नाश्ता करने बैठे, तो शीरीं के ओठों पर अनोखी मुसकान देखकर अशोक जी पूछ बैठे, "आज कुछ नयापन जान पड़ता है ?"

शीरीं ने साड़ी के आँचल का छोर दाँतों से काटा और मुसकराकर गर्दन झुका ली।

"क्या कोई खास बात ?" अशोक जी अधीर हो उठे।

शीरीं के चेहरे पर लाली दौड़ गयी। वह अँगुलियाँ मरोड़ती हुई बोलीं, "कल दिलचस्प तजुर्बा हुआ, लेकिन कहते शरम लगती है।"

"कह जाओ, तीसरा तो कोई है नहीं," अशोक जी ने मस्ती के साथ उनका हौसला बढाया।

अब शीरीं कुछ अड़ते-अड़ते बोलीं, "कल ग्वालटोली क्लास लेने गयी। वहाँ एक औरत को देवी आयी हुई थीं। वह अमुवा रही थीं।"

"यह तो कोई अनोखी बात नहीं," अशोक जी ने टोक दिया।

"सुनो भी !" शीरीं ने कुछ तिनककर कहा।

"अच्छा सुनाओ।" अशोक जी कुछ इस प्रकार बोले जैसे बीच में टोककर उन्होंने भूल की हो।

"वहाँ एक अघोरी बाबा भी थे, बिलकुल नंगधड़ंग, लँगोटी तक नहीं।" शीरीं बिना साँस लिए बता गयीं। फिर मुँह के सामने आँचल की ओट कर जोड़ा, "औरतें उनके वहाँ माला चढ़ा रही थीं।"

इतना बताकर वह तेजी से पास के कमरे में घुस गयीं।

अशोक जी कुछ क्षण आँखें फाड़े शून्य में ताकते रहे, फिर बोले, "सुनो तो ! तुमने क्या किया था ?"

शीरीं ने कमरे से ही जवाब दिया, "हम भागकर एक कोठरी में घुस गयी थीं।"

"क्लास का क्या हुआ ?" अब अशोक जी हँस रहे थे।

"क्लास बाद में लिया। जादू-टोने, भूत-प्रेत पर दो घंटे समझाया।" शीरीं ने उत्साह-भरे गर्व के साथ बताया।

"अपना देश चिड़ियाघर है, शीरीं," अशोकजी ने हँसते हुए कहा। "यहाँ आदिम काल के नागा बाबा से लेकर मशीन युग के सूट-बूट धारी तक के दर्शन होते हैं।" फिर गर्दन हिलाते हुए बोले, "जादू-टोना, वेदान्त, रैशनलिज्म (तर्कसंगत विचार) और कम्युनिज्म—सब कुछ साथ-साथ चल रहे हैं।" और अपने प्याले की ओर देखकर कहा, "हमको एक प्याला चाय और दो। तुम्हारी चाय तो शायद ठंडी हो गयी।"

शीरीं आयी। अशोकजी के प्याले में चाय डाली। फिर अपने प्याले से ओंठ लगाये, तो चाय शरबत जान पड़ी। उसे नाली में उँड़ेलकर अपना प्याला भरा।

अब बातचीत ने नया मोड़ ले लिया।

शीरीं बोलीं, "गांधीजी हरिजन मसले के महज स्पिरिचुअल (आत्मिक) पहलू को लेते हैं। लेकिन सवाल सिर्फ़ मन्दिरों में जाने का नहीं है। यह सारा मसला सामन्ती ढाँचे का अंग है। जब तक उस ढाँचे पर चोट न करेंगे, इसे पूरी तरह से हल नहीं कर सकते।" फिर थोड़ा रुककर कुछ सोचने के बाद कहा, "दूसरे मुल्कों में सवाल गरीब-अमीर का उठता है। यहाँ जाति प्रथा कोढ़ पर खाज का काम कर रही है। ऊँची जाति का गरीब भी अपने को चमार-पासी के बराबर मानने को तैयार नहीं।"

अशोक जी ने चाय पीने के बाद बीड़ी सुलगा ली थी। वह बीड़ी के कश लेते हुए शीरीं की बात ध्यान से सुन रहे थे। थोड़ी देर तक कुछ सोचने के बाद बीड़ी का एक जोर का कश लिया, बीड़ी को आँगन में फेंका और धुएँ का एक बादल-सा छोड़ते हुए बोले, "गांधी जी आत्मिक या भावात्मक पक्ष को ले रहे हैं। जहाँ तक आर्थिक पक्ष की बात है, अभी हम अधिक कुछ कर नहीं सकते।"

"माना।" शीरीं ने कुछ ऐसे लहजे में कहा जैसे अशोक जी ने घिसे-पिटे तर्क का पुराना रिकार्ड बजा दिया हो। "सवाल मसले को अभी हल करने का नहीं, ठीक ढंग से रखने का है। अछूतों को हरिजन कहा गया। नतीजा क्या निकला? वही ढाक के तीन पात। इस लफ्ज का मतलब हो गया भंगी, चमार, पासी वगैरह। सबके दिमाग को माडर्न (आधुनिक)

बनाना होगा, साइंटिफिक (वैज्ञानिक)। साइंस की रोशनी ही सड़े-गले, पिछड़े विचारों का अँधेरा दूर कर सकती है।"

इसके बाद शीरी कुछ इस प्रकार खामोश हो गयीं जैसे उन्होंने सारी बात का निचोड़ पेश कर दिया हो।

अशोक जी कुछ देर तक ऐसे खोये-से बैठे रहे जैसे गहरा चिन्तन कर रहे हों। फिर सिर पर हाथ फेरा और बोले, "मतभेद की गुंजायश नहीं। सवाल है मसले के किस पहलू को पहले हाथ में लिया जाये।" साथ ही इतना और जोड़ दिया, "समाज-विज्ञान का किताबी ज्ञान काफी नहीं। पेचीदा समाज के मसले पेचीदा होते हैं। इसीलिए कोई सपाट हल खोज निकालना आसान नहीं।" इस टिप्पणी पर शीरी कुसमुसायीं और कुछ बोलने को हुईं। तभी घंटी बजी।

"लगता है, विमल है। आज एक जरूरी केस (मुकद्दमा) है। बैठकर तैयार करना है।" अशोक जी बोले और ज़ोर से आवाज़ दी, "आ जाओ, शुक्ला।"

विमल अन्दर आ गया। अशोक जी उसे लेकर बैठकखाने चले गये। शीरी आफ़िस जाने की तैयारी करने लगीं।

18

रहूनी और दक्खिन वाले जंगल की भनक रणवीर सिंह के कानों में पड़ गयी थी। वह सवेरे से बेचैन थे। कोई दस बजे सुभद्रा देवी आयीं, तो देखा, छटपटा रहे हैं।

"कुछ तकलीफ है क्या ?"

"अब तकलीफ़ की न पूछो। अब तो मर जाना अच्छा।" इतना कहकर रणवीर रोने लगे।

"हुआ क्या ?"

"अब बाकी क्या रह गया ?" रणवीर ने रुँधे गले से कहा। "लाल

साहब उस साले मनीजर की सलाह पर पाप के रास्ते चल पड़े हैं। रहुनी, गाँव-भर के गोरू-बछेरू खड़े होते थे। उसे ले लिया। वह तो पूरे गाँव की थी। जंगल जमींदारी का था, लेकिन बप्पा साहब के समय से पूरा गाँव लकड़ी काटता था, गोरू चराता था। इस गुप्ता ने हमें घसियारा, लकड़हारा बना दिया। दो पैसे की घास, चार पैसे की लकड़ियाँ बेचें।" और बड़े जोर से उसी तरह कराहे, जैसे रीढ़ में दर्द उठने पर कराहते थे। उनके मुँह से झाग निकलने लगा।

सुभद्रा देवी ने लपककर दवा की गोली निकाली और एक गिलास में पानी उँडेलकर गोली आगे बढ़ायी।

"फेंक दो नाबदान में!" रणवीर सिंह आँखें फाड़कर बोले। "कुल की इज्जत-मरजाद सब गयी, तो जिन्दा रहने से क्या?"

सुभद्रा देवी पलँग पर बैठ गयीं और सिर पर हाथ फेरने लगीं। "आप दवा लीजिये। हम सारा बंदोबस्त रद्द करा देंगी।" सुभद्रा देवी की आँखों से आँसू बह रहे थे।

रणवीर सिंह उन्हें रोती देख कुछ शान्त हुए। दवा खा ली और बोले, "इस गुप्ता को हटाओ।"

"अच्छा!"

सुभद्रा देवी ने दोपहर के भोजन के बाद पति के मन की व्यथा बताते हुए महावीर सिंह को समझाया, लेकिन महावीर के उत्तर ने उनका मन मसल दिया।

"अम्मा साहेब, मैं सब छोड़-छाड़ के जोगी-जती हो जाऊँगा। रोज-रोज की दाँता-किलकिल मेरे बस की नहीं। हम गैरकानूनी कुछ नहीं कर रहे। पापा साहब दकियानूसी विचार लिए बैठे हैं।" और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना खट-खट सीढ़ियाँ चढ़ते हुए अपने कमरे की राह ली।

सुभद्रा देवी शून्य-दृष्टि से एकटक बेटे की पीठ ताकती रह गयीं। रूप कुमारी ने महावीर की जो शिकायत की थी, वह बात भी उनके मन में थी। उन्होंने सोचा था, लगे हाथ बहू के बारे में भी समझाऊँगी। लेकिन बेटे ने बाप को जिस तरह याद किया, उससे उनकी आशाओं पर

पानी फिर गया। "जब उनको दकियानूस कहता है, तब हमारी क्या बिसात ?" उन्होंने मन-ही-मन कहा। "वह ठीक कहते थे, 'कुल के सब अदब-कायदे पैरों तले रौंद डाले, लाल साहब ने।'...वह बप्पा साहब के सामने कभी गर्दन न उठाते थे, और यह कल का छोकरा...उनको दकियानूस कहता है।...हमसे ऐंठकर चला गया, जैसे हम कोई नौकरानी हों ! ...वाह री नयी बिद्या !"

सुभद्रा देवी के मन में कसैलापन-सा, कड़वाहट-सी भर गयी। क्या इन दोनों छोरों को मिलाया जा सकता है ? यह प्रश्न उनके मन में बड़ा आकार लेकर उभरा।

रहूनी छिन जाने पर रामजोर सिंह के चौपाल में पूरे गाँव की पंचायत बैठी। इसमें रामखेलावन और प० रामअधार को भी लाया गया।

रामखेलावन बोला, "जब हम छोटे-छोटे गदेल थे, वहाँ कबड्डी खेलते थे। वह पुस्तैनी रहूनी है। सबके गोरू वहाँ खड़े होते थे। फिर जंगल चरने जाते थे। ठीक कहा न पंडित बाबा ?"

पं० रामअधार ने सिर पर हाथ फेरते हुए उत्तर दिया, "यह तो बिलकुल सत्य है। वह पूरे गाँव की रहूनी माने गोचरभूमि है। कानून तो हम जानते नहीं, लेकिन खेलावन भैया की तरह हम भी बचपन से देखते आये हैं, वह रहूनी थी।"

"तो आखिर किया क्या जाय ?" छंगा ने पूछा।

"हम बतावें साफ-साफ ?" ननकू सिंह कड़ककर बोला।

"हाँ, हाँ," कई आवाजें आयीं।

"तो जर, जमीन, जोरू उसकी, जिसके हाथ में बम भोलेनाथ !" ननकू सिंह दहाड़ा और 'बम भोलेनाथ' कहते हुए अपनी लाठी को थोड़ा ऊपर की ओर उठा दिया।

"फौद्दारी से जमीन पर कब्जा कैसे होगा ?" रामखेलावन ने पूछा।

"खेलावन काका," ननकू सिंह ने पहले की तरह ही कड़कीले ढंग से उत्तर दिया, "जब तक लहासें न गिरेंगी, कब्जा न मिलैगा। रोमे राज नही मिलता।" उसकी आँखें चमक रही थीं।

पंचायत दो घण्टे तक हुई। सबने माना कि अन्याय हुआ है। जमीन पूरे गाँव की है। उस पर जमींदार ने जबर्दस्ती कब्जा कर लिया है। लेकिन इस कब्जे को कैसे खत्म करें, इस पर सब एक राय न हो सके।

ननकू सिंह, शंकर सिंह और छंगा का कहना था, "कब्जा बिना ताकत के नहीं मिल सकता।" उधर बूढ़े लोग कहते थे, "हाथी-भेड़े की लड़ाई नहीं हो सकती। हमें कोई और रास्ता निकालना चाहिए।"

रामशंकर शनिवार की शाम को आया। वह ननकू सिंह के चौपाल में छंगा, ननकू और शंकर को मिला और कहा, "मैं इतवार को ही कानपुर जाता हूँ। वकीलों से राय लूँगा। फिर सोमवार को आकर बताऊँगा।"

"वकील कब्जा दिला देंगे, बच्चा ?" ननकू सिंह ने पूछा। "तुम कलट्टर के पास अर्जी देने गये थे," ननकू कहे जा रहा था, "माना तुम बरखिलाफ़ थे। तुम कहते थे, इससे कुछ फायदा नहीं। कलट्टर-जिमींदार चोर-चोर मौसेरे भाई। मुंसी खूबचन्द की सलाह पर भगत, इतवा, चैतुवा खूरी तमतमा रहे थे। सोचा, कलट्टर बिकरमाजीत है।" साँस लेने को ननकू रुका, फिर बोला, "माना, तब किसान साथ न थे, पै निकास्ता कुछ निकरा अर्जी-फरियाद स ?" और दाहिना हाथ आगे बढ़ाकर अजीब ढंग से हिलाया, "वकील, अदालत, कानूनी काट-पेंच ! मिलैगा कदुवा !"

"अब कनून-फनून से काम नहीं चलने का," शंकर सिंह बोला। छंगा ने भी हामी भरी।

"फिर भी सलाह लेनी चाहिए," रामशंकर ने कहा।

"लो सलाह।" ननकू ने बेमन कह दिया।

19

कानपुर से लौटने पर रामशंकर ने सवेरे घूम-घूम कर लोगों को समझाया। बहुत समझाने-बुझाने के बाद ननकू सिंह ने कहा, "कहते हो, तो हम भी निसान अँगूठा मार देंगे। पहिले अर्जी-फरियाद से कुछ मिल गया है, बाकी अब मिल जायगा।"

शंकर सिंह, छंगा, इतवा और चैतुवा की भी यही राय थी।

"कलट्टर के पास पहिले दरखास दी, क्या हुआ?" इतवा ने पूछा।

"एक दफे और देख लो," रामशंकर बोला।

आखिर कोई तीन सौ लोगों के दस्तखतों या निशान अँगूठों से भरी अर्जी रामशंकर ने अशोक जी को दी। वह कलक्टर के आफ़िस गये और अर्जी पेश की, जबानी भी उन्हें मामला समझाया।

कलक्टर ने आश्वासन दिया, "हम फौरन कारवाई करेंगे।"

कलक्टर ने बहुत जरूरी की मुहर लगवाकर अर्जी परगना अफसर के पास भेजवायी। साथ ही यह भी लिख दिया, "इस पर फौरन वाजिब कार्रवाई की जाय।"

परगना अफसर को ज्यों ही अर्जी मिली, उन्होंने भी बहुत जरूरी की मुहर लगवाकर अर्जी तहसीलदार के पास भिजवा दी। अपनी तरफ़ से लिखा, खुद मौके पर जाकर जाँच कीजिये और जल्द-से-जल्द रिपोर्ट दीजिये।

तहसील के एक सिपाही को लेकर तहसीलदार गाँव पहुँचा। एहतियात के तौर पर उसने हलके के थानेदार को भी इत्तिला कर दी थी। थानेदार पुलिस के दो सिपाही लेकर गाँव पहुँच गया।

तहसीलदार मिडिल स्कूल में रुका और तहसील के सिपाही से कहा, "जमीदार या उनके मैनेजर को बुलवाओ, पटवारी को भी। वह अपने काग़जात साथ लाये।"

जब दोनों आ गये, सब लोग मौका देखने चले। थानेदार और पुलिस के दोनों सिपाही भी साथ थे।

तहसीलदार जाँच करने आया है, यह खबर गाँव-भर में फैल गयी

थी। कुछ लोग मैदान के पास इकट्ठे हो गये थे। रामशंकर भी उनके साथ था।

तहसीलदार आया। उसने घूम-फिर कर सारी जमीन देखी। इसके बाद पटवारी को हुक्म दिया, "नापो, तारों से घिरी जमीन और गाँव के आखिरी मकान के बीच कितना फासला है।"

पटवारी ने जरीब निकाली। तहसील के सिपाही ने नापने में मदद की।

"हुजूर, बीस गज से कुछ ज्यादा," पटवारी ने बताया।

तहसीलदार ने लिख लिया।

"पूरब, पच्छिम वाले गलियारे की चौड़ाई नापो," तहसीलदार ने कहा।

पटवारी ने नापने के बाद कहा, "हुजूर, दस-दस गज।"

तहसीलदार ने यह भी लिख लिया।

"अब दो बैलगाड़ियाँ मँगवाओ," तहसीलदार ने हुक्म दिया।

पटवारी चकराया, किससे कहे। वह रामशंकर के पास आया और धीरे-से मिन्नत-सी की, "छोटे पंडित, दो बैलगाड़ियाँ मँगवा दो।"

"सारा खेल हमारी समझ में आ गया है," रामशंकर खीझकर बोला। "फिर भी नाटक पूरा तो होना चाहिए! अभी मँगवाते हैं।"

रामशंकर ने छंगा से कहा, तो छंगा चिढ़कर दाँत पीसते हुए बोला, "यह नाटक है, छोटे पंडित। इसमें क्या धरा है?"

सब कुछ देखकर रामशंकर इस नतीजे पर पहले ही पहुँच गया था। अब वह सोच रहा था जैसे अशोक जी की सलाह पर कानूनी पैंतरेबाजी का रस्ता अपनाकर उसने भूल की थी। फिर भी उसने छंगा से शान्त स्वर में कहा, "छंगा भैया, हम भी समझते हैं कि यह सब दिखावा है। तो भी इतनी बात हमारी मान ले।"

छंगा बेमन गया और अपनी बैलगाड़ी खुद जोतकर ले आया। बसन्ता से कहकर उसकी गाड़ी बसन्ता के बेटे बुधुवा से जुतवा लाया।

जब दोनों बैलगाड़ियाँ आ गयीं, तहसीलदार ने कहा, "अब पूरब वाले गलियारे से दोनों गाड़ियों को बिलकुल बराबर में रखकर चलाओ।"

"अरे निकल जायेंगी साहेब," छंगा ने तैश के साथ उत्तर दिया।

"निकाल के दिखाओ।"

दोनों ने अपनी-अपनी बैलगाड़ियों को बिलकुल बराबर पर रखकर हांका। बैलगाड़ियाँ बड़ी आसानी से निकल गयीं। फिर यही क्रिया पश्चिम वाले गलियारे में दुहरायी गयी।

तहसीलदार, थानेदार, पटवारी, और दूसरे सरकारी कर्मचारी वापस मिडिल स्कूल चले गये।

इन सबके जाने के बाद ननकू सिंह ने लपककर रामशंकर का हाथ पकड़ा और बोला, "बच्चा रामसंकर, अब अर्जी का फैसला सुना दें, कलट्टर से पहिले।" और रामशंकर के किसी उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना कहने लगा, "अर्जी खारिज। जमीन का मालिक जमींदार। गाँव वालों के निकास को जगह छोड़ दी गयी है। अब गाँव वाले निबुआ-नोन चाटें।" और ठठाकर हँसा।

रामशंकर कुछ देर तक चुप रहा। इसके बाद बोला, "काका, तो तुम जो रस्ता लेना चाहते हो, उसे पकड़ने में रामसंकर पीछे न रहेगा। हाँ, वह रस्ता ढंग से पकड़ना होगा, खूब सोच-समझ के। जोस में आकर कुछ करने से फायदा नहीं, नुकसान होगा।"

वहाँ इकट्ठा सब लोग अपने-अपने घर चले गये। यह बात सब समझ गये कि इस जमीन पर जमींदार का कब्जा बहाल रहेगा।

20

जमींदार और किसानों में रस्साकशी हो रही थी। किसान कुछ हलके पड़ रहे थे। लेकिन इसी बीच कुछ और हुआ। रामशंकर पौ फटते गाँव पहुँचा। साइकिल चौपाल के चबूतरे से टिकायी, अँगोछे से मुँह की धूल झाड़ी, फिर पैर पोंछे और लपका छंगा के घर की तरफ। छंगा से इतवा और चेतुवा को बुलवाया। इसके बाद चारों चल पड़े गाँव में

मनादी करने। इतवा डुगडुगी बजाता, रामशंकर एलान करता, "अशोक जी चुनाव मे जीत गये। गुमान सिंह की जमानत जब्त।"

डुगडुगी का बजना और रामशकर की आवाज़ सुनकर ननकू सिंह अपने चौपाल से मुसकराता हुआ लपका, "तो हवा हो गया गुमान सिंह का गुमान!"

"काका, भला साँप के आगे दीया बरा है?" चैतुवा बोला। "हियाँ पूरा गाँव, हुआँ टुटरूँ-टूँ गढ़ी औ' कुछ लगुवा-भगुवा।"

सब हँसने लगे।

"अरे पूरे सूबे में अंग्रेज़ के पिट्ठू धूल चाट रहे हैं।" रामशंकर खुशी से फूला न समाता था। "अब तो प्रान्त में कांग्रेस की सरकार बनेगी, अपने मंत्री होंगे।"

यह सुनकर सबकी आँखें चमकने लगी। ननकू सिंह का दाहिना हाथ मूँछों पर चला गया।

"अब ज़मीदारों को आटा-दाल का भाव मालूम होगा।" रामशंकर ही फिर बोला।

"सबक सिखाओ महावीर छोकरे को औ' गुप्ता मनीजर को।" ननकू सिंह ने दाँत पीसकर कहा।

मनादी के बाद पूरे गाँव मे उत्साह की लहर दौड़ गयी।

असेम्बली के चुनाव मे अशोक जी की जीत की खुशी में किशनगढ में सभा हुई। पूरा गाँव दक्खिन वाले मैदान के बीस गज चौड़े घरौंदे मे उमड़ पड़ा। अशोक जी ने भाषण देते हुए कहा, "मेरी जीत आप सबकी, जन-साधारण की जीत है।" और घोषणा की, "भाइयो, हम कुर्सियो से चिपकने नही गये। हम ज़मीदारो के जुल्म खत्म करेंगे। आपकी रहनी आपको दिलवायेंगे। आपके जंगल मे आपका कब्जा करवायेंगे। अगर हम कुछ न कर सके, तो असेम्बली छोड़कर फिर आपके बीच आ जायेंगे। हम आपके हैं, और आपके रहेंगे।"

लोगों ने खूब ज़ोर से तालियाँ बजाकर अशोक जी की घोषणा का स्वागत किया।

रात में अशोक जी रामशंकर के घर रुके। रामशंकर ने बताया, "अशोक जी, अब मैंने तय कर लिया है, यहीं रहकर किसानों में काम करूँगा। इस आन्दोलन को कामयाबी तक पहुँचाने के लिए यह जरूरी है।"

अशोक जी बोले, "बहुत ठीक फैसला किया है तुमने। यहाँ एक अनुभवी आदमी इनकी रहनुमाई के लिए चाहिए। तुम जरूर इन्हीं के बीच काम करो।" फिर बहुत अड़ते हुए सकोच के साथ कहा, "देखो दुबे; तुमको मैंने हमेशा छोटा भाई माना है। मैं जब तक मेम्बर हूँ, तुम्हारे जेब खर्च के लिए चालीस रुपये महीना देता जाऊँगा।"

रामशंकर कुछ अजीब पशोपेश में पड़ गया। वह अशोक जी को एकटक ताकने लगा। वह स्वीकारते भी हिचक रहा था और नकारते भी।

"तुम अजीब ढंग से क्यों ताक रहे हो?" अशोक जी बोले और समझाने लगे, "राजनीति करनी है, तो कुछ सहारा चाहिए। कबीर बहुत पहले कह गये हैं: 'कबिरा छुधा है कूकरी, करति भजन मे भंग। वाको टुकरा डारि दे, करिले भजन निसंग।' तो भैया, रूखी-सूखी, दाल-रोटी का अवलम्ब तो चाहिए।" थोड़ा रुककर, अब "गाँव-सभा बनाओ और आन्दोलन को तेज करो।"

संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध में कांग्रेसी मंत्रिमंडल बनने से अन्याय के आतप से झुलसे किसानो में आशा की नयी कोंपलें फूटीं; लात-जूते खाने वाले गोरुओं की तरह बेगार में जुते रहने वाले चमार-पासियों ने कुछ राहत की साँस ली। किशनगढ़ मे गाँव-सभा बन गयी और उसने सबसे पहला कदम बेगार बिलकुल बन्द कराने का उठाया।

जमींदार के सिपाही मेहनत-मजदूरी करने वालो के घर बुलाने जाते। वे जाने से साफ इनकार कर देते। सिपाहियों की हिम्मत न थी कि वे जबर्दस्ती पकड़ ले जायँ। मि० गुप्ता ने कह दिया था, "भाई, समय देखकर चलो, नरमी से काम लो।"

इसके बाद बनियों, हलवाइयों और दूसरे दूकानदारों ने जमींदार को पुर्जे पर सामान देना बन्द कर दिया। "चाहे दो पैसे का नमक लेना हो

या दस रुपये की चीनी, नकद पैसा दो, तभी सौदा देंगे।" यह था दुकानदारों का टका-सा जवाब।

एक दिन भगत सवेरे-सवेरे रामशंकर के घर गया और कहा, "छोटे पंडित, बेगार गयी, नगदी सौदा होने लगा। अब पुराना हिसाब भी करवा दो ना!"

"वह भी हो जायेगा," रामशंकर पूरे विश्वास के साथ बोला। थोडा सोचकर, "कल बाजार का दिन है। तुमको फुर्सत नहीं। परसों तीन-चार जने चलो हमारे साथ। गुप्ता मैंनेजर से मिलेंगे।"

तीसरे दिन भगत और तीन दूसरे दुकानदारों को साथ लेकर रामशंकर कोई आठ बजे सवेरे गढ़ी गया। सिपाही से कहा, "जाकर मनीजर को बताओ, हम मिलने आये हैं।"

सिपाही ने लौटकर कहा, "चलौ छोटे पंडित, बुलाते हैं।"

वह गया और मैंनेजर हाथ जोडकर बोले, "परनाम दुबेजी, आइये। आप लोग भी आ जाइये।"

रामशंकर एक कुर्सी पर बैठ गया। उसके साथ के लोग पास ही रखी बेंच पर।

"कहिये, कैसे कष्ट किया आज सवेरे-सवेरे?" मि० गुप्ता ने बड़ी नम्रता से पूछा।

"इन लोगों का और दूसरे दुकानदारों का पुराना हिसाब है। वह कर दीजिये। कहते हैं, कई साल का बकाया है।"

"कई साल का!" मि० गुप्ता अनजान की तरह बोले।

"हाँ साहब," भगत ने कहा, "किसी का दो साल का, किसी का तीन का।"

"तो सब हो जायेगा," मि० गुप्ता ने कहा। "ड्योढ़ी के कारिन्दा को अभी कहे देते है। आप लोग आते जाइये, हिसाब करते जाइये।" और अर्दली को हुक्म दिया, "ड्योढी के कारिन्दा को बुलाओ।"

कारिन्दा के आने पर मि० गुप्ता कुछ आश्चर्य के साथ बोले, "भाई, इनका कहना है, पुराना हिसाब साल-डेढ़ साल का बकाया है। सबका हिसाब कर दो। आज से लग जाओ।"

"बहुत अच्छा," कारिन्दा बोला।

"और कोई काम मेरे लायक ?" मि० गुप्ता ने रामशंकर से पूछा।

"और बातें फिर करेंगे। अभी तो यह मसला फौरी था।" रामशंकर ने रुखाई के साथ उत्तर दिया और खड़ा हो गया। मि० गुप्ता ने खड़े होकर रामशंकर से हाथ मिलाया। भगत आदि ने मैनेजर से 'जय रामजी' की जिसका उन्होंने 'जय रामजी' कहकर उत्तर दिया।

21

महावीर सिंह अपने प्राइवेट कमरे में बैठे थे। उनकी खुशी का ओर-छोर न था। वह कभी उठकर तेज डग भरते और सिगरेट का जोर का कश लेते, कभी आरामकुर्सी पर अधलेटे होकर अपने-आप कहते, "कुत्ते को घी हजम नहीं होता।" और मुसकराने लगते।

इतने में मि० गुप्ता अन्दर आये और मेज पर उड़ती नजर डालकर बोले, "सीखी कबाब-भरी इतनी बड़ी प्लेट, जानीवाकर की बोतल, जैसे हुजूर कोई पार्टी देने जा रहे हों।"

"पार्टी भी हो सकती है, लेकिन यहाँ नहीं, कानपुर या लखनऊ में," महावीर सिंह ने हँसकर उत्तर दिया। फिर सिर हिलाते हुए बोले, "मैनेजर साहब, हमारी खुशी की न पूछिये। ये कांग्रेसी साले चले थे राज करने। लड़ाई क्या छिड़ी, पाँसा ही पलट गया। वो दुकान अपनी बढ़ा गये। हिटलर ने हमला किया यूरुप पर, लेकिन गोला गिरा कांग्रेसी वजारतों की मँड़ैया पर। एक-एक बल्ली टूटकर बिखर गयी।"

मि० गुप्ता भी हँसने लगे। "गले में फंदा-सा पड़ा था। समझ में न आता था, कैसे छुड़ायें। भगवान् ने मुँह माँगी मुराद पूरी की।" उन्होंने कहा और कुर्सी पर बैठकर सिगरेट सुलगायी।

इसके बाद बोतल खुली। दोनों ने प्याले उठाये। मि० गुप्ता ने अपना प्याला महावीर सिंह के प्याले से छुवाया और बोले, "कांग्रेसी

मंत्रिमंडल के जाने की खुशी में जामे सेहत।"

महावीर सिंह हँसने लगे। "जामे सेहत या जामे नेजात?"

"जामे नेजात नहीं, जामे ज़िन्दगी," मि० गुप्ता बोले।

दोनों ने ठहाका लगाया।

सीखी कबाब हाथ में लेते हुए महावीर सिंह ने पूछा, "अब अगली चाल क्या होगी, मैनेजर साहब?"

मि० गुप्ता प्याले का शेष घूँट पीकर मूँछों पर हाथ फेरते हुए हँसकर बोले, "अब तो पौ बारह है, साहब। लेकिन···" और वह चुप हो गये।

"यह लेकिन क्या?" महावीर सिंह ने उत्सुकता के साथ पूछा।

"लेकिन चाल बहुत सोच-समझकर चलनी होगी," मि० गुप्ता ने कहा। "एक बात तय समझिये।"

महावीर सिंह बड़े ध्यान से सुन रहे थे।

"कांग्रेसी फिर हुकूमत बनायेंगे।"

यह सुनना था कि महावीर सिंह ने आँखें फाड़कर मि० गुप्ता को देखा।

"चौंकिये नहीं।" मि० गुप्ता ने समझाया। "पहले लगता था, कांग्रेस खतम। मेरा भी यही खयाल था। मगर इन साले टुकाचियों के सामने बड़े-बड़ों को मुँह की खानी पड़ी। बात है वोट की। वोट हैं किसानों, मज़ूरों, मरभुखों के ज़्यादा। इसलिए कल नहीं तो परसों यही साले फिर गद्दी पर आयेंगे।"

महावीर सिंह की खुशी पर पाला पड़ गया।

"तब?" उन्होंने बेबसी के स्वर में पूछा।

"तो बीच में जो वक्त मिला है, उसे गँवायें नहीं," मि० गुप्ता ने समझाया। "ज़्यादा-से-ज़्यादा बटोर लें।"

"मैं आपकी बात बिलकुल नहीं समझा।"

"मैं समझाता हूँ," मि० गुप्ता ने धीरज के साथ कहा। "ज़मींदारी तो जायेगी। आप जितनी ज़्यादा-से-ज़्यादा ज़मीन अपने नाम इस बीच कर सकें, वह आपकी।" फिर थोड़ा और स्पष्ट किया। "अपने नाम से मेरा मतलब, घर के हर मेम्बर के नाम अलग-अलग। इसके अलावा

विश्वासी नौकरों के नाम।" मि० गुप्ता बहती गंगा में हाथ धोना चाहते थे। वह सोच रहे थे कि इस छोकरे को फुसलाकर सौ-दो सौ बीघा अच्छी जमीन अपने नाम करा लें। इसीलिए 'विश्वासी नौकरों के नाम' जमीन लिखने की बात उन्होंने सुझायी। फिर सोचा, महावीर सिंह कहीं भड़क न जाय, इसलिए थोड़ा रुककर जोड़ा, "नौकरों के नाम जो जमीन लिखी जाय, उसकी कीमत के बराबर के इन्दुल तलब रुक्के उनसे लिखा लें। उन्हें हर तीन साल में बदल देंगे। इस तरह वे लोग अँगूठे के नीचे रहेंगे।" और महावीर सिंह की ओर इस तरह देखने लगे, जैसे कह रहे हों, "यह वकील की खोपड़ी है।"

"हाँ, बात तो समझ में आती है," महावीर सिंह बोले, "लेकिन यह आपने कैसे मान लिया कि कांग्रेसी आयेंगे और जमींदारियाँ चली जायेंगी?"

"मैं पहले ही बता चुका हूँ," मि० गुप्ता ने गंभीरता के साथ कहा। "हवा का रुख पहचानिये। कांग्रेस को गद्दी पर आने से कोई नहीं रोक सकता।" उन्होंने अपने प्याले से मेज ठोंकी। "और तेल देखिये, तेल की धार देखिये। कांग्रेस आयी नहीं कि जमींदारियाँ गयीं।" इतना कहकर वह महावीर सिंह की ओर एकटक ताकने लगे।

महावीर सिंह थोड़ी देर तक मि० गुप्ता को विमूढ़-से निरखते रहे, फिर बोले, "लेकिन वह परतापगढ़ वाले बुजुर्ग तो लखनऊ-सम्मेलन में कह रहे थे, जब तक राना परताप की सन्तानें हैं, देखें कौन जमींदारियाँ छीनता है। खून की नदियाँ बह जायेंगी, महाभारत हो जायेगा।"

मि० गुप्ता ने हँसते हुए उत्तर दिया, "ये बाजू मेरे आजमाये हुए हैं। जोर कितना है, यह तो सम्मेलन के प्रस्ताव ने बता दिया—हाईकोर्ट में मुकदमा दायर करेंगे। अगर हार गये, तो प्रीवी कौंसिल जायेंगे।" थोड़ा रुके और टिप्पणी की, "मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।"

"तो प्रीवी कौंसिल कुछ न करेगी?"

"छोड़िये भविष्य की बात। जो मौका आज हाथ लगा है, उसे न खोइये।"

महावीर सिंह गंभीर हो गये। थोड़ी देर बाद बोले, "तो पोख्ता स्कीम

बनाइये।"

"स्कीमें तो इस खादिम की खोपड़ी में रहती हैं," मि० गुप्ता ने अपना प्याला भरते हुए कहा और समझाने लगे कि कहाँ की ज़मीन किसके नाम की जाये।

22

मैनेजर गुप्ता ने काम बड़ी तेज़ी से शुरू कराया। जंगल काटने के लिए बाहर से मज़दूर लाये गये। यह सब देखकर किसानों में हलचल मच गयी। रामशंकर साइकिल पर भागा-भागा कानपुर गया, अशोक जी से मिलने। अशोक जी ने सब कुछ सुनने के बाद समझाया, "घबराओ नहीं। ज़मींदारी खत्म करने का कानून बनाते समय ऐसी व्यवस्था रखेंगे जिससे यह सारी जमीन किसानों को वापस मिल जाय।"

रामशंकर को सन्तोष न हुआ। वह गर्दन हिलाते हुए बोला, "यह तो कब मरी सास, कब आये आंस वाली बात हुई।"

"लेकिन इस वक्त क्या हो सकता है?" अशोक जी ने उत्तर दिया और फिर समझाने लगे, "मुकदमा दायर किया जाय, तब भी कई साल तक चलेगा, दीवानी जो ठहरा। ज़मींदार को उसके पहले रोक नहीं सकते।" थोड़ा रुकने के बाद बोले, "इतना तय समझो, कांग्रेस सरकार फिर बनेगी। तब पाई-पाई का हिसाब चुकता कर लेंगे।"

"यह तो कोई बात न हुई। घड़ी मे घर जले, ढाई घड़ी भद्रा!" रामशंकर कुछ तैश के साथ बोला।

"तो बताओ, क्या करें?" अशोक जी का भी स्वर थोड़ा ऊँचा हो गया।

"यही सलाह लेने तो मैं आया हूँ।" रामशंकर पंचम में बोला।

"तुम तो चाहते हो, फौजदारी की जाय। लेकिन उससे काम बनने का नहीं, बिगड़ ज़रूर जायेगा। गाँव तबाह हो जायेगा।" अशोक जी के स्वर

में तीखापन था।

"मैं फ़ौजदारी कराना चाहता हूँ, यह नतीजा आपने कैसे निकाला ?" रामशंकर ने अशोक जी के मुँह की ओर सीधे ताकते हुए पूछा।

अशोक जी अब थोड़ा नरम पड़े और समझाने के स्वर मे बोले, "मेरे भैया, आन्दोलन का कोई नक्शा बनाना होता है। मामला सिर्फ किशनगढ का नहीं है। पूरे प्रान्त में यही हो रहा है। जमींदार समझ गये हैं, वे चन्द दिनों के मेहमान हैं। जो हो सके, बटोर लें।" जरा देर चुप रहे, फिर बोले, "हम ऐसा होने न देंगे। लेकिन जल्दबाजी करने से तो काम न चलेगा। जाओ और सबको ठीक से समझाओ।"

रामशंकर अशोक जी के यहाँ से विदा हुआ। साइकिल का हैंडिल पकड़े तंग गली से होकर पैदल ही जा रहा था। मन मे जैसे कोई कह रहा हो—घड़ी में घर जले, ढाई घड़ी भद्रा। आखिर, जाकर क्या समझाऊँ ? वह आहिस्ते-आहिस्ते चल रहा था और मन में ये विचार तेज़ी से घुमड़ रहे थे। बगाली मोहाल आया, तो एक चायघर के दरवाजे पर साइकिल टिकाकर वह अन्दर गया। "एक कप चाय," अनमने ढंग से रामशंकर ने कहा। मन को अभी भी वही विचार मथ रहे थे।

चाय पीते हुए उसने सोचा, किससे सलाह ली जाय ?

अचानक उसे अपना सहपाठी विमल शुक्ल याद आया। विमल वकालत करता था—वकालत कम, राजनीति अधिक।

रामशंकर ने चाय के पैसे दिये और साइकिल पर विमल के घर की ओर बढ़ा। घर पहुँचने पर पता चला, वह अभी-अभी कचहरी चले गये।

रामशंकर वहाँ से कचहरी को लपका और कोई आधे घंटे तक इधर-उधर ढूँढने के बाद विमल को खोज निकाला। विमल ने रामशंकर को गले लगाया। "दोस्त, इतने दिनों बाद !" दोनों करीब एक साल बाद मिले थे।

"सब कुछ बताऊँगा," रामशंकर बोला।

"मालूम है, तुम गाँव मे किसानों में काम करते हो। आज कैसे भूल पड़े ?"

"टाइम हो, तो बातें करूँ ?" रामशंकर ने पूछा।

"यहाँ टाइम ही टाइम है," विमल ने हँसकर उत्तर दिया। "हम उन वकीलों में थोड़े है जिन्हें मुवक्किल घेरे रहते है। हमें तो प्रयाग राज के पंडो की तरह मुवक्किलों को बुलाना पड़ता है, आओ जजमान, हमारे घाट।" और ज़ोर से हँसने लगा।

"तो सुनो!" रामशंकर हँसते हुए बोला।

"आओ, चाय पियें। चाय के साथ बात जमेगी।"

और दोनों पास के रेस्तरां में जाकर कोने के एक केबिन में बैठ गये।

"बोलो, क्या खाओगे?" विमल ने पूछा। "इतना तय है, अभी कुछ खाया न होगा।" और हँसकर कहा, "संकोच न करना, निठल्ले वकील की जेब काटने मे।"

रामशंकर हँसने लगा। "मँगा लो टोस्ट।"

विमल ने चार टोस्ट और हाफ सेट चाय का आर्डर दिया।

बेयरा के जाने पर विमल ने कनखियों से पूछा, "तो रामसंकर, चौपाया बन गये या नही?"

रामशंकर हँसने लगा, "साथी, यहाँ दो पाया रहने में ही परान..."

"अपान को जा रहे हैं," विमल ने शब्द लोक लिया।

रामशंकर और ज़ोर से हँस पड़ा, "हमेशा फूहड़ रहोगे।"

"फूहड़ नहीं, थूहड़। रोम-रोम में काँटे। जो मिलना चाहें, उनके चुभ जायँ।"

"तुम तो कवि बन गये हो। जान पड़ता है, मिलन आलिंगन के सब सुख भोग रहे हो।"

"ना मित्र," विमल ने नाहीं में हाथ हिलाते हुए स्कूली लड़कों वाले अन्दाज़ से कहा, "हमारा तो वसूल है, अपन हाथ, जगन्नाथ!" और खूब ज़ोर से हँसा।

रामशंकर को लगा, जैसे वही पुराना विमल है, वोर्डिंग हाउस मे एक ही कमरे में रहने वाला। बोला, "सरऊ, वही मुरहाई।"

"तुम मुरहाई कहो भैयन!" नकली आह भरते हुए विमल बोला, "तुम रहते हो गाँव में। बिहारी बाबा तुमको सुविधा दे गये हैं—'सन सूक्यो बीत्यो बनौ, ऊखौ लई उखारि'।" फिर गर्दन हिलाते हुए जोड़ा,

'लेकिन बेसहारा नही हो गये।" और आँखें नचाते हुए दोहे की तीसरी पंक्ति सुनायी, "हरी अरी अरहरि अर्जो।" इसके बाद तर्जनी से अपनी ओर इशारा करते हुए कहा, "हम हैं सहराती, कनपुरिया। यहाँ एक पार्क है फूलबाग, जहाँ रात-दिन साला मेला लगा रहता है। नज़र आती हैं हरसू सूरतें ही सूरतें हमको।"

रामशंकर विमल के नाटक पर मुसकरा रहा था। वह ज़ोर से हँसने लगा, "दशा करुण है वकील साहब की! लेकिन गालिब के मिसरे को खूब फिट किया है!"

"तुम्हें मजाक सूझता है, बच्चू! यहाँ दिल पर जो बीत रही है," विमल ने दाहिना हाथ अनोखे अन्दाज़ से सीने पर रखते हुए कहा, "जाके पाँव न जाय बिवाई, सो क्या जाने पीर परायी?"

"नहीं, नही, मैं खूब समझता हूँ वकील साव," रामशंकर ने मुसकराते हुए उत्तर दिया, "तुम प्रेम दीवानी मीरा हो। लेकिन जब इतनी सूरतें नज़र आती हैं, तो किसी को दिल में आसन दे दो। वीराना दिल आबाद हो जाये।"

"तो क्या समझते हो? अरे, दिल के आईने में है तस्वीरे यार! उसी के सहारे तो जीते हैं।"

"कौन है वह?"

"बता दें?" विमल ने संजीदा ढंग से पूछा। "चौंकोगे तो नहीं? तुम उसे अच्छी तरह जानते हो!"

"बताओ, ज़रूर बताओ!" रामशंकर उस उत्सुकता के साथ बोला जैसी बुर्के से ढँकी किसी ऐसी नारी का मुँह देखने की होती है जिसकी सिर्फ सुघड़ गोरी कलाई नजर आ रही हो।

विमल ने मुसकराते हुए थोड़ा गाकर बताया, "सुजला सुफला मलयज शीतला···" और ठठाकर हँसने लगा।

"धत्तेरे की!" रामशंकर अप्रतिभ हो गया जैसे आसमान पर उड़ती गेंद गड्ढे मे आ गिरी हो, किन्तु दूसरे ही क्षण विमल का उज्ज्वल रूप बिजली की भाँति उसकी आँखो के सामने कौंध गया।

विमल हँसोड़ था, बात-बात में मज़ाक करने वाला, तोड़-मरोड़ कर

शब्दों का व्यंग्यार्थ निकालने वाला, लेकिन काम में संजीदा, बूते से बाहर कर गुज़रने वाला।

हिन्दी अध्यापक पाठक जी की गिरफ़्तारी के बाद डी० ए० वी० स्कूल और कालेज के लड़कों ने एक दिन की हड़ताल की थी। वे जुलूस बनाकर गवर्नमेंट स्कूल, सनातन धर्म कालेज, क्राइस्ट चर्च कालेज वग़ैरह गये थे, और वहाँ के लड़के भी बाहर आ गये थे। फूलबाग में विद्यार्थियों का एक बड़ा जलसा नौजवान भारत सभा की ओर से हुआ था। रामशंकर और विमल ने पहली बार किसी हड़ताल में हिस्सा लिया था। रात में रामशंकर के कमरे मे चार-पांच लड़कों ने हवन किया था। उनमें विमल भी था। फिर सबने आग को साक्षी करके शपथ ली थी, हम अंग्रेजों की नौकरी नही करेंगे, देश-सेवा करेंगे, देश के लिए बड़े-से-बड़ा त्याग करने को तैयार रहेंगे, यहाँ तक कि प्राण भी देने को।

नमक आन्दोलन छिड़ा। विमल ने भी पढाई छोड़ दी थी। वह नमक बनाने के जुर्म मे उन्नाव में गिरफ़्तार हुआ था। उन्नाव जेल में उसे बान बटने को दिये गये। उसने सारी मूँज जला दी। इस पर उसे सज़ा दी गयी, छः बेंत लगे। विमल हर बेंत पर बोला—वन्दे मातरम्।

विमल के पिता ने भी पहले आगे पढाने से इनकार कर दिया था। विमल ट्यूशन करता और पढ़ता था। बाद में पिता खर्च देने लगे थे। विमल पढता, विद्यार्थियों के आन्दोलन में भाग लेता और उन्नाव मे किसानों का संगठन करता था।

जब रामशंकर खोया हुआ यह सब सोच रहा था, तभी बेयरा ट्रे लेकर आ गया था। विमल चहक उठा, "सो गये अफीमची जी!" रामशंकर जैसे सचमुच सोते से जागा। वह अचकचाकर विमल को देखने लगा गर्व-भरे प्यार से।

प्यालों में चाय डालते हुए विमल बोला, "अब सुनाओ, अपनी राम-कहानी।"

"भड़ास निकल गयी?" रामशंकर के स्वर में स्नेहसिक्त अपनापन था।

"यह तो क्षेपक था चाय पुराण का," विमल ने टोस्ट उठाते हुए

कहा।

रामशंकर ने टोस्ट काटा। इसके बाद एक घूंट चाय पी। फिर गाँव की कहानी, अशोक जी से हुई बातचीत का सारा हाल सुनाया और प्रश्न-सूचक दृष्टि से विमल को देखने लगा।

"अशोक जी आदमी अच्छे हैं, मगर कांग्रेस डिसिप्लिन (अनुशासन) के अन्दर रहते हैं। इधर-उधर भटकना पसन्द नहीं।" विमल ने कहा। "हाँ, जनसाधारण के दुख-दर्द उनके अपने हैं। बात समझ मे आ जाय, तो डरकर कदम पीछे न हटायेंगे।"

"मुझसे तो उन्होने एंड़ी-बेंड़ी बातें की," रामशंकर बोला।

"अशोक जी का यह कहना ठीक है कि पूरे सूबे में अन्धेर मचा है," विमल ने कहा। "लेकिन उस अन्धेर से न लड़ना, कांग्रेस वजारत बनने का रास्ता देखते रहना तो कोई बात न हुई।"

"यही तो मैं कहता हूँ," रामशंकर बोला।

"स्वामी राघवानन्द का भी यही विचार है," विमल ने बताया। "वह सूबे का दौरा कर रहे और एक-एक जगह की हालत के अनुसार आन्दोलन की योजना बता रहे हैं। अगले इतवार को दो दिन के लिए उन्नाव आयेंगे।"

रामशंकर खुश हो गया। "तो उन्हें राजी करो, किशनगढ़ आने के लिए।"

"कुछ मुश्किल नहीं है," विमल ने उत्तर दिया।

"तो उन्नाव के बाद बुध को किशनगढ़ आने की बात तय कर डालो।"

"पक्का रहा। तुम सोमवार की शाम आ जाओ। मैं पक्का प्रोग्राम बता दूंगा।"

रामशंकर इतना प्रसन्न था जैसे किसी ने डूबते का हाथ थाम लिया हो।

23

बुधवार को स्वामी राघवानन्द का किशनगढ़ आना तय हो गया। मंगलवार को रामशकर ने मनादी करा दी। बाजार का दिन होने के कारण स्वामी जी के आने का समाचार जँवार में भी घर-घर पहुँच गया।

सभा गांव के दक्खिन बीस गज चौड़े मैदान मे हुई। दो तख्त लगाकर मंच बनाया गया। स्वामी राघवानन्द करीब पांच बजे आये। लोग चार बजे से ही आ डटे थे। राष्ट्रीय गीतों से दिशाएँ गूँज रही थी।

स्वामी जी ने भाषण के आरम्भ मे ही ललकारा—

"यह दुनिया बहुत पुरानी है,
रच डालो दुनिया एक नयी।
जिसमें सिर ऊँचा कर विचरें,
इस दुनिया के बेताज कई।"

इसके बाद पूरे सूबे के किसानों की हालत बतायी, यह भी बताया कि कहाँ किस तरह ज़मीदारों के अत्याचारों का मुकाबला किया जा रहा है।

स्वामी जी के भाषण में बिजली की तरंग थी जो सुनने वालों को झकझोर रही थी।

उन्होंने कहा, "तुम मूंछें रखते हो। ये मूंछें नहीं हैं, कुछ और हैं जो टुकुर-टुकुर ताकते रहते और सारे अन्याय सहते जाते हो। बडी-बड़ी लाठियाँ बांधते हों। धिक्कार है इन मूंछों पर, इन लाठियो पर। अगर मूंछों वाले हो, तो घुसेड़ दो ये लाठियाँ ज़मीदार···" तालियाँ इतने ज़ोर से बजी कि स्वामी जी के शब्द उनकी गडगड़ाहट में डूब गये।

स्वामी ने समझाया, "यह ठीक है, कांग्रेस सरकार कानून बनायेगी। कानून बनाने पर ज़मीदारियाँ खत्म हो जायेंगी। लेकिन तुमको भी कुछ करना होगा।" फिर एक लतीफा सुनाया, "एक था तुम्हारी तरह का बेचारा गरीब। चालीस से ज्यादा का हो गया था, लेकिन औलाद एक न थी। उसने सुना, एक साधू बाबा आये हैं जो बड़े सिद्ध हैं। जिसको जो वह दें, वह हो जाता है। वह साधू बाबा के यहाँ सवेरे-सवेरे गया। वहाँ देखा, लोगों का मजमा है। बैठा रहा शाम तक। लोग धीरे-धीरे कम होते गये

और रात दस बजे सिर्फ वह रह गया और साधू बाबा। साधू बाबा ने पूछा, 'बेटा, तुम सवेरे से बैठे हो, क्या बात है ?' उसने हाथ जोडकर बताया, 'बाबा, मैं चालीस पार कर गया हूँ। औलाद का मुंह देखने को तरसता हूँ।' बाबा को दया आ गयी। उन्होंने धूनी से थोडी भभूत उठाकर उसके हाथ में दी और कहा, 'जा बेटा, यह भभूत खुद खा लेना और घरवाली को खिला देना। तेरी मनोकामना पूरी होगी।' उस आदमी ने बाबा के पैरों पर सिर रखकर प्रणाम किया और उठकर चलने लगा। अभी पीठ फेरी ही थी कि बाबा बोले, 'जरा सुन।' वह लौट पड़ा। बाबा ने कहा, 'भभूत तो अपना असर दिखायेगी, लेकिन जरा अपना जोर भी दिखाना' !"

लोग यह लतीफा सुनकर हँस पड़े। स्वामी जी गरजे, "बात हँसी में टालने की नही। कांग्रेस सरकार के कानून की भभूत तो असर दिखायेगी, लेकिन तुम अपना जोर तो दिखाओ।"

स्वामी जी का भाषण एक कविता से समाप्त हुआ :

"भूख मौत के बन्दी जागो,
जागो दलित, दुखी औ' दीन,
न्याय चला अन्धेर मिटाने
और बनाने विश्व नवीन।"

सभा समाप्त होने पर ननकू सिंह लपका हुआ आया और रामशंकर से बोला, "छोटे पडित, सुना स्वामी जी का भाखन। क्या बात कही है !"

"सब सुना काका," रामशकर ने प्रसन्न होकर उत्तर दिया। "अब कुछ करने की योजना बनेगी।"

24

स्वामी जी रात में किशनगढ़ में रुक गये थे। विमल शुक्ल उनके साथ आया था। वह भी रुक गया था। रात में रामशंकर की चौपाल में

स्वामी जी ने गाँव के सबसे कड़ियल कार्यकर्ताओं की बैठक बुलायी। इसमें छंगा, ननकू, शंकर, इतवा और चैतुवा शामिल हुए। स्वामी जी ने इन सबको समझाया कि आन्दोलन किस तरह चलाना होगा।

एक घण्टे तक विस्तार के साथ सारी बातें समझाने के बाद स्वामी जी मुसकराते हुए बोले, "रामशकर, इन पाँच पांडवों को लेकर आन्दोलन-कमेटी बना लो। वह कमेटी सारे काम की देखभाल करे। कब कौन-सा कदम उठाना है, इसका फैसला करे। मनमानी-घरजानी हर्गिज न हो। जिस तरह फ़ौज कप्तान के हुक्म से चलती है, आन्दोलन इस कमेटी की देख-रेख में चले। एक-एक कदम खूब सोच-विचार कर, सँभलकर रखो।"

"ऐसा ही होगा," रामशंकर ने सजीदा ढंग से छोटा-सा उत्तर दिया। फिर ननकू और छंगा की ओर ताकते हुए पूछा, 'सुन रहे हो ननकू काका, छगा भैया?"

दोनों कुछ सोचने-से लगे, फिर ननकू बोला, "हाँ, बिलकुल समझ गये। आन्दोलन के नियम-कायदे मान के चलना होगा। बेफजूल फाँय-फाँय बकने औ' लपर-लपर करने से काम थोड़ै बनैगा?"

छंगा ने सिर हिलाकर हामी भरी।

तभी विमल ने सुझाया, "गाँव के नौजवानों और मिडिल स्कूल के लड़कों का वालंटियर कोर बना लो, रामसंकर।"

"विमल ने यह सलाह बहुत अच्छी दी है," स्वामीजी बोले। "स्वयं-सेवक कड़ियल हों। उनको कवायद-परेड सिखाओ।"

स्वामी जी और विमल सवेरे चले गये। रामशंकर स्वयंसेवकों की टोली बनाने में जुट गया और दूसरे ही दिन सवेरे मिडिल स्कूल के सोलह-अठारह साल के कोई बीस लड़के हाफ पैण्ट और आधी आस्तीन की कमीजें पहने दक्खिन वाले छोटे-से मैदान में कवायद के लिए इकट्ठे हुए। कुछ नौजवान गाँव के भी आ गये। पाँचों पांडवों को भी रामशंकर ने कवायद में शामिल होने को कहा था। ननकू, शंकर और छंगा दोकछी धोतियाँ और बंडियाँ पहने, सिरों से अँगोछा लपेटे; नगे पैर लाठियाँ लिये हाजिर हुए। इतवा और चैतुवा लँगोटे बाँधे और सिरों पर लत्ते-जैसे अँगोछे लपेटे, नंग-धड़ंग, नगे पैर लाठियाँ लिये आये। गाँव के नौजवानों

में से कोई धोती-कुर्ता पहने था, कोई बंडी-कुर्ता और कोई सिर्फ़ दोकछी धोती ही लपेटे था। लाठियाँ सबके हाथों में थीं।

कवायद शुरू होने से पहले रामशंकर ने ननकू से कहा, "काका, धोती ढीली-ढाली होती है। हाफ पैण्ट बनवाओ।"

ननकू ने गर्दन हिलाकर रामशंकर की बात काटी, "अरे बच्चा की बात। यह पंडिताऊ धोती नहीं। है कोई मरद जो लाँग खोल दे ?"

शंकर से न रहा गया। वह बोल पड़ा, "मरद तो नहीं, पै भौजी की बात और है।"

शंकर की बात सुनकर रामशंकर और छंगा ने मुँह फेरकर ओठों पर आयी मुसकान को छिपाया।

उधर ननकू ने डाँटा, "तू है अहम्मक, उजबुक, संकर। कौन बात कहाँ कहने की है, यह समझने का सहूर नहीं।"

तभी इतवा बोल उठा, "छोटे पंडित, देखो, पंच के लँगोट कैसे हैं ?"

"बहुत ठीक।" ननकू ने सार्टीफिकेट दे दिया।

सब लाठियों को कन्धों पर बन्दूकों की तरह रखकर कवायद करने लगे। एक घण्टे तक कवायद करने के बाद सब कतार बनाकर निकले और पूरे गाँव का चक्कर लगाया। वालंटियरों का कप्तान, स्कूल का एक विद्यार्थी लेफ्ट-राइट-लेफ्ट बोलता जाता था और सबके कदम सधे ढंग से पड़ते थे।

इसके बाद कवायद और प्रभात फेरी रोज़ का नियम बन गयी।

स्वामी जी की सभा और इसके बाद रोज़ होने वाली कवायद ने गाँव वालों में नया बल, नया साहस भरा।

स्वामी जी के किशनगढ़ से जाने के दिन ही कौशल्या ने ब्राह्मणों के टोले में स्वामी जी का गुणगान किया था।

बिसेसर मिसिर की दुलहिन दीक्षितों के घर से अपने घर जा रही थी। उसे रास्ते में ही रोककर कौशल्या स्वामीजी के तेज़ और तपस्या का बखान करने लगीं, "पडरी वाली, देखा था, कैसा तेज था स्वामी जी के चेहरे पर। माथा दप-दप करता था जैसे सुरिज-चन्द्रमा साथ-साथ उये

हों।" फिर साँस लेकर बताया, "तुम्हारे जीजा बताते थे, परागराज में इनके दर्सन भये थे। बारा साल स्वामी जी तपस्या करते रहे नीमखार मिसिरी में। अब आये हैं, गरीब का दुख दूर करने।" और दोनों हाथ जोडकर माथे से लगाये जैसे स्वामी जी को नमस्कार कर रही हों। फिर दोनों हाथ फैलाकर एलान-सा किया, "अब मालूम होगा गढ़ी को आटा-दाल का भाव!"

बिसेसर की दुलहिन टुकुर-टुकुर कौशल्या का मुँह ताकती रही। उसके मुँह से बोल न फूटा।

उधर स्वामी राघवानन्द के भाषण और स्वयंसेवकों की कवायद परेड ने महावीर सिंह को चौकन्ना कर दिया।

महावीर सिंह और मैनेजर मि० गुप्ता महावीर सिंह के प्राइवेट कमरे में शाम के वक्त बैठे थे। दोनों ने एक-एक पैग लिया था, लेकिन महावीर सिंह को लग रहा था जैसे ह्विस्की में कसैलापन हो। चिन्ता की दो रेखाएँ उनके माथे पर ऐसी खिची थीं, जैसे स्वामी जी ने उनका भाग्य लिख दिया हो। अपनी परती दूर करने के लिए उन्होंने सिगरेट जलायी और एक कश लेने के बाद बोले, "मैनेजर साहब, इस स्वामी के आने के बाद से गाँव के रंग-ढंग अच्छे नहीं जान पड़ते।"

मि० गुप्ता भी स्वामी जी की सभा और बाद की घटनाओं से चिन्तित थे और इस उधेड़बुन में लगे थे, कैसे इसका सामना किया जाय। उन्होंने अपने प्याले का बचा आखिरी घूँट पिया। फिर प्याला मेज पर रखकर दाहिने हाथ से ओठ पोछे और उत्तर दिया, "रंग-ढंग तो ठीक नहीं हैं।" और महावीर सिंह की ओर ऐसे ताकने लगे जैसे उनके मन का भाव पढ़ना चाहते हों।

"तो यह जो स्वयंवर रचा दिया है, उसका क्या होगा? जो और स्कीमें (योजनाएँ) बनायी हैं, वे सब क्या खटाई में पड़ जायेंगी?" इतना कहकर महावीर सिंह कुछ सोचने लगे, फिर बोले, "अब कदम पीछे हटाने से गाँव वाले चढ़ बैठेंगे।"

मि० गुप्ता इस बीच तेजी से सारी बातें सोच रहे थे। अब सधे स्वर में बोले, "पीछे हटने का तो सवाल ही नहीं। हम थानेदार से मिलकर

पक्का बन्दोबस्त करेंगे।" साथ ही कह गये, "यह स्वामी का बच्चा बीच में टपक पड़ा।"

"यह है कौन ?" महावीर सिंह ने उत्सुक होकर पूछा।

"यह काफी खतरनाक आदमी है," मि० गुप्ता ने बताया। "उसी दल का है जिसने वायसराय की गाड़ी के नीचे बम रखा था। पाँच साल अण्डमान में रहकर आया है।"

महावीर सिंह ने सिर्फ 'हूँ' किया। 'वायसराय की गाड़ी के नीचे बम, अण्डमान में पाँच साल' उनके कानों में गूँज रहे थे।

उधर मि० गुप्ता बता रहे थे, "जोरू न जाता, खुदा से नाता। साधू बन गया, इसलिए गँवार किसानों पर ज्यादा असर पड़ता है। लोगों को भड़काता फिर रहा है।"

"लेकिन गांधी जी तो अहिंसा की बात कहते हैं," महावीर सिंह ने यों ही कह दिया।

"छोड़िये कहने वाली बातें। एक तरफ शान्ति, अहिंसा की बात करते हैं, दूसरी तरफ कानून तोड़ने को बरगलाते हैं। दोमुँहा साँप।"

महावीर सिंह ने इस प्रकार सिर हिलाया जैसे वह सारी बातों का चित-पट सोच रहे हों। फिर थोड़ी चिन्ता के स्वर में बोले, "तो इस बांभन-भट्टे, रामसंकर के बच्चे ने दूर-दूर तक जाल फैला रखा है !"

मि० गुप्ता भी सोचने लगे। उन्हें लगा, किसानों की जमीन हलुवा नहीं, जिसे चट निगल जायें। वह कुछ देर तक ऊँच-नीच सोचते रहे। इसके बाद समझाया, "बिना टेढ़ी अँगुली तो घी निकलता नहीं, हुजूर। जमीन पर कब्जा पका आम नहीं जो टप से आ गिरे। लेकिन घबराने की कोई बात नहीं। यह स्वामी तो चन्द दिनों का मेहमान है। बहुत जल्द बन्द हो जायेगा। रहे रामसंकर और गाँव वाले। उनके लिए अपना थाना काफी है। लाठियाँ लेकर लेफ्ट-राइट करने से जागीरें नहीं मिलती। यह तो बन्दरघुड़की है। क्या खाकर ये सब सामना करेंगे पुलिस का ? एक लपेटे मे सबको अन्दर करा देंगे।" और महावीर सिंह की ओर ताकने लगे।

महावीर सिंह की चिन्ता अब कुछ कम हुई। उन्होंने अपने और

मि० गुप्ता के प्यालों में शराब उँडेली और एक घूंट पीने के बाद कहा, "तो थाने जाकर पोख्ता इन्तजाम कीजिये। सवाल सिर्फ कदम पीछे हटाने का नहीं, जिन्दगी और मौत का है। अभी नहीं, तो कभी नहीं।"

"पूरब की चरागाहों के मामले में पक्का बन्दोबस्त करूंगा।" मि० गुप्ता ने आश्वस्त किया।

25

रणवीर सिंह पलंग पर लेटे कुछ इस तरह तिलझ रहे थे जैसे अंगारों पर लेटे हों। उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। दोनों हाथ बुरी तरह से मल रहे और पैर फटफटा रहे थे।

"क्या है, दर्द होने लगा क्या?" सुभद्रा देवी ने कमरे में कदम रखते ही उनकी यह हालत देखकर पूछा।

"विदा को बुलाओ, हम काशी-सेवन करेंगे।"

सुभद्रा देवी की समझ में न आया, हो क्या गया।

"कुछ बताइये तो!"

अब रणवीर सिंह धाड़ मारकर रोने लगे। "लाल साहब ने ठगी और बेईमानी का रास्ता पकड़ लिया है, सरासर धोखाधड़ी का। अब इस घर से हमारा क्या लगाव?"

रणवीर सिंह का गला भर आया। वह मरयिे स्वर में बोले, "कम्पू के बनिये तक जबानी लेन-देन की साख मानते हैं। चरागाहें किसानों की थी। लगान देकर भी उन्होंने रसीदें न लीं अपने सीधेपन में, तो क्या हम उनकी चीज हड़प लें? यह सरासर ठगी है, धोखेबाजी।" इतना कहकर उन्होंने अपना सिर पीट लिया।

बात सुभद्रा देवी की समझ में आ गयी। लेकिन बिगड़ी बात बनायें कैसे, यह न समझ सकीं। महावीर सिंह का पहले वाला व्यवहार मन में कसक उठा। "हमने पतार और रहूनी के बारे में कहा था। तब लाल

साहब ने जवाब क्या दिया, सीधे खोपड़ी पर लाठी मारी।" उन्होंने मन-ही-मन कहा। "अब क्या मुँह लेकर कुछ कहूँ ?...इधर इनकी यह हालत ! इन्हें कैसे शान्त करें ?" सुभद्रा देवी के इस ओर कुआँ, उस ओर खाई थी। वह बड़ी बेबसी के साथ दीन दृष्टि से पति को ताकने लगीं।

उधर रणवीर सिंह ने कहा, "बुलाइये विंदा को रानी साहेब, हम नहीं रहेंगे, नहीं रहेंगे। पीब-भरे मोहनभोग से किसी सत्र की दो रोटियाँ भली।"

सुभद्रा देवी पलँग के पास रखी कुर्सी पर बैठ गयी और रणवीर सिंह के पैरों पर सिर रखकर रोने लगीं। रोते-रोते ही बोली, "तो हम को भी साथ ले चलिये। हम तो आपकी हैं। जहाँ आप, वहाँ हम, सुख में, दुख में।"

यह सुनकर रणवीर सिंह जैसे किसी जंगल में ऐसी जगह आ गये जहाँ से चार पगडंडियाँ फूटी हों। किधर जायें ? वह सोचने लगे।

उनको कुछ शान्त देखकर सुभद्रा देवी उन्हें दिलासा देने के लिए बोली, "आप दुखी न हों, परेशान भी न हों। सात दिन की मोहलत दें। हम सब ठीक कर देंगी।"

रणवीर सिंह को जैसे कुछ सहारा मिला। सुभद्रा देवी का हाथ थामकर बोले, "लाल साहब को समझाइये, यह सरासर धोखाधड़ी है। चरागाहें वापस कर दें। और इस शकुनी गुप्ता को अभी हटवाइये। यह उनको ले डूबेगा।"

"ऐसा ही करेंगी," सुभद्रा देवी ने कह दिया, लेकिन महावीर सिंह से कहने को उनका जी न करता था। फिर भी पति की दशा ने उनको विवश कर दिया।

उन्होंने महावीर को बुलवाया और कुछ मिनती-भरे करुण स्वर में पति की दशा बतायी। लेकिन सब कुछ सुनने के बाद महावीर ने उलटा ही पाठ पढ़ाया, "अम्मा साहेब, दुनिया कितनी बदल गयी है, इसका पापा साहब को पता नहीं। ये जमींदारियाँ जाने वाली हैं। वही जमीन हमारे हाथ लगेगी, जो हमारे कब्जे में होगी, हमारे नाम, आपके नाम, घरवालों के नाम।"

सुभद्रा देवी महावीर सिंह का मुँह ताकने लगीं।

महावीर सिंह ने समझाते हुए दृढ़ता से कहा, "आप पापा साहब को जैसा चाहिये, समझा दीजिए, लेकिन इन्तजाम में रोड़े न अटकाइये। अगर आज कुछ न कर सके, तो कल लोटा लेकर भीख माँगने की नौबत आयेगी।"

सुभद्रा देवी का चेहरा उतर गया। वह समझ न पा रही थी कि रणवीर सिंह को क्या समझायें और कैसे।

"सरकार के खैरख्वाहों की पूरी मदद की जायेगी, बागियों को कुचल दिया जायेगा। आप बेफिकर रहिये मैनेजर साहब!" थानेदार ने मि० गुप्ता से कह दिया था।

सरकार से पूरी मदद मिलने का भरोसा हो जाने पर मि० गुप्ता ने पूरब की चरागाहों में हल चलवाने का इन्तजाम किया और मनादी करवा दी, "पूरब की परती ज़मीन सरकार की है। वहाँ कोई अपने जानवर नहीं चरा सकता। न कोई वहाँ घास काट सकता है।"

मनादी का होना था कि पूरे गाँव में तहलका मच गया।

रामखेलावन ने कहा, "अँधेर है। दो गोईं किसान, गायें, भैंसें, सब भूखों मर जायेंगी।"

बसन्ता बोला, "काका, अब पानी मूँड़ के ऊपर से बहि रहा है। जमीदारी भुभुर मूति रहा है। चरागाहें किसानों की जबर्जस्ती कब्जा कर लिया।"

छंगा पास ही खड़ा सुन रहा था। उसने कहा, "बस चार दिन की चाँदनी है। फिकिर न करो। मनीजर औ' महाबीर दोनों को सबक सिखायेंगे।"

रामजोर ने ननकू सिंह से पूछा, "ननकू भैया, बताओ, अब गोरू-बछेरू, कैसे रखें? बैल-बधिया सब एक-एक तिनके को तरसैंगे।"

"सब ठीक हो जायेगा। चिन्ता न करो।" ननकू ने बड़ी गंभीरता से उत्तर दिया।

"कैसे?"

"जो कुछ कहें, करते चलो।"

"हम जान देने को तैयार हैं," रामजोर बोला।

"तो फिर हमारी धरती कोई नहीं छीन सकता ?" ननकू ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया।

26

अशोक जी कचहरी से लौटकर अभी बैठकखाने में आये ही थे कि शीरीं बैठकखाने में दाखिल हुईं।

रामशंकर ने साइकिल दीवार से टिकायी और उनके पीछे-पीछे वह भी आ गया।

शीरीं को देखकर अशोक जी ने कुछ अचरज के साथ पूछा, "आज इतनी जल्दी ?"

शीरीं अशोक जी के आने के कोई घंटे-डेढ़ घंटे बाद 'बेदार वतन' के आफ़िस से आती थी।

वह कुछ बोलें, इसके पहले ही रामशंकर को देखकर अशोक जी बोल पड़े, "अरे, तुम भी रामशंकर !"

अब शीरीं बोली, "ये आये थे कोई दो घंटा पहले, हमारे आफ़िस, तुम्हारी शिकायत करने।" और हँसने लगीं।

"तो तुम इनकी वकील बनकर आयी हो या तुम्हारे इजलास में इनका मुकदमा पेश है ?" अशोक जी मुसकराये।

"इजलास से बाहर भी कोई दुनिया है, वकील साहब !" शीरीं ने कनखियों से मुसकराते हुए उत्तर दिया।

"चलो, 'अंगद के पैर' के बाद दुबे का शिकायतनामा फिर पढ़ोगी, अभी चूड़ियों का धोवन···" अशोक जी ने गर्दन हिलाते हुए कहा।

शीरीं ने 'अंगद का पैर' नज्म गांधी जी की डांडी-यात्रा पर लिखी थी और उसके कारण राजद्रोह के अपराध में सरकार की मेहमान बनी

थी। उन्हें उसकी याद आ गयी और उसके साथ ही जेल-जीवन की बातें, अशोक जी से नोंक-झोंक, फिर तिलक हॉल की सभा और बाकी बातें, सब एक-एक कर सिनेमा के चित्रों की भाँति उनके मन के पर्दे पर तेज़ी से घूम गयीं और कुछ देर तक वह यादों की दुनिया में खोयी रही। इसके बाद बोली, "शिकायतनामा तो नहीं लिखना···" शीरीं थोड़ा रुकीं, फिर सधे स्वर में कहा, "रामशंकर किशनगढ़ में कुछ ऐसा काम करने जा रहे हैं जिसके बखान के लिए शायद महाकाव्य लिखना पड़े।" और अशोक जी की ओर एकटक ताकने लगी।

"क्या करने जा रहे हैं?" अशोक जी ने उत्सुक होकर पूछा।

शीरीं उस आन्दोलन की रूपरेखा अशोक जी को बता गयी जो स्वामी राघवानन्द ने बनायी थी।

अब तक तीनों खड़े थे।

अशोक जी ने रामशंकर का हाथ पकड़कर कहा, "बैठो दुबे।" फिर रामशंकर के सामने वाली कुर्सी पर बैठते हुए बोले, "तुम चाय बना लाओ, फिर चाय के साथ विचार करें।"

शीरीं चाय बनाने चली गयी। अशोक जी सिर हिला-हिला कर गुन-गुनाने लगे—

"तुम अब तक बेतरतीबी से
धरती पर चलते आये हो।
बस इसीलिए तो अब तक तुम
टुकड़ों पर पलते आये हो।"

इसके बाद थोड़ा मुसकराकर अगला छन्द गाया :

"अब आज कतारें बाँध चलो,
दायें से दायें, बायें से बायें
कदमों को साध चलो।"

रामशंकर कविता सुनकर प्रसन्न हो गया। उसे लगा, मैं शायद अशोक जी पर नाहक सन्देह कर बैठा।

तभी शीरीं एक ट्रे में चाय के तीन प्याले और एक प्लेट नमकीन रखे आयीं। उन्होंने ट्रे मेज पर रख दी। अशोक जी ने एक प्याला उठाकर

रामशंकर को दिया और दूसरा अपने ओठों से लगाया। शीरीं रामशंकर के पास वाली कुर्सी पर अशोक जी के ठीक सामने बैठ गयी।

चाय का एक घूंट लेने के बाद तश्तरी से चुटकी में नमकीन उठाते हुए अशोक जी ने पूछा, "क्या शिकायत है रामशंकर को ?"

रामशंकर ने अभी अशोक जी की कविता गुनगुनाते सुना था। उसे लगा, शायद अब शिकवा-शिकायत या सुलह-सफाई की जरूरत नहीं। लेकिन मना करूं, तो कैसे ? वह पशोपेश में पड़ गया।

उधर शीरीं बताने लगीं, "तुमने आन्दोलन की कोई राह बताने के बदले टाल दिया यह कह के, जब कांग्रेस सरकार बनेगी, सारा हिसाब-किताब हो जायेगा। इसके पहले किशनगढ की सभा मे क्या अंट-शंट कह आये थे, किसान-जमीदार मिलकर अंग्रेज को हटायें !"

अशोक जी सोचने लगे, किस शिकायत की सफाई पहले दें। थोड़ी देर के बाद बोले, "पहली शिकायत की सफाई पेश है। जहाँ तक जमीदारी प्रथा का सवाल है, वह तो सरकार ही खत्म करेगी। रही जमीदार के जुल्मों के खिलाफ़ लड़ने की बात, तो यह नाचीज बन्दा संघर्षों से नहीं डरता।" और एक कविता सुना गये :

"हम संक्रान्ति काल के प्राणी,
चाहें ना सुख-भोग।
घर उजाड़ कर जेल बसाने का
है हम को रोग !"

शीरीं और रामशंकर दोनों अशोक जी को एकटक ताकने लगे। शीरीं को अशोक जी की वह बात याद आ गयी जो उन्होने तिलक हॉल में कही थी, "जनसाधारण के प्रसाद से पला यह तन तिल-तिल कर जन-सेवा के महायज्ञ में होम हो जाय, यही कामना है।"

उधर अशोक जी बता रहे थे, "हमने तो रामशंकर से कहा था, 'योजना बनाओ'।" और दहिने हाथ की मुट्ठी बाँधकर संकल्प-सा करते हुए बोले, "इस किसान-संघर्ष में पहली छोटी-सी आहुति यह खाकसार देगा।"

शीरीं का मन पुलक से भर गया। रामशंकर की आँखों में हर्ष-भरी

चमक आ गयी।

इसके बाद सिर खुजलाते हुए ज़रा धीमे स्वर में अशोक जी ने कहा, "किसानों, ज़मींदारों के मिलकर अंग्रेज़ों से लड़ने की बात यों ही रवारवी में कह गये थे। समझ लो, जीभ ही तो है, फिसल गयी।" फिर दृढ़ता के साथ बोले, "एडीटर साहेबा, समाज-विकास का इतिहास हमने भी पढ़ा है और जीवन की पाठशाला ने भी सिखाया है। देश की आज़ादी का अर्थ है—सामन्ती ढाँचे का ख़ात्मा।"

अशोक जी ने सम्बोधित तो शीरीं को किया था, लेकिन रामशंकर को लगा जैसे उन्होंने छींटाकशी उस पर की। उससे न रहा गया और बोल पड़ा, "पूँजीवाद का भी अन्त तो हम साथ-साथ कर सकते हैं।"

अब अशोक जी भड़क उठे। उन्होंने थोड़े उत्तेजित स्वर में कहा, "पोथियाँ पढ़कर ख़याली पोलाव पकाना और बात है, ठोस यथार्थ की धरती पर चलना बिलकुल दूसरी।"

शीरीं को अशोक जी का ऐसा कहना, वह भी उत्तेजित स्वर में, अच्छा न लगा। उन्होंने संजीदा ढंग से समझाने के स्वर में कहा, "यह पोथियाँ, छपतियाँ क्या! हमारी कौमी तहरीक मज़बूत हो, तो छलांग लगाकर अगली मंज़िल पर पहुँच सकते हैं।"

अशोक जी को भी लगा कि उन्हें उत्तेजित न होना था। उन्होंने हँसते हुए उत्तर दिया, "शीरीं, पेचीदा समाज की समस्याएँ पेचीदा होती हैं। कल्पना के घोड़े कविता में दौड़ाये जा सकते हैं, यथार्थ के ऊबड़-खाबड़, झाड़-झंखाड़-भरे जंगल में नंगे पाँव चलते वक्त कदम ख़ूब सोच-समझ कर रखना होता है।"

रामशंकर को लगा, इस दूर भविष्य पर बहस महज़ पंडिताऊ होगी। फिर मुझे गाँव भी जाना है। उसने बातचीत का रुख़ किशनगढ़ के आन्दोलन की ओर मोड़ दिया। ब्योरेवार सब बातें समझायी और उठ खड़ा हुआ।

"तो अब जाते कहाँ हो?" अशोक जी ने उसका हाथ पकड़ा।

"सवेरे चले जाइयेगा," शीरीं ने कहा।

"नहीं भाभी," रामशंकर ने समझाया, "एक-एक पल बेशकीमती है।

वहाँ सब राह देख रहे होंगे।" और अशोक जी ने जो नई कविता सुनायी थी, उसकी एक पंक्ति दुहरा गया, "हम संक्रान्ति-काल के प्राणी।"

शीरीं और अशोक जी हँसने लगे।

27

उधर चरागाहों में हल चलाने की तैयारी हुई, इधर मिडिल स्कूल के लड़के प्रचार में जुट गये। उन्होंने डुगडुगी उठायी और गाँव-भर में डुग्गी पीटकर एलान किया, "कल से चरागाहों में सत्याग्रह होगा। हम हल नहीं चलने देंगे।"

सवेरे सूरज निकलते ही कोई पचास नौजवान हाफ पैण्ट, आधी बाँहों की कमीजें पहने दो कतारों में प्रभात फेरी करने निकले। पूरे गाँव की परिक्रमा के बाद वे गढी के पच्छिम वाले फाटक के सामने के बहुत बड़े मैदान में एक कतार बनाकर सावधान मुद्रा में खड़े हो गये। उनके पीछे गाँव वाले झुण्ड बनाये खड़े थे। रामशंकर अपने पाँचों पाण्डवों के साथ स्वयंसेवकों के आगे खड़ा था।

सात बजने के कुछ मिनट पहले एक ताँगा दुलकी चाल में आकर रुका और अशोक जी ताँगे से उतरे। रामशंकर और उसके साथियों ने बढ़कर उनकी अगवानी की। स्वयंसेवकों के बिगुलची ने बिगुल बजाया और स्वयंसेवकों ने अशोक जी को सलामी दी। इसके बाद पहले से चुने गाँव के छः सत्याग्रही आये और अशोक जी के पास खड़े हो गये। इनमें थे डंडे के सहारे चलने वाले, बूढ़े शिवसहाय दीक्षित और हरफन मौला बिसेसर मिश्र, धनेश्वर के भाई।

रामशंकर ने अशोक जी को और दूसरे सत्याग्रहियों को गेंदे के फूलों की मालाएँ पहनायीं। उसके बाद पाँचों पांडवों में से एक-एक ने आकर मालाएँ पहनायीं।

पं० रामअधार दुबे फूल की एक थाली में अक्षत-रोचना रखे खड़े

थे। उन्होंने बढ़कर सबके तिलक लगाया और आशीर्वाद दिया, "शुभाः सन्तु पंथानः।"

अशोक जी ने बहुत ही छोटे भाषण में गाँव वालों को समझाया, "आप एकजुट रहकर शान्ति के साथ आन्दोलन चलाइये। जीत हमारी होगी।"

बिगुल बजा और सत्याग्रही चरागाहों की ओर चल पड़े। सबसे आगे अशोक जी, उनके पीछे गाँव वाले सत्याग्रही। उनके पीछे दो कतारों में स्वयंसेवक चल रहे थे। बिगुल पर मार्चिंग सॉंग की धुन बज रही थी, "क़रीब ख़त्म रात है, बढ़े चलो, बढ़े चलो।"

पुलिस तड़के ही मौके पर आ गयी थी। अशोक जी और दूसरे सत्याग्रही चरागाह में गये और हलों के सामने लेट गये। छंगा ने नारा लगाया, "धरती हमारी है" और चरागाहों की मेंड़ के पास खड़े गाँव वालों ने जवाब दिया, "हम उसे लेकर रहेंगे।"

पुलिस के दो सिपाही अशोक जी के पास आये और उन सबसे हट जाने को कहा। जब कोई टस से मस न हुआ, थानेदार ने मेंड़ के पास से आवाज़ लगायी, "गिरफ़्तार कर लो।"

गिरफ़्तारी के बाद बिगुलची ने बिगुल बजाया जो इसका संकेत था कि सब लोग अपने-अपने घर जायें। सबने अनुशासित सेना की तरह शान्ति के साथ अपने-अपने घर का रास्ता लिया।

अशोक जी की गिरफ़्तारी का समाचार 'हिन्दुस्तान की हुंकार' के पहले पृष्ठ पर फोटो के साथ छपा और इस प्रकार दूसरे ही दिन सूरज निकलने के साथ-साथ यह खबर पूरे शहर में फैल गयी। डी० ए० वी० कालेज के विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी और जुलूस बनाकर सनातन धर्म कालेज और क्राइस्ट चर्च कालेज गये। उन दोनों कालेजों के विद्यार्थी भी बाहर आ गये। उधर जनरलगंज, सराफ़ा और रामनारायण के बाज़ार की दुकानें बन्द हो गयीं।

जुलूस क्राइस्ट चर्च कालेज से कचहरी की ओर चल पड़ा। 'इनकलाब ज़िन्दाबाद', 'सामन्ती निज़ाम मुर्दाबाद' के साथ-साथ 'डाउन विथ ब्रिटिश इम्पीरियलिज़म' (ब्रिटिश साम्राज्य मुर्दाबाद) के नारे आकाश में गूँजने लगे। कचहरी के अहाते के बाहर पुलिस ने जुलूस को रोका। पुलिस के सिपाही

दीवार बनकर खड़े हो गये। नौजवान बाढ़ की तूफानी लहरों की तरह आगे बढ़ते, उधर से पुलिस वाले डण्डे घुमाकर उन्हें आगे बढ़ने से रोकते।

विमल शुक्ल वकीलों वाला काला कोट पहने पुलिस के पीछे एक स्टूल पर खड़ा यह सब देख रहा था। उसे लगा, हालत काबू से बाहर होने वाली है। फिर उसने सोचा, अभी यहाँ पुलिस से टकराव ठीक नहीं। वह पुलिस की कतार को चीरता बाहर आया और दोनों हाथ उठाकर विद्यार्थियों को शान्त रहने को कहा। फिर सबसे आगे खड़े दो नौजवानों को बुलाया और जुलूस को फूलबाग की ओर मोड़ने की सलाह दी।

"असली मोर्चा किशनगढ़ में लगा है। यहाँ टकराना ठीक नहीं।" उसने उनको समझाया।

जुलूस मुड़ा। फूलबाग में विमल ने विद्यार्थियों की सभा में उनको किशनगढ़ के ज़मींदार के जुल्मों की कहानी बतायी।

"अब आप समझ जाइये, सामन्ती व्यवस्था और साम्राज्यवाद में कैसा चोली-दामन का सम्बन्ध है।" विमल ने अपने भाषण के अन्त में कहा।

सभा में ही यह एलान भी कर दिया कि 'बेदार वतन' की सम्पादक शीरी किशनगढ़ में सत्याग्रह करेंगी।

पुलिस ने विद्यार्थियों की सभा तो हो जाने दी, किसी प्रकार की बाधा न डाली, लेकिन रात में विमल शुक्ल भारत रक्षा कानून में राज-बन्दी बना लिया गया और जिला मजिस्ट्रेट ने पुलिस को सतर्क कर दिया, वह किशनगढ़ पर कड़ी नज़र रखे।

शहर में यह हलचल रही, उधर किशनगढ़ में दूसरे दिन भी सत्याग्रह हुआ। इस दिन का नेता था बसन्ता। उसके साथ थे—रामजोर सिंह, सुखुवा धोबी, शिवसहाय दीक्षित का बेटा रामनिवास और तीन दूसरे गाँव वाले।

सुखुवा और रामनिवास के सत्याग्रह में शामिल होने के अलग-अलग कारण थे।

सुखुवा के दो लुगाइयाँ थी। जब सत्याग्रह की तैयारी हो रही थी,

एक दिन बड़ी ने सुखुवा को टोका जब वह घाट से धुले कपड़ों का गट्ठर लेकर तीसरे पहर अभी कुछ पहले ही आया था और बैठा चिलम पी रहा था। उसकी छोटी लुगाई थोड़ी दूर पर बैठी कोई साग काट रही थी।

"गाँव-भर सत्ता ग्यारा की तयारी कर रहा है। तुम क्यों नहीं जाते?" बड़ी पूछ बैठी।

"बड़की, हमारे तो एक बिसुवा जागा-जमीन नहीं।" सुखुवा ने मुँह का धुआँ निकालते हुए उत्तर दिया।

धुआँ बड़की के मुँह की ओर गया था। धुएँ की कड़वाहट उसकी आँखों में भर गयी थी जिससे कुछ आँसू आ गये।

"थोड़ा उधिर को निकालो धुआँ!" उसने दाहिने हाथ को पंखे की तरह झलकर धुआँ भगाते हुए कहा।

तभी छोटकी बोल पड़ी, "रहते तो गाँव में हैं। जब हमारे सब किसान सामिल हैं, तुमको उनके साथ रहना चाहिए।"

"घर का काम?" सुखुवा ने पूछा।

"बड़ी दीदी औ' हम सँभाल लेंगी।" छोटी ने उत्तर दिया।

सुखुवा सत्याग्रह में शामिल होने को राजी हो गया।

रामनिवास के पिता कल ही जेल गये थे। एक घर से सत्याग्रह में एक भाग ले, यह तय हो गया था। लेकिन ऐन वक्त में फेर-बदल करना पड़ा।

शिवसहाय दीक्षित की गिरफ़्तारी के बाद उसी शाम रामनिवास की दुलहिन ने रामनिवास से कहा, "बप्पा, बूढ मनई जेहल चले गये। तुम पाँच हाथ का मोछहरा जवान चूल्हे में घुसे बैठे हो। सरम नहीं आती?"

जवानी और मूँछों पर पत्नी की फटकार ने रामनिवास को मजबूर कर दिया और उसे धर्मसंकट से उबारने के लिए आन्दोलन-कमेटी को अपना फ़ैसला बदलना पड़ा।

पुलिस ने हलों के सामने लेटे सत्याग्रहियों पर बेंत बरसाने शुरू किये। दो बेंत बसन्ता के दोनों कूल्हों पर पड़े। वह तिलमिला गया। दाँतों से ओठ काटे, लेकिन उफ न की।

रामजोर पर तीन-चार बेंत हाथों और कूल्हों पर पड़े। गुस्से से

उसकी आँखें लाल हो गयीं। जी चाहा कि उठकर सिपाही का टेंटुआ पकड़ ले, लेकिन छंगा की चेतावनी याद आयी, कोई सत्याग्रही हाथापाई न करे। मार खाये, मगर लौटकर हाथ न उठाये।

बाद में सबको गिरफ़्तार कर लिया गया। हम पहले दिन की तरह फिर चलने लगे।

28

सत्याग्रह के तीसरे दिन किशनगढ़ पुलिस की छावनी लग रहा था। हलके की पुलिस के अलावा कानपुर से एक दस्ता आया था। आज शीरीं को सत्याग्रह करना था।

यह पहले से तय हो गया था कि तीसरे दिन केवल स्त्रियाँ सत्याग्रह करेंगी। शीरीं उनकी नेता होंगी।

सात स्त्रियों का जत्था महादेव जी के मन्दिर से चला। शीरीं उनके आगे-आगे चल रही थीं। जत्थे ने पूरे गाँव का चक्कर लगाया। सब स्त्रियाँ एक स्वर से गा रही थीं—

"हम दुनिया नयी बनायेंगी,
हम धरती नयी बसायेंगी।
हम भूख, गरीबी, जुल्म, गुलामी
सब मिल मार भगायेंगी।"

शहर वाली पुलिस का दस्ता बरगद के पेड़ के नीचे मुस्तैद खड़ा था। स्त्रियों का जुलूस चौमुजी माता के मन्दिर के पास की गली से निकला और बरगद के पेड़ से कोई पचास गज की दूरी पर गाता हुआ आगे बढ़ गया।

"इनके लिए हम सबको हथियारबन्द करके कानपुर से भेजा गया है!" पुलिस के एक सिपाही ने दूसरे के कान में हँसते हुए कहा।

वह मुसकराने लगा।

शीरी और उसके साथ की स्त्रियाँ चरागाह में गयी और हलों के सामने लेट गयी।

औरतों को हलों के सामने लेटी देखकर हलवाहे भौंचक रह गये।

एक ने अपने पास वाले से कहा, "यार, धिक्कार है हमारे जीने को। हमारे सामने पुलिस इनको मारेगी। हमारी माँ की उमिर की हैं।"

"कल से छोड़ दें हियाँ काम। जाँगर लगाना है, तब काम बहुतेरा है।" दूसरे ने उत्तर दिया।

"कल से काहे, अब हीं," पहला बोला।

दूसरे ने समर्थन किया।

दोनों अपने-अपने हल की मुट्ठियाँ छोड़कर बाहर की ओर चल पड़े।

औरतों को देखकर हलके की पुलिस वाले चक्कर में पड़ गये।

पुलिस के एक सिपाही ने दूसरे से पूछा, "अब इनको कैसे गिरफ्तार करें?"

"यह तो मुश्किल है," दूसरा बोला। "चीफ साहब से पूछो।"

चीफ़ पास ही खड़ा सब सुन रहा था। "मामला तो टेढ़ा है," वह बोला।

इतने में थानेदार उनके पास आ गया। उसने हुक्म दिया, "देखते क्या हो। गिरफ्तार करो। मारना मत।"

"साहब, हाथ तो लगाना पड़ेगा," सिपाही बोला। "जनाना लोग।"

"गिरफ्तार कर सकते हो," थानेदार ने कहा। "पहले हटने को कहो।"

पुलिस के सिपाही ठिठकते हुए गये। एक ने कहा, "तुम लोग हट जाओ, वर्ना हम गिरफ्तार कर लेंगे।"

बसन्ता की स्त्री लेटे-लेटे ही बोली, "गिरफ्तार करो, चाहे मार डारो, हम नहीं हटेंगी। धरती हमारी है। हम ले के रहेंगी।"

पुलिस वाले ठिठके खड़े रहे। थानेदार ने मेड़ पर से गुजरते हुए हुक्म दिया, "गिरफ्तार कर लो! क्या खड़े ताकते हो!"

सब औरतें गिरफ्तार और उन्हें गाड़ी में

बैठाकर जेल को रवाना किया गया।

सत्याग्रह छिड़ने से पहले अशोक जी के कहते ही शीरी किशनगढ़ में सत्याग्रह करने को राजी हो गयी थी और मन-ही-मन कहा था, तो अपने भाई साहब से ही लड़ना होगा और हँसी थीं, भाई साहब जो बहन मानने को तैयार न होंगे, जब बाप ही चाहते थे मर जाऊँ। मार नहीं डाला, यही बड़ी दया की थी। किशनगढ़ कैसा होगा, इसका नक्शा शीरीं मन-ही-मन बनाती।

ताँगे पर जब वह रामशंकर के साथ आ रही थीं और उसने हाथ के इशारे से बताया था, यह है जमींदार साहब की गढ़ी, तो उत्तर और पश्चिम के फाटक देखकर उनको लगा था, जैसे यह महल न हो, बहुत बड़ा अजगर हो—दो मुँहों वाला। न जाने कितनी जुल्फ़ियाओं की इस्मत यह अजगर एक मुँह से निगल गया हो, न जाने कितनी शीरी कलक का टीका लगाये अपने भाग्य को कोसती होंगी। अपने दूसरे मुँह से यह किसानों, मजदूरों, मामूली दुकानदारों—गाँव वालों को निगलता आया है। एक बार महल की ओर गौर से देखकर उन्होंने मन-ही-मन कहा था, अब इस अजगर की मौत इसके सिर पर नाच रही है। जुल्फ़ियाओं और शीरियों की आहें ज्वालामुखी बनकर अब इसे निगल जाने को हैं। गाँव के समुन्दर में तूफान उठा है, इस गढ़ी की डोंगी को लील जाने के लिए। गढ़ी की नींव धसक रही है।

शीरी सबके साथ पुलिस की गाड़ी में बैठी थीं और उनके मन में उस दिन के चित्र उभर रहे थे। ताँगा जब रुका था, गाँव के पाँच आदमी ठिठकते-से बढ़े थे मेरी अगवानी करने। सीधे-सादे लोग मुझ शहरातिन को देखकर चौंधिया-से गये थे। पैर आगे न बढ़ते थे। एक ने अड़ते-अड़ते नमस्ते कहा था। रामशंकर ने बताया था, यह ननकू सिंह हैं। बाकी चार मेरा मुँह ताकते रह गये थे। वे थे—छंगा, शंकर, इतवा, चैतुवा।

महादेव जी के मन्दिर के पास, गाँव के औरत-मर्द इकट्ठे हुए थे। रामशंकर की दादी ने बड़े प्यार से दही और चावल का टीका लगाया था और अपने हाथ से पेड़ा खिलाया था, सत्याग्रह के लिए विदा करते समय।

जब मैंने कहा, नेता गाँव की कोई बहन बने, तो बसन्ता की बीवी ने कैसे सरल ढंग से कहा था, नहीं बहिनी, नेता तुम, ये लाठी, गोली जो भी चलें, पहिले हम सब अपने ऊपर लेंगी। तुम्हें आँच न आने देंगी। आज ये सब गरीब और गैर पढ़ी-लिखी औरतें तप कर इस्पात बन गयी हैं, खालिस इस्पात। गाँव की इस पूरी ताकत से लड़ने चला है महावीर सिंह, सरकार की मदद से! मेढ़की को जुकाम!

शीरी की गिरफ़्तारी के बाद पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट तीसरे पहर जिला मजिस्ट्रेट से मिला और किशनगढ के बारे में बताया, "सर, वहाँ गाँव में कोई खतरा नहीं है। गिरफ़्तार करने पर किसी ने चूँ तक नहीं किया। अमन बनाये रखने का मसला शहर का है।"

जिला मजिस्ट्रेट थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा, फिर पूछा, "खुफिया की रिपोर्ट क्या है?"

"खुफिया वाले भी कहते हैं, गाँव वाले शान्त हैं।" सुपरिण्टेण्डेण्ट ने बताया।

"एहतियात के तौर पर किशनगढ़ में पुलिस दो दिन और तैनात रहे। यहाँ स्कूलों, कालेजों में छुट्टी करा देंगे। खास-खास जगहों में पुलिस तैनात कर दी जाय।"

"अखबारों पर भी सख्ती करने की जरूरत है।" सुपरिण्टेण्डेण्ट ने सुझाया।

"यस, करेक्ट। (हाँ, ठीक)" जिला मजिस्ट्रेट बोला, "सेंसर से कह देंगे, किशनगढ की खबरें न छपने पायें।"

शीरी की गिरफ़्तारी की खबर किसी अखबार में न छपी, लेकिन ग्वालटोली, चमनगज, परेड, मूलगंज, आदि के इलाकों में रातों-रात एक पर्चा बँट गया। कुछ पर्चे कोतवाली की दीवारों पर भी चिपके थे। ग्वालटोली मे गिरफ़्तारी के विरोध में औरतों ने जुलूस निकाला और चमनगंज में औरतों की सभा हुई।

29

शहर से आयी हुई पुलिस का पड़ाव मिडिल स्कूल में पड़ा था। कल से ही आवभगत ऐसी हो रही थी जैसे बाराती हों। सवेरे गढ़ी से परांठे और दूध आता। दोपहर मे आटा, दाल, चावल और सब्जियां भेज दी जाती। स्कूल में भोजन बनता। तीसरे पहर चाय आती और रात में पूड़ियां गढ़ी से भेजी जाती। मैनेजर गुप्ता दो बार मिडिल स्कूल के फेरे लगाते और कह जाते, "चीफ़ साहब, किसी चीज की जरूरत हो, तो बताइएगा, संकोच न कीजियेगा, घर समझियेगा।" साथ ही सिगरेट के पैकेट दे जाते। पुलिस वाले सारे दिन बैठे ताश खेलते रहते। वे खुश थे, कवायद-परेड से भी छुट्टी मिली।

चौथे दिन सत्याग्रह बच्चों को करना था। सात बच्चे हाफ़ पैण्ट और आधी आस्तीनों की कमीजें पहने महादेव जी के मन्दिर के सामने इकट्ठा हुए और बड़े गलियारे से होते हुए मिडिल स्कूल की ओर गये। सब बच्चे आठ-दस साल के थे।

पुलिस के दो सिपाही स्कूल के कुएं की जगत पर बैठे दातुन कर रहे थे। "जै-जै" की आवाज़ सुनकर एक ने उधर को ताका जिधर से आवाज़ आ रही थी।

"अब यह तमाशा देखो," उसने अपने साथी से कहा।

दूसरा गौर से देखने लगा। उसे बच्चों का गाना सुनाई पड़ा—हम हैं धरती के लाल।

वह ठठाकर हँसा, "धरती के लाल! देखो, ये आ रहे हैं धरती के लेंड़।"

उसका साथी भी हँसने लगा।

लड़के स्कूल के पास से मुड़कर गढ़ी की दीवार के पास के रास्ते से ब्राह्मणों-ठाकुरों के टोले में घुस गये और गाते हुए बरगद के पेड़ के पास निकले। वहां इलाके के थाने का दारोगा, चीफ़ और सात सिपाही इधर-उधर टहल रहे थे। चरागाह में हलवाहे बैलों को हलों मे जोतने में लगे थे।

सिपाहियों ने बच्चों को बड़े गौर से देखा। एक से न रहा गया। वह बोल पड़ा, "तो आज की यह पल्टन है !"

दूसरे सिपाही हँसने लगे।

उधर एक बच्चे ने नारा लगाया, "धरती हमारी है" और दूसरों ने उत्तर दिया, "हम उसे लेकर रहेंगे।"

"ले लो, उठा लो, जैसे गुबरैला गोबर की गोली उठाता है।" एक और सिपाही ने हँसते हुए कुछ जोर से कहा।

बच्चों ने उसकी ओर देखा, फिर आगे बढ़ गये जैसे मन-ही-मन कह रहे हों, कुत्ते भोंका करते हैं, हाथी अपनी राह जाता है।

बच्चे चरागाह में घुसे और जाकर हलों के सामने लेट गये। हलवाहों ने हल चलाना रोक दिया।

अब पुलिस के सिपाही चकराये।

एक ने चीफ़ से पूछा, "अब बताइये चीफ़ साहब, इन नाबालिगों को गिरफ़्तार करें ?"

चीफ़ कुछ उत्तर न दे सका। थानेदार भी पशोपेश में पड़ गया।

"इन्हें पकड़कर बाहर कर दो।" थानेदार ने कुछ क्षण सोचने के बाद कहा।

सिपाही गये और एक-एक ने एक-एक बच्चे को उठाया और चरागाह के बाहर छोड़ दिया।

बच्चे फिर गये और हलों के सामने लेट गये।

सिपाहियों ने फिर वही क्रिया दुहरायी।

यह सिलसिला कोई घण्टे-डेढ़ घण्टे तक चलता रहा। सिपाही हाँफने लगे, लेकिन बच्चों के लिए यह मजेदार खेल था।

अब थानेदार ने झल्लाकर हुक्म दिया, "पकड़कर गाड़ी में डाल दो। इन्हें भी जेल में ठूँस देंगे।"

बच्चों पर इस धमकी का कुछ असर न हुआ। वे लेटे रहे।

पुलिस के सिपाही गये, उन्हें उठा लाये और गाड़ी में डाल दिया। बच्चों ने गाड़ी के भीतर से ही नारा लगाया, "इन्कलाब जिन्दाबाद ! धरती हमारी है। हम उसे लेकर रहेंगे।"

गाड़ी चल पड़ी । हल फिर चलने लगे ।

पाँचवें दिन जब हल मजे में चलते रहे, कोई सत्याग्रह करने न आया, तब शाम को महावीर सिंह और मि० गुप्ता खूब हँसे । महावीर सिंह के प्राइवेट कमरे में दोनों बैठे थे ।

महावीर सिंह एक प्याला पीने के बाद सिगरेट का कश लेते हुए बोले, "टाँय-टाँय फिस हो गया गान्धी महराज का सत्याग्रह !"

मि० गुप्ता भी हँसने लगे ।

पुलिस वाले छठे दिन भी आये । लेकिन जब उस दिन भी कोई सत्याग्रह करने न आया, तब शाम को थानेदार गढ़ी गया और मि० गुप्ता से मिला ।

"मैनेजर साहब," थानेदार ने पूछा, "अब बताइये, हमारी क्या जरूरत ?"

"आपका बहुत-बहुत शुक्रिया ।" मि० गुप्ता बोले । "मैं कुछ समझ नहीं पा रहा ।"

"हम तो तभी समझ गये थे, जब औरतें आयी थीं," थानेदार ने हँसते हुए कहा । "इसके बाद बच्चों की बारी आयी । अब कुछ नहीं होने का । आप बेफिक्र रहिये ।"

मि० गुप्ता ने थानेदार को जलपान कराया और वह उनसे हाथ मिलाकर रुखसत हो गया ।

शहर से आधी पुलिस छठे दिन सवेरे ही जा चुकी थी ।

30

सत्याग्रह बन्द होने के दूसरे दिन ननकू सिंह के बगर में तीसरे पहर आन्दोलन कमेटी की बैठक हुई । बगर के किवाड़ अन्दर से कुंडी लगाकर बन्द कर दिये गये । जिस ओसारे में जाड़े में बैल बँधते थे, वहीं एक फटे

टाट पर कमेटी के मेम्बर बैठे।

रामशंकर ने पूछा, "अब बताओ, आन्दोलन किस तरह चलाया जाय ?"

ननकू ने कहा, "सबसे पहिले गिरफ्तार किसानों के खेत जुतवाने का प्रबन्ध होना चाहिए।"

सब एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे।

रामशंकर बोला, "छंगा भैया, बता ना, कैसे प्रबन्ध करें ?"

छंगा ने सिर खुजलाया। पंचायतों में सयाने बातें करते थे। वह बैठा सुना करता था। कभी-कभार कुछ बोल देता था। अब खेत जुतवाने का भार उस पर डाला जा रहा है। उसने सोचा, मैं अकेला भला कैसे यह काम करूँगा ?

"मैं क्या बताऊँ, छोटे पण्डित ?" वह अड़ते-अड़ते बोला।

"काहे, तू रोटी नहीं खाता ?" इतवा ने उसे आड़े हाथों लिया।

"भला बताओ, मैं अकेले सबके खेत कैसे सँभारूँ ?" छंगा ने विवशता प्रकट की।

रामशंकर ने समझाया, "किसी एक को सबके खेत थोड़े जोतने हैं, छंगा भैया। जुगुत बतानी है तुमको।"

बात छंगा की समझ में आ गयी। वह थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर बोला, "तो चँतुवा, इतवा, तुम पंच लाओ हरवाह।"

अब शंकर ने सहारा दिया, "रामजोर के हियाँ कोई हल चलाने वाला नहीं है। सबसे पहिले उसके खेतों का बन्दोबस्त करो। बसन्ता भैया कि खातिन जन जरूरी है। बुधुवा अकेले न संभार पायेगा।"

इसके बाद रामशंकर ने उन सब किसानों की सूची बनायी जिनके लिए हलवाहों की जरूरत थी। फिर पूछा, "बनियों, हलवाइयों की दुकानें चलाने के लिए आदमी चाहिए ?"

"कुछ जरूरत नहीं," ननकू ने कहा। "उनकी औरतें दुकानें चला लेंगी। अपने बालमटेर यह देखें कि मेहरिया जात के दुकानों में कोई लफंगई न करे।"

बालमटेर शब्द पर रामशंकर को हँसी आ गयी थी। वह बोला,

"काका, वालंटियर कहो या स्वयंसेवक ।"

"जैसे नागनाथ, वैसे साँपनाथ," ननकू ने गर्दन हिलाकर उत्तर दिया। "जीभ तीन कुलांटी भरै, तौ बोलि पावै ।"

सब हँसने लगे।

इसके बाद रामशंकर समझाने लगा, "आन्दोलन अब नयी मंजिल में पहुँच गया है। जर्मनी से लड़ाई की वजह से सरकार बहुत ही ज्यादा सख्ती कर रही है। पुलिस कम्पू से आकर डेरा डाले है। तो अब हम पंच को, याने कमेटी के मेम्बरों को रात में अपने घर में न सोना चाहिए।"

यह अनोखी सलाह सुनकर सब रामशंकर का मुँह ताकने लगे।

"का कहते हो, छोटे पण्डित !" छंगा बोला, "घर में न सोवें। बावा कच्चा खाय जई। फिर तुम्हार भौजी ?"

सब हँसने लगे।

"बाबा को हम समझा देंगे," रामशंकर ने कहा।

"औ' भौजी की फिकिर न करो, छंगा भैया," चैतुवा बोला, "तीन-तीन देवर हैं। सँभार लेंगे।" और अँगुली से अपनी ओर, फिर इतवा और रामशंकर की ओर इशारा किया।

इतवा हँसने लगा। रामशंकर ने अपनी हँसी दाँतों से ओठ दबाकर रोकी। फिर समझाया, "हम पंच हिंगुवा-ब्योहारी के यहाँ सो जाया करें। लेकिन इसका पता किसी को न चले या कोई और जगह छिपने की बनायें।"

अब सभी सोचने लगे, छिपने लायक जगह कौन-सी हो सकती है।

इतवा थोड़ा सकुचाते हुए बोला, "हमारे सोरी तो रह नहीं गयी। सुअर बाड़े को साफ करके सोने लायक बना लेंगे।"

"एकान्त में है ?" रामशंकर ने पूछा।

"बिल्कुल।" इतवा ने बताया। "उधर भूले से भी कोई नहीं जाता।"

अब छंगा को भी एकान्त स्थान मिल गया। उसने बताया, "बसन्ता काका के खँडहर में कुम्हारों ने आवां लगाया था। वह खाली पड़ा है।"

छिपने की जगहों का फैसला हो जाने के बाद रामशंकर ने एक झोले

टाट पर कमेटी के मेम्बर बैठे।

रामशंकर ने पूछा, "अब बताओ, आन्दोलन किस तरह चलाय जाय ?"

ननकू ने कहा, "सबसे पहिले गिरफ़्तार किसानों के खेत जुतवाने का प्रबन्ध होना चाहिए।"

सब एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे।

रामशंकर बोला, "छंगा भैया, बता ना, कैसे प्रबन्ध करें ?"

छंगा ने सिर खुजलाया। पंचायतों में सयाने बातें करते थे। वह बैठा सुना करता था। कभी-कभार कुछ बोल देता था। अब खेत जुतवाने का भार उस पर डाला जा रहा है। उसने सोचा, मैं अकेला भला कैसे यह काम करूँगा ?

"मैं क्या बताऊँ, छोटे पण्डित ?" वह अड़ते-अड़ते बोला।

"काहे, तू रोटी नही खाता ?" इतवा ने उसे आड़े हाथों लिया।

"भला बताओ, मैं अकेले सबके खेत कैसे सँभारूँ ?" छंगा ने विवशता प्रकट की।

रामशंकर ने समझाया, "किसी एक को सबके खेत थोड़े जोतने हैं, छंगा भैया। जुगुत बतानी है तुमको।"

बात छंगा की समझ में आ गयी। वह थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर बोला, "तो चैंतुवा, इतवा, तुम पंच लाओ हरवाह।"

अब शंकर ने सहारा दिया, "रामजोर के हियाँ कोई हल चलाने वाला नही है। सबसे पहिले उसके खेतो का बन्दोबस्त करो। बसन्ता भैया कि खातिन जन जरूरी है। बुधुवा अकेले न संभार पायेगा।"

इसके बाद रामशंकर ने उन सब किसानों की सूची बनायी जिनके लिए हलवाहों की ज़रूरत थी। फिर पूछा, "बनियों, हलवाइयों की दुकानें चलाने के लिए आदमी चाहिए ?"

"कुछ ज़रूरत नही," ननकू ने कहा। "उनकी औरतें दुकानें चला लेंगी। अपने वालमटेर यह देखें कि मेहरिया जान के दुकानो में कोई सफंगई न करे।"

वालमटेर शब्द पर रामशंकर को हँसी आ गयी थी। वह बोला,

"काका, वालंटियर कहो या स्वयंसेवक।"

"जैसे नागनाथ, वैसे सांपनाथ," ननकू ने गर्दन हिलाकर उत्तर दिया। "जीभ तीन कुलांटी भरै, तौ बोलि पावै।"

सब हंसने लगे।

इसके बाद रामशंकर समझाने लगा, "आन्दोलन अब नयी मंजिल में पहुँच गया है। जर्मनी से लड़ाई की वजह से सरकार बहुत ही ज्यादा सख्ती कर रही है। पुलिस कम्पू से आकर डेरा डाले है। तो अब हम पंच को, याने कमेटी के मेम्बरों को रात में अपने घर में न सोना चाहिए।"

यह अनोखी सलाह सुनकर सब रामशंकर का मुँह ताकने लगे।

"का कहते हो, छोटे पण्डित !" छंगा बोला, "घर मे न सोवै। बावा कच्चा खाय जई। फिरि तुम्हार भौजी ?"

सब हँसने लगे।

"बाबा को हम समझा देंगे," रामशंकर ने कहा।

"औ' भौजी की फिकिर न करो, छंगा भैया," चैतुवा बोला, "तीन-तीन देवर हैं। सँभार लेंगे।" और अँगुली से अपनी ओर, फिर इतवा और रामशंकर की ओर इशारा किया।

इतवा हँसने लगा। रामशंकर ने अपनी हँसी दाँतो से ओठ दबाकर रोकी। फिर समझाया, "हम पंच हितुवा-ब्योहारी के यहाँ सो जाया करें। लेकिन इसका पता किसी को न चले या कोई और जगह छिपने की बनायें।"

अब सभी सोचने लगे, छिपने लायक जगह कौन-सी हो सकती है।

इतवा थोड़ा सकुचाते हुए बोला, "हमारे सोरी तो रह नहीं गयी। सुअर बाड़े को साफ करके सोने लायक बना लेंगे।"

"एकान्त में है ?" रामशंकर ने पूछा।

"बिल्कुल।" इतवा ने बताया। "उधर भूले से भी कोई नहीं जाता।"

अब छंगा को भी एकान्त स्थान मिल गया। उसने बताया, "बसन्ता काका के खँडहर में कुम्हारों ने आवा लगाया था। वह खाली पड़ा है।"

छिपने की जगहों का फैसला हो जाने के बाद रामशंकर ने एक झोले

से कुछ चीजें उसी प्रकार निकालकर सामने रखीं जैसे बाजीगर पिटारे से निकालता है और हँसते हुए बोला, "ये सब चीजें हैं भेस बदलने के लिए।"

"बहुरूपिया बनाओगे क्या, बच्चा?" ननकू ने हँसकर पूछा।

"जरूरत पड़ने पर सब किया जाता है, काका।" रामशंकर ने उत्तर दिया। इसके बाद दाहिने हाथ में कुछ चीजें उठाकर बताया, "ये हैं जटा, दाढ़ी-मूँछें, सफेद। बूढ़े साधू बाबा का भेस। जरूरत पड़ने पर तुम इनको लगाओगे, ननकू काका।"

शंकर ने रामशंकर के हाथ से दाढ़ी-मूँछें और जटाएँ ले लीं और गौर से देखने लगा।

"ननकू, अच्छे किंगिरिहा लगोगे। मंजीरों की जोड़ी लै लेना औ' हर गंगा बोलना।" उसने कहा।

"हाँ, महबिरवा सब हरे ले रहा है। अब चाहे मंजीरा लेकर हर गंगा बोलें, चाहे लोटा लेकर भीख माँगें।" ननकू ने उत्तर दिया।

"एक कमण्डल भी रहेगा," रामशंकर ने बताया।

"चलो, ननकू काका का सिलसिला ठीक।" छंगा हँसा।

इसके बाद रामशंकर ने स्त्रियों के काले लम्बे केश निकाले और कहा, "चैंतुवा घँघरी पहन के लड़की बन सकता है।"

"चैंतुवा के लिए ठीक नहीं," ननकू ने काटा। "वह चमरनचना में मेहरियों के बाल लगाकर, घँघरी पहनकर बीस दफे नाच चुका है। सब चीन्ह जायँगे।"

रामशंकर ने मान लिया कि यह भेस चैंतुवा के लिए ठीक नहीं।

सबके अलग-अलग भेस तय हो जाने के बाद रामशंकर ने समझाया, "*भेस बदलने की जरूरत पुलिस की आँखों में धूल झोंकने के लिए पड़* सकती है।" साथ ही उसने सावधान कर दिया, "अपने भेस के बारे में किसी को कुछ न बताना, घर-बाहर कहीं नहीं।"

इस चेतावनी के बाद रामशंकर बताने लगा, "कल से स्वयंसेवक रात में पहरा देने का अभ्यास करेंगे। उनके पास सीटियाँ रहेंगी। सीटी के अलग-अलग इशारे तय कर देंगे, जैसे पुलिस अगर आती हो, तो कैसे

सीटी बजे, पुलिस चमरौड़ी जा रही है, तो किस तरह बजे, वगैरह-वगैरह ।"

"छोटे पण्डित, बड़ा चौकस परबन्ध किया है," शंकर प्रसन्न होकर बोला ।

"करना पड़ता है, काका" रामशंकर ने उत्तर दिया । "एक बात और । कमेटी में जो बात हो, उसकी चर्चा किसी से न की जाय । न घर, न बाहर । जिसको जितना काम सौंपा जाय, उतना ही उसको बताया जाय ।"

बैठक समाप्त होने पर जब सब उठे, तो चेहरों पर वह संजीदगी थी जो किसी बड़े काम का भार संभालने पर आती है ।

31

जंगल कट गया था, लेकिन बबूल, ढाक और दूसरे पेड़ों की जड़ें और ठूंठ जमीन में गड़े थे । इन्हें खोदकर निकालना, तब जमीन को समतल करना और इसके बाद जुताई, कई महीने का काम था । अभी यहाँ तक नहर का कोई रजबहा नहीं पहुँचा था । जिन किसानों की जमीनें इधर थीं, वे बारिश के आसरे धुरिया खेती करते थे । आमतौर से चना बोते थे जो ज्यादा पानी नहीं माँगता । मि० गुप्ता ने महावीर सिंह को सलाह दी, "जंगल में कातिक तक चने बुवा देंगे ।"

"अभी इसी लायक वह है भी," महावीर ने कहा ।

रहती वाली जमीन में ज्वार बोयी गयी । पूरब की चरागाहों की जुताई के बाद पूरे रकबे के इर्द-गिर्द कमर बराबर ऊँची मेंड़ उठायी गई और उसके बीच के पूरे रकबे को नहर के पानी से भर दिया गया । इसके बाद पानी-भरी जमीन में हल चलवाकर लेप किया गया और धान बो दिये गये ।

मि० गुप्ता चाहते थे, बासमती बोया जाय । नौतोड़ जमीन है, अच्छी फसल देगी । महावीर भी सहमत थे । लेकिन सिपाहियों में से एक ने कहा,

"साहेब, बासमती बड़ी कमाई माँगता है। जमीन तो नौतोड़ है, लेकिन जुताई ठीक नहीं हुई। पता नहीं, बासमती हो या न हो।"

दूसरे ने कहा, "इस साल धान की छीटां खेती की जाय। अगले साल से रोपाई करके बासमती बोयें। साठी भादों-कुवांर तक तैयार हो जायगा। उसें काटकर चना बो दिया जाय। बहुत अच्छी उपज होगी।"

मि० गुप्ता को उसकी सलाह जँच गयी और ऐसा ही किया गया।

किसानों ने असाढ़ में अपना कील-काँटा ठीक किया, हल सुधरवाये, चारा न पाने से दुबले बैलों की पीठ पर हाथ फेरे और खेतों में लग गये।

जो किसान गिरफ़्तार हो गये थे, उनके खेतों को जुतवाने-बुवाने की जिम्मेदारी गाँव-सभा ने ली थी। यह काम पूरी मुस्तैदी से किया जाने लगा, जिससे किसी का खेत परती न पड़ जाय।

जो मेहनत-मजदूरी करने वाले गिरफ़्तार हुए थे, उनके घरवालों की देखभाल का बीड़ा भी गाँव-सभा ने उठाया। उनके घरों में जो काम करने लायक थे, उन्हें उन किसानों के खेतों में काम पर लगाया गया जो जेल में थे। किसी तरह का काम करने में अशक्त बूढ़ों के लिए घर पीछे बरार बाँधकर खाने को अनाज देने का प्रबन्ध किया गया।

गिरफ़्तार दुकानदारों की स्त्रियों ने दुकानें सँभाल ली थीं। गाँव-सभा वाले बस यह देखते थे कि कोई लुच्चा-लफंगा आ-बेजा न कहे और उधार का पैसा न मारा जाय।

धनेश्वर मिश्र, दुलारे सिंह और करीम खाँ की माफी जमीनें छीन ली गयी थीं। धनेश्वर होते, तो वह सुभद्रा देवी के पास जाकर मिन्नत-फरियाद करते। केशव में शऊर न था। उसका काम था भंग पीना और पुरोहिती से जो कुछ मिल जाय, उस पर गुजर करना।

उसकी घरवाली ने कहा, "अब बताओ, खाली उपरहिती से कैसे घर चलेगा?"

केशव चुप रहा। उसे कुछ सूझ न पड़ता था।

"बोलते काहे नहीं?" उसने फिर कहा।

"क्या बोलूँ," केशव ने निराशा-भरे स्वर में उत्तर दिया, "जैसी

भगवान की मर्जी होगी !" सिर सहलाते हुए केशव ने आगे कहा, "मुसीबत पूरे गाँव पर आयी है। जो सबका होगा, वही हमारा भी। हाय-हाय करने से कुछ निकास्ता ?"

घरवाली चुप हो गयी।

करीम खाँ असाढ़ के घुमड़ते बादलों को अपने आँगन में खड़े हसरत-भरी निगाहों से देख रहे थे। उनकी बेगम पास ही जमीन पर एक छोटी बोरी पर बैठीं छालियाँ काट रही थीं।

"क्या देखते हो ऊपर की तरफ ?"

"कुछ नहीं," करीम खाँ ने बेबसी के स्वर में उत्तर दिया, "बादल आ रहे हैं। हमारे खेत चले गये।"

बेगम का सरौता रुक गया। यथार्थ उनकी आँखों के सामने पूरे आकार में आकर खड़ा हो गया। सोचने लगी, "जमीन थी, लगान पड़ता न था। खेती हो जाती थी। मजे में घर चलता था। अब ?"

नाउम्मीदी के साथ बोलीं, "तो कुछ सोचा है ?"

"सोचते हैं कम्पू चले जायें। किसी मील में कुछ काम पकड़ लें।"

"मील में मजदूरी ?" बेगम ने कुछ अचरज के साथ पूछा।

"तो पढ़े-लिखे माशा अल्लाह हैं। अफ़सरी कहाँ रखी है ?"

"होगा इतना काम तुमसे ?"

"इंसान क्या नहीं कर सकता बेगम ?" करीम खाँ कुछ उत्साह के साथ बोले। "फिर, हालात सब कुछ करा लेते हैं।" थोड़ी देर बाद बताया, "छोटे बहनोई हैं ना कम्बल पुतलीघर में। उनसे मिलेंगे। कोई न कोई रस्ता निकल आयेगा।"

सबसे अधिक परेशान दुलारे सिंह थे। दो सयानी लड़कियाँ ब्याहने लायक थीं। दो और बच्चे थे। सबका पेट भरने का एक साधन थी खेती। जमीन छिन जाने से आधे पागल-जैसे अपने आप कुछ बड़बड़ाया करते। लड़की आकर कहती, "बप्पा, नोन नहीं है," तो झल्लाकर कहते, "मेरे मूंड़ में भरा है, निकाल ले।"

स्त्री समझाती, "बच्चों से काहे खीझा करते हो। कुछ और काम-धन्धे की सोचो।" तो कहते, "कौन-सा काम-धन्धा। अब आधी उमिर

बीतने पर पकड़ूँ ? पढ़ा-लिखा होता, कहीं जाकर मुनीमी कर लेता। अब तो बोरे भी न उठाये जायँगे कि कुली का काम करूँ।"

यह सुनकर स्त्री की आँखें छलछला आतीं।

दुलारे सिंह को जब कोई रास्ता न सूझा, तो एक दिन ननकू सिंह के घर गये। ननकू चौपाल में बैठा बैलों के जोत ठीक कर रहा था।

"आओ दुलारे भैया, जै रामजी।" ननकू बोला।

"जै राम," दुलारे सिंह ने उदास मन से उत्तर दिया।

"कहो, कैसे आये ?"

"अब सिवाय इसके, उसके दुवारे बैठने के काम क्या है ?" दुलारे सिंह बोले। उनके इन थोड़े शब्दों में उनकी समूची निराशा सिमट आयी थी।

"दुलारे भैया, इतने निरास न हो," ननकू ने समझाया। "मुसीबत सब पर आयी है। मिल-बाँट के सहना है।" थोड़ा सोचकर सलाह दी, "तुम छंगा के साथ साँपर में खेती कर लो।"

"छंगा काहे राजी होगा।"

"राजी करने की जुम्मेदारी मेरी," ननकू सिंह ने पूरे विश्वास के साथ उत्तर दिया।

"काम बन जाय, तो पेट भरने का सहारा हो। बूड़ते को तिनका भी बहुत होता है।" दुलारे सिंह निराशा के ही स्वर में बोले।

"दुलारे भैया !" ननकू सिंह ने जरा कड़ाई के साथ टोका, "तुम अभी से हिम्मत हार रहे हो ! अरे, अब तो मोर्चा लगा है। रिन्द रिन्दै नहीं कि फतेचन्दै नहीं।"

रिन्द नदी बरसात में बुरी तरह से उफन पड़ती है। कोई फतेहचन्द हुए थे। उन्होंने रिन्द पर पुल बनाने का निश्चय किया। पुल दो बार बना और दोनों बार बरसात में रिन्द बहा ले गयी। अब फतेहचन्द को जिद सवार हो गयी। उन्होंने संकल्प किया कि रिन्द पर पुल बनाकर रहूँगा। 'रिन्द रिन्दै नहीं कि फतेचन्दै नहीं।' और उन्होंने रिन्द को बाँधकर ही दम लिया। तब से किसी बहुत कठिन काम में सफलता का बीड़ा उठाने वाले के लिए यह कहावत बन गयी थी। ऐसा कहना वज्र-संकल्प की घोषणा होता था।

यह सुनकर दुलारे सिंह मे कुछ ढाढ़स बँधा। वह बोले, "तो दुलारे पूरे गाँव के साथ है। एक नाव पर सब चढ़े हैं। चाहे बूड़ें, चाहे पार लगें।"

"यह भई मरद की बात!" ननकू सिंह के स्वर में उत्साह-भरी प्रसन्नता थी।

32

कुँवार का महीना आया और पितृ पक्ष में धान कुछ-कुछ पकने लगा। घूम-घूम कर लोग देखते, दशहरे तक कटने लायक हो जायेगा।

पितृपक्ष समाप्त हो गया था और नवरात्रि का आरम्भ था। किशनगढ़ में अजीब हलचल थी। रामशंकर हर दूसरे दिन कानपुर जाता। वहाँ से लौटने पर ननकू सिंह, शंकर सिंह, छंगा, चैंतुवा और इतवा से सलाह-मशविरा करता।

नवमी से एक दिन पहले शाम को मिडिल स्कूल के लड़कों ने डुग्गी पीटी और एलान किया, "ज़मींदार खेत बुवायेगा। हम खेत काटेंगे।" पूरे गाँव में डुग्गी पीटी गयी और सारे गाँव में एक नयी लहर दौड़ गयी।

गढ़ी में भी यह खबर पहुँची। महावीर सिंह बौखलाये हुए रनवास से वाहर आये और एक सिपाही से अजीब घबराहट के साथ कहा, "मैनेजर साहब को बुलाओ!"

नौकर ने मैनेजर को उनके कमरे में देखा, ड्योढ़ी तक गया। वह कहीं न दिखे। लौटकर बताया, "सरकार, मनीजर साहेब न अपने कमरे में हैं, न ड्योढ़ी में।"

"अरे भाई, घर में होंगे। घर से बुला ला।" महावीर परेशानी के स्वर में बोले।

मि० गुप्ता भोजन करने बैठे थे, जब सिपाही उनके यहाँ पहुँचा।

संदेशा पाने पर मि० गुप्ता बोले, "कह दो, अभी आया, खाना खाकर।"

तब तक सिपाही आँगन में आ गया था। उसने वहीं से कहा, "साहेब, सरकार न जाने काहे बहुत घबराये हैं। अभी बोलाया है।"

मि० गुप्ता ने पत्नी से कहा, "न परोसो थाली। अभी आये दो मिनट में।"

उन्होंने कुर्ता पहना और चप्पलें पहन, नंगे सिर चल पड़े।

महावीर सिंह बारहदरी के सामने आँगन में टहल रहे थे।

मि० गुप्ता ने आते ही पूछा, "सरकार ने इस वक्त याद किया?"

महावीर सिंह ने मनादी वाली बात बतायी।

मि० गुप्ता हँसकर बोले, "आप नाहक घबरा गये। यह भी होगा कोई सत्याग्रह।"

"नहीं, मैनेजर साहब," महावीर सिंह ने कहा, "हमें पुलिस को इत्तिला करनी चाहिए। लगता है, ये साले कोई बड़ा ऊधम करने वाले हैं। रोज वालंटियरों की कवायद-परेड, आये दिन गाँव वालों के जुलूस।"

"यह आपका खयाल है," मि० गुप्ता ने निश्चिन्ता के साथ कहा। "कहीं पत्ता न हिलेगा।"

"फिर भी सावधानी बेहतर होगी।"

"मैं कल सबेरे थानेदार से मिलूँगा।" मि० गुप्ता ने कहा। "आप *मजे में आराम कीजिये। सारा इन्तजाम मेरे जिम्मे।"*

महावीर सिंह रनवास चले गये। मि० गुप्ता अपने घर गये।

पत्नी ने पूछा, "क्या बात थी?"

मि० गुप्ता हँसते हुए बोले, "छोकरा है। कुछ लड़कों ने मनादी कर दी है, खेत हम काटेंगे। घबरा गया।"

"लेकिन अगर गाँव वाले सचमुच ऐसा करें?"

"तुम भी पागल हो।" मि० गुप्ता ठठाकर हँसे। "लाओ, खाना लाओ। अंग्रेज का राज है, किसी राँड़ का नहीं। एक-एक का हुलिया टाइट कर दिया जायगा।"

33

जिस तरह सागर के भीतर ठंडी और गर्म धाराएँ बहती रहती हैं, किशनगढ़ के घर-घर में भय-आशंका, रोष-चिन्ता की धाराएँ बह रही थीं। औरतें अधिक डरी हुई और चिन्तित थीं। क्या होगा? क्या नतीजा निकलेगा? ये प्रश्न अलग-अलग रूप लेकर सामने आ रहे थे।

दीनानाथ भगत दोपहर के भोजन के बाद आँगन के दासे पर बैठा बीड़ी पी रहा था। उसकी पत्नी भोजन की जगह जूठे बर्तन रखकर आयी और उसके सामने खड़ी हो गयी।

"तुम इस झमेले में नाहक फँसते हो," उसने चिन्तित स्वर में कहा।

भगत ने बीड़ी के दो कश लिये और बोला, "जानबूझ के फंसते हैं? गले पड़ा ढोल, करें क्या?"

"चुप रहो। न ऊधौ के लेने में, न माधौ के देने में।"

"चुप कैसे रहें? हम गाँव में नहीं बसते?"

"तो हम बनिया-बक्काल, हैं किस खेत की मूरी?"

"हों या न हों, चलना तो है सबके साथ।"

"रोज-रोज की हलाकानी से तो नाकों दम आ गया," भगत की घरवाली बोली। "इससे अच्छा, गाँव छोड़ के चलौ, कम्पू चलें।" और भगत की ओर देखने लगी।

"सिर फिर गया है?" भगत मुँह बनाते हुए गर्दन हिलाकर बोला। "घर, दुकान, फिर कुछ खेतपात। सब छोड़ के नट का जैसा डेरा उठाके कम्पू चलें।"

"तो है कुछ निकास्ता इस बवाल से?"

"अरे कांग्रेस की सरकार आयेगी। जैसे पुराना हिसाब चुकता कराया, सब जगा-ज़मीन लै लेंगे।" भगत ने विश्वास के साथ उत्तर दिया।

"अच्छा!" और भगत की दुलहिन हँसने लगी।

"हँसे जा। मेहरिया की अकिल।" भगत तिनक गया। "छोटे पंडित सब समझा चुके हैं। फिर अपनी खोपरी में भी कुछ गूदा है। कांग्रेस आयी कि सब जगा-ज़मीन किसान को मिली। ज़िमींदारी नहीं रह सकती।"

"मान लिया। पै झंझट में न परो। जो सबका होगा, तुम्हारा भी होगा।"

"हाँ।" भगत ने गर्दन हिलाते हुए कहा, "सदाबरत बँट रहा है। जब मुसीबत, हम पूँछ दबाये बैठ रहें। फिर हीसा-बाँट में सबसे आगे!" भगत हँसा। "खीर में एक, महेरी मे न्यारे। पै ठाकुर-बाँभन लतिया के भगा देंगे।"

छंगा की माँ ने छंगा को समझाया, "बच्चा, न बहुत अक्कास से मूत। छोटे पंडित के हिसकाये धरती मूँड़ पर उठाये फिर रहा है। चींटी चली है पहाड़ उठाने!"

"अम्मा, बहुत उपदेस न बघार," छंगा ने झिड़क दिया। "गाय-बैल को ठाढ़े होने को जग्घा नहीं। घास-पात तक नहीं, हरियर की कौन कहे।"

रामखेलावन पानी पीने के लिए आँगन में आ गया था। वह खड़ा छंगा का भाषण सुनता रहा। जब छंगा बोला, "तू कह दे, तो गाय-बैल काट के फेंक दें।" तब रामखेलावन ने डाँटा, "चुप गदहा! अहिर का लरका, ऐसी बात जोबान पर लावै!"

छंगा ने गर्दन झुका ली। उसने अनुभव किया कि गुस्से में गलत बात मुँह से निकल गयी।

रामखेलावन ने अपनी पतोहू से कहा, "गुट्टी, तू चुप रह। बात न छोटे पंडित के हिसकाने की, न अकेले छंगा की। मामला पूरे गाँव का है। रहूनी गयी, चरी-चापरी गयी, पतार हाथ से निकल गया। अब गोरू-बछेरू बगर में बन्द रहें, जैसे काँजीहौस मे। जब चौगिर्दा से छेंक लिये गये, तो मरता क्या न करता?" फिर थोड़ा रुककर बोला "पै छंगा, बहुत आगे-आगे होने की जरूरत नहीं।"

छंगा चुप रहा। छंगा की माँ वहाँ से चली गयी। रामखेलावन पानी पीने आया था। पानी पीकर चौपाल में जा बैठा।

जब छंगा अकेला रह गया, उसकी दुलहिन आयी और धीरे से बोली, "सुनो, बाबा ठीक कह रहे हैं। थोरा हाथ-पाँव बचाके। बहुत आगे-आगे

लपर-लपर न करो।"

छंगा को अपनी घरवाली का उपदेश बुरा लगा। उसने तैश के साथ झिड़का, "यह बता, तू अहिर की बिटिया है कि बनिया की?" उसे घूर-कर देखा और बाहर जाते-जाते कहता गया, "किसन भगवान गोवर्धन उठाये रहे। फिर अब सवाल है जियें या मरें? पानी नाक बरोबर आ गया है।"

ननकू सिंह तेज मिजाज का था। पत्नी की हिम्मत न होती, कुछ कहे, फिर भी बोली, "मुर्चा लगाये हो। थोरा नान्हे-नान्हे लरिका-गदेलन को देखो।"

"बैठ-बैठ!" ननकू ने दपटा, "छत्री हूं जो रन से भागे, कौवा, गीध मांस न खायें। समुझ लें पल्टन में रहे। एक तो रहीं जो तिलक करके भेजती थीं, तरवार अपने हाथ से देकर, एक तू है। सरम नहीं आती?"

ननकू सिंह की स्त्री मुंह ताकती रह गयी।

"अब तो रिन्द रिन्दे नहीं कि फतेचन्दे नहीं।" ननकू सिंह ने दृढ़ता से कहा। "फिर बचा क्या है? रहनी, पतार, चरागाह सब ले लिया। कल खेत ले ले, तो लोका लेकर भीख मांगें?" और ननकू सिंह का दाहिना हाथ मूंछों पर चला गया।

इतवा की दुलहिन मिट्टी की दोनों गागरें भरने के बाद जगह-जगह से गाँठें लगाकर जोड़ी रस्सी को फंदिया रही थी कि उसने देखा, चैतुवा की दुलहिन दो गागरें लिये जल्दी-जल्दी कुएँ की ओर आ रही है। "जैसे ताके रहती हो चमट्टो। फिर चली आ रही है बिना रस्सी के। हमारी रस्सी तो वैसे टूट गयी है। यह और तोड़ डालेगी।" इतवा की दुलहिन ने मन-ही-मन कहा।

चैतुवा की दुलहिन ने अपनी गागरें रखीं जिनमें से एक का मुंह जगह-जगह से टूटा था।

"बहिनी, तनी लसुरी देव। हम हूँ भरि लें पानी।" उसने इतवा की दुलहिन से कहा।

इतवा की दुलहिन ने बेमन रस्सी उसके सामने फेंक दी। "हमारी गगरी न छू लेना।" उसने चैंतुवा की दुलहिन को सचेत किया।

"आँखें कुछ फूटी थोड़े हैं, बहिनी," चैंतुवा की लुगाई ने जवाब दिया।

"आँखें तो तुम्हारी ऐसी तेज हैं, जो देखा हमें कुएँ पर, आ गयी।"

चैंतुवा की दुलहिन ने कुछ उत्तर न दिया। साबुत गगर का मुँह रस्सी के फन्दे से फँसाने लगी।

"पुरवा वाली, क्या कर रहे हैं घरवाले?" इतवा की दुलहिन ने पूछा।

"किस बावत?"

"अरे, आज गाँव-भर में जो सनसनी है।"

चैंतुवा की दुलहिन गरारी से रस्सी फँसा चुकी थी और गागर कुएँ में डालने को थी। वह रुक गयी। "सबके मिजाज गरम हैं। कल जो बोली, मजूरी करनी है, चलो गाँव छोड़िके अन्त बसें, तो बोले, 'तै जा। हम पुरखन की डेहरी छोड़ि के न जायँगे। सब पासी, चमार, कोरी, पंचायत में गंगा उठा चुके हैं। अब सब एक नाव पर सवार हैं। चाहे पार लगें, चाहे बूड़ें'।"

"घर-घर यही जवाब। छोटे पंडित का ऐसा गुरमंत्र, सब एक बोली बोलते हैं। हम कहा, तो जवाब मिला, 'दुइ सौ घर हैं पासी, चमार, कोरी। कहाँ जायँ भागकर? हम सबकी तगदीर एक साथ बँधी है। रहूनी नहीं, पतार नहीं, गोरू कहाँ चरावें? लकरी कहाँ से लावें? चरवाही, हरवाही सब बन्द। अब तो मिलकर या रावना से लड़ेंगे'।"

"बात तो ठीक है पैंड़ो वाली, पै हम हैं जिमीदार से लड़ने लायक? हमारी हैसियत?"

"एक-एक बूंद से गगरी भरती है। राई से पहाड़।" इतवा की दुलहिन इतवा का पढ़ाया पाठ दुहरा गयी। "भर जल्दी पानी। ससुरी दे। दाल चढ़ा आयी हूँ, जल न जाय।"

गागरें लेकर दोनों आहिस्ते-आहिस्ते सँभल-सँभल कर पैर रखती

चलीं। इतवा की दुलहिन बोली, "कुआँ है कि बिल। जगत है नहीं। कीच-काँदो ऐसा कि पाँव फिसलै।"

"कच्चा कुआँ, उस पर जगत!" चैंतुवा की दुलहिन ने टिप्पणी की।

रामशंकर के सामने सबसे अधिक कठिनाई आयी। वह माँ-बाप से तर्क-वितर्क न करता था। करता अपने मन की, फिर भी कभी बड़ों की बात न काटता। आज पूरा घर उसके खिलाफ़ था।

माँ ने कहा, "बड़कऊ, जैसे पढ़ाई तुमने मँझदार में छोड़ दी। हम छाती पर पत्थर धर के रह गयीं। अब ज़िमींदार से नाहक रार मोल ले बैठे हो। लेना एक, न देना दो। जाव कम्पू, कुछ काम करो।"

रामशंकर ने चुपचाप सुन लिया।

लेकिन शिवअधार ने जब यही बात समझायी, "परायो डाढ़ी की आग बुझाने के लिए अपने हाथ जलाना कहाँ की बुद्धिमानी है?" तब रामशंकर से न रहा गया। वह शान्त स्वर में बोला, "बप्पा, आग परायी दाढ़ी मे नही लगी। कुछ खेत अपने भी हैं। गाय-बैल हैं। कहाँ चरें? कहाँ खड़े हों? आग एक की दाढ़ी में नही लगी। पूरा गाँव जल रहा है। ऐसे में चुपचाप ताकते रहना कहाँ की बुद्धिमानी होगी?"

"तुमने हमारी बात कभी सुनी है? मानी है?" शिवअधार के स्वर में व्यथा-भरी बेबसी थी। "तुमको पढ़ाने में हमने घर फूँक तमासा किया। तुम बीच में छोड़ बैठे। सोचते थे, घर सुधरेगा, तो विधि-विधान कुछ और था। या घर तें कबहूँ न गयो यह टूटो तवा अरु फूटी कठौती।" शिवअधार करुण दृष्टि से रामशंकर को देखने लगे। फिर बोले, "अब पता नहीं भाग्य में क्या है। लगता है, सब बक्री ग्रह जन्मराशि में आ गये हैं। इतने बड़े जमीदार, उनके साथ सरकार, पुलिस—तुम चले हो उनसे मुकाबला करने। गौरैया गयी चील्ह से लड़ने, एक-एक पंख नोचवा आयी।"

"बप्पा, मुँहजोरी माफ करें," रामशंकर ने धीमे स्वर में बिना उत्तेजित होते हुए कहा, "ठीक है, उनमें ताकत है, सरकार उनके साथ है। फिर भी संघे शक्ति:। पूरा गाँव एक है। फिर यह सोचिये, रास्ता क्या है?

अर्जी-फरियाद कर चुके। कुछ नतीजा न निकला।" इसके बाद सान्त्वना के स्वर में बोला, "माता-पिता का चिन्ता करना स्वाभाविक है। फिर भी आपके आशीर्वाद से मंगल होगा।" और उसने शिवअधार के पैर छुए। शिवअधार ने उसके सिर पर हाथ फेरा। फिर बोले, "तुम सयाने हो गये हो। शास्त्र का मत है—प्राप्तेतु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत। फिर भी हाथ-पाँव बचाके। ईश्वर मंगल करें। सरक्षति रक्षितो येन गर्भे।"

रामशंकर की माँ भी आ गयी थीं। वह सब सुन रही थी। उनकी आँखें छलछला आयीं और आँचल से आँखें पोंछते हुए बोली, "बड़कऊ, लरकईन करो। हमारा कहा मानो, कम्पू चले जाव। न जाने काहे हमारा मन धुकुर-मुकुर करता है।"

रामशंकर ने कुछ उत्तर न दिया।

सबसे अधिक कठिनाई रामशंकर के सामने तब आयी, जब उसका सामना बाबा से हो गया।

पं० रामअधार चौपाल में लेटे थे। पास ही फर्श पर टाट बिछाये रामशंकर की दादी बैठी थीं।

"बचनुवा!" पं० रामअधार ने शहद मिले स्वर में पुकारा।

"हाँ, बाबा।"

"अरे, हमारे पास आओ थोरा।"

रामशंकर उनकी चारपाई के पास गया, तो उन्होंने हाथ पकड़कर कहा, "बैठो हमारे पास।"

रामशंकर चारपाई पर पायताने बैठ गया। रामअधार ने रामशंकर का सिर पकड़कर उसे छाती से लगा लिया और बोले, "बचनुवा, तुम देस की सेवा कर रहे हो, बड़ी अच्छी बात है।" और पीठ पर हाथ फेरने लगे, "पै बचनुवा, हम बूढ़े हो गये। तुम्हारी आजी बूढ़ी हैं। हम बूढ़ी-बूढ़ा को देखो। हम दोनों की छाती फटती है कल्पना करके, तुम्हारा क्या होगा।" उनकी वाणी काँप रही थी।

रामशंकर की दादी उसकी जाँघ पर सिर रखकर रोने लगीं। "बचनुवा, तुम काम अच्छा कर रहे हो, पै मन नहीं मानता। बेटवा, हम बूढ़ों का मुँह देखो। पाला-पोसा, आज तुम···" उनकी घिग्घी बँध गयी।

रामशंकर को ऐसा जान पड़ा कि पूरे घर ने सलाह करके बाबा, दादी को आगे किया है। काका ठहरे तेज मिजाज, इसलिए वह चुप हैं। बप्पा-अम्मा समझा चुके। उनको जवाब भी दिया। लेकिन इनसे क्या कहूँ? उसे लगा, इनके स्नेह के बन्धन लोहे की जंजीरों से भी कड़े हैं। वह खामोश बैठा रहा। दादी का सिर उसकी जाँघ पर था और बाबा का हाथ उसकी पीठ सहला रहा था।

"क्या कहा जाय?" उसने अपने-आपसे पूछा, लेकिन कुछ उत्तर न मिला। वह थोड़ी देर बाद बोला, "बाबा, अर्जुन औ' अभिमन्यु की कहानी तुमने बतायी थी। विदुला की उक्ति बतायी थी जो उसने अपने बेटे से कही थी—कण्डे की तरह धुँधुआते रहने से सरकण्डे की तरह एक क्षण को प्रकाश देकर राख हो जाना अच्छा।" वह रुका और दादी का सिर जाँघ से उठाया। "आजी, उठो। तुम नाहक घबरा रही हो। तुम्हारे औ' बाबा के आसिरबाद से सब ठीक होगा।" उसने अपने हाथ से दादी की आँखें पोंछीं।

"पै बचनुवा, धीरज कैसे धरैं? तुम हमारे देखते होरी में कूदने जा रहे हो। कैसे मन को समझावें?" दादी बोली और रामशंकर के गाल पर हाथ फेरने लगीं।

"आजी, सोचो, डाकू गाँव में घुस आये हैं। घर लूट रहे हैं। आबरू उतार रहे हैं। तो हम टुकुर-टुकुर ताकते रहें?"

इसका उत्तर रामशंकर की दादी के पास न था। उन्होंने लम्बी साँस खींची।

बाबा बोले, "बचनुवा, बात तुम्हारी ठीक है। महावीर सिंह की मति मारी गयी है। प्रजा गाय, राजा गोपाल होता है, कसाई नहीं। महावीर गो-दोहन न कर, गोबध कर रहा है। पै बचनुवा, हम बूढ़ों को देखो। तुम संकट में फँसे, तो हमारी दसा दसरथ जी वाली होगी।...और क्या कहैं।" उन्होंने आह भरी। आँसू ढुलककर उनके गालों की झुर्रियों में फँस गये।

रामशंकर के सामने बचपन से अब तक का अपना जीवन घूम गया। बाबा किस तरह कन्धे पर बैठाकर बाजार ले जाते थे। दादी किस तरह

पैरों पर लिटाकर जुज्जू छोंटे कराती थी। पढ़ाई छोड़ी, तो काका, बप्पा नाराज हुए, लेकिन आजी और बाबा का प्यार पहले जैसा रहा। क्या किया जाये ? उसने अपने आपसे पूछा। उसका सिर चकराने लगा।

34

गाँव मे आज प्रायः सारे दिन जुलूस निकले। पहले विद्यार्थियों का जुलूस निकला जिसमें जोशीले राष्ट्रीय-गीत गाये जा रहे थे। नारा एक ही था, "जमीदार खेत बुवायेगा, हम खेत काटेंगे।"

इसके बाद स्त्रियों का जुलूस निकला। इसमें किसानों की औरतें, दुकानदारों की औरतें और मेहनत-मजदूरी करने वालों की औरतें एक साथ चल रही थीं। इनका भी नारा एक ही था, "जमीदार खेत बुवायेगा, हम खेत काटेंगी।"

इनके जुलूस के बाद तीसरे पहर बूढ़ों ने जुलूस निकाला। इस जुलूस के नेता थे चौधरी रामखेलावन। यह जुलूस पूरा गाँव नहीं घूमा, सिर्फ बड़े गलियारे से होकर बाजार तरफ़ गया और महादेव जी के मन्दिर के पास जाकर समाप्त हो गया। रामखेलावन ने मन्दिर के पास जाकर ललकार-भरे स्वर में कहा, "बोलो, महादेव बाबा की जै !" और सब बूढ़ों ने 'जै' कहा।

सारे दिन की इस हलचल ने मि० गुप्ता को भी घबरा दिया। वह मन-ही-मन सोचने लगे, क्या होने वाला है ? कहीं लोग गढ़ी पर धावा तो न बोल देंगे ? उनके रहने का स्थान गढ़ी के ही अन्दर था। उनको चिन्ता हुई, अगर ऐसा हुआ तो हमारा, बाल-बच्चों का क्या होगा ?

थानेदार ने मदद देने को कहा है, लेकिन हालत बिगड़ती जा रही है, उन्होंने सोचा। शाम को थानेदार के नाम चिट्ठी लिखी जिसमें दिन-भर की हलचल का ब्योरा दिया और लिखा, आप कल सवेरे सिपाहियों को लेकर किशनगढ़ जरूर आ जायें। लगता है, हालत काबू से बाहर होने जा

रही है।

एक सिपाही को घोड़े पर थाने भेजा।' उसने चिट्ठी थानेदार को दी। थानेदार ने चिट्ठी पढ़ी। उसी वक्त कानपुर को फोन किया, एस० पी० को। एस० पी० ने फोन पर कहा, "हालात बिगड़ सकते हैं। तुम आर्म्ड (हथियार बन्द) पुलिस और दूसरे पुलिस सिपाही लेकर वहाँ जाओ। नरखेड़ा थाने को भी फोन कर दो। वे भी पहुँच जायें। हम भी उन्हें फोन से हुक्म दे देंगे।"

थानेदार ने किशनगढ़ से आये सिपाही को जबानी संदेशा दिया, "कह देना मैनेजर साहब से, हम कल सवेरे आ जायेंगे, डरन की कोई बात नहीं।"

सिपाही किशनगढ़ कोई दो घड़ी रात गये पहुँचा। महल में आतंक छाया था। मि० गुप्ता महावीर सिंह के आफ़िस वाले कमरे में बैठे सिपाही के आने का इन्तजार कर रहे थे। सिपाही ने आकर जब थानेदार का संदेशा बताया, तब कुछ जान-में-जान आयी।

"लिखकर कुछ नही दिया?" महावीर सिंह ने पूछा।

"नही सरकार।"

सिपाही चला गया, तब मि० गुप्ता ने समझाया, "सरकारी अफ़सर लिखकर नही देते।"

इधर गाँव में जैसे रतजगा हो। ननकू सिंह के चौपाल में आल्हा हो रहा था, पथरीगढ़ की लड़ाई का बखान था :

हुकुम फेरि दयो है ऊदल ने, डंका लश्कर दयो बजवाय।
बजा नगाड़ा तब दल गंजन, हाहाकारी शब्द सुनाय।
फौजें चलि गयीं पथरीगढ़ से, पहुँची समरभूमि में आयें।
धूलि उड़ानी है टापन से, सूरज रह्यो धुन्ध में छाय।
युद्ध के बाजन बाजन लागे, घूमन लागे लाल निशान।
तेगा चटकें बर्दवान के, कटि कटि गिरें सिरोही ज्वान।

और शंकर सिंह के चौपाल में रामायण का पाठ। लक्ष्मण मिथिलापुरी में ललकार रहे थे :

कही जनक जस अनुचित बानी,
बिद्यमान रघुकुल मणि जानी।
जो तुम्हार अनुशासन पाऊँ,
कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ।
काँचे घट जिमि डारौं फोरी,
सकौं मेरु मूलक जिमि तोरी।
तोरौं छत्रक दण्ड जिमि, तव प्रताप-बल नाथ।
जो न करौं प्रभु पद शपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ॥

श्रोताओं की भुजाएँ फड़क उठी और अनायास बोल उठे, "लखन लाल की जै।"

शंकर सिंह जोश में आकर दहाड़ा :

"जो रन हमें प्रचारै कोऊ,
लरें सुखेन काल किन होऊ।
छत्री तन धरि समर सकाना,
कुल कलंक तेहि पामर जाना।"

आल्हे के साथ बजती ढोलक के 'कट गिनिन-गिनिन', 'कट गिनिन-गिनिन' के बोल रात के सन्नाटे में गढ़ी की दीवारों से टकरा रहे थे। रणवीर सिंह पहली मंजिल के छज्जे मे पलँग पर लेटे थे। सुभद्रा देवी पास ही कुर्सी पर बैठी थी।

"आज सारे दिन जाने कैसा गुल-गपाड़ा रहा। कमरे तक कुछ आवाजें आ रही थीं।" रणवीर सिंह बोले। "इस वक्त यह कैसा शोर है?"

सुभद्रा देवी सोचने लगीं, बतायें या नही? कही तबीयत फिर खराब न हो जाय?"

"बताइये ना रानी साहेब!" रणवीर सिंह ने प्रश्न दुहराया। "हमने दिन में कुछ सुना था, जमीदार खेत बुवायेगा, हम खेत काटेंगे।"

अब सुभद्रा देवी ने गोल-मोल ढंग से चरागाहों वाले धान के खेत के काटने की बात बतायी।

"क्या!" रणवीर सिंह ने बड़ी-बड़ी आँखें तरेरीं। "किसान! हम

को धमकी दे रहे हैं ! वह हमारा खेत काटेंगे ! अरे, हम जो कुछ कहते थे, वह तो थी धरम की बात। ये साले टुकाची हम को धमकाते हैं ! लाइये बन्दूक।" रणवीर सिंह उठ बैठे। "अभी जाकर मनकू, संकर, छंगा को ढेर कर दें। बरमहत्या से डरते हैं, नहीं रामसंकर को भी साफ कर दें। ढोर, पासी, हैं किस खेत की मूली ?" रणवीर सिंह एक साँस में कह गये। "बुलाइये लाल साहब को। इन सबके खेत कटा लें। हम बन्दूक लिये खड़े रहेंगे। देखें, कौन आता है बचाने, अशोक जी या गान्धी।" रणवीर सिंह ठकुरी गुस्से से ओठ काटने लगे।

थोड़ी देर बाद महावीर सिंह आये और सब कुछ सुनने के बाद समझाया, "पापा साहब, आप आराम कीजिये। पूरा इन्तजाम है। कोई चूँ न कर सकेगा।"

रणवीर सिंह हँसे। "शेर का बेटा शेर होता है। शाबाश लाल साहब। किसी की धमकी के सामने झुक जाय, वह ठाकुर नहीं।"

महावीर सिंह चले गये। सुभद्रा देवी प्रसन्न थीं, तबीयत नहीं बिगड़ी। रणवीर लेट गये और गाने लगे—"जो रन हमैं प्रचारै कोऊ। लरैं सुखेन काल किन होऊ।"

महावीर सिंह पिता के पास से अपने कमरे में आये। वहाँ मि० गुप्ता सिर झुकाये पहले से बैठे थे।

"हुजूर, लगता है कुछ होकर रहेगा," मि० गुप्ता घबराहट के स्वर में बोले।

"हम तो पहले ही कहते थे," महावीर सिंह ने कहा। "हमारी राय है, सिपाही को फिर थाने भेजिये। अच्छा हो पुलिस अभी आ जाये।"

"अब इतनी रात गये ? बारह बज गये हैं।"

"लेकिन यह रात तो करबले की रात जान पड़ती है।" महावीर सिंह के स्वर में चिन्ता थी।

"जी हाँ, जैसे प्रलय होने जा रहा हो।" मि० गुप्ता ने जोड़ा।

"तो भेजिये सिपाही !" महावीर सिंह ने ज़ोर दिया।

सिपाही फिर घोड़े पर थाने गया, मि० गुप्ता का पत्र लेकर। थाने

के बाहर पुलिस का जो सिपाही पहरा दे रहा था, वह देखते ही झिड़क कर बोला, "कैसे हैं नामरद तुम्हारे जमींदार! रात थानेदार साहब नहीं मिल सकते। सवेरे के लिए हम सब तैयार हैं। हुक्म हो गया है।"

किशनगढ़ से आये सिपाही ने बहुत आरज़ू-मिन्नत की, तो पहरे पर तैनात सिपाही ने मि० गुप्ता का खत थानेदार के घर पहुँचा दिया। थानेदार गहरी नींद सोया हुआ था। दरवाज़ा खटखटाने पर काफी देर बाद उसकी नींद टूटी। "कौन है?"

"हुज़ूर, किशनगढ़ से खत आया है।"

किशनगढ़ से और खत सुनकर थानेदार आँखें मलता हुआ उठा। बड़बड़ा रहा था, "इन सालो के मारे सो भी नही पाते।"

दरवाज़ा खोलकर खत लिया। लालटेन की बत्ती को ज़रा ऊपर किया और खत पढ़ा।

"कह दो जाकर, कल सवेरे आ रहे हैं।"

सिपाही वापस गया और यही संदेशा किशनगढ़ से आये आदमी को दिया। वह लौटा और जाकर मि० गुप्ता को बताया। वह अब तक महावीर सिंह के कमरे में ही बैठे थे। संदेशा सुनकर दोनों के उतरे हुए चेहरे पालामारी फसल की तरह मुरझा गये।

उधर गाँव से आल्हे की ढोलक की आवाज़ आ रही थी।

35

रामशंकर नवमी को सारे दिन इधर-उधर घूम-घूम कर प्रबन्ध करता रहा। रात उसने महादेव जी के मन्दिर के दरवाज़े के ऊपर बनी छोटी-सी कोठरी में बितायी। वह निश्चित था कि यहाँ तलाशी लेने आये, इतनी पुलिस में बुद्धि नहीं। सबसे कह दिया था, सवेरे पौ फटने से पहले चौमुजी माता के मन्दिर के पास आ जायें। वहाँ से चल कर गाँव के पूरब बरगद के पेड़ के पास जमा होंगे। फिर धान का खेत काटेंगे। सीधे बरगद

के नीचे इकट्ठे होने में रामशंकर को भय था, अगर पुलिस पहले से वहाँ हुई, तो दो-दो, चार-चार के जाने से सबको गिरफ्तार कर लेगी।

रामशंकर नन्ही-सी कोठरी में पैर सिकोड़े लेटा था। कान उसके बाहर लगे थे। किसी जानवर के चलने की आहट से वह चौकन्ना हो जाता। एक बार उसे ऐसा लगा जैसे बहुत आहिस्ते-आहिस्ते पैर रखता कोई मन्दिर के अन्दर आया। वह सतर्क हो गया और किवड़िया से बाहर देखने लगा। एक कुत्ता महादेव जी की जलहरी से चप-चप की आवाज करता पानी पी रहा था। रामशंकर को हँसी आ गयी।

करवट बदलकर रामशंकर ने सोने की कोशिश की, लेकिन नींद गायब थी। उसका मन गाँव वालों से हुई बातों की ओर चला गया। खलियानों में मिले मुट्ठी, दो मुट्ठी दानों पर जीने वाली कौशल्या बुआ आज चण्डी बनी हैं। तीरथ लोध के मरते समय गोदान में मिली गाय को ठेलती हुई जा रही थी। मुझे देखकर दोनों हाथ उठाकर इस तरह बोलीं जैसे मनादी कर रही हों—बच्चा रामसंकर, देखो, हाड़-पाँजर निकल आये हैं गाय के। नहर पार चराने गयी थी। वहाँ भी घास नहीं। बनिया, तेली जड़ से छील ले गये। क्या करें बिचारे! पै गऊ-बरांभन का सराप या महबिरवा को लै डूबेगा। अब सहा नहीं जाता, बच्चा। कुछ करौ। औ' मैं गाँव की खातिन परान दै दूँगी।

फिर उसे छंगा की याद आयी और पुरानी बातें मन के पर्दे पर उतरने लगीं, छंगा की चुहल, छंगा की दुलहिन का हँसी-मजाक। रामशंकर कानपुर से आया था और छंगा से मिलने गया था। आँगन में बैठे दोनों बातें कर रहे थे। इतने में छंगा की दुलहिन आ गयी और मुसकराकर कहा, "ननदोई, हमें भी कम्पू ले चलो।" रामशंकर कुछ कहे, इसके पहले ही छंगा बोल पड़ा, "ले जाओ छोटे पंडित। इनसे साइत जी भर गया है।" इस पर रामशंकर ने जरा हँसते हुए पूछा, "काहे भौजी?" तो छंगा की दुलहिन ने वह उत्तर दिया कि रामशंकर को जवाब न सूझा। उसने कहा, "एक लाँग बाँधने वाले पंडित में बूता नहीं जो अहिर की बिटिया को सँभारै।" और खूब हँसी। फिर बोली, "भूल गये होरी की बात? रंग खेलने आये थे बड़ी मरदूमी से। लाँग तक खुल गयी थी।

चाहती, तो धोती का साफा बाँध के भेज देती तुमको तुम्हारी अंखलगी, कुंती दीदी के पास।"

तभी रामशंकर को छंगा की दुलहिन का एक और मजाक याद आ गया। रामशंकर अपनी बड़ी बहन कुन्ती के पास अपने घर के आँगन में बैठा खीर-पूड़ी खा रहा था, राखियों के दिन। कुन्ती ने खीर में लगाकर पूड़ी का एक कौर रामशंकर को खिलाया। रामशंकर ने पूड़ी का कौर कुन्ती के ओठो से लगाया ही था कि छंगा की दुलहिन आ गयी। देखकर मुसकराते हुए बोली, "ननद-ननदोई लहकौर खिला रहे हैं।"

कुन्ती और रामशंकर दोनों कुछ शरमा-से गये। उनकी माँ ने जो आँगन में खड़ी थीं और छंगा की दुलहिन उनके पैर छू रही थी, छंगा की दुलहिन की पीठ पर आशीष के लिए हाथ फेरते हुए कहा, "यह नरसेरा वाली भाँड की बिटिया है।"

छंगा की दुलहिन ने मुसकराकर चट उत्तर दिया, "तुम महतारी हो, कक्की। तुम जयादा जानती हो।"

रामशंकर हँसी दबाने के लिए दाँतों से निचला ओठ काटने लगा।

आज के मजाक के साथ पिछली बात याद आने पर रामशंकर ने मन-ही-मन कहा, छंगा की दुलहिन पढ़ी-लिखी तो नहीं है, लेकिन हाजिर जवाबी और हँसी-मजाक में पढ़े-लिखों से कम नहीं।

फिर उसे उस तुम्बी में तूफान की याद आयी जो उसके छंगा के घर इतना आने-जाने को लेकर उठा था। बिसेसर मिसिर की दुलहिन ने कौशल्या से हाथ फैलाकर गली के चौराहे पर कहा था, "दीदी, बना फिरता है बड़ा कांगरेजी नेता औ' छंगा की दुलहिन से फँसा, तो वो जूते परे कि छठी का दूध याद आ गया।"

कौशल्या को उसका ऐसा कहना बुरा लगा था। उन्होंने आड़े हाथों लिया था, "दुलहिन, रामसंकर को हम लरिकई से जानती हैं। वो ऐसा लरिका नहीं।"

लेकिन बिसेसर की दुलहिन भला कब मानने वाली। "तो फिर आवा-जाही अब काहे बन्द है ?" यह प्रश्न उछालकर हाथ नचाती हुई अपने घर का रास्ता लिया था।

अम्मा ने कहा था, "बड़कऊ, जैसे हम तुम्हें अच्छी तरा जानती हैं। पै जितने मुँह, उतनी बातें, लोग-बाग का मुँह कैसे बन्द करें?" और रामशंकर खामोश रहा था। उसकी समझ में न आता था कि इस बेसिर-पैर की बात की क्या सफाई दे। वह यह भी न समझ पा रहा था कि आखिर लत्ते का साँप बनाया किसने।

दो महीने तक छंगा के यहाँ रामशंकर का आना-जाना बद रहा। लेकिन एक रात जब वह भोजन करके लेटा ही था, बाहर से आवाज आयी। रामशंकर आवाज पहचान गया। अजीब पशोपेश के साथ उठा और बाहर आया। रामशंकर के आते ही छंगा बढ़कर उससे लिपट गया और बोला, "साथी, नाखुस हो गये तुम!"

"नहीं तो।" रामशंकर ने छंगा के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा।

"तो फिर आते क्यों नहीं?"

रामशंकर चुप रहा

छंगा ने रामशंकर की झुकी हुई ठुड्ढी को ऊपर उठाते हुए कहा, "अरे, तुम भी कौवा कान ले गया, तो कौआ के पीछे भागे। हाथी अपनी राह चलता है, कूकुर भूँका करते हैं!" छंगा ने बड़ी मस्ती से कहा। अहिरौड़ा में सब बिगरे हैं। बसन्ता काका बोला, 'कोई ससुर हमारी पुतऊ को जो दोख लगायेगा औ' छोटे पंडित को नाहक सानेगा, गऊ आदमी को, तौ हम उसके लाठी घुसेड़ देंगे। औ' बाबा के पास गया, पूछा, 'बताओ कौन सार कहि रहा है? अब हीं खन के गाड़ दें'।"

"बाबा ने क्या कहा?" रामशंकर ने उत्सुक होकर पूछा।

"धीरज धरो, सब बताते हैं।" छंगा ने मुसकराकर उत्तर दिया। "बाबा बोले, 'दोस्त-दुस्मन सबके हैं। छंगा से छोटे पंडित का साथ आँखों में खटकता है गवैयादारों को। छोटे पंडित गाँव को बाँधि रहे हैं, सब जात को मिला रहे हैं, इसी से बैरियों की छाती पर साँप लोट रहा है।' औ' हमसे कहा, 'जा छंगा, पाँव पकर के मना ला'।"

"तो हम नाखुस थोड़े हैं," रामशंकर छंगा को गले से लगाते हुए बोला, "हम तो बस इसलिए न आने लगे कि कहीं तुम्हारे मन में..." अड़ते-अड़ते, "हमारे या भौजी के बारे में...।"

"राम, राम," छंगा अपने कानों पर हथेलियाँ रखते हुए बोला, "यह तुम क्या कह रहे हो, छोटे पंडित ! सोना जाने कसे, मानुस जाने बसे। तो तुमको बरकई से देख रहे हैं।" छंगा थोड़ा रुका और शरमाते हुए धीरे से कहा, "ओ' तुम्हारी भौजी, छोटे पंडित, निखालिस दूध है, थन से निकारा।"

रामशंकर को इस समय भी उसी प्रकार हँसी आ गयी जैसे वह तब हँसा था जब छंगा ने ऐसा कहा था।

इसके बाद रामशंकर का ध्यान ननकू और शंकर की ओर गया। उसे लगा जैसे ननकू सिंह सामने खड़ा मूँछों पर ताव दे रहा हो और शंकर सिंह गर्दन जरा टेढ़ी किये क्षत्रियों के गुण बखानने वाली कोई चौपाई जोर से बोल रहा हो। दोनों के चेहरे मन के पर्दे पर उतरते ही रामशंकर का हौसला दूना हो गया।

फिर उसे चैतुवा और इतवा की याद आयी। हमेशा गालियाँ और मार खाने वाले ये दबे-पिसे खेत-मजूर आज वज्र बन गये हैं। "छोटे पंडित, तुम्हारे एक इसारे पर परान दे देंगे।" दोनों के ये शब्द रामशंकर को गूँजते जान पड़े।

रामशंकर ने सोचा, यथार्थ की आग ने इन सबको तपाकर कुन्दन बना दिया है। एक चट्टान खड़ी है महावीर सिंह के सामने।

रामशंकर ने करवट बदली और उसका ध्यान अपने घर की ओर गया। बाबा ने नवरात्रि में दुर्गा सप्तशती का पाठ पूरा करने के बाद आज प्रसाद में री का टुकड़ा दिया। बाबा उस समय बहुत प्रसन्न थे। बताने लगे, "बचनुवा, चौमुजी माता में प्रसाद लेने सब आये, ननकू, संकर, रामजोर, छंगा, दुलारे सिंह, भगत, यहाँ तक कि करीम खाँ भी। ऐसा लगा, जैसे न कोई हिन्दू, न मुसलमान, न आरियासमाजी। सब बस किसुन-गढ़ के हैं। चौमुजी माता जैसे इन सबका मिला-जुला साक्षात रूप हों।"

गाँव किस तरह एक हो गया है, रामशंकर ने सोचा। चौमुजी माता किशनगढ़ की मिली हुई शक्ति का रूप बन गयी हैं।

लेकिन तभी बाबा की चेतावनी याद आयी, बचनुवा, जो चाहो करो, लेकिन हाथ-पाँव बचाकर। और तभी उसके सामने माता, पिता,

बूढ़े बाबा, दादी सबके चित्र आ गये। उसे लगा, जैसे माँ आँसू भरे खड़ी हों और कह रही हों, बड़कऊ, हाथ-पाँव बचा के; दादी अपने गले से लगाकर पोपले मुँह से गाल की चुम्मी लेते हुए कह रही हों, बचनुवा, हाथ-पाँव बचा के; पिता गर्दन झुकाये खड़े हों, उनका उतरा हुआ चेहरा ही जैसे कह रहा हो, बड़कऊ, हाथ-पाँव बचा के।

रामशंकर उठ बैठा। मन-ही-मन सोचा, यह क्या! परिवार के बन्धन ऐन मौके पर आड़े आ रहे हैं। सिर को ज़ोर से हिलाया जैसे इन विचारों को निकाल बाहर करना चाहता हो। उसे बहुत दूर से आती आवाज़ सुनायी पड़ी—कायरों को ही सदा मौत से डरते देखा, और लगा जैसे ननकू सिंह आँखें तरेरे सामने खड़ा कह रहा हो—'रिन्द रिन्दे नहीं कि फ़तेचन्दे नहीं।'

रामशंकर दीवार से पीठ टिकाकर पहले बैठा रहा, फिर लेट गया। मन को इधर-उधर भटकने से रोका और आँखें बन्द कर सोने का प्रयत्न करने लगा।

36

रामशंकर आधी बाँहों की, कूल्हों तक लम्बी फतुही और खद्दर का घुटन्ना पहने, फटी-सी चप्पलें डाले, दाहिने हाथ में हँसिया लिये भौमुंजी माता के मन्दिर के पास पहुँचा। दूसरी तरफ से घुटनों तक धोती और बण्डी पहने, नंगे पाँव, दाहिने हाथ में हँसिया लिये छंगा आता दिखायी पड़ा। उसके पीछे थे नंगे बदन, सिर्फ लंगोटे बाँधे इतवा और चैतुवा। दोनों के हाथों में हँसिये थे। इधर एक गली से ननकू सिंह और शंकर सिंह दुलंगी धोती पहने, सिर पर अँगोछे बाँधे और बंडियाँ पहने निकले। उनके हाथों में भी हँसिये थे। उनके पीछे-पीछे आ रहे थे दुसारे सिंह, करीम खाँ और धनेश्वर का बेटा केशव। ये भी हँसिये लिये थे। इन तीनों को देखकर रामशंकर को कुछ आश्चर्य हुआ, फिर भी वह खुश था।

आज पूरा गांव एक है। कुछ ही क्षणों मे सिलबिल धोती पहने, नंगे बदन लेकिन सिर पर मैली गान्धी टोपी लगाये दीनानाथ भगत और दो दुकानदार आते दिखे। ये सब भी हँसिये लिये थे।

इस तरह मन्दिर के पास गांव के कोई सौ लोग इकट्ठे हो गये। ये सब जवान या अधबयस थे।

सब लोग ज़रा बढ़े और मन्दिर की दीवार के आगे आये, तो रामशंकर अचरज से देखता ही रह गया। सामने धोती का कछोटा लगाये दाहिने हाथ में हँसिया लिये कौशल्या नंगे पैर खड़ी थी।

"बुआ तुम !" रामशंकर बोला।

"हाँ बच्चा !" दृढ़ स्वर ने कौशल्या के होने की गवाही दी।

"अरे हम सब, तुम्हारे भाई-भतीजे हैं, तो तुम भला काहे···" आगे रामशंकर को कोई उचित शब्द न मिला।

"रामसंकर," कौशल्या ने पहली जैसी दृढ़ता से कहा, "मैं इस गाँव की बिटिया, इसी माटी मे पली। गाँव की खातिन परान दे दूंगी, सत्ती हो जाऊँगी।"

रामशंकर की समझ में न आ रहा था, कैसे समझाये।

"कौसिलिया दीदी," ननकू सिंह बोला, "रामसंकर ठीक कह रहे हैं। हम तुम्हारे भाई-भतीजे, आज हम जूझेंगे।"

"बच्चा ननकू," कौशल्या ने उसी दृढ़ता से उत्तर दिया, "यह सब ठीक। पै मैं एक न सुनूंगी। आज आगे मैं, पीछे तुम सब, भाई-भतीजे।"

कौशल्या की दृढ़ता के सामने सबको झुकना पड़ा। आगे-आगे कौशल्या चली नेता की तरह। उनके पीछे पहली पाँत में थे रामशंकर, छंगा, इतवा, चैतुवा। दूसरी में ननकू सिंह, शंकर सिंह, दुलारे सिंह। तीसरी में भगत, करीम खाँ, केशव। इनके पीछे-पीछे बाकी सब।

ये सब बढ़ रहे थे। नारे सिर्फ दो थे—धरती हमारी है, हम उसे लेके रहेंगे और जमींदार खेत बुवायेगा, हम खेत काटेंगे।

बरगद के पेड़ के नीचे सब इकट्ठे हुए। पूर्व दिशा रक्ताभ थी। धान की पीली बालों पर उषा की लाली गहरा सुनहला रंग भर रही थी।

'धरती हमारी है— हम उसे लेके रहेंगे' और 'ज़मींदार खेत बुवायेगा, हम खेत काटेंगे' की हुंकार करते हुए सब आगे बढ़े। उनके आगे थी कौशल्या। धान के खेत में हँसिये चलने लगे। किसानों के हाथों में जैसे बिजली दौड़ गयी हो। तेज़ी से कटाई हो रही थी।

इतने में थानेदार आता दिखाई पड़ा जिसके साथ छः बन्दूक वाले सिपाही और दस लाठियाँ लिये सिपाही थे। थानेदार की बगल में महावीर सिंह अपनी बन्दूक लिये और उनकी बगल में मि० गुप्ता थे।

पुलिस को देखकर रामशंकर ने ज़ोर से नारा लगाया, 'ज़मींदार खेत बुवायेगा', बाकी लोगों ने जवाब दिया—'हम खेत काटेंगे', और हँसिये ज़्यादा तेज़ी से चलने लगे।

उधर छंगा, इतवा और चैतुवा ने ललकार भरे स्वर में गाया :

"सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है।"

थानेदार ने उड़ती नजर खेत काटने वालों पर डाली। लोग कोई सौ होंगे। सबके हाथों में हँसिये हैं। उसने मन-ही-मन कहा और सोचा, मामला आसान नहीं है। पीछे मुड़कर देखा, तो उसे नरखेड़ा की पुलिस कहीं न दिखी।

थानेदार आगे बढ़ा और खेत की मेंड़ पर से गरजा, "तुम लोग इसी वक्त खेत से बाहर आ जाओ, वर्ना लाठी-चार्ज होगा।" एक क्षण को थमकर बोला, "गोली भी चलायेंगे।"

ननकू सिंह ने बायें हाथ में कटे धान का पूला और दाहिने में हँसिया लिये हुए आधा उठकर ललकारा, "छत्री हूँ जो रन से भागै, वहिके जीवे का धिक्कार!" हँसिये और तेज़ी से चलने लगे। साथ ही नारा उठा —'ज़मींदार खेत बुवायेगा।' जवाब आया—'हम खेत काटेंगे।'

अब थानेदार ने लाठियों वाले सिपाहियों को हुक्म दिया, "पीट कर खेत से बाहर खदेड़ दो!"

सिपाही लाठियाँ लिये बढ़े और अन्धाधुन्ध लाठियाँ बरसाने लगे। एक लाठी दुलारे सिंह की दाहिनी बाँह पर इतने ज़ोर से लगी कि बाँह टूट गयी और हँसिया खन की आवाज़ के साथ गिर पड़ा। केशव के कन्धे

पर इतने ज़ोर का वार हुआ कि वहीं गिर पड़ा और उसका हँसिया उसके बायें बाजू में घुस गया। खून की धार बह निकली। एक लाठी करीम खाँ के सिर पर पड़ी और उनका कुर्ता-पाजामा लहूलुहान हो गये।

यह सब देखकर रामशंकर ने सीटी बजायी। सीटी से सकेत पाते ही ननकू सिंह, शंकर सिंह, छंगा, चैंतुवा और इतवा अपने-अपने हँसिये लिये उठ खड़े हुए और सिपाहियों की ओर लपके। रामशंकर भी उनके साथ था। उन्हें देखकर दूसरे धान काटने वाले भी लपके। इस अचानक हमले से पुलिस के सिपाहियो के पैर उखड़ गये। वे हँसियो के वार लाठियों पर रोकते पीछे हटने लगे।

कौशल्या मजे में धान काटने में लगी थी।

थानेदार ने जब देखा कि मिनटों में उसके सब सिपाही बुरी तरह से घिर जायेंगे, उसने बन्दूक वाले सिपाहियों को आर्डर दिया, "फायर! (गोली चलाओ)"

तभी महावीर सिंह ने अपनी बन्दूक दाग दी। गोली सीधी कौशल्या की पीठ पर लगी और छेदती हुई अन्दर चली गयी। उकड़ूँ बैठी धान काटती कौशल्या लुढ़ककर गिर पड़ीं। हँसिया उनके दाहिने हाथ की मुट्ठी मे था।

गोली की आवाज़ पर रामशंकर ने मुड़कर देखा और चीख पड़ा, "कौसिलिया बुवा सत्ती हो गयी।"

इतना सुना था कि ननकू और शंकर सीना ताने, हँसियों वाले हाथ कुछ आगे को बढ़ाये भूखे बाघ-से पुलिस पर झपटे। शंकर ने महावीर सिंह को देखा और इस प्रकार दाँत पीसे जैसे मन के किसी कोने में सोया पड़ा अपमान जो रणधीर सिंह ने हण्टर लगाने की धमकी देकर किया था, महावीर को देखकर जाग पड़ा हो। बाप का बदला बेटे से लूँगा। मन के भीतर से आवाज़ आयी। इसका मूँड़ ज्वार के भुट्टे की तरह काटकर। उधर थानेदार को देखकर ननकू ने नथनों से बिफरे साँड़ की तरह फूत्कार छोड़ा। थाने मे इसी ने बेइज्जत किया था। ननकू ने मन-ही-मन कहा। आज सूद समेत चुकता कर लूँगा। रामशंकर और छगा उनकी दाहिनी ओर इतवा और चैंतुवा बायीं ओर तीर से छूटे थे।

आ गये। रामशंकर का बीस साल का छोटा भाई आँगन में बिखरी पोथियों को सहेज रहा था। पुलिस के एक सिपाही ने उसकी पीठ पर लात जमायी और काँख के पास से उसका बायाँ हाथ पकड़कर उसे उठा लिया। उसे घसीटकर गिरफ़्तारों की पाँत में खड़ा किया गया।

औरतें घरों से भाग कर रहूनी वाले ज्वार के खेत में छिप गयी थीं, बेइज्जती होने के डर से।

37

पुलिस के जाने के बाद ज्वार के खेत से औरतें निकलीं, तो कुछ इस प्रकार जैसे बाँध को तोड़कर बरसाती नदी तूफ़ानी वेग से आगे बढ़ी हो। भूख-प्यास भूली औरतें पागल, काली आँधी की भाँति गढ़ी की ओर लपकीं और उत्तर वाले फाटक से टकरायीं। पहले हाथों का ज़ोर लगाया। फाटक न खुलने पर इधर-उधर पड़े रोड़े मारने लगीं। इतवा की दुलहिन भागी-भागी चमरौढ़ी गयी और छोटी-सी कुल्हाड़ी उठा लायी और फाटक के दरवाज़े चीड़ने लगी। ननकू की दुलहिन ने इधर-उधर देखा। उसे ढाक का एक मोटा डंडा पड़ा दिखा। वह उसे उठाकर किवाड़ों पर पीटने लगी। दीनानाथ भगत की दुलहिन इस बीच खिसक गयी थी। वह दाहिने हाथ में मूसल लिये आती दिखी। मूसल को वह गदा की भाँति भाँज रही थी। वह आयी और मूसल से फाटक को कूटने लगी। भगत की घरवाली की देखा-देखी बुधुआ की दुलहिन अहिरौढ़ा गयी भागी-भागी और अपने घर से एक घन्ता उठा लायी। वह फाटक के बाजू के पास बैठकर ज़मीन इस तरह खोदने लगी जैसे गढ़ी को नींव से ही ढा देना चाहती हो। उसके पास खड़ी छंगा की दुलहिन छाती से छः-सात महीने की अपनी बच्ची को चिपटाये, आँखें फाड़े सब कुछ देख रही थी। वह मन-ही-मन पछता रही थी कि वह कुछ नहीं कर पा रही बच्ची के मारे। उधर रामशंकर की माँ दाहिने हाथ में ज्वार का पूरा पौधा लिये निमक।

मुट्ठा झण्डे की तरह लहरा रहा था, चीख रही थी जैसे इस नारी-सेना की कमान सँभाले हों, "ढहा दो गढ़ी को ! एक-एक ईंट उखाड़ लो नासमिटी गढ़ी की !"

फाटक के शीशम की लकड़ी के बने बहुत मजबूत पल्लों पर दोनों ओर दो-दो इंच की दूरी पर लोहे की चार सूत की पत्तियाँ जड़ी थीं और चार-चार इंच की दूरी पर पीतल की तीन इंची व्यास की फूलदार कीलें, पुल्लियाँ ढालों-जैसी उभरी हुई थीं।

इतवा की दुलहिन ताक-ताक कर दो पत्तियों के बीच कुल्हाड़ी मारती, लेकिन शीशम की लकड़ी पर मामूली खरोंच कर कुल्हाड़ी लौट आती।

अब चैतुवा की दुलहिन ने कुल्हाड़ी ले ली और धोती का कछोटा बाँधकर कुल्हाड़ी चलाने लगी। उधर भगत की दुलहिन मूसल से ऐसे चोट कर रही थी जैसे धान कूट रही हो।

शंकर की दुलहिन कहीं से खोजकर एक बड़ा पत्थर उठा लायी और कोई चार सेर का पत्थर जोर से फाटक पर पटका। पत्थर छिटककर परे आ गिरा। फाटक टस से मस न हुआ।

चरागाहों के धान के खेत की घटना ने महावीर की हालत ऐसी कर दी थी जैसे 105 डिग्री का बुखार उतरकर तापमान 95 से नीचे आ गया हो। तीन-तीन खून ! वह गढ़ी आया और अपने बैठक वाले कमरे में सोफे पर निढाल-सा धम से बैठ गया और आँखें छत पर टिका दीं। तीनों लाशें उसकी आँखों के सामने बहुत बड़े आकार में घूमने लगीं। वह होश-हवास खोया, खामोश बैठा रहा। मैनेजर मि० गुप्ता उसके साथ-साथ आये थे, उसके पीछे-पीछे, दुम-से। उन्हें कुछ आशंका थी, इसलिए गढ़ी का फाटक अन्दर से बन्द करवा दिया था। वह भी औसान खोये-से आकर महावीर के बैठक वाले कमरे में एक कुर्सी पर बैठ गये। वकील मि० गुप्ता के दिमाग में एक ही सवाल उठ रहा था, अब क्या होगा ? कौशल्या की मौत महावीर की गोली से हुई है। पता नहीं, पुलिस क्या रुख अपनाये। वह बेचैन-से कसमसाते, इधर-उधर सिर हिलाते, लेकिन बीहड़ जंगल मे भटके हुए से, इस प्रश्न के समाधान का रास्ता न खोज पाते।

इसी बीच एक सिपाही ने आकर बताया कि फाटक के बाहर क्या

हो रहा है।

मि० गुप्ता ने एक क्षण को सोचा, फिर मरे हुए स्वर में पूछा, "फाटक तो भीतर से बन्द है ना ?"

"जी हाँ," उत्तर सुनकर उन्होंने कहा, "तुम सब ड्योढ़ी में आकर बैठ जाओ। फाटक न खोलना।"

सिपाही चला गया। मि० गुप्ता की आशंका ने आतंक का रूप ले लिया।

औरतें कोई तीन घण्टे तक फाटक से सिर मारती रहीं। कभी सब मिलकर जोर से धक्का मारतीं; कभी मूसल, कुल्हाड़ी और मोटी लकड़ियों से फाटक को तोड़ने की अलग-अलग कोशिश करतीं, लेकिन फाटक था कि हिलने का नाम न लेता।

तभी, सूरज डूबने के कोई एक घण्टा बाद एक वालंटियर ने आकर बताया, शहर से लाशें आ गयी।

तीन-तीन खून हो जाने से पुलिस चिन्तित थी, शहर में खबर फैलते ही कांग्रेसी न जाने कौन-सा तूफान खड़ा कर दें। इसलिए, थानेदार के बताने पर भी एस० पी० ने कौशल्या के मामले को तूल को देना ठीक न समझा। उसने पुलिस अस्पताल के डाक्टर को समझाया। डाक्टर ने पोस्ट-मार्टम (शव-परीक्षा) की खानापूरी कर दी और लाशें गाँव से आये वालण्टियरों को दे दी गयीं।

ननकू सिंह के दरवाज़े पर अस्पताल के सफ़ेद कपड़ों में लिपटी लाशें तीन-चारपाइयों पर रखी थीं। पास ही पं० रामअधार दुबे और चौधरी रामखेलावन सिर लटकाये खड़े थे।

औरतें आयीं, तो ननकू सिंह की दुलहिन पछाड़ खाकर ननकू की लाश पर गिरी और धाड़ मारकर रोने लगी। दूसरी औरतें भी सिसकियाँ भर रही थीं। करीम खाँ की बेगम नगे पाँव बिना बुर्का डाले गिरती-पड़ती आयी थी। वह अपने कुर्ते से आँसू पोछ रही थी। शंकर की दुलहिन शंकर की चारपाई के पास काठमारी-सी बैठी थी। उसकी आँखों में एक भी आँसू न था जैसे शोक की आग में उसके आँसू छनक गये हों।

कुछ देर बाद ननकू की दुलहिन चीखी, "फूँक दो, आग लगा दो,

गढ़ी को। खा गया महविरवा हमार अहिवात।" और इसके बाद लपकी हुई अपने घर गयी और मिट्टी के तेल से भरा छोटा-सा अद्धा उठा लायी जिसका मुँह टूटा हुआ था। अद्धे पर धूल की परत जमी हुई थी।

"चलो, फूंक दें गढ़ी !" वह दहाड़ी।

पं० रामअधार किसी भी विपत्ति के समय गांव वालों को धीरज बँधाया करते थे, लेकिन इस समय जैसे उन्हें शास्त्रों की कोई उक्ति खोजने से भी न मिली। वह खड़े रहे शून्य-दृष्टि से सब कुछ ताकते।

आखिर चौधरी रामखेलावन बोला, "गुट्टी, धीरज धर। लड़ाई खतम नहीं भई, सुरू भई है। ननकू बहादुर था। मैदान में सीने पर गोली खायी।"

अब जैसे चौधरी ने पं० रामअधार को राह सुझायी हो, काँपते स्वर में वह बोले, "हाँ, ननकू-संकर को बीरगति मिली। कौसिलिया बिटिया सत्ती हो गयी। एक बिसुवा जमीन न थी, पै गाँव की खातिन सत्ती हो गयी।"

थोड़ी देर तक खामोशी रही। इसके बाद चौधरी ने कहा, "तो अब इन सबकी गति-गंगा का परबन्ध होना चाहिए।"

यह सुनकर पं० रामअधार कुछ सोचने लगे, फिर बोले, "हाँ, इनका संस्कार कल सवेरे गंगा जी के किनारे किया जाय।" फिर ज़रा थमकर कहा, "कौसिलिया कल तक बिटिया थी, आज वह देवी हो गयी। उसके फूल लाकर उसके घर में सत्तीचौरा बनायेंगे। हर साल मेला लगुवायेंगे।"

इतने में किसी ने कहा, "कौसिलिया बुवा के पास ही, दो और चौरा बनें दहिने-बायें, ननकू औ' संकर के।"

"हाँ, बिलकुल ठीक।" चौधरी बोला।

"ऐसा ही करो," पं० रामअधार ने पुष्टि की। फिर दाहिना हाथ आगे बढ़ाकर तर्जनी हिलाते हुए बोले, "आज से गाँव का गढ़ी से कुछ सरोकर नहीं। यह गढ़ी नहीं, कसाईखाना है।"

पं० रामअधार के इस कहने का असर पड़ा। गाँव के जो लोग गढ़ी में कारिन्दा या सिपाही थे, उन्होंने अपनी नौकरियाँ छोड़ दी।

बिंदा सिपाही ने दूसरे ही दिन अपनी लाठी मैनेजर गुप्ता के सामने

पटक दी और बोला, "कल तक हियां का निमक खाया। निमकहरामी कभी नही की। किसुनगढ़ मे पैदा हुए, पले, बड़े भये। अब गाँव से निमकहरामी न करैंगे।"

सुभद्रा देवी ने धनहा खेत की घटना को ऐसे जतन से छिपाकर रखा था कि रणवीर सिंह के कानो में इसकी भनक तक न पड़ी थी। लेकिन बिन्दा के नौकरी छोड़ने पर भांड़ा फूट गया। वह रणवीर का खास सिपाही था, एक तरह से खिदमतगार-सा। उसको रणवीर ने कई बार बुलवाया और आखिर सचाई उनके सामने आ गयी।

तीसरे पहर रणवीर सिंह पलंग पर लेटे थे। दाहिनी बगल सुभद्रा देवी कुर्सी पर बैठी थीं काठमारी-सी। खबर सुनकर रणवीर कुछ छट-पटाये। "बरमहत्या!" वह बुदबुदाये, "बेवा, अनाथ बाँभनी की हत्या!" फिर दिल की ओर अपना सीना ज़ोर से दबाया जैसे दिल में असह्य पीड़ा हुई हो। उनका शरीर कुछ ऐंठा, मुंह से झाग निकला, आँखें बाहर को निकल-सी आयी और गर्दन तकिये पर एक ओर लुढ़क गयी।

सुभद्रा देवी चीखकर कुर्सी से उठ खड़ी हुईं और रणवीर सिंह के सीने पर सिर रखकर धाड़ मारकर रोने लगी—गढ़ा की नाव को मँझधार मे छोड़कर चले गये।

खबर फैलते ही गढ़ी में हाहाकार मच गया।

रणवीर सिंह के पिता के न रह जाने पर पूरा गाँव गढ़ी दौड़ा आया था, औरतों, मर्दों से गढ़ी भर गयी थी, लेकिन रणवीर के मरने पर गाँव से इंसान का एक पुतला तक न आया। कानपुर ले जाकर उनका संस्कार कुछ इस प्रकार कर दिया गया जैसे सड़क के फुटपाथ पर मरे भिखारी को पुलिस सिरा देती है किसी नदी-नाले मे।

उधर शंकर की दुलहिन शंकर की चारपाई के पास ऐसी गुमसुम बैठी रही जैसे शंकर के साथ उसकी सोचने-समझने की शक्ति चली गयी हो। फिर न जाने क्यों उठी, अपने घर गयी और सुलगते कंडे का एक टुकड़ा धोती के आँचल में छिपाये निकली और गली से होकर बरगद के पेड़ के पास गयी। वहाँ पहुँचने पर मन में शंका उठी, "मैं, किसान की बेटी, खड़ी फसल को···।" लेकिन उसके सामने सफ़ेद कपड़े में लिपटी

शंकर की लाश आ गयी। "मेरा सुहाग लूट लिया महबिरवा ने!" वह मन-ही-मन बुदबुदायी। फिर चरागाहों के धान के खेत में घुसी, कडे की राख झाड़ी और फूंककर आग लगा दी। धान ने थोड़ी देर मे आग पकड़ ली। वह उठी और बरगद के पेड़ के नीचे खड़ी होकर देखने लगी। हवा के झोंकों के साथ आग फैल रही थी। चिट-चिट करती धान की बालें जल रही थी। शंकर की दुलहिन को लगा जैसे गढ़ी जल रही हो। दो लाठी बराबर धान की पाँत जब जलकर हवा के झोंके के साथ गिरी, उसे लगा, जैसे गढ़ी का फाटक टूटकर गिर पड़ा हो। कुछ चिनगारियाँ उड़कर बीच मे गिरी और धान का एक बड़ा पूला जलने लगा। शंकर की दुलहिन गौर से देख रही थी। "यह महबिरवा बरि रहा है! पा गया अपनी करनी का फल।" उसने मन-ही-मन कहा।

सवेरे लोगों ने देखा, धान का पूरा खेत राख हो गया है।

38

कुल अस्सी लोगों पर मुकदमा चला। पुलिस ने लाख कोशिश की, लालच दिया, धमकाया, लेकिन गिरफ्तार लोगों मे से कोई भी मुखबिर न बना। गाँव में भी कोई गवाही देने को तैयार न हुआ। महावीर सिंह के यहाँ नौकरी करने वाले कारिन्दो और सिपाहियों तक ने कह दिया, "हम गवाही नहीं दे सकते।" अन्त में महावीर सिंह और मैनेजर रामस्वरूप गुप्ता ही चश्मदीद गवाह मिले। दो गवाह कानपुर के थे।

अशोक जी को सत्याग्रह करने मे सिर्फ तीन महीने की सजा हुई थी। वह छूटकर आ गये थे। उन्होंने मुलजिमों की पैरवी का प्रबन्ध किया। फ़ौजदारी के चार और अच्छे वकीलों को उन्होंने पैरवी करने के लिए राजी किया। इन सबने पैरवी मुफ्त की।

मजिस्ट्रेट ने बलवा करने, पुलिस की ड्यूटी में बाधा डालने, दूसरे के खेत के धान लूटने और पुलिस वालों की हत्या करने का प्रयत्न करने के

आरोप लगाकर अभियुक्तों को सेशन सुपुर्द कर दिया।

सेशन में अशोक जी और दूसरे वकीलों ने जिरह में गवाहों के पैर उखाड़ दिये। मि० गुप्ता वकील थे। उन्होने बड़ी सावधानी से बयान दिया, लेकिन जिरह में वह भी उखड़ गये।

बहस के समय अशोक जी ने गवाहो के बयानों से साबित किया कि गवाह बनाये हुए हैं। चश्मदीद गवाह मि० गुप्ता महावीर सिंह के मुलाजिम हैं। महावीर सिंह एक पार्टी हैं, निष्पक्ष गवाह नहीं।

पेशियों के दिन गाँव से कुछ लोग बराबर आते, मुकदमे की कार्यवाही देखने। बहस के बाद अशोक जी ने गाँव से आये लोगों को बताया, "कोई ताकत नहीं जो इनमें से किसी का बाल बाँका कर सके। सब छूट जायेंगे। सबूत की धज्जियाँ उड़ गयी हैं।"

जिस दिन फैसला सुनाया जाने को था, उसके एक दिन पहले ही कोई पच्चीस लोग बैलगाड़ियों पर और पैदल कानपुर को चल पड़े। सवेरे नौ बजे ही वे सब इजलास के बाहर नीम के पेड़ के नीचे आ जुटे। इनमें पं० रामअधार, चौधरी रामखेलावन, छंगा की माँ, डेढ़ साल की बच्ची की अंगुली पकड़े छंगा की स्त्री, बुर्का ओढ़े करीम खाँ की बेगम और इतवा और चैतुवा की दुलहिनें थी। पं० रामअधार माला जप रहे थे। रामखेलावन राम-राम, सीताराम कह रहा था।

जेल की तीन काली गाड़ियों मे अभियुक्त लाये गये। गाड़ी से जब वे उतरे, तो गाँव वाले देखने के लिए उधर लपके। पुलिस ने सबको रोक दिया। अभियुक्तों को सेशन जज के इजलास में ले जाया गया।

बाहर एक-एक पल एक-एक युग लग रहा था।

अशोक जी कुछ-कुछ देर बाद आते और सबको समझा जाते, "चिन्ता न कीजिये, सब छूट जायेंगे।"

जब दो बजने को आये, रामखेलावन ने पं० रामअधार से कहा, "न जानें काहे देर हो रही है, पण्डित बाबा!"

"सरकारी काम चौधरी भैया," पं० रामअधार बोले, "लिखा-पढ़ी। फिर सबको जेहल से जायेंगे। हुआँ लिखा-पढ़ी। तब कहीं छूटेंगे।"

आखिर दो बजे के बाद फैसला सुनाया गया। सब कैदी जेल को

श्रीचन्द्र अग्निहोत्री

□

इतिहास और समाजविज्ञान के विद्यार्थी श्रीचन्द्र अग्निहोत्री की पैनी नजर समाज के घात-प्रतिघातो के विश्लेषण मे एक कुशल 'सर्जन' के नश्तर का काम करती है। व्यक्तियो के वर्ग-स्वरूप और वर्गों के आर्थिक आधार-निरूपण वह बडी कुशलता से करते है। ग्रामीण समाज से उनका अटूट सम्बन्ध है, इसलिए प्रेमचन्द के बाद वह हिन्दी के शायद एकमात्र कथाकार है जिन्होंने गाँवो का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है और दिशा-निर्देश भी किया है—कलात्मक ढग से।

'नयी बिसात' मे श्रीचन्द्र जी ने समकालीन गाँव का चित्र दिया जिसे समालोचको ने ग्रामीण समाज का दर्पण और ऐतिहासिक दस्तावेज कहा। इसके बाद 'बीते कल की छाया' लाये जो 'हिन्दुस्तान' (दै०, दिल्ली) की नजरो मे क्षरित होती 'सामन्ती युग के अन्तिम चरण का चित्र प्रस्तुत किया है।' 'कादम्बिनी' (मा० प० दिल्ली) इसे 'सशक्त उपन्यास' मानती है जिसमे लेखक ने 'जमीदारी उन्मूलन से पूर्व के ग्रामीण जीवन की कहानी कही है, पतनोन्मुख ज़मीदारी सस्कृति का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है।'

'नवभारत टाइम्स' (दै० दिल्ली) का मत है कि लेखक ने चरित्रो के माध्यम से घटनाओ को ऐसे पैने ढग से उभारा है कि, '...जाति, धर्म, विवाह जैसी समस्याएँ आने वाले कल की समस्याओं का आभास दे जाती है।... भाषागत आचलिकता लौकिक आधार निर्माण करने मे सहायक रही है।'

श्रीचन्द्र की लेखनी रुकी नही। वह खेत मज़दूर से रिक्शा मजदूर बने चूरे के साथ कलकत्ते गयी है और शीघ्र प्रकाश्य 'टूटी डोंगी' मे व्यक्ति और अराजकता का विश्लेषण करती है, घटनाओं के माध्यम से।